उत्पातज्ञान मंजरी

डॉ0 पारस राम शास्त्री

।। श्री ।।

संस्कृत शोध संस्थान, ग्रन्थमाला ०७

उत्पातज्ञान मंजरी

डॉ. पारस राम शास्त्री



संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू

प्रकाशकः संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू

मुद्रक : शिवा प्रिंटर्स, पलोड़ा, जम्मू

संस्करणः प्रथम, विक्रम सम्वत् २०६८, सन् २०११

प्रतियाँ : ५००

ISBN : 978-81-928321-4-2

मूल्य :२१०/-

संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू

जम्मू-काश्मीर संस्कृत परिषद्, जम्मू

द्वारा संचालित

मुख्य कार्यालयः ४२/ ११ बरनाई रोड बनतलाव, जम्मू-१८११२३

सम्पर्क सूत्र : ०६४१६१४७०७३, ०६४१६२२१७३५

E-mail : ssshodh@gmail.com, jksanskritparishad@gmail.com

।। श्री ।।

संस्कृत शोध संस्थान, ग्रन्थमाला ०७

उत्पातज्ञान मंजरी

डॉ. पारस राम शास्त्री
अध्यक्ष
संस्कृत शोध संस्थान
जम्मू



संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू
जम्मू-काश्मीर संस्कृत परिषद्, जम्मू
द्वारा संचालित
मुख्य कार्यालयः ४२/ ११ बरनाई रोड, बनतलाव, जम्मू-१८११२३
सम्पर्क सूत्र : ०६४१६१४७०७३, ०६४१६२२१७३५
E-mail: ssshodh@gmail.com, jksanskritparishad@gmail.com

विषयानुक्रमणिका

संकेत सूची

अ०	अध्याय
अ०पु	अग्नि पुराण
अ० ज्यो०	अर्वाचान ज्योर्तिविज्ञान
अ० शा०	अर्थ शास्त्र
अनु०	अनुवादक
उ० राम०	उत्तररामचरित
का०	कादम्बरी
कु० सं०	कुमार सम्भव
को०	कोटिलय
क्र०	क्रमांक
ग०पु०	गरुड पुराण
चि०	चिकित्सा
ज्यो०	ज्योतिषतत्त्व
ज्यो० त० प्र०	ज्योतिष तत्त्व प्रकाश
त्रि० ज्यो०	त्रिस्कन्ध ज्योतिष
न० पु	नारद पुराण
नैषध०	नैषधमहाकाव्यम्
नै० परि०	नैष्धपरिशिलनम्
पू०	पूर्व
पृ०	पृष्ठ
बृ० सं०	बृहत्संहिता
बृ०	बृहत्
भा०	भाग
भवि०फ० भा०	भविष्य फल भास्कर
म०पु०	मत्स्य पुराण
मु०पु०प्र०	महा पुराण प्रथम
म० भा०	महा भारत
म०भा०भी०	महा भारत भीष्म पर्व
म० भा० शा०	महा भारत शान्ति पर्व
मनु० स्मृ०	मनु स्मृति

संकेत सूची

माल० अग्नि०	मालविका अग्निमित्रम्
मि० प्र०	मिश्र प्रकरण
मु० ग०	मुहूर्तगणपतिः
मु० सिं०	मुहूर्तसिंधु
युक्ति०	युक्तिकल्पतरु
रघु०	रघुवंशमहाकाव्यम्
वा० रा०	वालमिकिरामायण
वि० ध० पु०	विष्णुधर्मोत्तर पुराण
वि०	विष्य
व० सं०	वसष्ठि संहिता
श्लो०	श्लोक
शालि०	शालिमारनिघण्टु
शिशु०	शिशुपालबद्ध
शि० म० पु०	शिव महा पुराण
शु० दी०	शुद्धि दीपिका
शुक्र०	शुक्रनीति
स्क० पु०	स्कन्ध पुराण
सं०	संहति
सं०	सम्वत्
हर्ष०	हर्षचरितम्

भूमिका

भू-मण्डल पर घटित होने वाली आकस्मिक घटनाओं, बाढ़-भूँचाल एवं तूफानों के आने, अनावृष्टि-अतिवृष्टि के होने, बादलों के फटने, वज्रपात, अति हिमपात, उल्कापात एवं अशनिपात के होने, भयंकर आन्धी-तूफान के होने, आग लगने, ज्वालामुखी या रसायनिक तत्त्वों के फटने, पृथ्वी में दल-दल या भूस्खलन होने, पहाड़ों का गिरने, समुद्र में भंयकर तूफान के आने, अति वेग से समुद्री लहरों के उठने, राष्ट्र की प्रजा में परस्पर विद्रोह होने, राष्ट्रों में युद्ध होने, विश्व, राष्ट्र या राज्य में महामारी, दुर्भिक्ष, अशान्ति जैसी आपदाओं को प्राकृतिक उत्पात, प्राकृतिक आपदायें, प्राकृतिक उपद्रव या सार्वजनिक संकट कहते हैं। इन प्राकृतिक घटनाओं को सूचित करने वाले भूतविकारों को भी प्राकृतिक उत्पात कहते हैं।

प्रकृति नियम के प्रतिकूल जो भी कार्य होते हैं वह उत्पात कहलाते हैं। नियम के प्रतिकूल कार्य ही उत्पात की संज्ञा में आते हैं। जैसे प्रकृति नियम के अनुसार दिन-रात, ऋतु आदि समय के अनुसार वदलते हैं यदि दिन में रात और रात्रि में दिन हो जाये, ग्रीष्म ऋतु में शरद् और शरद् ऋतु में ग्रीष्म ऋतु या अन्य कोई ऋतु आ जाय तो प्रकृति नियम के प्रतिकूल एवं प्राकृतिक विकार कहलायेगा। इसी प्रकार अनेक प्रकार के प्रकृति में विकार उत्पन्न होते हैं। इन विकारों के उत्पन्न होने से प्रकृति नियम में अवरुद्धता उत्पन्न हो जाती है जिस के कारण अनेक प्रकार की आकस्मिक घटनाऐं भूमि पर घटित होती हैं।

प्रकृति अपने पञ्चमहाभूतों (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश) के गुण-धर्म के बेष्टित भौतिक जागृत एवं जड़ पिण्ड अपने अणु संसक्तावयवों से सदा स्पन्द क्रियाशील रहा करती है। प्रकृति के अवयवों की क्रियाशीलता में अवरुद्धता आ जाने से विकार उत्पन्न होते हैं। फिर वही विकार त्रिविध उत्पातों के रूप में घटित होते हैं। स्थावर-जंगम आदि विश्व के प्रत्येक वस्तु का परस्पर में त्रिविध उत्पातों का प्रत्यक्ष-परोक्ष वशीकारक प्रभाव माना गया है। प्रकृति की सारी चेष्टायें इन तीनों उत्पातों के अधीन मानी गयी हैं। तत्पर्य यह है कि विज्ञान अनुमोदित प्राकृतिक अनुपात से अनुकूल क्रिया, प्रतिकूल अर्थात् शुभाशुभ ग्रह-नक्षत्रों के पिण्डस्थ तत्त्व आकर्षण शाक्ति द्वारा रश्मियों से प्रतिफलित होकर ऋतु धर्मानुसार अपने परिणाम जन्य परिपाकों को प्राप्त हुआ करते हैं। इस सूक्ष्म रहस्य की संगति अतिकठिन है इस विषय में आचार्य वराहमिहिर ने बृहज्जातक में लिखा है

भूमिका

."होरेत्यहोरात्र-विकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्।
कर्मार्जितं पूर्वभवे सदाहि यत्तस्य पङ्क्ति समभिव्यनक्ति।।"

किसी कारण या कलादि समयऽनुसार प्रकृति इस जगत में अनेक परिवर्तन करती रहती है। परिवर्तन शील रहना प्रकृति का नियम है। इस परिवर्तन के समय प्रकृति के अवयवों में अवरुद्धता के कारण उत्पात घटित होते हैं। कुछ साधारण उत्पात होते हैं जिन के घटित हाने पर कोई विशेष हानि नहीं होती और कुछ इतने भयंकर उत्पात होते हैं जिनके घटित होने पर भूमण्डल की काया पलट जाती है।

इस जगत् में जितनी भी शुभाशुभ आकस्मिक घटनायें घटित होने वाली होती हैं उन को सूचित करने वाले लक्षण त्रिविध उत्पातों के रूप में घटित होते हैं जैसे प्राकृतिक उत्पात तीन प्रकार के होते हैं। उसी प्रकार इन को सूचित करने वाले लक्षण भी तीन प्रकार के होते हैं। इन लक्षणों भी प्राकृतिक उत्पात कहते हैं। इन प्राकृतिक उत्पातों का वर्णन ऋग्वेद, यजुर्वेद अथर्ववेद आश्वलायन गृह्यसूत्र, सांख्यान गृह्यसूत्र, शतपथब्राह्मण, याज्ञवल्क्य स्मृति, मनुस्मृति, उपनिषद् ग्रन्थों, पुराणों, आयुर्वेदिक ग्रन्थों, रामायण, महाभारत, कौटिल्य अर्थशास्त्र, काव्य एवं नाटक ग्रन्थों में मिलता है। इस के अतिरिक्त ज्योतिष शास्त्र के संहिता ग्रन्थों में उल्कापात, परिवेश, विद्युत्पात, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, वर्षणऽवर्षण, आकस्मिक घटनाओं के होने, त्रिविध उत्पातों के लक्षण, भेद, उत्पात योग आदि का वर्णन विस्तार पूर्वक मिलता है।

वास्तव में प्राकृतिक उत्पातों का सम्वन्ध मनुष्य मानवेत्तर प्राणियों के साथ आदि काल से ही होने का वर्णन वैदिक साहित्य में मिलता है। इन उत्पातों के कारण मनुष्य को सृष्टि के आदिकाल से लेकर आधुनिक के वैज्ञानिक युग तक सुख चैन का जीवन जीना दुष्कर रहा है। सन्सार में मानव एवं अन्य प्राणियों की उत्पत्ति के साथ ही उन्हें बाढ़, भूचाल, पर्वतसंकलन, अग्नि दाह आदि प्राकृतिक उत्पातों एवं प्राकृतिक आपदाओं का सामना करना पड़ा होगा। अपने भौतिक विकासके साथ ही मानव ने प्राकृतिक आपदाओं को समझने वा उससे बचने के उपाय भी प्रारम्भ कर दिये होंगे। उत्पातों का मानव से अधिक पुराने सम्वन्ध का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि उत्पातों का वर्णन हमारे ऋषियों ने वैदिक काल से प्रारम्भ कर दिया था।

वैदिक साहित्य में उत्पात शव्द को अद्भुत एवं निमित्त नाम से प्रयुक्त किया गया है। 'अद्भुत' प्राचीन शव्द है। ऋग्वेद में कई बार प्रयुक्त हुआ है। गृह्यसूत्रों में 'अद्भुत' शव्द ही आया है और शान्तियों को अद्भुत शान्तियाँ कहा गया है। अद्भुत

न केवल भूचालों, ग्रहणों, धूमकेतुओं उल्कापातों आदि केलिए प्रयुक्त हुआ है, प्रत्युत यह असाधारण घटनाओं केलिए भी प्रयुक्त हुआ है। यथा- गाय द्वारा रक्तदूध देना, गाय द्वारा गाय का थन पीना आदि। इन अद्‌भुतों को सात दलों में बाँटा है- इन्द्र, वरुण, यम, अग्नि, कुबेर, विष्णु एवं वायु और प्रत्येक अद्‌भुतों के नाम गुण अनुसार लिखें हैं। यथा-रात्रि में इन्द्रधनुष इन्द्र नामक अद्‌भुत, गिद्ध या उल्लू का घर पर उतरना या कपोत का घर में प्रवेश करना,'यम' नामक अद्‌भुत, बिना अग्नि का धुआँ होना'अग्नि' नामक अद्‌भुत', किसी के जन्म के नक्षत्र पर ग्रहण का लगना 'विष्णुनामक' अद्‌भुत, अतिवृष्टि या अनावृष्टि का होना 'कुबेर' नाम अद्‌भुत, वायु का प्रचण्ड या तूफान का चलना 'वायु' नामक अद्‌भुत कहे गये हैं।

श्रौत या गृह्यसुत्रों में 'उत्पात' शब्द विरल ही प्रयुक्त है। मध्य कालिक संस्कृत ग्रन्थों अर्थात् पुराणों में उत्पात शब्द अद्‌भुत की अपेक्षा अधिक प्रयुक्तहुआ है, कभी-कभी दोनों समानार्थक रूप में प्रयुक्त हुए हैं। अद्‌भुत एवं उत्पात शब्द एक दूसरे के पर्याय हैं। अग्नि पुराण, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, मत्स्य पुराण में उत्पात होने के कारण, भेद एवं शान्ति के साथ वर्णन किया है। रामायण में 'अयोध्याक० ४/१७/९' में वर्णन किया है। महा भारत में भीष्म पर्व -२/१६-१७ विराट० '४६-३०' और मनुस्मृति में '६/५० में 'उत्पात' एवं निमित्त में भेद किया है।

महाभारत में निमित्तों या उत्पातों का बहुत उल्लेख हुआ है, सभापर्व० ३९/४-६, ८०, २८- ३१, ८६,१,२२-२५, वन० '१७६, १४१, २२४,१९७,१८' विराट०, सभापर्व- भीष्म ० ३/६५- ७४, शान्ति० ५२/२५, आश्वमेधिक० ५३/५-६ में, और कर्ण ० ७२/१२-१३ में प्रमुख उत्पातों का लक्षण एवं फल सहित वर्णन किया है।

गर्ग, पराशर, सभापर्व, बृहत्संहिता, मत्स्य पुराण, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, अथर्व-परिशिष्ट '६९/११२' आदि ने उत्पातों को तीन भागों में बाँटा है। **दिव्य, आन्तरिक्ष** और **भौम** तीन प्रकार के उत्पातों का लक्षण एवं फल सहित वर्णन किया हुआ है। इस के साथ ही इन उत्पातों की शान्ति ऋग्वेद की ऋचाओं में, अथर्व वेद में, श्रौतसूत्रों में, ब्राह्मण ग्रन्थों में, कृत्यकल्पतरु और पुराणों में वर्णित किया हुआ है। विभिन्न प्रकार की शान्तियों का विधान है। उत्पात कुछ ऐसे भी होते हैं जो ऋतुओं में उपस्थित होते हैं जिन की शान्ति करना आवश्यक नहीं होता है जैसे- चैत्र एवं वैशाख में विद्युत-चमक, उल्कापात, भूचाल, चमकती सन्ध्याएँ, अन्धड़-तुफान, गगन धूलि, वन-धूम रक्तिम सूर्योदय एवं सूर्यास्त होना आदि।

भूमिका

पारस्करगृह्यसूत्र के अनध्याय में प्रचण्डवायु के चलने, आँधी-तूफ़ान, उल्कापात, वज्रपात, भूमिचलन (भूकम्प), अग्न्युत्पात, ऋतुविकार, विद्युत्पात का वर्णन आया है यहाँ पर इन विकारों के घटित होने के समय को अशुभ माना है। कुत्ते, गधे, उल्लू, शृंगाल के चिल्लाने के समय को भी अशुभ माना है।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि गृह्यसूत्रों में उत्पात एवं शकुन शास्त्र का वर्णन शुभाशुभ समय के ज्ञान को प्रकट करते हैं। मनुस्मृति में मनु आकालिक अनाध्यायों का विवेचन करते हुए विद्युत के चमकने, मेघ वृष्टि एवं महान् उल्कापात का उल्लेख किया है। दिग्गर्जन, भूकम्प और ग्रह-ताराओं के परस्पर युद्ध का, विद्युत्पात, सूर्य और चन्द्र ग्रहण, धूल उड़ने, धूली वर्षा, दिग्दाह के हाने, शृंगाल, कुत्ते, गधे और ऊँट के उच्च स्वर से बोलने जैसे निमित्तों का वर्णन किया है। धूमकेतु आदि उत्पात, निमित्त, तिथि-नक्षत्र के योग्य अयोग्य योगों का फलाफल का वर्णन मिलता है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में नवग्रहों का स्पष्ट उल्लेख मिलता वर्तमान है, क्रान्तिवृत्त, मेषादि राशियों २७ योगों का, ग्रहों के संयोग जन्य फलों का वर्णन मिलता है। कौटिल्य अर्थशास्त्र में शुभाशुभ सूचक उत्पातों का विचार कर के यात्रा आरम्भ करने एवं बाह्य आभ्यन्तर दोनों प्रकार की विपत्तियाँ जैसे उत्पातों का वर्णन मिलता है। बाह्य और अभ्यन्तर आपत्तियों के, उपजपिता तथा प्रतिजपिता के भेद से चार भेद बताये हैं। दैववश होने वाले आठ महाभय- अग्नि, जल, बीमारी, दुर्भिक्ष, व्याघ्र, साँप चूहे और राक्षस। इन सवसे जनपद की रक्षा राजा को करनी चाहिए। पूर्णमासी आदि पर्व तिथियों में बलिहोम और स्वस्ति वचनों से अग्नि की पूजा करने एवं अन्य विधियों से निवारण के लिए बताया गया है।

उपद्रव घटित होने के कारण इन त्रिविध उत्पातों दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम होने के कारण के विषय में गर्गादि ऋषियों एवं वराहमिहिर आदि आचार्यों का कथन शास्त्र ग्रन्थों में वर्णित हैं।

प्रमुख ऐतिहासिक घटनाएँ जिन से पूर्व सूचित चिह्नों के रूप में उत्पात घटित हुए थे निम्नलिखित हैं-

श्री मद्भागवत महापुराण में काल की गति बड़ी विकट होने, ऋतु में विकार होने अर्थात् जिस समय जो ऋतु होनी चाहिये उस समय वह ऋतु नहीं होती और उनकी क्रियाएँ भी उल्टी होने, लोग बड़े क्रोधी, लोभी और असत्यपरायण होने, अपने जीवन निर्वाह के लिये लोग पाप पूर्ण व्यवहार करने, सारा व्यवहार कपट से भरा हुआ होने,

यहाँ तक कि मित्रता में भी छलकपट होने, पिता-माता, सगे-सम्बन्धी, भाई और पति-पत्नी में भी झगड़ा-टंटा होने और लोगों का स्वभाव ही लोभ, दम्भ आदि अधर्म से अभिभूत होने आदि प्रकृति में अत्यन्त अरिष्ट सूचक अपशकुन एवं उत्पात होने का करण मानते हैं।

रुद्र संहिता के ३३वें और ३४वें अध्याय में वीरभद्र और महाकाली द्वारा दक्ष का विध्वंस करने के कारण यज्ञ विध्वंस के पूर्व ही राजदक्ष की वायीं आँख, बायीं भुजा और बायीं जाँघ फड़कने और उसके समक्ष नाना प्रकार के कष्टदायी एवं विनाश सूचक उत्पातों के प्रकट होने का उल्लेख आया है। रावण संहिता में माली और सुमाली नामक राक्षसों का अन्य राक्षसों सहित देवताओं के साथ युद्ध करने से पूर्व एवं रावण के जन्म समय पर प्रकट हुए उत्पातों का वर्णन मिलता है।

मत्स्य पुराण में हिरण्य कशिपु के भीषण अत्याचारों एवं भीष्ण युद्ध होने के कारण अनेक प्रकारों के उत्पातों के प्रकट होने का वर्णन मिलता है जैसेः- वहाँ वायु का विकट होना, समस्त लोकों के विनाश के अवसर पर जो ग्रह प्रकट होते हैं वैसे ग्रहों का दृष्टिगोचर होना, बिना पर्व अर्थात् अमावस्या एवं पूर्णिमा के बिना ही सूर्य चन्द्र को ग्रहण लगना, सूर्य और चन्द्रमा का कान्तिहीन होना, काले रंग के धूमकेतु का दिखाई देना, अग्नि विकारों का पृथ्वी एवं आकाश में प्रकट होना, आकाश मण्डल में धुएँ की-सी कान्ति वाले सात भयंकर सूर्यों का प्रकट होना, ग्रहों का चन्द्रमा के शिखर पर स्थित होने, चन्द्रमा के वामभाग में शुक्र और दाहिने भाग में वृहस्पति का स्थित होने, अग्नि के समान कान्मिान शनैश्चर और मंगल का दृष्टिगोचर होने, चन्द्रमा नक्षत्रों और ग्रहों के साथ रहकर चराचर जगत् का विनाश करने सदृश रोहिणी पर आरूढ़ होने, चन्द्र ग्रहण समय उल्काओं का गिरने, प्रज्चलित उल्काओं का चन्द्रलोक में विचरण करने, इन्द्र देवता द्वारा रक्त की वर्षा करने आकाश से बिजली की-सी कान्ति वाली उल्काओं का भयंकर शब्द करती हुई पृथ्वी पर गिरने, असमय में वृक्षों पर फूल एवं फल लगने और सभी लताएँ पत्तों युक्त होने सभी देवताओं की मूर्तियों में विकार आने, जैसे उत्पातों के लक्षण प्रकट हाने का वर्णन मिलता है।

इस के अतिरिक्त दैत्य राज हिरण्य कशिपु के महल में, भण्डार गार में और आयुधागार के ऊपर मधु टपकने जैसे उत्पात भी प्रकट हुए जो असुरों के विनाश और देवताओं की विजय की सूचना दे रहे थे और भी बहुत से भयंकर उत्पात जो काल द्वारा निर्मित थे दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपु के विनाश के लिए प्रकट हुए थे।

भूमिका

महाभारत युद्ध के समय में बड़े ज़ोर से कोलाहल होने, आकाश में सब ओर मनुष्य सी आकृति दिखायी देने जैसे उत्पात होने लगे जो सम्पूर्ण देवों में यह अद्भुत दृश्य वाले उत्पात थे।

वर्षा हुई, आकाश में यक्षों, राक्षसों तथा पिशाचों का महान् कोलाहल सुनायी देने, उस घोर शब्द के साथ बहुत से पशुओं और पक्षियों की भयानक ध्वनि सम्पूर्ण दिशाओं में गूँजने और अस्त्र-शस्त्र और ध्वजा वाले सभी वीरों के काँपने वाले भयंकर उत्पातों के होने का उल्लेख आया है। वाल्मीकि रामायण के अरण्य काण्ड के २४वें सर्ग में राक्षसों के विनाश और श्री राम की विजय सूचक उत्पातों के होने युद्ध काण्ड में श्री राम के लंका पर आक्रमण से पूर्व रीछों, वानरों और राक्षसों का विनाश एवं लोकों का संहार करने वाले, भीषण भय उत्पन्न करने वाले उत्पातों के होने, श्री राम और रावण के युद्ध होने से पूर्व रावण की पराजय और श्री राम की विजय को सूचित करने उत्पातों के प्रकट होने का वर्णन मिलता है।

महाभारत में भगवान् श्री कृष्ण जब वैकुण्ठ धाम चले गये उस समय राजा युधिष्ठिर के राज्य में देवताओं की मूर्तियाँ रो-सी रहने, मूर्तियों से पसीना चूने लगने और हिलने-डोलने, देश, गाँव, शहर, बगीचे, खानें और आश्रम श्री हीन और आनन्त रहित होने जैसे उत्पातों का वर्णन भी आया है जो भगवान् के चरणकमलों से विहीन हुई भूमि की सूचना दे रहे थे। दुर्योधन भीमसेन का युद्ध में आह्वान करते समय बिना शरीर के ही ज़ोर-ज़ोर से गर्जनाएँ सुनायी देने का वर्णन मिलता है जो दुर्योधन के लिए अशुभकारक उत्पात था और इस प्रकार के बहुत से अपशकुन एवं उत्पात हुए थे। महाभारत युद्ध से पूर्व कैलाश मन्दराचल तथा हिमालय से सहस्रों प्रकार के अत्यन्त भयानक शब्द प्रकट होने और उनके शिखर भी टूट-टूट कर गिरने जैसे उत्पातों का वर्णन मिलता है। इससे यह प्रतीत होता है कि यह भूमि रक्तपान करेगी अर्थात् भयंकर युद्ध एवं नरसंहार होगा। क्रुद्ध काल की गर्जना के समान भयभीत करने वाली, कानों के पर्दे फाड़ देने वाली, आकाश तथा दिशाओं में व्याप्त हो जाने वाली एवं पहाड़ों की चोटियों को ढहा देने वाली गम्भीर प्रतिध्वनि बार-बार होने वाले अशुभसूचक उत्पातों का वर्णन कुमार सम्भव के १५वें सर्ग में आया है जो तारकासुर की मृत्यु को सूचित कर रहे थे। महाधर्नुधर कर्ण का महाभारत युद्ध के लिए प्रसन्नता पूर्वक प्रस्थान करते समय धरती डोलने, बड़े ज़ोर-ज़ोर से अव्यक्त शब्द होने, सूर्य मण्डल से सात बड़े-बड़े ग्रह निकलते दिखायी देना, उल्कापात होने, दिशाओं में आग सी जल उठने, बिना वर्षा के ही बिजलियाँ गिरने, भयानक आँधी चलने, मृग एवं पक्षियों का महान् भय की सूचना देने, सेना को दाहिने करके चलने, अकस्मात् घोड़ों का पृथ्वी पर गिरने, आकाश से

हड्डियों की भयंकर वर्षा हाने, कौरवों के शस्त्र जल उठने, ध्वज हिलने और वाहन का आँसू बहाने आदि अनेक भयंकर उत्पात वहाँ प्रकट होने का वर्णन मिलता है जो कि भयंकर युद्ध एवं विनाश होने की सूचना देने वाले कहे जाते हैं।

तारकासुर के झण्डे पर काजल के समान काले तथा अपने फण की मणि की चमकती हुई किरणों से घिरा हुआ और विष से भरी हुई आग जैसी भयानक फुंकार छोड़ने वाला एक बड़ा साँप लिपटा हुआ देखने का वर्णन मिलता है जो कि मृत्यु सूचक उत्पात था। तुरन्त ही काजल के समान काले काले विष के टुकड़ों को टूट-टूट कर गिरने वाले और भरी हुई आग की ऊँची-ऊँची लपटें उगलने वाले भीषण साँपों की पंक्तियाँ उस दैत्य सेना के रास्ता काटती हुई सामने से निकलने जैसे उत्पातों का वर्णन आया है जोकि दैत्य सेना को युद्ध से रोकने एवं भयंकर युद्ध और विनाश की सूचना दे रहे थे।

खर नामक राक्षस ने जब श्री के आश्रम पर आक्रमण किया उस समय अमंगल सूचक उत्पात उस के शरीर में इस प्रकार प्रकट होने लगे- खर की बायीं भुजा सहसा काँप उठी, स्वर अवरुद्ध हो गया और सब ओर देखते समय आँसू आँखों में आने लगे, सिर में दर्द होने लगा। इस प्रकार के अनेक अमंगल सूचक उत्पात खर राक्षस एवं उसकी सेना के सामने उपस्थित होने का वर्णन मिलता है।

श्री राम कथन- मेरी यह दाहिनी भुजा बारंबार फड़क कर इस बात की सूचना देती है कि कुछ ही देर में बहुत युद्ध होगा और साथ में यह भी कहते हैं कि भविष्य में हामारी विजय और शत्रु की पराजय होगा क्योंकि लक्ष्मण का मुख कान्ति मान एवं प्रसन्न दिखाई दे रहा था। इस कथन से स्पष्ट होता है कि दाहिनी भुजा का फड़कना और मुख का कान्ति मान होना शुभ सूचक होता है। युद्ध के लिये उद्यत होने पर जिन का मुख प्रभाहीन हो जाता है उनकी आयु नष्ट हो जाती है।

हर्षवर्धन की दिग्विजय के समय शुभाशुभ सूचक दोनों प्रकार के उत्पातों का वर्णन मिलता है। शत्रु राजाओं के घरों एवं राज्यों में नाना प्रकार के अशुभ सूचक उत्पात घटित होने लगे। जैसे- सैनिक निकट भविष्य में बाल खींचे जाने के भय से भागने लगे, राजा-रानियों की चूड़ामणियों में हर्षवर्धन के चक्रशंख-कमलों वाले पादन्यास (प्रतिबिम्ब रूप में) प्रकट होने लगे, हाथियों के गण्डस्थलों पर भ्रमरों के मदजल के रूप में मदिरापान की गोष्ठियाँ भंग हो गयीं। घोड़ों ने घास खाना छोड़ दी, रात-रात को चन्द्रमा के मृग की ओर दृष्टि लगाए हुए जैसे ऊपर मुँह किये कुत्तों का दल बाहरी दरवाज़े के पास बिना कारण ही ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगे, नंगी स्त्री फटकार में हिलती

हुई अपनी तर्जनी-अँगुली से मरने वालों की गिनती करती हुई हाट-भाट में विचरती रहती, हरिणों की टेढ़ी खुर-पंक्तियों से तरंजित घास फर्शों पर उगने, सैनिकों की महिलायों के प्याले भी मदिरा में पड़े हुए मुख कान्ति वाले दिखाई पड़ने, भूमि के कम्पन होने, तलवारों के ऊपर रक्त के छींटों के चिन्ह दिखने, राजलक्ष्मी के चारों ओर अग्नि रूप उल्कायें निरन्तर गिरने, तीव्र आँधी चलने आदि उत्पातों का वर्णन हर्षचरित में मिलता है।

महाराजा हर्ष वर्धन दिग्विजय के लिए जिस देश पर चढ़ाई करता उस देश में दिग्दाह, भूकम्प, भस्म तथा रक्त की वृष्टि आदि अशुभसूचक उत्पात होने का वर्णन नैषधमहाकाव्य एवं हर्ष-चरित में आया है।

इस प्रकार प्राकृति उत्पातों के घटित होने के अनेक उदाहरण संस्कृत साहित्य में मिलते हैं। जितने भी उपद्रव भूमि पर घटित होते हैं उनके पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है बिना कारण के इन उपद्रवों का घटित होना सम्भव नहीं हो सक्ता।

सिद्धान्तिक पक्ष प्राकृतिक घटनाओं के घटित होने से पूर्व घटना को सूचित करने वाले लक्षणों का वर्णन करता है परन्तु वैज्ञानिक पक्ष कुछ ही उत्पातों के विषय में घटित होने से पूर्व अपना मत प्रकट करते हैं।

सिद्धान्तिक पक्ष के अनुसार प्रकृति अपने पञ्चमहाभूतों (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश) के गुण-धर्म के वेष्टित भौतिक जागृत एवं जड़ पिण्ड अपने अणु संसक्तावयवों से सदा स्पन्द क्रियाशील रहा करती है। प्रकृति के अवयवों की क्रियाशीलता में अवरुद्धता आ जाने से विकार उत्पन्न होते हैं। फिर वही विकार त्रिविध उत्पातों के रूप में घटित होते हैं। इसी प्रकार अनेक प्रकार के प्रकृति में विकार उत्पन्न होते हैं। इन विकारों के उत्पन्न होने से प्रकृति नियम में अवरुद्धता उत्पन्न हो जाती है जिस के कारण अनेक प्रकार की आकस्मिक घटनाओं भूमि पर घटित होती हैं। सिद्धान्तिक पक्ष में भौम उत्पात को शान्ति से आहत हो कर नष्ट होने वाला, आन्तरिक्ष उत्पात शान्ति से कम होने वाल और दिव्य उत्पात शान्ति से भी नष्ट नहीं होने वाला बताया है। वैज्ञानिक पक्ष भी उत्पातों के बल को मानता है परन्तु इस का सिद्धान्त भिन्न है।

सिद्धान्तिक पक्ष में दिव्य, अन्तरिक्ष तथा पृथ्वी में होने वाले उत्पातों को उन-उन स्थानों के प्रतिनिधि देवताओं के मन्त्रों से जाप एवं हवन करने से उत्पात शान्त किये जाने का विधान मिलता हैं। दिव्य उत्पात अधिक स्वर्ण, अन्न, गो और भूमि दान से शान्त होता है और रुद्रायतन, भूमि में गोदान और करोड़ होम करने से शमन होता

है। नाभसादि उत्पात भी बहुत प्रतिकार करने से नष्ट होते हैं। उत्पात की शान्ति मण्डल के देवता अनुसार करवाने, जिस मण्डल में उत्पात उत्पन्न हो उस मण्डल के अधिपति देवता की पूजा एवं होमादि करने से ही शान्ति होती है। यदि दो मण्डलों में उत्पात हो तो दोनों मण्डल के दोनों अधिपतियों की पूजा वा होमादि करने से शान्ति होती है।

अग्नि पुराण के अनुसार महा उत्पातों की शान्ति के लिए अठारह प्रकार की शान्तियों का वर्णन किया है उन में से प्रमुख त्रिविध उत्पातों की शान्ति के लिए तीन अमृता, अभया और सौम्या शान्तियाँ बताई गई हैं। भौम सम्बन्धि उत्पातों के लिए (अमृता) नामक शान्ति करानी चाहिए। आन्तरिक्ष सम्बन्धि उत्पातों के लिए (अभया नामक) शान्ति करानी चाहिए। दिव्य सम्बन्धी उत्पातों के लिए (सौम्य नामक) शान्ति करानी चाहिए। इन शान्तियों के देवताओं से सम्बन्धित मन्त्रों का जाप एवं हवन कर के 'अभया और अमृता' शान्ति के लिए दूर्वादल की मणि एवं सौम्य शान्ति केलिए (शंखमणि) धारण करने का विधान मिलता है परन्तु वैज्ञानिक पक्ष में ऐसा कोई विधान नहीं दिया हुआ है।

इस प्रकार सिद्धान्तिक पक्ष में उत्पातों के लक्षण, भेद, कारण, घटित होने का समय ज्ञान, स्थान, शुभाशुभ फल, निष्फल हाने एवं शमन होने के अनेक उपायों का वर्णन विस्तारपूर्वक मिलता है। इन प्राकृतिक उत्पातों के विषय में वैज्ञानिक पक्ष, सिद्धान्तिक पक्ष के साथ कई स्थानों पर समानता रखता है और कई स्थानों पर विषमता रखता है। यदि दोनों पक्षों का अध्ययन कर के प्राकृतिक उत्पातों के विषय में निष्कर्ष निकाला जाय तो अधिक तर्कसंगत होगा।

भवदीय

डॉ. पारस राम शास्त्री

जम्मू

प्रथम अध्याय

प्राकृतिक उत्पातों से सम्बद्ध ग्रन्थ

प्राकृतिक उत्पातों का वर्णन ऋग्वेद, यजुर्वेद अथर्ववेद आश्वलायन गृह्यसूत्र, सांख्यान गृह्यसूत्र, शतपथब्राह्मण, याज्ञवल्कय स्मृति, मनुस्मृति, उपनिषद् ग्रन्थों, पुराणों, आयुर्वेदिक ग्रन्थों, रामायण, महाभारत, कौटिल्य अर्थशास्त्र, महाकाव्य एवं नाटक ग्रन्थों में मिलता है। इस के अतिरिक्त ज्योतिष शास्त्र के संहिता ग्रन्थों में उल्कापात, परिवेष, विद्युत्पात, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, वर्षणऽवर्षण, त्रिविध उत्पातों के लक्षण, भेद, आकस्मिक घटनाओं एवं उत्पात योग आदि का वर्णन विस्तार पूर्वक मिलता है।

संस्कृत साहित्य के विभिन्न ग्रन्थों में इन उत्पातों के लक्षण, भेद, कारण, घटित होने का समय ज्ञान, स्थान, शुभाशुभ फल, निष्फल हाने एवं शमन होने के अनेक उपायों का वर्णन विस्तारपूर्वक मिलता है यथा-

वैदिक साहित्य में उत्पात शब्द को अद्भुत एवं निमित्त नाम से प्रयुक्त किया गया है। **'अद्भुत'** प्राचीन शब्द है। ऋग्वेद में कई बार प्रयुक्त हुआ है। गृह्यसूत्रों में **'अद्भुत'** शब्द ही आया है और शान्तियों को अद्भुत शान्तियाँ कहा गया है। अद्भुत न केवल भूचालों, ग्रहणों, धूमकेतुओं उल्कापातों आदि केलिए प्रयुक्त हुआ है यथा-रात्रि में इन्द्रधनुष इन्द्र नामक अद्भुत, गिद्ध या उल्लू का घर पर उतरना या कपोत का घर में प्रवेश करना,**'यम'** नामक अद्भुत, बिना अग्नि का धुआँ होना **'अग्नि'** नामक अद्भुत, किसी के जन्म के नक्षत्र पर ग्रहण का लगना **'विष्णुनामक'** अद्भुत, अतिवृष्टि या अनावृष्टि का होना **'कुबेर'** नाम अद्भुत, वायु का प्रचण्ड या तूफान का चलना **'वायु'** नामक अद्भुत कहे गये हैं।

श्रौत या गृह्यसुत्रों में **'उत्पात'** शब्द विरल ही प्रयुक्त है। मध्य कालिक संस्कृत ग्रन्थों अर्थात् पुराणों में उत्पात शब्द अद्भुत की अपेक्षा अधिक प्रयुक्तहुआ है, कभी-कभी दोनों समानार्थक रूप में प्रयुक्त हुए हैं।

पारस्करगृह्यसूत्र-

पारस्करगृह्यसूत्र के अनध्याय में प्रचण्डवायु के चलने, आँधी-तूफ़ान, उल्कापात, वज्रपात, भूमिचलन (भूकम्प), अग्न्युत्पात, ऋतुविकार, विद्युत्पात का वर्णन आया है यहाँ

पर इन विकारों के घटित होने के समय को अशुभ माना है। कुत्ते, गधे, उल्लू, शृंगाल के चिल्लाने के समय को भी अशुभ माना है।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि गृह्यसूत्रों में उत्पात एवं शकुन शास्त्र का वर्णन शुभाशुभ समय के ज्ञान को प्रकट करते हैं।

मनुस्मृति- दिग्गर्जन, भूकम्प और ग्रह-ताराओं के परस्पर युद्ध का, विद्युत्पात, सूर्य और चन्द्र ग्रहण, धूल उड़ने, धूली वर्षा, दिग्दाह के हाने, शृंगाल, कुत्ते, गधे और ऊँट के उच्च स्वर से बोलने जैसे निमित्तों का वर्णन किया है।[3] धूमकेतु आदि उत्पात, निमित्त, तिथि-नक्षत्र के योग्य अयोग्य योगों का फलाफल का वर्णन मिलता है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में नवग्रहों का स्पष्ट उल्लेख मिलता वर्तमान है, क्रान्तिवृत्त, मेषादि राशियों २७ योगों का, ग्रहों के संयोग जन्य फलों का वर्णन मिलता है।

कौटिल्य अर्थशास्त्र में- शुभाशुभ सूचक उत्पातों का विचार कर के यात्रा आरम्भ करने एवं बाह्य आभ्यन्तर दोनों प्रकार की विपत्तियाँ जैसे उत्पातों का वर्णन मिलता है।

शिव पुराण में- रुद्र संहिता के ३३वें और ३४वें अध्याय में वीरभद्र और महाकाली द्वारा दक्ष का विध्वंस करने के कारण यज्ञ विध्वंस के पूर्व ही राजदक्ष की वायीं आँख, बायीं भुजा और बायीं जाँघ फड़कने और उसके समक्ष नाना प्रकार के कष्टदायी एवं विनाश सूचक उत्पातों के प्रकट होने का उल्लेख आया है।

रावण संहिता में- माली और सुमाली नामक राक्षसों का अन्य राक्षसों सहित देवताओं के साथ युद्ध करने से पूर्व एवं रावण के जन्म समय पर प्रकट हुए उत्पातों का वर्णन मिलता है।

मत्स्य पुराण में- हिरण्य कशिपु के भीषण अत्याचारों एवं भीष्ण युद्ध होने के कारण अनेक प्रकारों के उत्पातों के प्रकट होने आदि अनेक पगकार के उत्पातों का वर्णन मिलता है।

वाल्मीकि रामायण के अरण्य काण्ड के २४वें सर्ग में राक्षसों के विनाश और श्री राम की विजय सूचक उत्पातों के होने युद्ध काण्ड में श्री राम के लङ्का पर आक्रमण से पूर्व रीछों, वानरों और राक्षसों का विनाश एवं लोकों का संहार करने वाले, भीषण भय उत्पन्न करने वाले उत्पातों के होने, श्री राम और रावण के युद्ध होने से पूर्व रावण की पराजय और श्री राम की विजय को सूचित करने उत्पातों के प्रकट होने का वर्णन मिलता है।

महाभारत में निमित्तों या उत्पातों का बहुत उल्लेख हुआ है, सभापर्व० ३९/४-६,

८०, २८- ३१, ८६,१,२२-२५, वन० '१७६, १४१, २२४,१६७,१८' विराट०, सभापर्व-भीष्म ० ३/६५- ७४, शान्ति० ५२/२५, आश्वमेधिक० ५३/५-६ में, और कर्ण ० ७२/१२-१३ में प्रमुख उत्पातों का लक्षण एवं फल सहित वर्णन किया है।

भगवान् श्रीकृष्ण जब वैकुण्ठ धाम चले गये उस समय राजा युधिष्ठिर के राज्य में देवताओं की मूर्तियाँ रो-सी रहने, मूर्तियों से पसीना चूने लगने और हिलने-डोलने, देश, गाँव, शहर, बगीचे, खानें और आश्रम श्री हीन और आनन्त रहित होने जैसे उत्पातों का वर्णन भी आया है।

हर्षवर्धन की दिग्विजय के समय शुभाशुभ सूचक दोनों प्रकार के उत्पातों का वर्णन मिलता है। शत्रु राजाओं के घरों एवं राज्यों में नाना प्रकार के अशुभ सूचक उत्पात घटित होने का वर्णन मिलता है। दिग्दाह, भूकम्प, भस्म तथा रक्त की वृष्टि आदि अशुभसूचक उत्पात होने का वर्णन नैषध महाकाव्य एवं हर्ष-चरित में आया है। नागानन्द काव्य में वायीं आँख फड़कने धूमकेतु, उल्कापात होने जैसे उत्पातों का उल्लेख कवि ने किया है। इस प्रकार संस्कृत साहित्य के ग्रन्थों में उत्पातों का विस्तार पूवर्क वर्णन मिलता है जिस का विस्तार पूर्वक विवेचन आगे किया जायेगा।

प्राकृतिक उत्पात

भू-मण्डल पर घटित होने वाली आकस्मिक घटनाओं, बाढ़-भूँचाल एवं तूफानों के आने, अनावृष्टि-अतिवृष्टि के होने, बादलों के फटने, वज्रपात, अति हिमपात, उल्कापात एवं अशनिपात के होने, भयंकर आन्धी-तूफान के होने, आग लगने, ज्वालामुखी या रसायनिक तत्त्वों के फटने, पृथ्वी में दल-दल या भूस्खलन होने, पहाड़ों का गिरने, समुद्र में भयंकर तूफान के आने, अति वेग से समुद्री लहरों के उठने, राष्ट्र की प्रजा में परस्पर विद्रोह होने, राष्ट्रों में युद्ध होने, विश्व, राष्ट्र या राज्य में महामारी, दुर्भिक्ष, अशान्ति जैसी आपदाओं को प्राकृतिक उत्पात, प्राकृतिक आपदायें, प्राकृतिक उपद्रव या सार्वजनिक संकट कहते हैं। इन प्राकृतिक घटनाओं को सूचित करने वाले भूतविकारों को भी प्राकृतिक उत्पात कहते हैं।

संस्कृत साहित्य के विभिन्न ग्रन्थों में इन उत्पातों के लक्षण, भेद, कारण, घटित होने का समय ज्ञान, स्थान, शुभाशुभ फल, निष्फल हाने एवं शमन होने के अनेक उपायों का वर्णन विस्तारपूर्वक मिलता है। इस साहित्य के ग्रन्थों में वर्णित उत्पात शब्द की व्युत्पत्ति, अर्थ, भेद, लक्षण, कारण, समय ज्ञान, उत्पात घटित होने का स्थान, शुभाशुभ फल एवं उत्पात शमन होने के प्रमुख उपायों को एकत्रित करके आगे प्रस्तुत किया जा रहा है।

उत्पात शब्द की व्युत्पत्ति एवं अर्थ

व्युत्पत्तिः-

'उद्' उपसर्ग पूर्वक 'पत्' धातु और 'घञ्' प्रत्यय होकर उत्पात शब्द बना है।[1]

अर्थः-

अचानक प्राणियों के ऊपर घटित होने वाले शुभाशुभसूचक भूतविकार, भौतिक या दैविक उपद्रव, विपत्ति, सार्वजनिक संकट, आकस्मिक घटना, शुभाशुभ सूचक शकुन। विविध कोशकारों ने उत्पात के अनेक अर्थ किये हैं, जिन में निम्नलिखित मुख्य हैं-

१. **आध्यात्मिक, आधिदैविक,** आधिभौतिक के भेद से विभिन्न प्रकार के प्राणियों को शुभाशुभसूचक करने वाले महाभूतविकार।[2] 'शब्दार्थचिन्तामणिः'

२. प्रकृति का अन्यत्व अर्थात् विपरीत होने की उत्पात संज्ञा कही है।[3] 'वशिष्ठ संहिता'

३. प्रकृति के विरुद्ध जो बात देखने में आती है उसे उत्पात कहते हैं।[4] 'ज्योतिष शिक्षा'

४. जो प्रकृति अपने विपर्या से सब को संक्षिप्त कर ले वही उत्पात है।[5] 'समास संहिता'

५. अचानक उत्पन्न जो घटना हो वह, प्राणियों के लिए शुभाशुभसूचक महाभूत विकार भूकम्पादि। अमरकोशकार ने इसके कई पर्यायवाची शब्द क्रम, प्रकार गिनाये हैं। सिलसिला द्रव्य का धर्म, विकार,अजन्य अर्थात् उत्पन्न किये जाने या होने के अयोग्य। मनुष्य जाति के प्रतिकूल, दैवी उपद्रव, भूचालादि। उपसर्ग अर्थात् भौतिक या दैविक उपद्रव। एक रोग के बीच में उत्पन्न दूसरा रोग विपत्ति संकट आदि।[6]

---

१. **उत्पात्-** उद् उपसर्गपूवर्क पत् धातोः घञ् प्रत्ययत्वात्। उत्पात शब्दः सिद्धयति।
शब्दकल्पद्रुमः प्रथम भाग।

२. आध्यात्पिकाधिदैवकाधिभौतिक भेदभिन्नेप्राणिनां शुभाशुभसूचके महाभूत विकारे।
शब्दार्थचिन्तामणिः प्र० भा०- पृ०- ३४८

३. अन्यत्वं प्रकृतेः यत्तदसावुत्पातसंज्ञकम्। वशिष्ठ सं०- ४५/०१

४. दृष्टव्य - सचित्र ज्योतिष शिक्षा भा०- ०८, पृ० - ६४

५. य प्रकृतिविपर्यासः सर्वः सङ्गपतः स उत्पातः। 'समास सं०'

६- उत्पातः - (पुं०) (उत्+पत्+घञ्) उत्पतति अकस्मादायाति यः प्राणिनां शुभाशुभसूचकमहाभूतविकार भूकम्पादिः। तत्पर्ययायः अजन्यम्, उपर्सग इत्यमरः। अजन्यम् कलीब उत्पात उपसर्गः समं त्रयम्। अजन्यम् (न) उत्पातः उपसर्गः। त्रीणि। अजेति।। न जन साधुः। 'तत्र साधुः'। ४/४/६८ इति यत्। न जन्यते वा। 'जनेर्यक्' (उ० ४/११)। 'तकि शसि'-(वा० ३/१/६७) इति।।

यद्वा-१ उत्पतनम्। 'पत्लृ गतौ' (भ्वा० पु० से०)। 'घञ्' ३/३/१८, उत्पतति ज्वलादिः (३/१/१४०)वा।। २ उपसर्जनम्। उपसृज्यते वा।'घञ्' (३/३/१८-१९) 'उपसर्गः पुमान् रोग भेदोपप्लवयोरपि' इति मे० २५(५४)(३) त्रीणि 'शुभाशुभ सूचकमहाभूतविकारस्य'।। अमरकोषः-२/८/१०६

६. अचानक प्राणियों के ऊपर देवताओं के प्रकोप से शुभाशुभ सूचकं भूकम्पादि उपद्रव। उपद्रव अर्थात् उत्पात के शुभाशुभ फल को सूचित करने वाले, भूचाल, रोग के बीच में उत्पन्न दूसरा गौण रोग, पिपासादि विकार।[1]

७. उछाल, कुलाँच, उड़ान, प्रतिक्षेप, उठान, उभाड़ अशुभसूचक शकुन। ग्रहण, भूकम्प आदि अशुभ सूचक घटनाएँ ।

शुभाशुभसूचक भूतविकार, एकोत्पातेन एक छलांग में, उल्टकर आना, ऊपर उठना, संकट सूचक अशुभ या आकस्मिक घटना, सार्वजनिक संकट (ग्रहण, भूचाल आदि), धूमरेखा, केतु का उदय, अनिष्ट सूचक या प्रचण्ड वायु बवंडर या आँधी।[2] उपद्रव अर्थात् दुर्घटना, आपद, क्लेश, फिसाद, बराई, कमजोरी, बीमारी के लक्षण, any sudden portent accident, adversity, distress, mischief, evil, infirmity, symptoms of disease[3]

८. उत्पातः-

Portent, उत्पाताः पार्थिवान्तरिक्षात्- Utpata-Splitting off pulling up by the roots ,lex, utpatika, F - external bark of the tree which can be sptil of 3] In-flying up, jump, sudden and unusual event, portent, phenomenon.[4]

९.उत्पात- Portent's(Omen)

पूर्वलक्षणं, पूर्वलिङ्गं, शकुनं, भाविसूचकचिहं, भविष्यत्सूयकचिहं (Omen of ill, prodigy) उत्पातः, उपसर्गः, विनिपात्, व्यतीपातः, अद्भुतं, अरिष्टं, दुर्लक्षणं, अवलक्षणं, दुच्चिहं अवचिहं, अपशकुनं, उप्पलवः, उपलिङ्ग, उपद्रवः, अत्याहितं, उपाकृतं, अजन्यं, विनिहतः, अशुभलक्षणं, कुलक्षणं Ceremonies to avert portents, अनिष्टसूचकचिन्हं, भविष्यसनसूचकं, भविष्यसूचकं चिहं, अद्भुतशान्तिः।[5]

१- अकस्मादगते प्राणिनां शुभाशुभसूचके दैवनिमित्ते भूकम्पादौ। उपद्रवे।
उपद्रव-उत्पाते शुभाशुभसूचके भूकम्पादौ, रोग जन्यऽन्यक्तिन् पिपासदाहादौ विकार च।
शब्दस्तोममहानिधि- पृ०- ८१

२- संस्कृत-शब्दार्थ-कोस्तुभ- पृ०- २२८

क- 'एकोत्पातेन' 'करनिहतकुन्दुसमाः पातोत्पाता मनुष्याणाम्'
सुकुमारसुभगेत्युत्पातपंरपराकेयम्- काव्या-१०-संस्कृत-हिन्दी-कोश पृ०- १०७

ख. Sanskrit-Hindi-Dictionary Page- 93

३. A partical vedic Dictionary- पृ०- १७५

४. Indo- Aryan languages पृ०- ८४

५. Sanskrit English Dictionary पृ०- ८३

पर्यायवाची शब्द-

उपद्रव, तत्पर्य्याय, अजन्य, निमित्त, अद्भुत और उपसर्ग हैं। कोश के आधार पर इन शब्दों के अर्थः-

१-अद्भुत- (उद्+ भू+ डुतच्) वि०- आश्चर्य जनक, विस्मयकारक, विलक्षण, विचित्र, अनोखा, अपूर्व, अलौकिक, अप्रियघटना, अनूठा, आश्चर्य, आकस्मिक, नव रसों के अन्तर्गत एक रस। उल्कापातादि उत्पात, प्रकृति के विरुद्ध, आपत्ति का ज्ञान सूचक, देवों के प्रकोप से उत्पन्न बाधा आदि। अद्भुत शब्द शुभाशुभ दोनों अर्थों में प्रयोग हुआ दिखता है। भिन्न-भिन्न ग्रन्थों ने अपने अपने अर्थ में इसे प्रयोग किया है।[1]

उत्पात के अर्थ में उपर्युक्त पर्यायवाची शब्द संस्कृत साहित्य के ग्रन्थकारों ने प्रयुक्त किये हैं परन्तु उत्पात के लक्षण एवं अर्थ के अतिरिक्त इन शब्दों के और भी अर्थ हैं। अधिकतर यह शब्द अशुभ सूचक दुर्निमित्तों के अर्थ में मिलते हैं। वेदों में उत्पात के स्थान पर अद्भुत शब्द प्रयोग हुआ है। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में उपद्रव शब्द का, मार्कण्डेयपुराण में उपसर्ग शब्दका प्रयोग भी हुआ है। ज्योतिष के ग्रन्थों में उत्पात शब्द का प्रयोग अधिक हुआ है।[2]

उपद्रव-

तत्० (पुं०) उत्पात् अन्याय, बखेड़ा, अन्धेर, विद्रोह, अशान्ति, रोग विकार, प्रकोप।[1] अशुभ शकुन, विपत्तिसूचकऽकस्मिक घटना, पवनोत्पात, भूकम्पादि।[3]

---

१. अद्+भू+डुलच् जित्वात् टिलोपः। आदि भुवी डुतच्। उण्- ५-१-१
अततीत्यत् अव्ययमाकस्मिकार्थे, आकस्मिके उल्कापादौ।
प्रकृतिविरुद्धमद्भुतवचनम्, प्रकृतिविरुद्धमद्भुतमापदः
प्राक् प्रबोधाय देवाः सृजन्तीति। ज्योतिष तत्त्वे-

क. आपज्ज्ञानाय भूम्यादीनां पूर्वं स्वभाव प्राच्वोदेवकर्तृकोऽद्भुत इति। रघु०

ख. "उदयति स्म तदद्भुतमालिभिरिति" नैष०

ग. "तममद्भुतं बालकमम्बुजेक्षणमिति" भाग० वाचस्पत्यम्- भा०-१ - ११७

घ. अन्यत्वं प्रकृतेः यत्तदसावुत्पातसंज्ञकम्। वशिष्ठ सं०- ४५/०१

च. द्रष्टव्य- सचित्र ज्योतिष शिक्षा भा०- ०८, पृ०- ६४

२. हलायुधः। रोगारम्भकदोष प्रकोपचन्योऽन्यो विकारः। हारीते चि०- अ०- २
यो व्याधिस्तस्य यो हेतुर्दोर्षस्तस्य प्रकोपतः। योऽन्योविकारो भवति स उपद्रव उच्यते।।
व्याधेरूपरि यो व्याधिः उपद्रव उदाहृतः। सोपद्रवा न जीवन्ति जीवन्ति निरूपद्रवाः।।
हरीते चि०- २ अ०

३. उपद्रवः दौरात्म्य, धूर्तता, हानि, ग्रस्तः, उपद्रवयुक्तः:, अशुभशकुनम्।
विपत्तिसूचकऽकस्मिक घटनाः, पवोत्पातः, उत्पातवातः, भूकम्पादि। शब्दकल्पद्रुम-

उपसर्ग-

अशकुन, देवीप्रकोप, दैविक उत्पात, योगियों के योग में होने वाला विघ्न, मृत्यु का लक्षण, भूत प्रेत आदि दुष्ट आत्माओं द्वारा उत्पन्न विघ्न, दुःख, व्यथा।

रोगप्रभेदे। उपप्लवे। उत्पाते। उपद्रवे।

शुभाशुभसूचक महाभूतविकारे। क्रियायोगे प्रपरादिषु।।'

निमित्त-

कारण, हेतु, निदान, शकुन, लक्षण, त्रिविध कारणों के अन्तर्गत कारण विशेष, उत्पात, संकट, शुभाशुभ सूचक विकार।[२]

अजन्य- क्लीव, न जानने योग्य, विकार युक्त, अनिष्टकारक, उत्पात सूचक।[३]

सभी कोशकारों ने उत्पात शब्द की व्युत्पत्ति समान रूप से 'उत्' उपसर्गपूर्वक 'पत्' धातु से घञ् प्रत्यय प्रयुक्त होने से मानी है। सामान्यतः आज कल उत्पात शब्द से अशुभ अथवा अनिष्ट घटना को ही ग्रहण किया जाता है लेकिन इन कोश ग्रन्थों में प्रदत्त उत्पात शब्दके अर्थों से प्रतीत होता है कि यह उत्पात आकस्मिक घटना अथवा अनिष्टके सूचक ही नहीं हैं किन्तु कुछ उत्पात शुभ सूचक भी होते हैं जैसे-

वज्र एवं बिजली का गिरना, पृथ्वी का कम्पन, संध्या के समय वज्र का शब्द सुनाई देना, सूर्य तथा चन्द्रमा में मण्डलों का होना, धूलि और धूँए का उद्भव होना, उदय एवं अस्त के समय सूर्यकी अतिलालिमा का होना, वृक्षों के टूट जानेपर उस से रस का गिरना, फल वाले वृक्षों की अधिकता का होना, गौ, पक्षी, और मधु की वृद्धि का होना यह उत्पात यदि चैत्र वैसााख मास में हों तो शुभ फल दायिक होते हैं, इस प्रकार के अनेक उत्पात समय अनुसार घटित होने पर शुभ फलदायी होते हैं।[४]

---

१. तत्रौपसर्गिको यः पूर्वोत्पन्नं व्याधिं जघन्यकाल जातो
व्याधिरूपसृजति स तन्मूलएवोपद्रवसंज्ञः।" सुश्रुते सूतस्थाने- ३५ अ०

क. उपसर्ग-रोग प्रभेदे। उपप्लवे। उत्पाते। उपद्रवे। शुभाशुभसूचक महाभूतकविकारे। क्रियायोगे प्रपरादिषु। 'अमर कोश,' 'शब्दार्थचिन्तामणिः' पृ०- ७८

२. द्रष्टव्य - शब्द सागर भा० - २, पृ०- ६१५

३. द्रष्टव्य - परिजात कोश - ४५०, ४७४ पृ०

क. अजन्यम- क्लीब, उत्पात, उपसर्गः सम त्रयम्। 'अमर कोश'

४. वज्राशनिमहीकम्पसंध्यानिर्घातनिः स्वनाः। म० पु०- २२६/१४
परिवेषरजोधुमरक्तार्कास्तमयोदयाः।
द्रुमोदभेदकरस्नेहो बहुशः सफलद्रुमः।। तदेव- २२६/१५
गोपक्षिमधुवृद्धिश्च शुभानि मधुमाधवे। तदेव- २२६/१६

इस आधार पर हम कह सकते हैं कि उत्पात न केवल अशुभ घटना के सूचक होते हैं अपितु शुभ सूचक भी होते हैं। परन्तु इस शब्द का अधिक प्रचलन अशुभ घटनाओं के साथ अधिक जुड़ा है।

विभिन्न ग्रन्थो, ऋषियों एवं सभी आचार्यों द्वारा प्रतिपादित उत्पातों के प्रमुख तीन भेद गिनाये हैं जैसे -

प्रकृति के बदलने पर भूमिजन्य, आकाशीय और दिव्य ये तीन प्रकार के उत्पात होते हैं। उपद्रव वश तीन प्रकार के शोक और दुःख देने वाले उत्पात होते हैं। दिव्य, अन्तरिक्ष एवं भूमिजन्यं भयंकर रूप वाले विकार कहे गये हैं।[1] 'वशिष्ट संहिता'

दिव्य, आन्तरिक्ष और भौम के भेद से तीन प्रकार के उत्पात होते हैं।[2]

इस प्रकार संस्कृत साहित्य के सभी ग्रन्थों में दिव्य, आन्तरिक्ष और भौम तीन ही उत्पात के प्रमुख भेदों का वर्णन मिलता है। इन भेदों के आगे कई उपभेद हैं जिन का वर्णन क्रमानुसार आगे प्रस्तुत किया जायेगा।

परिभाषा एवं सामान्य परिचय

प्रकृति नियम के प्रतिकूल जो भी कार्य होते हैं वह उत्पात कहलाते हैं। नियम के प्रतिकूल कार्य ही उत्पात की संज्ञा में आते हैं। जैसे प्रकृति नियम के अनुसार दिन-रात, ऋतु आदि समय के अनुसार बदलते हैं यदि दिन में रात और रात्रि में दिन हो जाये, ग्रीष्म ऋतु में शरद् और शरद् ऋतु में ग्रीष्म ऋतु या अन्य कोई ऋतु आ जाय तो प्रकृति नियम के प्रतिकूल एवं प्राकृतिक विकार कहलायेगा। इसी प्रकार अनेक प्रकार के प्रकृति में विकार उत्पन्न होते हैं। इन विकारों के उत्पन्न होने से प्रकृति नियम में अवरुद्धता उत्पन्न हो जाती है जिस के कारण अनेक प्रकार की आकस्मिक घटनाऐं भूमि पर घटित होती हैं।

प्रकृति अपने पचमहाभूतों (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश) के गुण-धर्म के बेष्टित भौतिक जागृत एवं जड़ पिण्ड अपने अणु संसक्तावयवों से सदा स्पन्द क्रियाशील रहा करती है। प्रकृति के अवयवों की क्रियाशीलता में अवरुद्धता आ जाने से विकार उत्पन्न होते हैं। फिर वही विकार त्रिविध उत्पातों के रूप में घटित होते हैं।

---

१. तद्वशास्त्रिविधोत्पाता जायन्ते शोकदुखदाः।
दिव्यान्तरिक्षक्षितिजविकारा घोररूपिणः।। वशिष्ट सं०- ४५/०३

२. शुभाशुभसूचकोत्पातश्च दिव्यान्तरीक्ष भौम भेदात् त्रिविधः। 'वाचसपत्यम्'

क. दिव्यान्तरिक्ष भौमं तत्त्स्त्रिविधं परिकीतिर्तम्। वि० धर्मोत्तर- पृ०- १३४/६-०८

ख. दिव्यान्तरिक्ष भौमस्त्रिविधाश्चं भवन्त्युपाताः। ज्यो० रत्नकोष- उ० प्र० - ०१

स्थावर-जंगम आदि विश्व के प्रत्येक वस्तु का परस्पर में त्रिविध उत्पातों का प्रत्यक्ष-परोक्ष वशीकारक प्रभाव माना गया है। प्रकृति की सारी चेष्टायें इन तीनों उत्पातों के अधीन मानी गयी हैं। तात्पर्य यह है कि विज्ञान अनुमोदित प्राकृतिक अनुपात से अनुकूल क्रिया, प्रतिकूल अर्थात् शुभाशुभ ग्रह-नक्षत्रों के पिण्डस्थ तत्त्व आकर्षण शाक्ति द्वारा रश्मियों से प्रतिफलित होकर ऋतु धर्मानुसार अपने परिणाम जन्य परिपाकों को प्राप्त हुआ करते हैं। इस सूक्ष्म रहस्य की संगति अति कठिन है इस विषय में आचार्य वराहमिहिर ने बृहज्जातक में लिखा है -

"होरेत्यहोरात्र-विकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्।
कर्मांर्जितं पूर्वभवे सदाहि यत्तस्य पङ्क्ति समभिव्यनक्ति।।"

किसी कारण या कलादि समयऽनुसार प्रकृति इस जगत में अनेक विध परिवर्तन करती रहती है। परिवर्तन शील रहना प्रकृति का नियम है। इस परिवर्तन के समय प्रकृति के अवयवों में अवरुद्धता के कारण उत्पात घटित होते हैं। कुछ साधारण उत्पात होते हैं जिन के घटित हाने पर कोई विशेष हानि नहीं होती और कुछ इतने भयंकर उत्पात होते हैं जिनके घटित होने पर भूमण्डल की काया पलट जाती है।

इस जगत् में जितनी भी शुभाशुभ आकस्मिक घटनायें घटित होने वाली होती हैं उन को सूचित करने वाले लक्षण त्रिविध उत्पातों के रूप में घटित होते हैं जैसे प्राकृतिक उत्पात तीन प्रकार के होते हैं। उसी प्रकार इन को सूचित करने वाले लक्षण भी तीन प्रकार के होते हैं। इन लक्षणों भी प्राकृतिक उत्पात कहते हैं। इन प्राकृतिक उत्पातों का वर्णन ऋग्वेद, यजुर्वेद अथर्ववेद आश्वलायन गृह्यसूत्र, सांख्यान गृह्यसूत्र, शतपथब्राह्मण, याज्ञवल्कय स्मृति, मनुस्मृति, उपनिषद् ग्रन्थों, पुराणों, आयुर्वेदिक ग्रन्थों, रामायण, महाभारत, कौटिल्य अर्थशास्त्र, काव्य एवं नाटक ग्रन्थों में मिलता है। इस के अतिरिक्त ज्योतिष शास्त्र के संहिता ग्रन्थों में उल्कापात, परिवेष, विद्युत्पात, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, वर्षणऽवर्षण, आकस्मिक घटनाओं के होने, त्रिविध उत्पातों के लक्षण, भेद, उत्पात योग आदि का वर्णन विस्तार पूर्वक मिलता है।

वास्तव में प्राकृतिक उत्पातों का सम्बन्ध मनुष्य के साथ आदि काल से ही होने का वर्णन वैदिक साहित्य में मिलता है। इन उत्पातों के कारण मनुष्य को सृष्टि के आदिकाल से लेकर आधुनिक के वैज्ञानिक युग तक सुख चैन का जीवन जीना दुष्कर रहा है। उत्पात का मानव एवं मानवेत्तर प्राणियों के साथ सम्बन्ध आदि काल से है। सन्सार में मानव एवं अन्य प्राणियों की उत्पत्ति के साथ ही उन्हें बाड़, भूचाल, पर्वतसंकलन, अग्नि दाह आदि प्राकृतिक उत्पातों एवं प्राकृतिक आपत्तिक आपदाओं का सामना करना पड़ा होगा। अपने भौतिक विकासके साथ ही मानव ने प्राकृतिक आपदाओं को समझने वा

उससे बचने के उपाय भी प्रारम्भ कर दिये होंगे। उत्पातों का मानव से अधिक पुराने सम्बन्ध का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि उत्पातों का वर्णन हमारे ऋषियों ने वैदिक काल से प्रारम्भ कर दिया था। वैदिक साहित्य में यद्यपि प्राकृतिक आपदाओं केलिए अद्भुत एवं निमित्त शब्दों का प्रयोग हुआ है तथापि प्राकृतिक आपदाओं एवं उत्पातों को समझने की प्रक्रिया का प्रारम्भ उसीकाल से हो चुका था इस का निदर्शन तो वैदिक साहित्य देते ही हैं।

वैदिक साहित्य में उत्पात शब्द को अद्भुत एवं निमित्त नाम से प्रयुक्त किया गया है। **'अद्भुत'** प्राचीन शब्द है। ऋग्वेद में कई बार प्रयुक्त हुआ है। गृह्यसूत्रों में 'अद्भुत' शब्द ही आया है और शान्तियों को अद्भुत शान्तियाँ कहा गया है। अद्भुत न केवल भूचालों, ग्रहणों, धूमकेतुओं उल्कापातों आदि केलिए प्रयुक्त हुआ है,प्रत्युत यह असाधारण घटनाओं केलिए भी प्रयुक्त हुआ है। यथा- गाय द्वारा रक्तदूध देना, गाय द्वारा गाय का थन पीना आदि। इन अद्भुतों को सात दलों में बाँटा है- इन्द्र, वरुण, यम, अग्नि, कुबेर, विष्णु एवं वायु और प्रत्येक अद्भुतों के नाम गुण अनुसार लिखें हैं। यथा-रात्रि में इन्द्रधनुष 'इन्द्र' नामक अद्भुत, गिद्ध या उल्लू का घर पर उतरना या कपोत का घर में प्रवेश करना,'यम' नामक अद्भुत, बिना अग्नि का धुआँ होना 'अग्नि' नामक अद्भुत', किसी के जन्म के नक्षत्र पर ग्रहण का लगना 'विष्णुनामक' अद्भुत, अतिवृष्टि या अनावृष्टि का होना 'कुबेर' नाम अद्भुत, वायु का प्रचण्ड या तूफान का चलना 'वायु' नामक अद्भुत कहे गये हैं।

श्रौत या गृह्यसुत्रों में **'उत्पात'** शब्द विरल ही प्रयुक्त है। मध्य कालिक संस्कृत ग्रन्थों अर्थात् पुराणों में उत्पात शब्द अद्भुत की अपेक्षा अधिक प्रयुक्तहुआ है, कभी-कभी दोनों समानार्थक रूप में प्रयुक्त हुए हैं। अद्भुत एवं उत्पात शब्द एक दूसरे के पर्याय हैं। अग्नि पुराण, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, मत्स्य पुराण में उत्पात होने के कारण, भेद एवं शान्ति के साथ वर्णन किया है। रामायण में 'अयोध्याक० ४/१७/६' में वर्णन किया है। महा भारत में भीष्म पर्व- २/१६ -१७ विराट० '४६-३०' और मनुस्मृति में '६/५० में 'उत्पात' एवं निमित्त में भेद किया है।

महाभारत में निमित्तों या उत्पातों का बहुत उल्लेख हुआ है, सभापर्व० ३६/४-६, ८०, २८- ३१, ८६,१,२२-२५, वन० '१७६, १४१, २२४,१६७,१८' विराट०, सभापर्व-भीष्म ० ३/६५- ७४, शान्ति० ५२/२५, आश्वमेधिक० ५३/५-६ में, और कर्ण ० ७२/१२-१३ में प्रमुख उत्पातों का लक्षण एवं फल सहित वर्णन किया है।

गर्ग, पराशर, सभापर्व, बृहत्संहिता, मत्स्य पुराण, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, अथर्व-परिशिष्ट '६६/११२' आदि ने उत्पातों को तीन भागों में बाँटा है। दिव्य, आन्तरिक्ष और भौम तीन प्रकार के उत्पातों का लक्षण एवं फल सहित वर्णन किया हुआ है। इस के साथ ही इन उत्पातों की शान्ति ऋग्वेद की ऋचाओं में, अथर्व वेद में, श्रौतसूत्रों में, ब्राह्मण ग्रन्थों में, कृत्यकल्पतरु और पुराणों में वर्णित किया हुआ है। विभिन्न प्रकार की शान्तियों का विधान है। उत्पात कुछ ऐसे भी होते हैं जो ऋतुओं में उपस्थित होते हैं जिन की शान्ति करना आवश्यक नहीं होता है जैसे- चैत्र एवं वैशाख में विद्युत-चमक, उल्कापात, भूचाल, चमकती सन्ध्याएँ, अन्धड़- तुफान, गगन धूलि, वन-धूम रक्तिम सूर्योदय एवं सूर्यास्त होना आदि।

पारस्करगृह्यसूत्र-

पारस्करगृह्यसूत्र के अनध्याय में प्रचण्डवायु के चलने, आँधी-तूफ़ान, उल्कापात, वज्रपात, भूमिचलन (भूकम्प), अग्न्युित्पात, ऋतुविकार, विद्युत्पात का वर्णन आया है यहाँ पर इन विकारों के घटित होने के समय को अशुभ माना है।[1] कुत्ते, गधे, उल्लू, शृंगाल के चिल्लाने के समय को भी अशुभ माना है।[2] उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि गृह्यसूत्रों में उत्पात एवं शकुन शास्त्र का वर्णन॰शुभाशुभ समय के ज्ञान को प्रकट करते हैं।

मनुस्मृति-

मनुस्मृति में मनु आकालिक अनाध्यायों का विवेचन करते हुए विद्युत के चमकने, मेघ वृष्टि एवं महान् उल्कापात का उल्लेख किया है।[3] दिग्गर्जन, भूकम्प और ग्रह-ताराओं के परस्पर युद्ध का, विद्युत्पात, सूर्य और चन्द्र ग्रहण, धूल उड़ने, धूली वर्षा, दिग्दाह के हाने, शृंगाल, कुत्ते, गधे और ऊँट के उच्च्व स्वर से बोलने जैसे निमित्तों का वर्णन किया है।[4] धूमकेतु आदि उत्पात, निमित्त, तिथि-नक्षत्र के योग्य अयोग्य योगों का फलाफल का वर्णन मिलता है।[5]

---

१. चोल्कावस्फूर्जद्भमिचलनाग्न्युत्पातेष्वृतुसन्धिषु चाकालम्
उत्सृष्टेष्वभ्रदर्शने सर्वरूपे च त्रिरात्रं त्रिसनध्यं वा।। पारस्करगृह्यसूत्र- २ काण्ड ११/२-३

२. श्वगर्दभोलूकशृंगालसामशब्देषु शिष्टाचरिते च तत्कालम्। तदेव - - -२ काण्ड - ११/६

३. विद्युत्स्तनितवर्षूषु महाल्कानां च संप्लवे।
आकालिकमनध्यायमेतेषु मनुरब्रवीत।। मनु० स्मृ०- ०४/१०३

४. निर्घाते भूमिचलने ज्योतिषां चोपसर्जने। तदेव० - ०४/१०५
प्रादुष्कृतेष्वाग्निषु तु विद्युत्स्तनितनिः सने। तदेव० - ०४/१०६
ष्यहं न कीर्तयेद्ब्रह्म राज्ञो राहोश्च सूतके। तदेव० - ०४/११०
"नीहारे बाण शब्दे"........... तदेव० - ०४/११३

५. न चोत्पातनिमित्ताभ्यां न नक्षत्राङ्गविद्यया।
नानुशासनवादाभ्यां भिक्षां लिप्सेत कर्हिचित्।। मनु० स्मृ०- ०४/५०

याज्ञवल्क्य स्मृति में नवग्रहों का स्पष्ट उल्लेख मिलता वर्तमान है, क्रान्तिवृत्त, मेषादि राशियों २७ योगों का, ग्रहों के संयोग जन्य फलों का वर्णन मिलता है।

कौटिल्य अर्थशास्त्र

कौटिल्य अर्थशास्त्र में शुभाशुभ सूचक उत्पातों का विचार कर के यात्रा आरम्भ करने एवं बाह्य आभ्यन्तर दोनों प्रकार की विपत्तियाँ जैसे उत्पातों का वर्णन मिलता है।[1] बाह्य और अभ्यन्तर आपत्तियों के, उपजपिता तथा प्रतिजपिता के भेद से चार भेद बताये हैं।[2]

दैवी आपत्तियों का प्रतिकार

दैववश होने वाले आठ महाभय हैं:- अग्नि, जल, बीमारी, दुर्भिक्ष, व्याघ्र, साँप चूहे और राक्षस। इन सबसे जनपद की रक्षा राजा को करनी चाहिए।[3]

पूर्णमासी आदि पर्व तिथियों में बलिहोम और स्वस्ति वचनों से अग्नि की पूजा करने एवं अन्य आपत्तियों से निवारण के लिए बताया गया है।[4] इस प्रकार आगे विस्तार से उत्पातों के भेदों, उत्पात के फल, लक्षण एवं शान्ति का भी वर्णन किया जायेगा।

उत्पात के प्रमुख भेद

संस्कृत साहित्य में अनेक प्रकार के उत्पातों एवं इन के शमनके उपायों का वर्णन साथ साथ हुआ है। इन का वर्गीकरण भी उपलब्ध होता है परन्तु गृह्य सूत्रों में उत्पातों के लिए **'अद्‌भुत'** शव्द आया है। वृद्ध-गर्ग ने अद्‌भुतों को सात दलों में बाँटा है- **इन्द्र, वरुण, यम, अग्नि, कुबेर, विष्ण** एवं वायु। प्रत्येक के नाम इन के गुणों के आधार पर रखे गये हैं यथा-रात्रि में इन्द्रधनुष के गिरने पर **'इन्द्र'** नामक अद्‌भुत होता है। गिद्ध का घर पर उतरने या उल्लू का घर पर उतरने से या फिर कपोत का घर में प्रवेश करने पर **'यम'** नामक अद्‌भुत होता है। बिना अग्नि का धुआँ निकलने पर **'अग्नि'** नामक

---

१. विजिगीषुरात्मनः परस्य च बलावलं शक्तिदेशकाल यात्रा काल,
बलसमुत्थानकालपश्चात्कोपक्षयव्ययलाभापदां ज्ञात्वा विशिष्टवलो यायात् अन्यधासीत।।
कौटिल्य आर्थशास्त्र- नवमाधिकरण/१ अध्याय/२

२. बाह्येत्पत्तिरभ्यन्तरप्रतिजापा, अभ्यन्तरोत्पत्तिरभ्यन्तर प्रतिजापा, बाह्योत्पत्तिर्बाह्यप्रतिजापा, अभ्यन्तरोत्पत्तिरभ्यन्तरप्रतिजापा,इत्यापदः।। तदेव० - - ०६/१८३/३

३. देवान्यष्ठौ महाभयानि।। अग्निरुदकं व्याधिदुर्भिक्षं मूषिका व्यालाः सर्पा रक्षांसीति। तेभ्यो जनपदं रक्षेत्।। कौटिल्य आर्थशास्त्र- नवमाधिकरण/०१/७३/३

४. बलिहोमस्वस्तिवाचनैः पर्वसु चाग्निपूजाः कारेयत्। तदेव०-- -- ०३/७८/८

अद्‌भुत होता है। किसी के जन्म नक्षत्र पर ग्रहण लगने से 'विष्णु' नामक अद्‌भुत होता है। अतिवृष्टि या अनावृष्टि के होने पर 'कुबेर' नामक अद्‌भुत होता है। इसी प्रकार बृहत्संहिता, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, मत्स्य पुराण, महाभारत का सभापर्व, गर्गसंहिता पराशरसंहिता, मुहूर्तगणपति, बृहत्मुहूर्तसिन्धु आदि में उत्पातों को प्रमुख तीन भागों में विभक्त किया गया है और इन के उपभेदों का विस्तार से वर्णन किया है, जो निम्नलिखित हैं- उत्पात के प्रमुख तीन भेद-

१. दिव्य, २. आन्तरिक्ष और ३. भौम [1]

वैदिक साहित्य एवं ज्योतिष शास्त्रीय ग्रन्थों, विभिन्न पुराणों एवं महाभारत आदि महा काव्यों में उपलब्ध सामग्री के आधार पर दिव्यादि तीनों उत्पातों पर क्रम से प्रकाश डाला जा रहा है-

दिव्य उत्पात के लक्षण-

१- सूर्यचन्द्रादि ग्रह और अश्विनि भरणी नक्षत्रादिके विकारसे युक्त होने वाले उत्पात को 'दिव्य' उत्पात कहते हैं।[2]

२- सूर्यादि ग्रह और नक्षत्रों के विकार को 'दिव्य' उत्पात कहते हैं।[3]

३- ग्रहों और नक्षत्रों में जो विकार आजाते हैं उने दिव्य उत्पात कहते हैं जैसे सूर्य या चन्द्र के आगे अन्धकार का छाजाना, दिन में अन्धकार का होना और रात्रि में सूर्य जैसा प्रकाशका होना।[4]

४- सूर्य, चन्द्र, मंगलादि ग्रहों का विकारसे युक्त होना और नक्षत्रों में विकार का आना 'दिव्य' उत्पात होता है।[5]

५- नक्षत्र टूटे या ग्रहों का आपस में युद्ध होने से जो उत्पात होता है उसे 'दिव्य' उत्पात कहते हैं।[6]

१-क. संसूचयन्ति दिव्यान्तरिक्षभौमास्त उत्पातः । बृ० सं०-४६/२

ख- विविधादिव्य भौमांतरिक्षभेदात् प्रकृतेरन्यत्र उत्पातः। बृहत्मुहूर्तसिन्धुः- उत्पातऽध्याय-श्लो०.१

ग- दिव्यान्तरिक्षभौमं तत्त्रिविधं परिकीर्तितम् । वि० ध० पु० -१३४/६

घ- दिव्यान्तरिक्षभौमं च त्रिविधं सम्प्रकीर्तितम् । म० पु० १३६-६

२- दिव्यं ग्रहर्क्षवैकृतम्' --- बृ० सं०-४६/४

३- दिव्यं ग्रहर्क्षवैकृतम्' --- बृहत्मुहूर्तसिन्धुः--उत्पातऽध्याय-१

४- 'ग्रहर्क्षवैकृतं दिव्यमम्' । म०- पु०- १२६/६

५- 'ग्रहर्क्षवैकृतां दिव्यमम्' - वि० ध० पु०- १३४/६

६- उत्पातास्त्रिविधा ज्ञेया दिव्याभौमा [illegible]रिक्षजाः ।
भेषु दिव्यास्तधा वृक्षध्वजादावन्तरिक्षजाः ।। मु०ग० मि०-६१

६- ग्रहों एवं नक्षत्रों की विकृति से होने वाले उत्पातों को 'दिव्य' उत्पात कहते हैं।[१]
७- ग्रहकृत विकार अर्थात् ग्रहों में जो विकार से उत्पन्न उत्पात होते हैं और नक्षत्रकृत विकार अर्थात् नक्षत्रों में जो ग्रहों द्वारा विकार होते हैं उन्हें 'दिव्य' उत्पात कहते हैं।[२] उपर्युक्त वर्णित दिव्य उत्पात का लक्षण एवं अर्थ सभी ग्रन्थकारों ने अपने अपने अनुसार किया है।

आन्तरिक्ष उत्पात के लक्षण

१- उल्का का गिरना, निर्घात (विकार युक्त वायु), सूर्य चन्द्र का परिवेष, गन्धर्व नगर, इन्द्र धनुष. का गिरना आदि 'आन्तरिक्ष' नामक उत्पात होते हैं।[३].
२. उल्का का गिरना,वायु का अति वेग के साथ चलना,गन्धर्वनगर का दिखना, इन्द्रधनुष का पड़ना आदि 'आन्तरिक्ष' नामक उत्पात होते हैं।[४]
३- ध्वजा या वृक्षादि टूटें तो 'आन्तरिक्ष' नामक उत्पात होते हैं।[५]
४- उल्कापात, दिशाओं का दाह अर्थात् पूर्व-पश्चिम आदि दिशाओं में आग सी लगी दिखना, मण्डलों का उदय होना, आकाश में गन्धर्व नगर का दिखाई देना, खंडवृष्टि, अनावृष्टि अथवा अतिवृष्टि होने लगे और इसी प्रकार के अन्य उपद्रवों को 'आन्तरिक्ष' उत्पात कहते हैं।[६]
५- आकाश से बिजली का गिरना, गन्धर्वनगर का आकाश में दिखाई देना, अतिवृष्टि या अनावृष्टि का होना और आकाश में होने वाले उत्पातों को 'आन्तरिक्ष' उत्पात कहते हैं।[७]
६- उल्कापात, दिग्दाह, परिवेष, सूर्य पर घेरा पड़ना, गन्धर्वनगर का दर्शन एवं विकार युक्त वृष्टि का होना आदि उत्पातों को 'आन्तरिक्ष' उत्पात कहते हैं।[८]
७- उल्कापात, निर्घात शब्द अर्थात् ओले पड़ना, बादलों का गर्जना, धूमकेतु का उदय, ग्रहयुद्ध और जोवृष्टि इत्यादि यह 'आन्तरिक्ष' उत्पात कहे गये हैं।[९]

१- 'ग्रहर्क्षवैकृतं दिव्यमम्'-- '। अ० पु०--२६२/१२,
२- ' दिव्यं ग्रहर्क्षवैकृतम्' -- '। शु० दी०- ८/३
३- उल्कानिर्घातपवनपरिवेषाः। गन्धर्वपुरपुरन्दरचापादि यदान्तरिक्षं तत्।। बृ० सं०- ४६/५
४- उल्कानिर्यातपवनपरिवेषाः गंधर्वेषु। पुरंदरचापादियंदरिक्षंस्यात्।। बृहत्मुहूर्तसिन्धुः-उत्पातऽध्याय-१
५- वृक्षध्वजादावन्तरिक्षजाः। मु० ग० मि० प्र० उ०- ६१
६- उल्कापातो दिशां दाहः परिवेषस्थैव च । गन्धर्वनगरं चैव वृष्टिश्च विकृता तु या।।
एवमादीनि लोकेऽस्मिन्नान्तरिक्षं विनिर्दिशेत्। म० पु०- २२६/ ७-८
७- उल्कापातो दिशां दाहः परिवेषस्तथैव च। गन्धर्वनगरं चैव वृष्टिस्तु विकृता च या। वि० ध०- १३४/ ७
८- उल्कापातश्च दिग्दाहः परिवेशस्तथैव च। गन्धर्वनगरञ्चैव वृष्टिश्च विकृता च या।। अ० पु०-२६२/१२
९- दिव्यं ग्रहर्क्षवैकृतमगचरजं भूमिजं खजं चान्यत्। शु० दी०- ८/३

भौम उत्पात के लक्षण

१- चलायमान अर्थात् चलने वाली वस्तु के स्थिर होने और स्थिर अर्थात् जो वस्तु एक स्थान पर स्थिर हो वह चलायमान होने लगे, इस प्रकार के विकार को 'भौम' नामक उत्पात कहते हैं।[1]

२- भूमि का चर और स्थिर होना, प्रतिमा में विकार होना, अग्नि सम्बन्धि विकार, वृक्ष सम्वन्धि विकार, नदी सम्बन्धि विकार, प्रसूतिका विकार, चतुष्पद विकार, मृगपक्ष्यादि में विकार, भूकम्प आदि का होना 'भौम' सम्बन्धि उत्पात कहे गये हैं।[2]

३- पृथ्वी का फट जाना भौम नामक उत्पात होता हैं।[3] गोचर अर्थात् पर्वतादिज(भूकम्पादि) का होना, वृक्षज, अयोग्य काल फलित अर्थात् असमय में फलित फल पुष्पादि एवं अन्य वृक्ष में अन्य फल पुष्पादि की उत्पत्ति, पृथ्वी पर होने वाले विकारों को भूमिज अर्थात् 'भौम' उत्पात कहते हैं।[4]

५- भूमि पर एवं जंगम प्रणियों से होने वाले उपद्रव तथा भूकम्प ये 'भौम' उत्पात होते हैं।[5]
६- स्थावर एवं जंगम पदार्थों में विकारों का उत्पन्न होना,जलाशयों में विकारों का उत्पन्न होना और भूकम्पादि का होना ये 'भौम' सम्बन्धि उत्पात होते हैं।[6]

७- भूमि का हिलना, विकार युक्त होना भूमि पर भूकम्पादि विकारों का होना, जलाशयों में विकार होना, स्थावर एवं जंगम में विकारों का उत्पन्न होना 'भौम' नामक उत्पात होते हैं।[7]

१- भौमं चरस्थिरभवं तच्छान्तिभिराहतं शममुपैति । बृ० सं०-४६/ ५
२- भौमं चरस्थिरभवंतत्रप्रतिमावैकृत्तं अग्निवैकृतं वृक्षवैकृतं नदीवैकृत प्रसववैकृतं चतुष्पदवैकृतं मृगपक्ष्यादिवैकृतं भूकपंश्चतथावहिः एतानि भौम नामाः उत्पाताश्चबोध्याः ।।
तदेव-- ४६/१
३- भूमौ भौमाः ----- ---- । मु० ग० उ०, श्लो० ६२
४- अगचरजं भूमिजं खजं चान्यत् --- । शु० दी०- ८/ ३
५- चरस्थिरभवं भूमौ भूकम्पमपि भूमिजं --। अ० पु० २६२/ १३
६- चरस्थिरभवो भौमो भूकम्पश्चापि भूमिजः।
जलाशयानां वैकृत्यं भौमं तदपि कीर्तितम्। म० पु० २२६/८-६
७- चरस्थिरभयं भूमौ भूकम्पामपि भूमिजम्।
जलाशयानां वैकृत्यं भूमौ तदपि कीर्तितम्।। वि० ध० पु० १३४/ ६

त्रिविध उत्पातों के मण्डल

उत्पातों का समय के अनुसार अर्थात् दिन रात्रि आदि और नक्षत्रों के अनुसार मण्डलों में वर्गीकरण किया हुआ है और मण्डलों के अनुसार शुभाशुभ फल देते हैं।

१- समय के अनुसार मण्डल-

क)- यदि दिन या रात्रि के प्रथम पहर में त्रिविध उत्पातों में से कोई भी उत्पात हो तो **'वायुमण्डल'** नामक उत्पात होता है।

ख)- यदि दिन या रात्रि के द्वितीय पहर में उत्पात हो तो **'अग्निमण्डल'** नामक उत्पात होता है।

ग)- यदि दिन या रात्रि के तीसरे पहर में उत्पात हो तो **'इन्द्रमण्डल'** नामक उत्पात होता है।

घ)- यदि दिन या रात्रि के चतुर्थ पहर में उत्पात हो तो **'वरुणमण्डल'** नामक उत्पात होता है।[1]

२- नक्षत्र के मण्डल-

सात-सात नक्षत्रों को वायु आदि मण्डलों में विभाजित किया गया है और जिस नक्षत्र में उत्पात हो उस नक्षत्रके वर्ग के अनुसार उस का मण्डल होता है और मण्डल के अनुसार फल घटित होता है।

१- उत्तराफाल्गुणी, हस्त, चित्रा, स्वाती, मृगशिरा, अश्विनी और पुनर्वसु इन सात नक्षत्रों में उत्पन्न उत्पात **'वायुमण्डल'** के अन्तर्गत आते हैं।

२- पुष्य, पूर्वाभाद्रपद, विशाखा, भरणी, कृत्तिका, मघा और पूर्वाफाल्गुणी इन सात नक्षत्रों में उत्पन्न उत्पात **'अग्निमण्डल'** के अन्तर्गत आते हैं।[2]

३- उत्तराषाढ़ा, श्रवण धनिष्ठा, रोहिणी, अनुराधा, और ज्येष्ठा इन छः नक्षत्रों में उत्पन्न उत्पात **'इन्द्रमण्डल'** के अन्तर्गत आते हैं।

४- आश्लेषा, उत्तराभाद्रपदा, शतभिषा, रेवती, मूला, पूर्वाषाढ़ा और आर्द्रा इन सात नक्षत्रों में उत्पन्न उत्पात' **वरुणमण्डल'** के अन्तर्गत आते हैं।[3]

५-(क) भूकम्पादि महाउत्पात जिस नक्षत्र के मण्डल में होते हैं उस मण्डल के स्वभाव के समान द्रव्य, जन्तु अर्थात् प्राणी और देश को पीड़ा होती है। वायु या अग्नि मण्डल के

१- प्रागद्वित्रिचतुभागेषु द्युनिशोरदभुतेषु सर्वेषु ।
इन्द्र ऽग्निशक्तवरुणा मण्डलतयः शुभाशुभंकुर्यः ।। शु० दी०-८/५

२- आर्य्यम्णादिचतुष्कचन्द्रतुरगादित्येषु वायु भवेत्।
दैवेज्याजविशाखयाम्ययुगले पित्रद्वये चानलः ।। तदेव - ८/६

३- वैश्वादित्रयधातृमैत्रयुगलेष्विन्द्रो भवेन्मण्डलः ।
स पोर्पान्त्यशतान्त्यमूलयुगलेशानेष्वपामीश्वरः।। तदेव - ८/६

नक्षत्र में उत्पात हो तो अशुभ होता है नक्षत्र में उत्पात हो तो अशुभ होता है अर्थात् देश, ग्राम, नगर आदि का नाश करता है।[1]

(ख) वायु और अग्नि मण्डल शुभ जनक नहीं होते हैं अर्थात् यदि वायुवेला (दिन या रात्रि के प्रथम पहर) में वायुमण्डल का नक्षत्र हो और उस में हुआ उत्पात शुभदायक नहीं होता। अग्निवेला अर्थात् दिन या रात्रि के दूसरे पहर में अग्निमण्डल का नक्षत्र हो और उस में उत्पन्न हुआ उत्पात शुभदायक नहीं होता।

(ग) वायु और अग्नि का मिलना अत्यन्त दोषावह होता है, यदि वायुवेला में अर्थात् दिन या रात्रि के प्रथम पहर में अग्निमण्डल का कोई नक्षत्र हो तो उस में उत्पन्न हुआ उत्पात अत्यन्त दोष जनक होता है। इसी प्रकार अग्नि वेला और वायुमण्डल के नक्षत्रों का भी फल होता है।

(घ) इसी प्रकार इन्द्रमण्डल का नक्षत्र और वरुणवेला के होने से और वरुणमण्डल का नक्षत्र और इन्द्रवेला के होने से उत्पन्न हुआ उत्पात अधिक शुभफल देता है।

(ङ.) वरुणमण्डल का नक्षत्र और वरुणवेला के होने से मिश्रित फल होता है अर्थात् इस में उत्पन्न उत्पात शुभाशुभ दोनों प्रकार का फल देता है।

(च) अग्निवेला में इन्द्रमण्डल का नक्षत्र और इन्द्रवेला में अग्निमण्डल का नक्षत्र होने से मिश्रित फल होता है। इस योग में हुआ उत्पात मिश्रित फल देता है।

(छ) इन्द्रमण्डल का नक्षत्र और वायुवेला में और वायुमण्डल का नक्षत्र एंव इन्द्रवेला में हुआ उत्पात शुभाशुभ फल नहीं देता।

(ज) अग्निमण्डल का नक्षत्र और वरुणवेला में एवं वरुणमण्डल का नक्षत्र और अग्निवेला में हुआ उत्पात का शुभाशुभ फल कुछ भी नहीं होता है।[2]

१- भूकम्पादिमहोत्पातो जायते यत्र मण्डले। तत्तत्स्वभावजं द्रव्यं जन्तून्देशं च पीडयेत्।।
वारवग्निमण्डलोदभ्रता अनिष्टाः परिकीर्तिताः। मु० ग०-मि०प्र०-१०६-१०७

२- पवनदहनौ नेष्टौ योगस्तयोरतिदोषदः सुरपवरुणौ। शस्तौ योगस्तयोरतिशोभनः।।
सवरुणमरून्मिश्रः शक्तस्तथाग्निसमायुतः फलविरहितः सेन्द्रो वायुस्तथाग्नियुतोऽम्बपः।।
शु० दी०-०८/०६-०७

उत्पात होने के कारण

भारतीय चिन्तन परम्परा कर्म एवं धर्म प्रधान रही है। अतः अपने द्वारा किये शुभाशुभ कर्मों को सुख-दुःख के साथ जोड़ता आया है। यही कारण है कि त्रिविध उत्पातों- दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम के मूल में भी वह शुभाशुभ कर्मों तथा अधर्म को कारण रूप देखता है। इस मान्यता के अनुसार पुञ्जी भूत पापों के कारण ही प्राणियों पर उत्पात टूटते हैं। श्री मद्भागवत महापुराण कार उत्पात के कारणों को कुछ विस्तार देते हुए कहता है-

काल की गति बड़ी विकट होने, ऋतु में विकार होने अर्थात् जिस समय जो ऋतु होनी चाहिये उस समय वह ऋतु नहीं होती और उनकी क्रियाएँ भी उल्टी होने, लोग बड़े क्रोधी, लोभी और असत्यपरायण होने, अपने जीवन निर्वाह के लिये लोग पाप पूर्ण व्यवहार करने, सारा व्यवहार कपट से भरा हुआ होने, यहाँ तक कि मित्रता में भी छलकपट होने, पिता-माता, सगे-सम्बन्धी, भाई और पति-पत्नी में भी झगड़ा-टंटा होने और लोगों का स्वभाव ही लोभ, दम्भ आदि अधर्म से अभिभूत होने आदि प्रकृति में अत्यन्त अरिष्ट सूचक अपशकुन एवं उत्पात होने का करण मानते हैं।[1] इस विषय में गर्गादि ऋषियों एवं वराहमिहिर आदि आचार्यों का कथन इस प्रकार है -

१. अति लोभ, असत्य वा नास्तिक्य के कारण मनुष्य अधर्म करते हैं जिस से उपसर्ग होते हैं।[2] 'गर्ग संहिता'

२. जब पृथ्वी पर मनुष्यों द्वारा अत्यधिक अत्याचार होते हैं और उन से पाप इकट्ठे होते हैं। उन पापों द्वारा देवता गण मनुष्यों पर अध्यधिक दुखी हो जाते हैं और उन्हीं की अप्रसन्नता से विनाशसूचक महा उत्पात होते हैं।[3]

३. मनुष्यों में जब विनम्रता नहीं रहती, पाप कर्म करने लगते हैं और जब पाप वहुत बढ़ जाता है तो इस से प्रकृति में उपद्रव होने लगता है, इसी उपद्रव को आचार्यों ने उत्पात की संज्ञा दी है।[4] 'वशिष्ट संहिता'

---

१. व्यतीताः कतिचिन्मासास्तदानायात्ततोऽर्जुनः। ददर्श घोररूपाणि निमित्तानि कुरुद्वहः।।
कालस्य च गतिं रौद्रां विपर्यस्तर्तुधर्मिणः। पापीयसीं नृणां वार्तां क्रोधलोभानृतात्मनाम्।।
जिह्वाप्रायं व्यवहृतं शाठ्यमिश्रं च सौहृदम्। पितृमातृसुहृद् भ्रातृदम्पतीनां च कल्कनम्।।
निमित्तान्यत्यरिष्टानि काले त्वनुगते नृणाम्। लोभाद्यधर्मप्रकृतिं दृष्ट्वोचानुणं नृपः।।
श्रीमद्भागवत म०पु०-प्र० स्कन्ध- १३/१-५

२. अतिलोभादसत्याद्वा नास्तिक्यद्वाप्यधर्मतः। नरापचारान्नियतमुपसर्गः।। 'गर्ग संहिता'

३. अपचारेण नराणामुपसर्गः पापसञ्चयाद्भवति।
संसूचयन्ति दिव्यानिरिक्ष भौमास्तं उत्पाताः।। बृ० सं० उत्पात अ० श्लो ० -०२
पुरुषापचारान्नियतमपर ज्यन्ति देवताः।
ततोपरागाद्देवानामुपसर्गः प्रवर्तते।। विष्णु धर्मोत्तर पु०- वि- अ०- १३८/०५

४. अधर्मत्वादसत्याच्च नास्तिक्यादतिलौभतः।
अत्याचारात् नृणां [illegible] वशिष्ट सं० ४५/०३

४. जब भूमण्डल पर मनुष्य अपने धर्म को त्याग कर अधर्म के कार्य करने लगते हैं। उस समय भूमि पर असत्य, लोभ, क्रोध, झूठ, कपट, हिंसा आदि के कारण पाप बढ़ जाता है जिससे देवता गण उन की रक्षा नहीं करते तब जगत का नाश होता है। वह नाश किस प्रकार का होगा, उस की सूचना देवतागण पहले से ही, भौम, अन्तरिक्ष और दिव्य निमित्तों के द्वारा कर देते हैं।[1] विष्णु धर्मोत्तर पु०, मत्स्य पु०, न०सं०, वशिष्ट सं० में ऐतिहासिक घटनाएँ जिनके कारण उत्पात घटित हुए थे उन में से प्रमुख निम्नलिखित हैं:-

शिव पुराण- रुद्र संहिता के ३३वें और ३४वें अध्याय में वीरभद्र और महाकाली द्वारा दक्ष का विध्वंस करने के कारण यज्ञ विध्वंस के पूर्व ही राजदक्ष की वायीं आँख, बायीं भुजा और बायीं जाँघ फड़कने और उसके समक्ष नाना प्रकार के कष्टदायी एवं विनाश सूचक उत्पातों के प्रकट होने का उल्लेख आया है।[2]

रावण संहिता

माली और सुमाली नामक राक्षसों का अन्य राक्षसों सहित देवताओं के साथ युद्ध करने से पूर्व एवं रावण के जन्म समय पर प्रकट हुए उत्पातों का वर्णन मिलता है।[3]

मत्स्य पुराण

हिरण्य कशिपु के भीषण अत्याचारों एवं भीष्ण युद्ध होने के कारण अनेक प्रकारों के उत्पातों के प्रकट होने का वर्णन मिलता है जैसेः- वहाँ वायु का विकट होना, समस्त लोकों के विनाश के अवसर पर जो ग्रह प्रकट होते हैं वैसे ग्रहों का दृष्टिगोचर होना, बिना पर्व अर्थात् अमावस्या एवं पूर्णिमा के बिना ही सूर्य चन्द्र को ग्रहण लगना, सूर्य और चन्द्रमा का कान्तिहीन होना, काले रंग के धूमकेतु का दिखाई देना, अग्नि विकारों का पृथ्वी एवं आकाश में प्रकट होना, आकाश मण्डल में धुएँ की-सी कान्ति वाले सात भयंकर सूर्यों का प्रकट होना, ग्रहों का चन्द्रमा के शिखर पर स्थित होने, चन्द्रमा के वामभाग में शुक्र और दाहिने भाग में बृहस्पति का स्थित होने, अग्नि के समान कान्मिान शनैश्चर और मंगल का दृष्टिगोचर होने, चन्द्रमा नक्षत्रों और ग्रहों के साथ रहकर चराचर जगत् का विनाश करने सदृश रोहिणी पर आरूढ़ होने, चन्द्र ग्रहण समय उल्काओं का गिरने, प्रज्चलित उल्काओं का चन्द्रलोक में विचरण करने, इन्द्र देवता द्वारा रक्त की वर्षा करने आकाश से बिजली की-सी कान्ति वाली उल्काओं का भयंकर शब्द करती हुई पृथ्वी पर गिरने,

---

१. ततोऽपचारो मर्त्यानामपरज्यन्तिः देवताः ते
सृजन्त्यद्भुतान्भावान्दिव्यभूम्यन्तरिक्षजान्।। भविष्य फल भास्कर- उपद्रव प्रकरण- ०२

२. द्रष्टव्य- शिवपुराण- रुद्रसंहिता- ३३-३४ अध्याय

३. भौमाश्चैवान्तरिक्षाश्च कालाज्ञप्ता भयावहाः।
उत्पाता राक्षसेन्द्रा[illegible] ।। रावण संहिता- [illegible]

असमय में वृक्षों पर फूल एवं फल लगने और सभी लताएँ पत्तों युक्त होने सभी देवताओं की मूर्तियों में विकार आने, जैसे उत्पातों के लक्षण प्रकट हाने का वर्णन मिलता है।[1] इसके अतिरिक्त दैत्य राज हिरण्य कशिपु के महल में, भण्डार गार में और आयुधागार के ऊपर मधु टपकने जैसे उत्पात भी प्रकट हुए जो असुरों के विनाश और देवताओं की विजय की सूचना दे रहे थे और भी बहुत से भयंकर उत्पात जो काल द्वारा निर्मित थे दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपु के विनाश के लिए प्रकट हुए थे।[2]

महाभारत युद्ध के समय में बड़े ज़ोर से कोलाहल होने, आकाश में सब ओर मनुष्य सी आकृति दिखायी देने जैसे उत्पात होने लगे जो सम्पूर्ण देवों में यह अद्भुत दृश्य वाले उत्पात थे।[3]

वर्षा हुई, आकाश में यक्षों, राक्षसों तथा पिशाचों का महान् कोलाहल सुनायी देने, उस घोर शब्द के साथ बहुत से पशुओं और पक्षियों की भयानक ध्वनि सम्पूर्ण दिशाओं में गूँजने और अस्त्र-शस्त्र और ध्वजा वाले सभी वीरों के काँपने वाले भयंकर उत्पातों के होने का उल्लेख आया है।[4]

---

१. तथा परिवहः श्रीमानुत्पातभयशंसनाः। इत्येवं क्षुभिताः सप्त मरुतो गगनेचराः।।
ये ग्रहाः सर्वलोकस्य क्षये प्रादुभवन्ति वै। ते सर्वे गगने दृष्टा व्यचरन्त यथासुखम्।।
अयोगतश्चाप्य चरद् योगं निशि निशाकरः। सग्रह सह नक्षत्रै राकापतिरदन्दमः।।
विषर्णतां च भगवान गतो दिवि दिवाकरः। कृष्णं कबन्धं च तथा लक्ष्यते सुमहहिवि।।
अमुञ्चच्चायिर्षा वृन्दं भूमि वृत्तिर्विभावसुः। गगनस्थश्च भगवान भीक्ष्णं परिकृश्यते।।
सप्त धूम्रनिभा घोरा सूर्याद्दिवि समुत्थिताः। सोमस्य गगनस्थस्य ग्रहास्तिष्ठान्ति शृङ्गाः।।
वामे तु दक्षिणे चैव स्थितौ शुक्र बृहस्पति। शनैश्चरो लोहिताङ्गो ज्वलनाङ्गसमुद्युती।।
समं समधिरोहन्तः सर्वे ते गगनेचराः। शृङ्गनि शनकर्घोरा युग्मन्तावर्तिनोः ग्रहाः।।
चन्द्रमाश्च सनक्षत्रैर्गहैः सह तमोनुदः। चराचर विनाशप रोहिर्णी नाभ्यनन्दत।।
गृह्यते राहुणा चन्द्र उल्काभिरभिहन्यते। उल्का प्रज्वलिताश्चन्द्रे विचरन्ति यथा सुखम्।।
देवानापि यो देवः सोऽप्यवर्षतशोणितम्। अपतन्गगनादुल्का विद्युद्रूपामहास्वनाः।।
म०पु०- १६३/३२-४३

२. द्रष्टव्य- म० पु०- १६३/४४ - ५१
क. कृष्यन्ते विविधयोत्पाता घोरा घोरानिदर्शना एते चान्ये च बहवो घोरात्पाताः समुत्थिताः।
दैत्येन्द्रस्य विनाशायदृश्यन्ते काल............. निर्मिता।। तदेव- १६३/५२-५३

३. प्रादुरासीन्महाशूछब्दः खे शरीरमदृश्यत।
सर्वेषु राजनू देशेषु तदद्भुतमिवा भवत्।। म० भा०- उद्योग पर्व, ८४/०६

४. यक्षाणां राक्षसानां च पिशाचानां तथैव च। अन्तरिक्षे महानादः श्रुयते भरतर्षभ।।
तेन शब्देन घोरेण मृगाणामथ पक्षिणाम्। जशे घोरतरः शब्दो बहूनां सर्वतोदिशम्।।
ध्व[illegible]श्च शस्त्रवन्तस्तथैव च। म० भा०- शल्य पर्व, [illegible]/५२-५३,५७

वाल्मीकि रामायण के अरण्य काण्ड के २४वें सर्ग में राक्षसों के विनाश और श्री राम की विजय सूचक उत्पातों के होने[1] युद्ध काण्ड में श्री राम के लंका पर आक्रमण से पूर्व रीछों, वानरों और राक्षसों का विनाश एवं लोकों का संहार करने वाले, भीषण भय उत्पन्न करने वाले उत्पातों के होने[2], श्री राम और रावण के युद्ध होने से पूर्व रावण की पराजय और श्री राम की विजय को सूचित करने उत्पातों [3] के प्रकट होने का वर्णन मिलता है।

भगवान् श्री कृष्ण जब वैकुण्ठ धाम चले गये उस समय राजा युधिष्ठिर के राज्य में देवताओं की मूर्तियाँ रो-सी रहने, मूर्तियों से पसीना चूने लगने और हिलने-डोलने, देश, गाँव, शहर, बगीचे, खानें और आश्रम श्री हीन और आनन्त रहित होने जैसे उत्पातों का वर्णन भी आया है जो भगवान् के चरणकमलों से विहीन हुई भूमि की सूचना दे रहे थे।[3]

दुर्योधन भीमसेन का युद्ध में आह्वान करते समय बिना शरीर के ही ज़ोर-ज़ोर से गर्जनाएँ सुनायी देने का वर्णन मिलता है जो दुर्योधन के लिए अशुभकारक उत्पात था और इस प्रकार के बहुत से अपशकुन एवं उत्पात हुए थे।[4]

महाभारत युद्ध से पूर्व कैलाश मन्दराचल तथा हिमालय से सहस्रों प्रकार के अत्यन्त भयानक शब्द प्रकट होने और उनके शिखर भी टूट-टूट कर गिरने जैसे उत्पातों का वर्णन मिलता है। इससे यह प्रतीत होता है कि यह भूमि रक्तपान करेगी अर्थात् भयंकर युद्ध एवं नरसंहार होगा।[5]

क्रुद्ध काल की गर्जना के समान, भयभीत करने वाली, कानों के पर्दे फाड़ देने वाली, आकाश तथा दिशाओं में व्याप्त हो जाने वाली एवं पहाड़ों की चोटियों को ढहा देने वाली गम्भीर प्रतिध्वनि बार-बार होने वाले अशुभसूचक उत्पातों का वर्णन कुमार सम्भव के १५वें सर्ग में आया है जो तारकासुर की मृत्यु को सूचित कर रहे थे।[6]

---

१. इमान् पश्य महाबाहो सर्वभूतापहारिणः। समुत्थितान् महोत्पातान् सहर्तूं सर्वराक्षसान्।।
अमी रूधिरधारास्तु विसृजन्ते खरस्वनाः। व्योम्नि मेघा निवर्तन्ते परुषा कर्दभारूणाः।।
वा रा० - अरण्य काण्ड २४/०१-०२

२. लोकक्षयकरं भीमं भयं पश्याम्युपस्थितम। प्रबर्हणं प्रवीराणामृक्षवानरराक्षसाम्।।
तदेव - युद्ध काण्ड २३/०३

३. एवं प्रकारा बहवः समुत्पाता भयावहाः। रावणस्य विनाशाय दारुणाः सम्प्रजज्ञिरे।।
रामस्यापि निमित्तानि सौम्यानि च शिवानि च। बभूवुर्जयशंसीनि प्रादुर्भूतानि सर्वशः।।
तदेव - युद्ध काण्ड १२६/३३-३४

४. दैवतानि रुदन्तीव स्विद्यन्ति ह्युच्चलन्ति च। इमे जनपदा ग्रामाः पुरोद्यानाकराश्रमाः।
भ्रष्टप्रियो निरानन्दाः किमद्यं दर्शयन्ति नः।। श्री मद्भागवत म० पु० प्र० स्कन्ध -१४/२०-२१

५. अशरीर महानादाः श्रुयन्ते स्म तदा नृप। एवमादीनि दृष्ट्वाथ निमित्तानि वृकोदरः।।
म० भा० - शाल्य पर्व, ६७/१५

६. भूमिपालसहस्राणां भूमिः पास्यति शोणितम्। कैलासमन्दराभ्यां तु तथा हिमवता विभो।।
सहस्रशो महाशब्दः शिखाराणि पतन्ति च।। तदेव - भीष्म पर्व/३७, कु० सं०- १५/२२

महाधर्नुधर कर्ण का महाभारत युद्ध के लिए प्रसन्नता पूर्वक प्रस्थान करते समय धरती डोलने, बड़े ज़ोर-ज़ोर से अव्यक्त शब्द होने, सूर्य मण्डल से सात बड़े-बड़े ग्रह निकलते दिखायी देना, उल्कापात होने, दिशाओं में आग सी जल उठने, बिना वर्षा के ही बिजलियाँ गिरने, भयानक आँधी चलने, मृग एवं पक्षियों का महान् भय की सूचना देने सेना को दाहिने करके चलने, अकस्मात् घोड़ों का पृथ्वी पर गिरने, आकाश से हड्डियों की भयंकर वर्षा हाने, कौरवों के शस्त्र जल उठने, ध्वज हिलने और वाहन का आँसू बहाने आदि अनेक भयंकर उत्पात वहाँ प्रकट होने का वर्णन मिलता है जो कि भयंकर युद्ध एवं विनाश होने की सूचना देने वाले कहे जाते हैं।[1]

तारकासुर के झण्डे पर काजल के समान काले तथा अपने फण की मणि की चमकती हुई किरणों से घिरा हुआ और विष से भरी हुई आग जैसी भयानक फुंकार छोड़ने वाला एक बड़ा साँप लिपटा हुआ देखने का वर्णन मिलता है जो कि मृत्यु सूचक उत्पात था।

तुरन्त ही काजल के समान काले काले विष के टुकड़ों को टूट-टूट कर गिरने वाले और भरी हुई आग की ऊँची-ऊँची लपटें उगलने वाले भीषण साँपों की पंक्तियाँ उस दैत्य सेना के रास्ता काटती हुई सामने से निकलनेद जैसे उत्पातों का वर्णन आया है जोकि दैत्य सेना को युद्ध से रोकने एवं भयंकर युद्ध और विनाश की सूचना दे रहे थे।[3]

खर नामक राक्षस ने जब श्री के आश्रम पर आक्रमण किया उस समय अमंगल सूचक उत्पात उस के शरीर में इस प्रकार प्रकट होने लगे- खर की बायीं भुजा सहसा काँप उठी, स्वर अवरुद्ध हो गया और सब ओर देखते समय आँसू आँखों में आने लगे सिर में दर्द होने लगा। इस प्रकार के अनेक अमंगल सूचक उत्पात खर राक्षस एवं उसकी सेना के सामने उपस्थित होने का वर्णन मिलता है।[4]

---

१. चचाल पृथिवी राजन् ववाश च सुविस्तरम्। निः सरन्तो व्यदृश्यन्त सूर्यात् सप्त महाग्रहाः
उल्कापाताश्च संजज्ञुदिशां दाहास्तथैव च। शुष्काशन्यश्च सम्पेतुर्ववुवाताश्च भैरवाः।
मृगपक्षिगणाश्चैव पृतानां बहुशस्तव। अपसव्यं तदा चक्रर्वेदयन्तो महाभयम्।।
प्रस्थितस्य च कर्णस्य निपेतुस्तुरगा भुवि। अस्थि वर्षं च पतितमन्तरिक्षाद् भयानकम्।
जज्वलुश्चैव शस्त्राणि ध्वजाश्चैव चकम्पिरे। अश्रुणि च च व्यमुञ्चन्त वाहनानि विशाम्पते।
एते चान्ये च बहव उत्पातास्तत्र दारुणाः। समुत्पेतुर्विनाय कौरवाणां सुदारुणाः।।
म० भा० कर्ण पर्व- २७/१-०

२. सद्योनिदृत्ताञ्जनसोदरद्युनिं फणामणिप्रज्वलदंशुमण्डलम्।
निर्याद्विषोल्कानलगर्भफूत्कृतं ध्वजे जनस्तस्य महाहिमैक्षत।।

३. सद्योविभिन्नाञ्जन पुञ्चतेजसो मुखैविर्षाग्निं विकिरन्त उच्चकैः।
पुरः पथोऽतीत्य महाभुजङ्गमा भयङ्कराकार भृतो भृशं ययुः।। कु० स०- १५/१५-१६

४. प्राकम्पत भुजः सव्यः स्वरश्चास्यावसज्जत। सास्रा सम्पद्यते दृष्टिः पश्यमानस्य सर्वतः
ललाटे च रुजो जाता न च मोहान्त्यवर्तत। तान् समीक्ष्य महोत्पातानुत्थितान् रोमहर्षणान्
महोत्पाता निमान् सर्वानुत्थितान् घोर दर्शनाम्। न चिन्तयाम्यहं वीर्यादि बलवान् दुर्बलन्निव
वा०रा० अरण्य काण्ड- २३/१६-२

श्री राम कथन- मेरी यह दाहिनी भुजा बारंबार फड़क कर इस बात की सूचना देती है कि कुछ ही देर में बहुत युद्ध होगा और साथ में यह भी कहते हैं कि भविष्य में हामारी विजय और शत्रु की पराजय होगा क्योंकि लक्ष्मण का मुख कान्ति मान एवं प्रसन्न दिखाई दे रहा था। इस कथन से स्पष्ट होता है कि दाहिनी भुजा का फड़कना और मुख का कान्ति मान होना शुभ सूचक होता है।[1] युद्ध के लिये उद्यत होने पर जिन का मुख प्रभाहीन हो जाता है उनकी आयु नष्ट हो जाती है।[2]

हर्षवर्धन की दिग्विजय के समय शुभाशुभ सूचक दोनों प्रकार के उत्पातों का वर्णन मिलता है। शत्रु राजाओं के घरों एवं राज्यों में नाना प्रकार के अशुभ सूचक उत्पात घटित होने लगे। जैसे- सैनिक निकट भविष्य में बाल खींचे जाने के भय से भागने लगे, राजा-रानियों की चूड़ामणियों में हर्षवर्धन के चक्रशंख-कमलों वाले पादन्यास (प्रतिबिम्ब रूप में) प्रकट होने लगे, हाथियों के गण्डस्थलों पर भ्रमरों के मदजल के रूप में मदिरापान की गोष्ठियाँ भंग हो गयीं। घोड़ों ने घास खाना छोड़ दी, रात-रात को चन्द्रमा के मृग की ओर दृष्टि लगाए हुए जैसे ऊपर मुँह किये कुत्तों का दल बाहरी दरवाज़े के पास बिना कारण ही ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगे, नंगी स्त्री फटकार में हिलती हुई अपनी तर्जनी-अँगुली से मरने वालों की गिनती करती हुई हाट-भाठ में विचरती रहती, हरिणों की टेढ़ी खुर-पंक्तियों से तरंजित घास फर्शों पर उगने, सैनिकों की महिलायों के प्याले भी मदिरा में पड़े हुए मुख कान्ति वाले दिखाई पड़ने, भूमि के कम्पन होने, तलवारों के ऊपर रक्त के छींटों के चिन्ह दिखने, राजलक्ष्मी के चारों ओर अग्नि रूप उल्कायें निरन्तर गिरने, तीव्र आँधी चलने आदि उत्पातों का वर्णन हर्षचरित में मिलता है।[3]

---

१. सम्प्रहारस्तु सुमहान् भविष्यति न संशयः।
अयमाख्याति में बाहुः स्फुरमाणो मुहुर्मुहुः।। वा०रा० अरण्य काण्ड- २३/२५

२. संनिकर्षे तु नः शूर जयं शत्रोः पराजयम्।
सुप्रभं च प्रसन्नतं च तव वक्त्रं हि लक्ष्यते।। वा०रा० अरण्य काण्ड-२८/८-६

क. उद्यतानां हि युद्धार्थं येषां भवति लक्ष्मण।
निष्प्रभं वदनं च तव वक्त्रं हि लक्ष्यते।। वा० रा० अरण्य काण्ड - २४/१०

३. ततश्च तथा कृत प्रतिज्ञे प्रयाणं विजयाय दिशां समादिशति देवे हर्षे गतायुषां प्रतिसामन्तानामुदवसितेषु बहुरूपाण्युपलिङ्गानि वितेनिरे। तथा ह्यवि प्रकृष्टः कालदूतदृष्टय इवेतस्ततश्चेरूचचदुलाः कृष्ण शाहश्रेणयः। प्रचलिततक्ष्मीनूपुरप्रणादप्रतिमा मधुरसघासंघातझंकारा जह्य दिरेऽजिरे.................. वध्यालङ्कारक्त चदव रससछटा इवालक्ष्यन्त शूराणां पतिताः शरीरेषु विकसितबन्धूक कुसुमशोतिशोचिषः शोणितवृष्टयः। पर्यग्नीकुर्वाणा इव विनश्वरीश्रियमविरलस्फुरत्स्फुलिङ्गाङ्गगारोद्गारदग्धतारागणा गणशः पतन्तः प्रज्वलन्तो न व्यरंसिषुरुल्कादण्डाः। प्रथममेव प्रतीहारी वापहरन्ती प्रति भवनं चामरातपत्र व्यजनानि परुषा बभ्राम वात्येति।। हर्ष चरितम- षष्ठ उच्छवास- पृ०- ४१७-४२०

महाराजा हर्ष वर्धन दिग्विजय के लिए जिस देश पर चढ़ाई करता उस देश में दिग्दाह, भूकम्प, भस्म तथा रक्त की वृष्टि आदि अशुभसूचक उत्पात होने का वर्णन नैषध महाकाव्य एवं हर्ष-चरित में आया है।[1] हर्ष वर्धन के पिता श्री महाराजा प्रभाकर वर्धन की मृत्यु के समय धीरे-धीरे चारों ओर एक साथ ही महापुरुष के विनाश के सूचक प्राणियों को भय उत्पन्न करने वाले बड़े बड़े उत्पात राज भुवन एवं राज्य में इस प्रकार प्रकट होने लगे-

सकल कुलपर्वतों के समूहवाली धरती हिलने, भयंकर शब्द होने, समुद्र का क्षुब्ध होने, बिखरे मोर पंख के समान घने घुंघराले और टेढ़े-मेढ़े पुच्छल तारे दिखाई देने, चमक खोये हुए तपे लोहे के घड़े की तरह लाल-पीले वर्ण वाले सूर्य मण्डल के भीतर भयंकर कबन्ध दिखाई देने, प्रदीप्त परिधि मण्डल के प्रसार होने से चन्द्रमा के चारों ओर आग की दीवार हो, रक्त बिन्धुओं की वृष्टि से भूमि लाल लगने, सूर्य बिम्ब के भीतर गबन्ध दिखाई देने, ऊँट के बालों के समान पीली-पीली धूल वृष्टि होने, भयंकर रूप से गीदड़-गीदड़ियों के झुण्ड ऊपर मुँह किये सूर्य की ओर दारुण रूप से चिल्लाने, घने धूलि समूह भरा और पत्थरों की छोटी-छोटी कंकड़ियों के साथ-साथ साँय-साँय करती हुई वायु का भयंकर रूप से चलने राजप्रासाद में धुओं छोड़ते हुए सीमन्तों द्वारा विकार प्रकट करने, कुलदेवताओं की मूर्तियों के शोक रूप में दिखने, राज सिंहासन के पास काल-रात्रि के दारुण रूप में भ्रमर समूह का मण्डरा पड़नें आदि मृत्यु सूचक उत्पात प्रकट होने का वर्णन हर्ष चरित के पञ्चम सर्ग में मिलता है।[2]

नागानन्द काव्य में वायीं आँख फड़कने धूमकेतु, उल्कापात होने जैसे उत्पातों का उल्लेख कवि ने किया है।।[3]

---

१. यद्भुर्तुः कुरुतेऽभिषेणनमयं शक्रो भुवः सा ध्रुवं। दिग्दाहैरिव भस्मभिर्मधवता सृष्टैर्धृतोद्धूलना। सृष्टैर्दिग्दाहैः औत्पातिकदिग्दाहोद्रवैः, भस्मभिरिव धृतोद्धूलना धृतभस्मानुलेपना दिति भावः, अत्र सेनापदोत्थ धूलिपटालाच्छन्नक्षौण्याः भस्मलिपृथ्वोत्प्रेक्षा, असृग्वृष्टौ सत्याम् औत्यापातिकरक्तवषणे सति, सन्ध्याधिया सायंसन्ध्याभ्रान्त्या, शम्भोर्महादेवस्य, सन्ध्विेलायां भवं सान्धिवेलं।। नैषध महाकाव्य- १२/६२

२. शनैः शनैश्य महापुरुषविनिपातपिशुनाः समं समन्तात्समुद भवनभुवने भूयांसो भूपतेरभावाय भयमुत्पादयन्तो भूतानां महोत्पाताः। भूभृद भावभीतानां विततशिखिकलापविकटकुटिलाः केशपाशा इवोर्ध्वीबभूवुर्धूकेतवः ककुभाम्.....भ्रष्टभासि तप्तकालायसकुम्भबभ्रुणिभानुमण्डले भयंकर कबन्धकायव्याजेन कोऽपिपार्थिव प्राणितार्थीपुरुषोपहारमिवोपजहार। ज्वलितपरिवेशमण्डला भोगभास्वरो जिघृक्षाजृम्भमाणस्वर्भानु भयादु परचिताग्निप्राकार इव प्रत्यदृश्यत् श्वेत भानुः तराधिपाविनाशसंभ्रम भीतैर्लोक पालैरिवकालायसकवाट पुटैरकालकालमेघपटलैरूध्यन्त दिग्द्वाराग्नि।। हर्ष चरित-०५ उच्छवासु- पृ०-३२०

क) ककुभः राज्य सञ्चारसूचकः सञ्चारयतीव क्ष्मां ववापि वृहद्वहलरजः पटलकलिलशर्कराशकलसूत्कारी मारुतः। न कुशलमिव पश्यामि लग्नस्य। तदेव- षष्ट उच्छ्वास-पृ०-३८०, ०५ उच्छ्वास, पृ०- ३१०-३२१

४. स्फुरसि किमुदक्षिणेतर मुहुर्मुहुः सूचयन्गमानिष्टम्। ताक्ष्र्येण भक्ष्यमाणानां पन्नगानामनेकशः।। उल्कारूपाः पतन्त्येते शिरोमणय ईदृशाः। उत्पातवाततरलीकृततारकाभमेतत्परः पतति किं सहसा नभस्तः।। नागानन्दम्- ५/४-६

उत्पातों के फल का स्थान एवं समय

१- राजा के शरीर में, सामान्य प्रजाओं के शरीर में, पुर के द्वार में तथा पुरोहित के शरीर में, राजपुत्रों में तथा कोषाध्यक्ष के शरीर में उस उत्पात का दुर्विपाक होता है।[1]

२- अपना शरीर, पुत्र, खजाना, वाहन, नगर, स्त्री, पुरोहित, जनपद इन आठों के माध्यम से राजा देव कल्पित उत्पातों का भागी वनता है।[2]

३- भूकम्प का फल छः मास पर्यन्त होता है, दिग्दाह, विकृति अर्थात् पदार्थों आदि में विकार और धूम्र केतु का फल तीन मास पर्यन्त होता है, रजो वर्षण और अग्नि वर्षण का फल शीघ्र ही घटित होता है और अन्य उत्पातों का फल सालभर पर्यन्त घटित होता है।[3]

४- सूर्य ग्रह में विकार होने का फल पंद्रह दिनों में, चन्द्रमा का तीस दिनों में, भौम के विकार का फल ३० दिनों में, बुध का फल ३५ दिनों में, बृहस्पति व शनि का फल एक वर्ष के भीतर, शुक्र व राहु का प्रतिफल छह मास में मिलता है यह फल चन्द्र ग्रहण लगने से ग्रहों में उत्पन्न विकारों का बताया गया है। इसी प्रकार सूर्यग्रहण का फल होता है, सूर्य ग्रहण में त्वष्ट्रा, तामस व कीलक नामक ग्रहों का उदय ही एक वर्ष तक फल मिलता है। धूमकेतु का तीन मास, श्वेतकेतु का सात रात व सूर्य चन्द्र के मण्डल, इन्द्रधनुष, सन्ध्या, आकाशादि विकारों का फल सात दिन में घटित होता है।[4]

५- सब वृक्षों के विकार जन्य फल दश मास में घटित होते हैं।[5]

६- ऋतु विकार अर्थात् ऋतुमें विपरीतता आने से सर्दी में गर्मी व गर्मी में सर्दी आदि, दिग्दाह, वृक्षादि विकार, चौपादि विकार, प्रसव विकारों का फल छः मास में घटित होता है।

१- राज्ञः शरीरे लोके च पुरोहिते। पाकमायाति पुत्रेषु तथा कोशवाहने।। वि०ध० पु०-१३४/१३

२(क) आत्मसुतकोशनाहनपुरदारपुरोहितेषु लोके च। पाकमुपयाति दैवं परिकल्पितमष्टधा नृपतेः।। बृ० सं०-४६/५

(ख) पूरे जनपदे कोशे वाहनेऽथ पुरोहिते। पुत्रेष्वात्मनि भृत्येषु पश्यते दैवाष्टधा।। गर्ग सं०

३- षड्भिर्मासैर्भुवः कम्पे जायते फलमुक्तवत्। दिग्दाहे विकृतौ भूतौ केतुनिर्यातजस्त्रिभिः। रजोग्निवर्षणे सद्य उत्पातेऽन्यत्र हायनात्।। मु०ग० मि०-१५०, १५१

४- द्रष्टव्य- - - बृ० सं०- ९७/१-४

५- वृक्षाणां वैकृत्ये दशभिर्मासैः फलविपाकः। बृ० सं०-४६/३०

७- अक्रियमाण कार्य अर्थात् न करने योग्य कार्यों का होना, न करने पर भी होना, स्वतः अकस्मात् करना पड़े ऐसे कार्य, भूकम्प का, अनुत्सव, अनिष्ट, कभी न सूखने वाले जल स्रोतों का सूखना, नदियों में विकार का फल छः मास में घटित होता है।[1]

८- प्रतिमा विकार, भौम विकार, इन्द्रचाप, निर्घात आदि का फल तीन मास में घटित होता है। यदि इन्द्र धुनष का फल सात दिन में घटित न हो तो तीन मास में अवश्य प्राप्त होता है।

९- कीट, मूषक, मक्खियाँ, सर्प मृग, पक्षी, जल और मिट्टी में विकारों का फल तीन मास में मिलता है। तोरण, शहदछता, इंद्रध्वजादि का फल एक वर्ष में मिलता है। शृंगाल, गृध के सामुहिक स्वर का फल दस दिन में घटित होता है, तुरही के स्वतः बजने का प्रतिफल तत्काल होता है। शाप बांबी व भूमि के विदीर्ण होने का फल पन्द्रह दिनों में घटित होता है। अग्नि के बिना ही ज्वाला धधकना, घृत, तेल चर्बी की वृध्दि का फल तत्काल मिलता है। इस प्रकार मनुष्यों के अपवादों का फल ४५ दिन में घटित होता है।

१०- छत्र, यज्ञभूमि, यज्ञस्तम्भ अग्नि, बीज, के विकार का फल सात पक्षों (१०५दिनों) में मिलता है।

११- शत्रु जीवों का प्रेम भाव होना, आकाश में जीवों का शब्द करना,नेवले, चूहे व बिलाव में मैत्री होने का फल एक मास में घटित होता है।

१२- गंधर्वनगर का दिखना, मधुर रसों में विकार, स्वर्ण विकार, ध्वज का फटना, ग्रह विकार, दिशाओं में धूल दिखाई देने का फल एक मास में मिलता है।[2]

नक्षत्रों द्वारा उत्पात होने का समय ज्ञान

१- अश्विनी नक्षत्र में उत्पात होने से नौ मास में फल घटित होता है। भरणी में एक मास, कृत्तिका में आठ मास, रोहिणी में दसमास, मृगशिरा में एक मास, आर्द्रा में छह मास, पुनर्वसु में तीन मास, पुष्य में तीन मास और आश्लेषा में उत्पात होने से तत्काल फल घटित होता है।

२- मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा नक्षत्रो में उत्पात होने का फल क्रमशः एक मास, छह मास, तीन मास, पन्द्रह दिन, आठ मास, तीन मास, छह मास, एक मास व चार मास घटित होता है। अभिजित नक्षत्र में उत्पात होने से तत्काल फल घटित होता है।

३- श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती नक्षत्र में उत्पात हो तो क्रमशः सात, छः डेढ, तीन व पाँच मास में फल घटित होता है।[3]

१- द्रष्टव्य --- बृ० सं०- अ०- ९७

२- द्रष्टव्य--- बृ० सं०- अ०- ९७

३- द्रष्टव्य--- बृ० सं०- अ०- ९७

द्वितीय अध्याय

दिव्य उत्पात के लक्षण एवं भेद

ग्रहकृत विकार अर्थात् सूर्य-चन्द्र आदि ग्रहों का एक दूसरे के द्वारा उत्पन्न विकार, ग्रहों का दक्षिण उत्तरादि मार्ग में उत्पन्न विकार, ग्रहों का अश्विनीयादि नक्षत्रों में संचार करने से उत्पन्न विकार, वारों का विभिन्न नक्षत्रों के योग से उत्पन्न विकार, ग्रहों का आपस में युद्ध होने से उत्पन्न विकार, एकराशि में दो या दो से अधिक ग्रहों का इकट्ठे होने से उत्पन्न होने वाले विकारों को दिव्य उत्पात के भेद माना है।

ग्रहों के मार्ग-

सूर्यादि नवग्रह, अश्विनीयादि नक्षत्रों द्वारा मेषादि राशियों में संचार करते हैं। सूर्यादि ग्रहों के चलने वाले मार्ग को दक्षिण, मध्य और उत्तर मार्ग में विभक्त किया हुआ है। यह ग्रह इन तीनों मार्गों में नागादि वीथियों के अनुसार चलते हैं। यह नागादि नव वीथियाँ अश्विनीयादि सत्ताईस नक्षत्रों में विभक्त हैं। नागादि वीथियों में तीन-तीन नक्षत्र आते है। यह नववीथियाँ तीनों मार्गों में तीन तीन कर के चलती हैं। यहाँ नक्षत्रों के अनुसार वीथियों का विभाजन और वीथियों के-अनुसार उत्तरादि मार्गो का विभाजन स्पष्ट किया जा रहा है।

१- नाग, २- गज, ३- ऐरावत, ४- वृष, ५- गो, ६- जरद्गव, ७- मृग, ८- अज और ९- दहन।

यह नव वीथियों के नाम हैं। अश्विनी आदि तीन तीन नक्षत्रों में क्रमशः यह नव वीथियाँ होती है। जैसेः-

१- अश्विनी, भरणी और कृत्तिका में नागवीथी,
२- रोहिणी, मृगशिरा और आर्द्रा में गजवीथी,
३- पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा में ऐरावतवीथी,
४- मघा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी में वृषवीथी,
५- हस्त, चित्रा और स्वाती में गौवीथी,
६- विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा में जरद्गववीथी,
७- मूला पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा में मृगवीथी,
८- श्रवण, धनिष्ठा, और शतभिषा में अजवीथी,
९- पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा और रेवती में दहन नाम की वीथी होती है।[1]

---

१. नागगजैराबतवृषभगोजरद्गवमृगाजदहनाख्याः।
अश्विन्याः केश्चित्त्रिभाः क्रमाद्वीथयः कथिताः।। बृ० सं०-९/१

नाग आदि तीन-तीन वीथियाँ क्रम से उत्तर, मध्य और दक्षिण मार्ग में स्थित होती हैं। जैसे-

१- **नाग, गज और ऐरावत** वीथी का उत्तर मार्ग से क्रम चलता है।

२- **वृष, गो** और **जरद्गव** वीथी का मध्य मार्ग से क्रम चलता है।

३- **मृग, अज** और **दहन** वीथी का दक्षिण मार्ग में क्रम चलता है ।

४- **नाग** वीथी उत्तर मार्ग में, गज वीथी मध्यमार्ग में और ऐरावत वीथी दक्षिणमार्ग स्थित होती है।

५- **वृष** उत्तर मार्ग में, गा मध्य मार्ग में, जरद्गव दक्षिण मार्ग में स्थित होती हैं ।

६- **मृग** उत्तर मार्ग में, अज मध्य मार्ग में और दहन दक्षिण मार्ग में स्थित होती हैं।

अतः नाग उत्तरोत्तर मार्ग में स्थित होती है, गज उत्तर मध्य मार्ग में स्थित होती है, **ऐरावत** उत्तर दक्षिण मार्ग में, वृष मध्योत्तर मार्ग में, गो मध्यमध्य मार्ग में, जरद्गव मध्य दक्षिण मार्ग में, मृग दक्षिणोत्तर मार्ग में, अज दक्षिण मध्यमार्ग में और दहन दक्षिण-दक्षिण मार्ग में स्थित होती हैं।[1]

सूर्यादि ग्रहएवं तारादि नक्षत्रमार्ग में स्थित होकर जिस वीथी के अन्तर्गत भ्रमण करते हैं, उस वीथी के मार्ग के अनुसार ही चलते है जैसे- नक्षत्र मार्ग के दक्षिण में स्थित ग्रह एवं तारागण दक्षिण स्थित होते हैं, उत्तर में स्थित वीथी के अन्तर्गत उत्तरमार्ग स्थित होते हैं और मध्य मार्ग वाली वीथी में स्थित ग्रह एवं तारा गण मध्यमार्ग स्थित होते हैं। इस प्रकार ग्रह दक्षिण में दक्षिणमार्ग गत, उत्तर में उत्तर मार्ग गत और मध्य में मध्यमार्गगत होते हैं।[2]

नाग आदि नव वीथियाँ क्रमशः से अत्युत्त, उत्तम, ऊन अर्थात् कुछ कम उत्तम, सम मध्यम, न्यून अर्थात् किञ्चित शुभफल, अधम, कष्ट और कष्टतम् फल होते हैं। जैसे- नाग वीथी में अत्युत्तम फल, गजवीथी में उत्तमृ, ऐरावत वीथी में ऊन, वृष वीथी में सम फल, गोवीथी में मध्यम फल, जरद्गववीथी में न्यूनफल, मृग वीथी में अधम फल, अजवीथी में कष्ट और दहन वीथी में कष्टत्तम फल होता है। इन वीथियों में अपना शुभाशुभ फल ग्रह उन वीथियों के फल के अनुकूल हो कर ही देते हैं।[3]

१- तिस्रस्तिस्रस्तासां क्रमादुदङ्मध्ययाम्यमार्गस्थाः।
तासामप्युत्तरामध्यदक्षिणेन स्थितेकैका।। बृ० सं०- - ९/४

२- वीथीमार्गानपरे कथयन्ति यथास्थितान् भमार्गस्य।
नक्षत्राणां तारा यान्योत्तरमध्यमास्तद्वत्।। बृ० सं०- - ९/५

३- अत्युत्तमोत्तमोनं सममध्यन्यूनमधमकष्टफलम्।
कष्टतरं सौम्याद्यासु वीथिषु यथा क्रमं ब्रूयात्।। तदेव- - ९/६

एक दूसरामत,

नक्षत्रों के अनुसार मार्ग-

१- भरणी आदि नव नक्षत्र अर्थात्-भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुर्नवसु, पुष्य, आश्लेषा और मघा इन नक्षत्रों में स्थित ग्रहों का **'उत्तर'** मार्ग होता है।

२- पूर्वाफाल्गुनी आदि नव नक्षत्र अर्थात् पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा और मूला इन नक्षत्रों में स्थित ग्रहों का **'मध्य'** मार्ग होता है।

३- पूर्वाषाढा आदि नव नक्षत्र अर्थात् पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती और अश्विनी इन नक्षत्रों में स्थित ग्रहों का **'दक्षिण'** मार्ग होता है।[1]

वीथियों में ग्रहों का फल-

१- यदि प्रकाश युत होकर ग्रह (सूर्यादि) उत्तर वीथियों(नाग, गज और एरावत संज्ञक वीथी) में संचार करें तो देश में क्षेम, सुभिक्ष और मंगल होता है।

२- यदि प्रकाश से हीन होकर सूर्यादि ग्रह दक्षिण मार्ग (मृग, अज और दहन नामक संज्ञक वीथी) में गमन करें तो देश में दुर्भिक्ष चोरभय और मृत्यु को देते हैं।[2]

३- उत्तर मार्ग की तीन (नाग, गज और ऐरावत वीथियों) में शुक्र का चलने से देश में धान्य, धन वृष्टि और सुभिक्ष होता है।[3]

ग्रहों का नक्षत्रों में अशुभयोग एवं फल-

१- यदि कोष्ठागार अर्थात् मघा नक्षत्र में शुक्र हो और पुष्य नक्षत्र में बृहस्पति स्थित हो तो राजा लोग पारस्परिक द्वेष रहित और सुखी होते है। प्रजा प्रसन्न और व्याधि एवं रोग रहित होती है।[4]

१- उत्तरमार्गो याम्यादि निगदितो मध्यमस्तु भाग्याद्यः।
दक्षणमार्गोऽषादादि कैश्चिदेवं कृता मार्गाः।। बृ० सं०- - ९/६

२- उत्तरवीथिगतां द्युतिमन्तः क्षेमसुभिक्षशिवाय समरताः।
दक्षिणमार्गता द्युतिहीनाः क्षुद्भयतस्करमृत्युकरास्ते।। बृ० सं०- ४७/४

३- सोम्य मार्गे च तिसृषु चरन्वीथिषु भार्गवः।
धान्यार्थ वृष्टि सस्यानां परिपूर्ति करोति हि।। न० पु०- त्रि०- ३६

४- कोष्ठागारगते भृगुपुत्रे पुष्यस्थे च गिराम्प्रभाविष्णौ।
निर्वैशः क्षितिपाः सुखभाजः संहृष्टाश्च जना गतरोगाः।। बृ० सं०- ४७/५

२- यदि सूर्य को छोड़ कर अन्य चन्द्रादि ग्रह कृत्तिका, मघा, रोहिणी, श्रवण या ज्येष्ठा नक्षत्र को पीड़ित करते हैं अर्थात् दक्षिण मार्ग में गमन करें या योगतारा के भेदन से पीड़ित करते हों तो अन्याय से पश्चिम दिशा के देशों में राजा एवं प्रजा पीड़ित होती है।[1]

३- यदि संध्या समय में चन्द्र आदि ग्रह ध्वज की भान्ति पूर्व दिशा में दिखाई दें तो पूर्व दिशा में स्थित देशों के राजाओं में परस्पर विग्रह होता है। यदि आकाश के मध्य में स्थित हों तो मध्य देश में पीड़ा होती है। पर इन चन्द्रादि ग्रहों के रुखे रहने पर ही यह फल होता है, यदि निर्मल सुन्दर किरण वाले हों तो अशुभ फल नहीं करते।[2]

४- यदि चन्द्र आदि ग्रह दक्षिण दिशा में स्थित हो तो मेघों का नाश करते हैं अर्थात् दक्षिण दिशा के देशों में वृष्टि नहीं होती है।

५- यदि ये ग्रह अल्प बिम्ब वाले और रुक्ष हों तो दक्षिण देश के राजाओं में विग्रह होता है। यदि स्थूल बिम्ब वाले किरण युक्त हो तो शुभ होता है।[3]

६- यदि चन्द्र आदि ग्रह सन्धा समय में स्पष्ट किरण वाले होकर उत्तरमार्ग में स्थित हों तो उत्तर दिशा में स्थित राजाओं में शान्ति करने वाले होते हैं। यदि चन्द्रादि ग्रह अल्प बिम्ब वाले या भस्म के समान वर्णवाले हों तो उस दिशा में स्थित राजाओं में दोष उत्पन्न करने वाले होते है अर्थात् उस दिशा के राजाओं में द्वेष उत्पन्न होता है।[4]

७- यदि ग्रह और नक्षत्रों के तारे धूम, ज्वाला या अग्नि कणों से व्याप्त या बिना कारण के प्रकाश रहित दिखाई दें तो उस देश में स्थित राजा के साथ सब प्रजा का नाश होता है।[5]

८- जिस समय आकाश में दो चन्द्रमा दिखाई दें, उस समय शीघ्र ही ब्राह्मणों की वृद्धि होती है और शुभ फलदायी होता है।

९- यदि दो सूर्य आकाश मण्डल में दिखाई दें तो उस समय क्षत्रियों में संग्राम होता है।

१०-यदि आकाशमण्डल में तीन-चार सूर्य दिखाई दें तो भूमण्डल का संहार होता है अर्थात् सर्वनाश होता है।[6]

१- पीडयन्ति यदि कृत्तिकां मघां रोहिणीं श्रवणमैन्द्रमेव वा।
प्रोज्झय सूर्यमापरे ग्रहास्तदा पश्चिमा दिगनयेन पीडयते।। बृ० सं०- ४७/६

२- प्राच्यां चेदध्वजवदवस्थिता दिनान्ते प्राच्यानां भवति हिविग्रहो नृपाणाम्।
मध्ये चेद्भवति हि मध्येदेशपीड़ा रुक्षैस्तैर्न तु रुचिमन्मयूरववद्भिः।। बृ० सं०- ४७/७

३- दक्षिणां कुकुभमाश्रितैस्तु तैर्दक्षिणापथपयोमुचां क्षयः।
हीनरुक्षतनुभिश्च विग्रहः स्थूलदेहकिरणान्वितैः शुभम्।। तदेव- - ४७/८

४- उत्तरमार्गे स्पष्टमयूखाः शान्ति करास्ते तन्नृपतीनाम्।
ह्रस्वशरीरा भस्म सवर्णा दोषकराः स्युदेशनृपाणाम् ।। तदेव- - ४७/९

५- नक्षत्राणां तारकाः संग्रहाणां धूमज्वालाविस्फुलिंगान्विताश्चेत्।
आलोकं वा निर्निमित्तं न यान्ति याति ध्वंसं सर्वलोकः सभूपः ।। बृ० सं०- - ४७/१०

६- दिवि भाति यदा तुहिनांशुयुगं द्विजवृद्धिरतीव तदाशु शुभा।
तदनन्तरवर्णरणोऽर्कयुगे जगतः प्रलयस्त्रिचतुष्प्रभृति।। तदेव- - ४७/११

सूर्यचन्द्र का मण्डल फल-

१- यदि सूर्य और चन्द्रमा में विपर्यय हो अर्थात विकारहो तो राजाओं में घोरयुद्ध होता है, यदि ग्रहों का आपस में युद्ध हो तो राजाओं में विग्रह, अशान्ति और द्वेष होता है। यदि ग्रहों की संयुति हो तो वस्तु मंहगी होती है।[1]

२- सूर्य से सूर्यमण्डल और चन्द्र से चन्द्रमण्डल दूर पड़े तो उस का फल दूर के देश में पड़ता है। यदि निकट पड़े तो अपने देश में और मध्य में हो तो, उस का दूषित फल नहीं होता।

३- यदि सूर्य के चारों ओर या चन्द्र के चारों ओर दो या तीन मण्डल पड़े तो तीन-तीन देशों को फल देता है। यदि छिन्न मण्डल हो तो उस का फल खंडित हो जाता है और मण्डल का अति दूर होने से कुछ फल नहीं होता है।[2]

४- यदि सर्वग्रास ग्रहण पड़े तो सभी वस्तुएं मंहगी हों, भौमादि ग्रह(भौम, बुध, गुरु, शुक्र, और शनि) यदि वक्री हों तो देशों में दुर्भिक्ष पड़े, यदि सर्व ग्रह अतीचार हों तो देशमें अशुभ फल देते हैं और सर्व ग्रह स्वगृही या अपने उच्च के हों तो भी भूमण्डलको अशुभ फल देते हैं।

५- यदि एक राशि में सब ग्रह हों तो किसी देश का नाश होता है अर्थात् जिस देश का कारक ग्रह निर्बली और अपराजित होता है उसी देश का नाश होता है।[3]

६- केतु का उदय, ग्रहण, सूर्य और चन्द्रमा में छिद्र प्रकट होना-ये सब ग्रहों और नक्षत्रों के विकार जहाँ उत्पन्न होते हैं, वहाँ भय की सूचना देते हैं।[4]

१- रवीन्द्वोश्च विपर्यासे घोरो भवति विग्रहः।
युद्धे युद्धं खगेन्द्राणां संयुतौ च महर्घता।। मु० ग०- मि०- १११

२- रवीन्द्वोः परिधौ दूरे फलं चान्यत्र मण्डले।
मध्यमं स्वीयदेशे स्यादन्यदेशेन दूष्यति।। मु० ग०- मि०- ११२

३- सर्वग्रासे ग्रहे सर्ववस्तूनां च महर्घता।
दुर्भिक्षं कुरुते खेटा भौमाद्या वक्रगामिनाः।।
अतिचारगताः सर्वे स्वर्क्षे स्वोच्चगता अपि।
ज्ञेया भावफलाश्चैकराशिस्था देशनाशकाः।। तदेव- -११८-११६

४- केतुदयोपरागौ च छिद्रता शशि सूर्ययोः।
ग्रहर्क्षविकृतिर्यत्र तत्रापि भयमादिशेत्।। अ० पु०-२६२/३१

सूर्य से सम्बद्ध उत्पात

आकाश मण्डल में सूर्य के उदयास्त, वर्ण एवं नक्षत्र भ्रमण आदि समय में होने वाले शुभाशुभ विकारों के लक्षण एवं फल-

संध्या के लक्षण-

क) सूर्य के उदय या अस्त समय में तिरछी मेघ के समान रेखा परिधि संज्ञक होती है।

ख) परिधि संज्ञक और स्पष्ट इन्द्रधनुष के समान रेखा दण्ड संज्ञक होती है।

ग) सूर्य के उदय या अस्त समय में सूर्य के लम्बे किरण अमोघ संज्ञक होते हैं।

घ) स्पष्ट इन्द्र धनुष के समान किरण ऐरावत संज्ञक होते हैं।[1]

च) अर्धास्त सूर्य, बिम्ब के अनन्तर स्पष्ट रूप से ताराओं को देने तक के समय को पश्चिमा सन्ध्या अर्थात् सांय काल की सन्ध्या कहते हैं और ताराओं के प्रकाश की हानि के समय से अर्धोदित सूर्य बिम्ब के समय तक प्राक् सन्ध्या होती है अर्थात् प्रातः काल की सन्ध्या होती है।[2]

छ) इस सन्ध्या काल के समय में वक्ष्यमाणचिन्हों के द्वारा शुभाशुभ फल होता हैं। जैसे जब सब आकाश में स्थित बिम्बगण स्निग्ध हों तो शीघ्र वर्षा होती है और यदि रूखेबिम्ब हों तो भय होता है।[3]

परिवेष लक्षण-

सूर्य और चन्द्रमा के चारों ओर जो अनेक रंगों वाला किरणों का घेरा देखने में आता है उसे परिवेष या परिघ कहते है।[4]

१- परिघ इति मेघरेखा या तिर्यग्भास्करोदयेऽस्ते वा। परिधिस्तु प्रतिसूर्यो दण्डस्त्वृजुरिन्द्रचापनिभः।।
उदयेऽस्ते वा भानोर्ये दीर्घा रश्मयस्त्वमोघास्ते। सुरचापखण्डमृजु यद्रोहितमैरावतं दीर्घम्।।
बृ०सं०- ४७/१९-२०

२- अर्धास्तमयात्सन्ध्या व्यक्तीभूता न तारका यावत्।
तेजः परिहानिमुखाद्भानोरधोदियो यावत्।। तदेव - - ४७/२१

३- तस्मिन् सन्ध्याकाले चिह्नैरेतैः शुभाशुभं वाच्यम्।
सर्वैरेतैः स्निग्धै सद्यो वर्षं भयं रुक्षैः।। तदेव - ४७/२२

४- किरणा वायुनिहता उच्छ्रिता मण्डली कृताः।
नानावर्णा कृत्यन्ते परिवेषाः शशीनयोः।। ज्यो०प्र०- ३१/१५६

वृष्टि लक्षण

यदि आकाश मण्डल में अखण्डित परिघ हो, निर्मल आकाश हो, सूर्य की श्याम वर्ण की किरणें हों, स्निग्ध दधिति हो, श्वेत वर्ण के इन्द्रधनुष हो, पूर्वोत्तरा विद्युत अर्थात् पूर्व और उत्तर के मध्य में विद्युत चमके और स्निग्ध या सूर्य की किरणों से व्याप्त मेघ हों तो वर्षा होती है। यदि सूर्य बिम्ब को आच्छादित करे मेघ तो भी वृष्टि होती है।[1]

सूर्य बिम्ब के लक्षण एवं फल

१- जिस देश में खण्डित, कुटिल, कृष्ण, स्वल्प, काक आदि पक्षियों के चिह्नों से व्याप्त या रुक्ष सूर्य बिम्ब दिखाई दें तो प्रायः उस देश के राजा का नाश होता है।[2]

२- यदि सूर्य के उदय या अस्त समय में पताका युत गन्धर्व नगर की प्रतिमा सूर्य बिम्ब को छादित करे तो राजाओं में भयंकर युद्ध होता है।[3]

३- यदि सूर्य बिम्ब श्याम वर्ण का दिखलाई दे तो परराष्ट्र से भय होता है। जिस राजाके जन्म नक्षत्र में सूर्य हो और सूर्य मण्डल में छिद्र दिखाई दे तो उस राजा का नाश होता है।[4]

४- यदि प्रत्येक रोज दोनों सन्ध्याओं में परिवेषयुक्त सूर्यमण्डल होता हो या रक्त वर्ण का हो कर उदय या अस्त होता हो तो निश्चय ही देश में दूसरा राजा होता है अर्थात् पहले राजा की मृत्यु होती है।[5]

सूर्य मण्डल के लक्षण एवं फल

१- सूर्य के मण्डल में यदि दण्ड, कवन्ध, कौआ अथवा चील के आकार वाले चिह्न दिखाई पड़ें तो देश में रोग, भ्रान्ति और चोरों का उपद्रव तथा अर्थनाश होता है अर्थात् देशमें हानि होती है।[1]

१- अच्छिन्नः परिघो वियच्च विमलं श्यामा मयूखा रवेः।
स्निग्धा दीधितयः सितं सुरधनुर्विद्युच्च पूर्वोत्तरा।
स्निग्धो मेघतरूर्दिवाकरकरैरालिङ्गितो वा यदा।
वृष्टिः स्याद्यदि वाऽर्कमस्तसमये मेघो महान् छादयेत्।। बृ०सं०- ४७/२३

२- खण्डो वक्रः कृष्णो ह्रस्वः काकाद्यैर्वा चिह्नैर्विद्धः।
यस्मिन् देशे रूक्षश्चार्कस्तत्राभावः प्रायो राज्ञः।। बृ०सं०- ४७/२४

३- भानोरूदये यदि वास्तमये गन्धर्व नगरपुरप्रतिमा ध्वजिनी।
बिम्बं निरूणद्धि तदा नृपतेः प्राप्तं समरं सभयं प्रवदेत्।। तदेव-४७/२५

४- श्यामेर्के कीटभयं भस्मनिभे भयमुशन्ति पर चक्रात्।
यस्यर्क्षे सच्छिद्रस्तस्य विनाशः क्षितीशस्य।। तदेव - ३/२६

५- प्रतिदिवसमहिमकिरणः परिवेषी सन्ध्ययोर्द्वयोरथवा।
रक्तोऽस्तमेति रक्तोदितश्च भूपं करोत्यन्यम्।। तदेव - ३/३४

६- दण्डाकोर कवंधवो ध्वांक्षाकारेथ कोलके।
दृष्टेकर्मण्डले व्याधिभीतिश्चौराथनाशनम्।। न०पु० त्रि०- ०४

२- यदि श्वेत, लाल, पीला या काला रंग सूर्य मण्डल में जान पड़े तो क्रमशः चारों वर्णे के लोगों को पीड़ा सहन करनी पड़ती है अर्थात् सूर्य मण्डल का रंग श्वेत हो तो ब्राह्मणे को पीड़ा होती है, लाल वर्ण हो तो क्षत्रियों को पीड़ा करे, पीला वर्ण हो तो वैश्यों को पीड़ करे और काला वर्ण हो तो शूद्रों एवं मलेश जाति के लोगों को पीड़ा होती है।

३- यदि इन रंगों में से कई रंग के वर्ण सूर्यमण्डल में मिलते दिखाई पड़ें तो अनेक वर्णे का नाश होता है और राजा लोगों का नाश होता है।[२]

४- यदि सूर्य मण्डल में छत्र, ध्वजा, पताका,सजल मेघ, अग्नि की चिंगारियों जैसे चिह्न दिखाई दें तो देश का नाश समझना चाहिए अर्थात् देशके नाश होने के लक्षण होते है।

५- यदि सूर्य की ऊर्ध्व किरणें ताँबे के रंग की हों तो देश में सेनापति का नाश होता है, पीले रंग की हों तो राजकुमार का नाश होता है, श्वेत रंग की किरणें हों तो पुरोहित का नाश होता है और विभिन्न वर्ण की किरणें हों तो जनता का नाश होता है।[४]

६- यदि सूर्य की किरणों का रंग धुआँ का सा हो तो राजा का नाश होता है, पिशंग अर्थात् पिंगल वर्ण की हो तो मेघ(वर्षा) का नाश होता है। यदि सूर्य की किरणें अधोमुख हों तो जगत के लिये अकल्याणकारी होती हैं अर्थात् जगत का नाश करती हैं।[५]

७- यदि शरद् ऋतुमें अर्थात् जाड़े की ऋतुमें सूर्यका रंग पीला जान पड़े तो रोग का सूचक होता है अर्थात् देश में रोग उत्पन्न होता है। यदि वर्षाऋतु में सूर्यकी किरणे श्वेत दिखाई दें तो जलाभवका चिन्ह अर्थात् देश में पानी की कमी हो और ग्रीष्मऋतु में लालरंग की किरणें जान पड़ेतो किसी प्रकारका भय उपस्थित होता है।[६]

८- यदि सूर्य का आधा भाग इन्द्रधनुष के रंग के समान दिखाई दें तो राजाओं में कलह उत्पन्न होती है।

९- यदि वह शशक के रक्त के समान दिखाई जान पड़ें तो राजाओं में शीघ्र ही महायुद्ध छिड़ जाता है।[७]

१- सितरक्तैः पीतकृष्णैर्वर्णोः विप्रादिपीडनम्।
ध्नंति द्वित्रिचतुर्वर्णैर्भुवि राजजनान्मुने।। तदेव - - ०६

२- छात्रध्वज पताकाद्य सन्निभैस्तिमितैर्ध्वनैः।
रविमण्डलगैधूम्रैः सस्फलिंगैर्जगत् क्षयः।। तदेव- - ०५

३- उर्ध्वैः भानुकरैस्ताम्रैर्नाशं याति चमूपतिः।
पीतैर्न्नृपसुतः श्वेतैः पुरोधाश्चित्रतैर्जनाः।। न० पु० त्रि०- ०७

४- धूम्रैः नृपपिंशगैरस्तु जलदाधोमुखैर्जगत्। तदेव- - ०८

५- पीत, शीते सितेवृष्टौ ग्रीष्मे लोहितभारविः।
रोगानापृष्टिभयकृत् क्रमादुक्तो मुनीश्वर।। तदेव- - १०

६- इन्द्रचापार्द्ध मूर्तिस्तु भानुर्भूपविरोधकृत्।
शशरक्तनिभे भानी संग्रामो न चिराद्भुवि।। तदेव- - ११

७- मयूरपतत्रसंकाशो द्वादशाब्दं न वर्षति।
चन्द्रमासदृशी भानु कुर्याद् भूपांतर क्षिती।। तदेव- - -१२

१०-यदि सूर्य का रंग मोर पंख के समान होतो बारह वर्ष तक वर्षा नहीं होती, यदि सूर्य चन्द्रमाके समान दिखाई दे तो राज्यमें परिवर्तन हो जाता है अर्थात् शासन बदल जाताहै।
११-यदि सूर्य का रंग श्याम दिखाई पड़े तो कीट-भय उत्पन्न होता है अर्थात् कीट आदि उत्पन्न होते हैं देश में अन्न आदि नाश और दुर्भिक्ष उत्पन्न करते हैं। यदि भस्म के समान सूर्य का रंग हो तो राष्ट्र व्यापी संकट सामने आता है, पूरे राष्ट्र में संकट छा जाता है। यदि सूर्यमण्डल में छिद्र दिखाई दें तो महाराज का विनाश होता है अर्थात् सशक्त राज्य का विनाश होता है।
१२-यदि सूर्य मण्डल घट की आकृति का हो तो देश में अकाल उत्पन्न करता है। तोरण की आकृति यदि सूर्य में दिखाई पड़े तो नगरों को नष्ट करने वाला होता है। यदि छत्र की आकृति का सूर्यमण्डल दिखाई पड़े तो देश का नाशक होता है और सूर्य खंडित दिखाई पड़ने पर राजा की मृत्यु करने वाला होता है।[1]
१३- यदि सूर्य प्रातः काल और सांय काल की सन्ध्या के समय में अर्थात् उदय और अस्त के समय कबन्धों से घिरा हो तो भयंकर युद्ध एवं नरसंहार होता है।[2]
१४- यदि एक ओर सफेद, दूसरी ओर लाल और बीच में काले वर्ण के परिघ सन्ध्या समय में सूर्य को चारों ओर से घेर लें तो महाभय और राज्य का नाश होता है।[3]
१५- यदि सूर्यमण्डल राजा के उपकरणरूप, छत्र, ध्वजा, चामर आदि चिन्हों से वेधित हों तो राजा का परिवर्तन होता है अर्थात् दूसरे राजा का शासन होता है। यदि सूर्यमण्डल अग्निकण, धूम आदि से वेधित हो तो लोगों का नाश करता है।[4]
१६- यदि सूर्यमण्डल राजा के उपकरण रूप, छत्र, ध्वजा, चामर, अग्निकण, धूम आदि में से यदि एक से वेधित हो तो दुर्भिक्ष हो, दो या अधिक से वेधित हो तो राजा का नाश होता है। यदि सूर्यमण्डल सफेद वर्ण से सम्बद्ध हो तो ब्राह्मणों का, लाल वर्ण से वेधित हो तो क्षत्रियों का, पीले वर्ण से वेधित हो तो वैश्यों का और काले वर्ण से वेधित होने पर शुद्रों का नाश करता है।[5]

१- अर्के श्यामे कीटभयं भस्माभे राष्ट्रजं तथा।
छिद्रेकमण्डले दृष्टं मह्रराज विनाशनम्।। न०पु०-त्रि०-१३

क. घटाकृतिः क्षुद्भयकृत्पुरहातोरणाकृतिः।
छत्राकृतेदेशहतिः खंडभानु नृपांतकृत्।। तदेव- - १४

२- उभे पूर्वापरे सन्ध्ये नित्यं पश्यामि भारत।
उदयास्तमने सूर्यं कबन्धैः परिवारितम् ।। म० भा० भी०- १/२०

३- श्वेतलोहितपर्यन्ताः कृष्णग्रीवाः सविद्युतः।
त्रिवर्णाः परिघाः सन्धौ भानुमावारयन्त्युत।। तदेव- - १/२१

४- राजोपकरणरूपैश्छत्रध्वजचामरादिभिर्विद्धः।
राजान्यत्वकृदर्कः स्फुलिंगधूमादिभिर्जनहा।। बृ० सं०- ३/१८

५- एको दूर्भिक्षकरो द्यवाद्याः स्युर्नरपतेर्विनाशाय।
सितरक्तपीतकृष्णैस्तैविद्धोऽर्कोऽनुवर्णघ्नः।। तदेव- - ३/१९

१७- पूर्व कथित ध्वजा आदि महा उत्पात सूर्यमण्डल में जिस दिशा में दिखाई देते हैं, उ दिशा में स्थित देशों के लोगों को भय होता है अर्थात् उनपर इन उत्पातों का फल घटि होता है। जैसे यदि सूर्य में बिम्ब उत्पात पूर्व की तरफ हो तो पूर्वीय देश में, दक्षिण दि में हों दक्षिण देश में और उत्तर दिशा में हों तो उत्तरीय देश में इस उत्पात का फल घटि होगा अर्थात् वहाँ के लोगों को भय होता है।[1]

१८- यदि सूर्य के ऊपरी भाग की किरणें ताम्र वर्ण की हों तो सेनापति का, पीले वर्ण व हों तो राजा के पुत्र का और श्वेत वर्ण की हों तो पुरोहित का नाश होता है तथा चि या धूम्र वर्ण की किरणें हों तो चोरों या शस्त्र प्रहारों से लोगों को व्याकुलता होती है। य उक्त उत्पात देखने के बाद शीघ्र ही वृष्टि न हो तो फल होता है। यदि वृष्टि हो जा तो पूर्वोक्त फल नहीं होता।[2]

१९- यदि ग्रीष्म ऋतु में रक्त वर्ण का रविमण्डल हो तो भय करने वाला होता है, व ऋतु में सूर्य मण्डल काला हो तो अनावृष्टि करता है, हेमन्त ऋतु में पीत वर्ण का र मण्डल शीघ्र ही रोग का भय करता है अर्थात् देश में रोग होता है।[3]

२०- यदि इन्द्रधनुष से सूर्यमण्डल खण्डित होता हो तो राजाओं में विरोध करता है। य वर्षा काल में सूर्यमण्डल निर्मल कान्ति युक्त हो तो सद्यः वृष्टि करता है।[4]

२१- यदि सूर्य मण्डल ध्वजा या चाप की तरह काँपता हुआ और रुखा दिखाई दे त राजाओं में युद्ध होता है। यदि सूर्यमण्डल में काली रेखा दिखाई दे तो मन्त्री के द्वारा राजा मारा जाता है।[5]

२२- यदि उल्का, वज्र, बिजली उदय सूर्य पर गिरे तो वर्तमान राजा की मृत्यु होती है औ उस स्थान पर दूसरे राजा की प्रतिष्ठा होती है।[6]

१- दृश्यन्ते च यतस्ते रविबिम्बस्योत्थिता महोत्पाताः।
आगच्छति लोकानां तेनैव भयं प्रदेशेन।। बृ० सं०- ०३/२०

२- ऊर्ध्वकरो दिवसकरस्ताम्रः सेनापतिं विनाशयति।
पीतो नरेन्द्रपुत्रं श्वेतस्तु पुरोहितं हन्ति।।

क. चित्रोऽथवापि धूम्रो रविरश्मिर्व्याकुलं करोत्यूर्ध्वम्।
तस्करशस्त्रनिपातैर्यदि सलिलं नाशु पातयति।। तदेव- ३/२१-२२

३- ग्रीष्मे रक्तो भयकृद्वर्षास्वसितः करोत्यनावृष्टिम्।
हेमन्ते पीतोऽर्कः करोति न चिरेण रोगभयम्।। बृ० सं०- - ३/२६

४- सुरचापपाटिततनुर्नृपतिविरोधप्रदः सहस्रांशुः।
प्रावृट्काले सद्यः करोति विमलद्युतिवृष्टिम्।। तदेव- - ३/२७

५- ध्वजचापनिभे युद्धानि भास्करे वेपने च रुक्षेच।
कृष्णा रेखा सावितरि यदि हन्ति ततो नृपं सचिवः।। तदेव- - ३/३२

६- दिवसकरमुदयसं स्थितमुलकाशनिविद्युतो यदा हन्युः।
नरपतिमरणं विन्द्यात्तदान्यराजप्रतिष्ठा च।। तदेव- - ०३/३३

२३- यदि सूर्य मण्डल की उत्तर दिशा में प्रति सूर्य दिखलाई पड़े तो उस दिशा में वृष्टि होती है। दक्षिण दिशा में प्रतिसूर्य दिखलाई पड़े तो आँधी आती है, दोनो तरफ दिखलाई पड़े तो राजा का और नीचे की तरफ दिखलाई पड़े तो लोगों का नाश करता है।[1]

२४- आकाश में रुधिर के समान लाल वर्ण हो या धूलि के समुदाय से आकाश में लाल हो जाये या लाल वर्ण का सूर्यमण्डल हो तो राजा का अतिशीघ्र ही नाश करता है।[2]

२५- यदि सूर्यमण्डल कृष्ण, विचित्र या नील वर्ण का होकर भयंकर देखने में आवें या सन्ध्या काल में पक्षी, जगंली जानवरों के भयंकर शब्द सुनाई दें तो उस देश के मनुष्यों का नाश होता है।[3]

२६- जिस देश में घड़े की आकृति के समान सूर्यमण्डल दिखाई दे तो उस देश में क्षुधा से पीड़ित होकर मनुष्य प्राण विसर्जन करते हैं अर्थात् प्यास से पीड़ित होकर मरते हैं। यदि खण्डाकार का सूर्य मण्डल दिखाई दे तो लोगों का नाश करता है, यदि तेज से हीन सूर्य दिखाई दे तो भय देने वाला होता है, यदि फाटक की तरह दिखाई दे तो पुरों का नाश करता है अर्थात् नगरों का नाश करता है और यदि छत्रके समान सूर्य दिखाई दे तो देशका नाश करता है।[4]

२७- यदि दोनों सन्ध्याओं में शस्त्र के समान स्वरूप वाले मेघ से सूर्यमण्डल आच्छादित हो तो राजाओं में युद्ध करने वाला होता है और हरिण, महिष, पक्षी, गधे या हस्ती के समान स्वरूप वाले मेघ से आच्छादित होता है तो सूर्यमण्डल भय देने वाला होता है।[5]

२८- राहु के पुत्र तैंतीस संख्यक केतु नामक के हैं अर्थात् राहु के ३३ केतु नाम के पुत्र है। ये तामस कीलक आदि नाम से प्रसिद्ध हैं। इन को सूर्य ग्रहण के समय देखा जाता है। इन के वर्ण, स्थान और आकृति के अनुसार शुभाशुभ फल होता है।[6]

१- दिवसकृतः प्रतिसूर्यो जलकृदुदग्दक्षिणे स्थितोऽनिलकृत्।
उभयस्थः सलिलभयं नृपमुपरि निहन्त्यधो जनहा।। बृ० सं०- ३/३७

२- रुधिरनिभो वियत्यवनिपान्तकरो न चिरात्।
पुरुषरजोऽरुणीकृततनुर्यदि वा दिनकृत्।। तदेव- - ३/३८

३- असितविचित्रनीलपरुषो जनघातकरः।
खगमृग भैरवस्वररुतैश्च निशाद्युमुखे।। तदेव- - ३/३९

४- क्षुन्मारकृद्धटनिभः खण्डो जनहा विदीधितिर्भयदः।
तोरणरूपः पुरहा छत्रनिभो देशनाशाय।। बृ० सं०- ०३/३१

५- प्रहरणसदृशैर्जलदैः स्थगितः सन्ध्याद्वयेऽपि रणकारी।
मृगमहिषविहगखरभसदृशरूपैश्च भयदायी।। तदेव- ०३/३५

६- तामसकीलकसंज्ञा राहुसुताः केतवस्त्रयस्त्रिंशत्।
वर्णस्थानाकारैस्तान् दृष्टवाऽर्के फलं ब्रूयात्।। तदेव- ०३/०७

२९- ये तामस कीलक संज्ञक राहु पुत्र सूर्यमण्डल में दिखाई देने से अशुभ फल देते हैं और चन्द्रमण्डल में प्रविष्ट होने पर शुभ फल देते हैं। परधवांक्ष अर्थात् काक, कबन्ध(छिन्नमस्तक पुरुष) या प्रहरण(खडगादि) के समान आकृति वाले यह राहु पुत्र चन्द्रमण्डल में दिखाई दें तो अशुभ फल देते हैं।[1]

३०- यदि केतु, तामस, कीलक, इन का उत्पात होने के बाद सात रोज के अन्दर दर्शन हो जाये अर्थात् उत्पात उत्पन्न हो तो पूर्ववर्णित उत्पात का कोई अलग फल नहीं होता, ये उत्पात इन केतु आदि के उदय के कारण ही होते हैं।[2]

३१- सूर्य के मण्डल में दण्ड की तरह केतु दिखाई दे तो राजा की मृत्यु होती है। छिन्न-मस्तक पुरुष की आकृति की भान्ति दिखाई दे तो देश में व्याधि का भय होता है, काक की तरह केतु दिखाई दे तो चोर का भय होता है और कील की तरह दिखाई दे तो देश में दुर्भिक्ष होता है।[3]

३२- अमावस्या तिथिके अतिरिक्त किसी भी अन्य तिथि को जब त्वष्टा नामक छायाग्रह सूर्य को आच्छादित कर लेता है और भूमण्डल पर ग्रहणकाल जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है तब दृष्टि अन्तर्गत देशों के शासकों का विनाश होता है और साथ ही प्रजा भी शस्त्र, सूखे, अग्नि दुर्घटनाओं के कारण विनाश को प्राप्त होती है।[4]

सूर्यचन्द्र मण्डल वर्ण फल

सूर्य व चन्द्रमा का मण्डल श्वेतवर्ण का हो तो द्रव्यों में उपद्रव हो। पीत वर्ण हो तो रोगकारी होता है। रक्तवर्ण हो तो युद्धकारी होता है। कृष्णवर्ण हो तो राजा का नाश कारक होता है। नीला वर्ण हो तो महावर्षा कारक होता है। धूम्र वर्ण हो तो धूम्रता देता है। धूम्रवर्ण हो और उस में जल के कण का स्राव हो तो अत्यन्त वृष्टि हो तथा बिम्ब के नाश में राजा की मृत्यु होवे।[5]

१- त चार्कमण्डलगतः पापफलाश्चन्द्रमण्डले सौम्याः।
ध्वांककबन्धप्रहणरूपाः पापाः शशांकेऽपि।। तदेव - ०३/०८

२- न पृथक् फलानि तेषां शिखिकीलकराहुदर्शनानि यदि।
तदुदयकारणमेषां के त्वादीनां फलं ब्रूयात्।। तदेव- ०३/११

३- दण्डे नेरन्द्रमृत्युव्याधिभयं स्यात् कबन्धसंस्थाने।
ध्वांक्ष च तस्कारभयं दुर्भिक्षं कीलकेऽर्कस्य।। तदेव- ०३/१७

४- सतस्कं पूर्व विना त्वष्टा नामार्कमण्डलं कुरूते।
स निहन्ति सप्त भूपान् जनांश्च शस्त्राग्निदुर्भिक्षैः ।। तदेव- ०३/०६

५. सूर्येन्दुपरिवेषाणां फल वक्ष्याम्यशेषतः। श्वेतवर्णे भवेद्द्व्य पीतवर्ण रुजाकरः।।
रक्तवर्णे भवेद्युद्धं कृष्णवर्णे नृपक्षयः। नीलवर्णे महावृष्टिर्धूम्रवर्णे च धूमरी।।
स्वल्पे स्वल्पफलं सर्वं बहूनां तु फलं महत्। जलद्रावे महावृष्टिर्विनाशे नृपक्षयम्।।
भविष्य फल भास्करः- मेघ प्रकरण- ४३-४५

सूर्य मण्डल में दण्ड के आकार का तथा कीला के आकार दीख पड़े तो प्रजा में भय, पीड़ा, चोरों को भय, द्रव्य नाश जैसे उपद्रव होते हैं। छत्र, ध्वजा, पताका, आदि अन्धकार दीख पड़े या सूर्यमण्डल से धुआँ सरीखा दीखे अग्नि के कण दीखें तो मनुष्यों का नाश हो। सफेद, लाल, पीली, काली, मिली हुई ऐसी सूर्य की किरण दीखें तो यथा क्रम से ब्राह्मण क्षत्रिय आदि का नाश हो।[1]

सूर्यमण्डल

सूर्य मण्डल में तीन चार वर्ण की मिली हुई किरणें दीखें तो राजाओं का नाश हो, अन्य प्रकार के कुछ दुष्ट चिन्ह होवे तो प्रजा का नाश हो, तांबा सरीखा वर्ण वाली सूर्य की किरण ऊपर को फैली हुई हो तो राजा का नाश हो।[2] सूर्य मण्डल का पीलावर्ण हो तो राजा के पुत्र का नाश हो, सफेद हो तो राजा के पुरोहित नष्ट हो, अनेक वर्णों की मिली हुई हो तो प्रजानाश हो और धूम्रवर्ण वा भूरे वर्ण की किरण बादलों से नीचे को मुख करके दीखे तो राजा का नाश हो।[3]

मोरं के पंख सरीखा सूर्य का वर्ण दीख पड़े तो बारह वर्ष तक वर्षा नहीं हो, शशाके रक्त समान लाल वर्ण होवे तो शीघ्र ही युद्ध हो।[4] सूर्य का चन्द्रमा के समान वर्ण होवे तो अन्य राजा का राज्य हो, काला वर्ण होय तो प्रजा में कीट सर्पादि का भय हो, भस्मसरीखा वर्ण होय तो शस्त्र भय (युद्ध) होवे।[5]

सूर्य मण्डल में छिद्र पड़े तो राजाओं का नाश हो, घड़ा सरीखा आकार दीख जाय तो दुर्भिक्ष भय हो, आकृति दिखे तो शहर (नगर) भंग हो।[6]

---

१. दृष्टेऽर्कमंडले व्याधिर्भीतिश्चौरार्थनाशनम्।
छत्रध्वजपताकाद्यौराकारैस्तिमिरैर्धनैः।।
विमंडलगैर्धूमैः स्फुलिंगैर्जननाशनम्।
सितरक्तैः पीतकृष्णैस्तैर्मिश्रैर्विप्रपूर्वकान्।। नारदसंहिता- अ० -२/ १२-१३

२. हंति द्वित्रिचतुर्भिर्वा राज्ञोऽन्यजनसंक्षयः।
ऊर्ध्वैर्भानुकरैस्ताम्रैर्नाशं याति स भूपतिः।। तदेव - - - - - - -

३. पीतैर्नृपसुतः श्वेतैः पुरोधाश्चित्रितैर्जनाः।
धूम्रैर्नृपः पिशंगैश्च जलदोऽधोमुखैस्तधा।। तदेव- द्वि - अ० - १४-१५

४. मयूरपत्रसंकाशो द्वादशाब्दं न वर्षति।
शशरक्तनिभे भानौ संग्रामो ह्यचिराद्भवेत्।। तदेव- द्वि - अ० - २०

५. चन्द्रस्य सदृशो यत्र चान्यं राजानमादिशेत्।
अर्के श्यामे कीट भयं भस्माभे शस्त्रतो भयम्।। तदेव- द्वि - अ० - २१

६. छिद्रेऽर्कमंडले दृष्टे तदा राजविनाशनम्। घटाकृतिः क्षुद्भयकृत्पुरहा तोरणाकृतिः।।
छत्रा कृतिर्देशहंता खंडभानुनृपातकृत्। उदयास्तमये भानोर्विद्युदुल्काशनिर्यादि।।
तदा नृपवधो ज्ञेयस्त्वधवा राजविग्रहः। पक्षं पक्षार्द्धमर्केन्द्र परिविष्टावहर्निशम्।।
राजानमन्यं कुरुतो लोहितावुदयास्तगौ। उदयास्तमयं भानुराच्छिनः शस्त्रसन्निभैः।।
घनैर्युद्धं खरोष्ट्राद्यैः पापरूपैर्भयप्रदः। ....।। नारद संहिता- अ०-२२-२६

छत्र सरीखा आकार होय तो देश नष्ट हो, खण्डित सूर्य होवे तो राजा नष्ट होवे, सूर्य अस्त होते समय अथवा उदय होते समय कोई तारा टूटे अथवा बिजली गिरे तो राजा नष्ट हो अथवा राज्य विग्रह हो, पन्द्रह (१५) दिन तक अथवा सात दिन तक सूर्य चन्द्रमा के दिन रात निरन्तर मण्डल रहे तो दूसरा राजा का राज्य हो और उदय अथवा अस्त होते समय सूर्य का चन्द्रमा रुधिर समान लाल वर्ण होवे तो भी राज्य नष्ट हो, उदय समय व अस्त समय सूर्य तथा चन्द्रमा को शस्त्र सरीखे आकार वाले बादल आच्छादित कर लेवें तो युद्ध हो और गधा ऊँट आदि के आकार वाले बादलों से आच्छादित हो तो प्रजा में भय हो।[1]

ऐतिहासिक प्रमाण-

सूर्य मण्डल के चारों ओर अलात चक्र के समान गोलाकार घेरा दिखाई देने लगा, जिस का रंग काला और किनारे का रंग लाल थ। जो कि श्री राम की विजय और खर नामक राक्षस एवं राक्षस सेना के विनाश की सूचना दे रहा था।[2]

लंका पर आक्रमण करने से पूर्व श्री राम का लक्ष्मण से उत्पात सूचक लक्षण का वर्णन किया निर्मल सूर्य मण्डल में नीला चिन्ह दिखायी देता है। सूर्य के चारों ओर ऐसा घेरा पड़ा है, जो रूखा, अशुभ तथा लाल है और राज में चन्द्रमा पूर्णतः प्रकाशित नहीं होते और अपने स्वभाव के विपरीत ताप दे रहे हैं। ये काली और लाल किरणों से व्याप्त हो इस तरह उदित हुए हैं, मानो जगत् के प्रलय का काल आ पहुँचा है। 'वा० राममायण'

रूक्ष, भय सूचक एवं दारुण वायु बहने लगी और दूसरे दिन सूर्योदय होने पर सूर्य मण्डल में कबन्धयुक्त घेरा देखा गया जो कि कौरव सेना के लिए अपशकुन प्रकट कर रहा था।[3] 'महाभारत'

---

१. श्यामं रुधिरंपर्यन्तं बभूव परिवेषनम्।
अलात चक्रप्रतिमं प्रतिगृह्य दिवाकरम्।। बा० रा०- अरण्य का० - २३- ०३

२. रजन्यामप्रकाशस्तु संतापयति चन्द्रमाः।
कृष्णरक्तांशुपर्यन्तो लोकक्षय इवोदितः।।
ह्रस्वो रुक्षोप्रशस्तश्च परिवेषस्तु लोहितः।
आदित्ये विमले नीलं लक्ष्म लक्ष्मण दृश्यते।। तदेव- यु० काण्ड- २३/८-६

३. ववुावदारुणा वाता रूक्षा घोराभिशंसिनः।
सकबन्धस्तथाऽदित्ये परिधिः समदृश्यत।। मा० भा०- द्रोण पर्व - ७०/३

नक्षत्रों में सूर्य क भ्रमण से घटित होने उत्पात एवं शुभाशुभ फल-

अश्विनी और भरणी नक्षत्र में सूर्य के हाने पर वृष्टि होती है तो लोगों का कल्याण होता है। यदि वृत्तिका रोहिणी मृर्गशिरानक्षत्र में सूर्य के रहने पर वृष्टि होती है तो अतुलनीय सुभिक्ष अर्थात् सुसमय होता है।[1]

आर्द्रा नक्षत्र में प्रवेश के समय यदि वृष्टि हो तो अतिवृष्टि, अनावृष्टि, टिड्डी, मूषक, तोता, राजा की चढ़ाई होने का भय होता है तथा मँहगाई होती है। शेष तीन चरणों में वर्षा होने से भय, अत्यल्प वृष्टि और बड़ा रोग होता है।[2] आर्द्रा नक्षत्र में सूर्य का प्रवेश यदि दिन में हो तो संसार में विपत्ति आती है और फसल का नाश होता है तथा स्वल्प वृष्टि होती है। जबकि रात्रि में प्रवेश होने पर कल्याण होता है सुभिक्ष रहता है, फ़सल की वृद्धि होती है तथा लोगों में आपस में प्रेम बना नहता है।[3]

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में सूर्य के जाने पर बिजली, वायु, जल तथा बादल से युक्त समय रहता है। साढ़े तीन दिन तक यह स्थिति रहती है इसके पश्चात् सुन्दर वृष्टि होती है।[4] पुनर्वसु नक्षत्र से दस नक्षत्र पर्यन्त सूर्य के रहने पर लोगों में प्रीति किन्तु राजाओं में कलह होता है। जबकि अनुराधा आदि तीन नक्षत्रों में सूर्य के रहने पर मनुष्य निरोगी रहते हैं।[5] सूर्य के रेवती नक्षत्र में जाने पर छत्रभड्ग होता है। लेकिन रात्रि में प्रवेश होने पर इससे भिन्न स्थिति होती है। उत्तराषाढ़ा आदि तीन नक्षत्रों में जब सूर्य होते हैं तब सुभिक्ष होता है। और शतभिषा से तीन नक्षत्र तक सूर्य रहने पर भी यही स्थिति होती है।[6]

राहु के पुत्र तामस और कीलक, कवन्ध, काम, उष्ण, शृगाल रूप होकर जब सूर्यमण्डल में आते हैं। उस समय हाथी, राजा तथा घोड़े आदि को भय देने वाले होते हैं।[7]

---

१. दास्रादिऋक्षद्वयगे दिनेशे वृष्टिर्भवेत्क्षेमकरी जनानाम्।
वह्यर्क्षसंस्थे यदि वृष्टिरीतिर्ब्राह्मद्वये स्यादतुलं सुभिक्षम्।। वशिष्ट सं०- अर्क०/०८

२. प्रवेश काले यदि रौद्रभस्य वृष्टिर्भवेदीतिरनर्घता च।
शेषेषु पादत्रितयेषु भीतिरत्यल्पवृष्टिर्महती गदा च।। तदेव - अर्क०/०६

३. आर्द्राप्रवेशेऽह्नि जगद्विपत्तिं सम्यस्य नाशं कुरुतेऽल्पवृष्टिम्।
क्षेमं सुभिक्षं निशि सस्य वृद्धिं सुवृष्टिमत्यन्तजनानुरागम्।। तदेव - अर्क० /१०

४. जलधिदैवर्क्षगते पतङ्गे विद्युन्मरुद्वारिघनैश्च युक्ते।
दिनेषु सार्द्धत्रितयेषु पश्चाद्रोद्रादिभेषु क्रमशः सुवृष्टिः।। तदेव - अर्क० /१२

५. पुनर्वसोभर्द्दशधिष्ण्यवृन्दे प्रीतिर्जनानां कलहो नृपाणाम्।
मैत्रादिऋक्षत्रितये नराणां विभावसोः साध्वसमसमयश्च।। तदेव - अर्क० /११

६. भङ्गोऽस्य पौष्णर्क्षगते दिनेशे भिन्नेषु रात्रावपि बीक्षणीयम्।
विश्वादिऋक्षत्रितये यदा स्यातदा सुभिक्षं त्रिषु वारुणर्क्षात्।। तदेव- अर्क० /१३

७. राहोः सुतारत्तामसकीलकाद्याः कबन्धकाकोष्ट्रशृगालरूपाः।
यदा रवेमर्ण्डलगास्तदानीं मातङ्गभूपाहयभीतिदाः स्युः।। व० सं० - अर्क० /१४

छत्र, ध्वज, नक्षत्र, अंकुश, गाय, बैल, घोड़ा, दण्ड, अस्त्र, भद्रासन तथा सिंह रूप से जब ये राहुपुत्र (तामस, कीलक) सूर्यमण्डल में दिखाई पड़ते हैं। तब संसार पर विपत्ति आती है और यह भय देने वाले होते हैं।[1]

सूर्य का वर्ण अनुसार शुभाशुभ फल–

सूर्य का इन्द्रधनुष के समान वर्ण होने पर परस्पर राजाओं में विरोध होता है तथा यदि मयूर के पंख के समान वर्ण हो तो बारह वर्ष पृथ्वी पर वर्षा नहीं होती।[2]

सूर्य का वर्ण खरगोश के रक्त के समान हो तो राजाओं में युद्ध हाता है और यदि चन्द्रमा के वर्ण के समान हो तो राजाओं में संघर्ष होता है। यदि काले रंग का हो तो कीट का भय तथा भस्म रंग होने से आसुरी जगत् में भय देने वाला होता है।[3]

सूर्य के उदय अस्त के समय यदि उल्का पतन हो तो राजाओं को बहुत भय देने वाला होता है और एक पक्ष में यह प्रभाव प्रकट होता है।[4]

वाल्मीकि रामायण के युद्ध काण्ड में सूर्य से आग की ज्वालाएँ टूट-टूट कर गिरने का वर्णन मिलता है जो अशुभ सूचक उत्पात को प्रकट करती हैं।[5]

चन्द्र से सम्बद्ध उत्पात

आकाश मण्डल में सूर्य के उदयास्त, वर्ण एवं नक्षत्र भ्रमण आदि समय में होने वाले शुभाशुभ विकारों के लक्षण एवं फल–

चन्द्रमा के नक्षत्र भ्रमण में विकारों का शुभाशुभ फल–

क) यदि चन्द्रमा पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, मूला, ज्येष्ठा– नक्षत्रों में हो कर दक्षिण की ओर दिखाई दे तो अग्नि भय होता है और जलचरों, थलचरों तथा सर्पों का नाश होता है।[6]

---

१. छत्रध्वजे भाङ्गकुशगोवृषाश्वदण्डास्त्रभद्रासनसिंहरूपाः।
दृष्टा रवेर्मण्डलगा यदा ते जगद्विपत्ती भय प्रदाः स्युः।। व० सं० - अर्क० /१५

२. आखण्डलचापनिभो भूपविरोधं परस्परं तत्र।
यदि पत्रनिभो बर्हेर्द्वादशवर्षं न वर्षति क्षोण्याम्।। व० सं० - अर्क० /१६

३. शशरक्तनिभो युद्धं राजान्यत्वं विधूपमः सविता।
श्याममनिभः कीटभयं भस्मनिभो भयदमासुरं जगतः।। व० सं० - अर्क० /२०

४. भानोरुदयास्तमये चोल्कापतनं महाहवं राज्ञाम्।
परिवेषयति प्रकटं पक्षं पक्षार्द्धमेव वा सततम्।।व० सं०- अर्क०/२१

५. "ज्वलतः प्रपतत्येतदादित्यादग्निमण्डलम्।।" वा० रा०- युद्धकाण्ड/२३/०६

६- आषाढद्वयमूलेन्द्राग्नेयानां याम्यगः शशी। [illegible] पु० नि० ९७

विशाखा और अनुराधा नक्षत्रों में यदि दक्षिणकी ओर चन्द्र दिखाई देतो पापफल देता है अर्थात् मनुष्यों में पापकी वृत्ति होती है और कष्ट पाते हैं।'

ख) यदि चन्द्रमा की आकृति उदय समय विपरीत प्रकार की होतो देश में दुर्भिक्ष करता है।

ग) यदि विशाखा और अनुराधा नक्षत्रों में होकर चन्द्रमा दक्षिण भाग की ओर से जाये तो पाप फल देता है। यदि मघा और विशाखा के मध्य में होकर चन्द्रमा जाता है तो शुभफल देता है।[2]

उत्तराषाढ़ा, पूर्वाषाढ़ा, मूल, ज्येष्ठा, विशाखा तथा अनुराधा नक्षत्रों में जब दाहिने भाग में चन्द्रमा होता है तो अग्नि का भय ईती का भय तथा बड़ा दुर्भिक्ष एवं लोगों में युद्ध होता है। जो नक्षत्र नहीं कहे गये हैं उन में यदि दाहिनी ओर वृद्धि हो, तो राजाओं में कलह तथा अत्यधिक वृष्टि होती है।

रोहिणी नक्षत्र अथवा मघा नक्षत्र को यदि चन्द्रमा भेदन करे तो प्रजा का अन्त कर देने वाला होता है अर्थात् प्रलय हो जाता है।[3]

चन्द्र की कान्ति के लक्षण एवं फल-

१- चन्द्रमा की आकृति में भेद होने पर उन भेदों को संस्थान' के नाम से कहा जाता है और यह नौ प्रकार के संस्थान' कहे गए हैं। इन के नाम इस प्रकार से हैं:-

१- नावसंस्थान, २- लांगसंस्थान, ३- दुष्टलांगलसंस्थान, ४- समदण्ड संस्थान, ५- कार्मुक संस्थान, ६- युगसंस्थान, ७- पार्श्वशायी संस्थान, ८- आवर्जित संस्थान और ९- कुण्डाखय संस्थान।

इन संस्थानो के लक्षण एवं फल इस प्रकार से हैं:-

१-नावसंस्थान-

यदि चन्द्र का शृंग कुछ उन्नत होकर नाव की तरह विशालता को प्राप्त होता हो तो नौ नाम का संस्थान होता है। नाविक लोगों को पीड़ा होती है अर्थात् नाव चलाने वाले लोगों को पीड़ा होती है और बाकी सब के लिए शुभ होता है।[4]

१- अग्निप्रदस्तेयचर वन सर्प विनाशकृत्।
विशाखा खामित्रयोर्याम्यपार्श्वगः पापगः शशी।। न० पु० त्रि०-१८

२- दक्षिणपार्श्वेन गतः शशी विशाखानुराधयोः पापः।
मध्येन तु प्रशस्तः पितृदेवविशाखयोश्चापि।। बृ० सं०-०४/०६

३. विश्वाम्बुमूलेन्द्रविशाखमैत्रभानां यदा दक्षिणभागगेन्दुः।
वह्नेर्भयं त्वीतिभयं जनानां करोति दुर्भिक्षमतीव युद्धम्।।
अनुक्तभानां यदि याम्यवृत्तिं करोति वृष्टिं कलहं नृपाणाम्।
प्रजापतेर्भं यदि पैत्रिभं वा भिनत्ति चन्द्रोन्तकरः प्रजानाम्।। बृ० सं०- चन्द्राध्याय/१३-१४

४- उन्नतमीषच्छृंगं नौसंस्थाने विशालता चोक्ता।
नाविकपीडा तस्मिन् भवति शिवं सर्व लोकस्य।। बृ० सं०- चन्द्राध्याय- ४/०८

२- लांगसंस्थान-

यदि चन्द्र का शृंग आधा उन्नत हो तो 'लांगलसंस्थान' होता है। इस संस्थान में हल से जीवनयात्रा चलाने वाले प्राणियों को पीड़ा होती है। राजाओं में बिना कारण स्नेह होता है और देश में सुभिक्ष होता है।[1]

३- दुष्टलांगल संस्थान-

जब चन्द्र का दक्षिण शृंग अर्द्धोन्नत देखने में आवे तब दुष्टलांगल नाम का संस्थान होता है। इस संस्थान के होने से पाण्डय देश के राजा की मृत्यु होती है और यह सेनाओं की यात्रा में उद्यम करता अर्थात् सेनाओं की यात्रा आरम्भ करता है।[2]

४-समदण्ड संस्थान-

यदि चन्द्र के शृंग समान हों तो प्रथम दिन की तरह सुभिक्ष, क्षेम, कुशल और वृष्टि होती है अर्थात् प्रतिपदा के दिन जिस तरह सुभिक्ष, क्षेम या वृष्टि हो तो उसी प्रकार एक महीने तक सुभिक्ष, क्षेम और वृष्टि होती रहेगी। यदि दण्डाकार चन्द्रमा दिखलाई दे तो गौ को पीड़ा होती है और राजा बहुत कठोर दण्ड देने वाला होता है।[3]

५- कार्मुक संस्थान-

यदि चन्द्र की आकृति धनुष के समान हो तो उस को कार्मुक संस्थान कहते हैं, इस में युद्ध होता है तथा जिस तरफ धनुष की जीवा रहती है उस दिशा के राजा की जीत होती है जिस तरफ धनुष की पीठ रहती है उस तरफ के राजा की पराजय या नाश होता है।[4]

६- युगसंस्थान-

यदि चन्द्र के शृंग दक्षिणोत्तर विस्तीर्ण हों तो उस को युगसंस्थान कहते हैं, इस संस्थान में भूकम्प होता है।[5]

७-पार्श्वशायी संस्थान-

यदि चन्द्र के दक्षिण शृंग का अग्रभाग कुछ ऊँचा हो तो पार्श्वशायी संस्थान होता है। इस में धनी व्यापारियों का और वृष्टि का नाश होता है।[6]

१- अर्द्धोन्नते च लाङ्गलमिति पीडा तदुपजीविनां तस्मिन्।
प्रीतिश्च निर्निमित्तं मनुपतीनां सुभिक्षं च।। बृ० सं०- चन्द्राध्याय- ४/०६

२- दक्षिणविषणमर्द्धोन्नतं यदा दुष्टलांगलाख्यं तत्।
पाण्ड्यनरेश्वरनिधनकृदुद्योगकरं बलानां च ।। तदेव- - ४/१०

३- समशशिनि सुभिक्षक्षेमवृष्टयः प्रथमदिवससदृशा स्युः।
दण्डवदुदिते पीडा गवां नृपश्चोग्रदण्डोऽत्र।। तदेव- - ४/११

४- कार्मुकरूपे युद्धानि यत्रतु ज्या ततो जयस्तेषाम्। तदेव- - ४/१२

५- स्थानं युगमिति याम्योत्तरायतं भूमिकम्नपाय।। तदेव- ४/१२

६- युगमेव याम्यकोटयां किञ्चित्तुंग स पार्श्वशायीति।
विनिहन्ति सार्थवाहान् वृष्टेश्च विनिग्रहं कुर्यात्।। तदेव- ४/१३

८-आवर्जित संस्थान-

अतिशय उन्नत होने के कारण चन्द्र का एक शृंग यदि अधोमुख हो तो आवर्जित नाम का संस्थान होता है। इस संस्थान में मनुष्य, पशु दोनो के लिए दुर्भिक्ष होता है।[१]

९- कुण्डाखय संस्थान-

यदि चन्द्र के चारों तरफ अव्युच्छिन्न(अखण्डित) गोलाकार रेखा दिखलाई दे तो कुण्डाख्य संस्थान होता है। इस संस्थान में माण्डलिक राजाओं का स्थान छूट जाता है।[२]

पूर्व कथित संस्थानों के अभाव में यदि चन्द्र का शृंग उत्तर दिशा में उन्नत हो तो क्षेम, सस्य की वृद्धि और वृष्टि को करता है। यदि दक्षिण दिशा में उन्नत हो तो दुर्भिक्ष और भय करता है।[३]

यदि चन्द्र का एक शृंग विलीन हो अर्थात् बिल्कुल नहीं हो या सब नये प्रकार के हों तो देखने वालों में से एक मनुष्य की मृत्यु होती है।[४]

चन्द्र के स्वरूप में विकारों के फल-

१- यदि चन्द्र बिम्ब छोटा हो दुर्भिक्ष और बड़ा बिम्ब हो तो सुभिक्ष होता है।[५]

२- यदि चन्द्रबिम्ब मध्यम हो तो वज्रसंज्ञक होता है, यह चन्द्रबिम्ब क्षुधा और भय को देने वाला होता है और राजाओं में उद्यम पैदा करता होता है। यदि चन्द्रबिम्ब मृदंग की तरह देखने में आवे तो कल्याण और सुभिक्ष होता है।[६]

३- यदि अति विस्तृत मूर्ति हो तो राजलक्ष्मी की वृद्धि होती है। यदि मोटी मूर्ति हो तो सुभिक्ष करने वाला और पतली मूर्ति हो तो प्रियधान्य(सुभिक्ष) करनेवाला होता है।[७]

१- अभ्युच्छ्रायादेकं यदि शशिनोऽवाङ्मुखं भवेच्छृङ्गम्।
आवर्जितमित्यसुभिक्षकार तद्गोधनस्यापि।। बृ० सं०- चन्द्राध्याय- ४/१४

२- अव्युच्छिन्ना रेखा समन्ततो मण्डला च कुण्डाख्यम्।
अस्मिन्माण्डलिकानां स्थानत्यागो नरपतीनाम्।। तदेव- - ४/१५

३- प्रोक्तस्थानाभावादुदगुच्चक्षेमवृद्धिवृष्टिकरः।
दक्षिणतुङ्गश्चन्द्रो दुर्भिक्षभयायुः निर्दिष्ट।। तदेव- ४/१६

४- शृङ्गेणैकेनेन्दुर्विलीनमथवाऽप्यपाङमुखं शृङ्गम्।
सम्पूर्ण चाभिनवं दृष्ट्वैको जीविताद् भ्रश्येत्।। तदेव- ४/१७

४- स्वल्पो दुर्भिक्षकरो महान् सुभिक्षावहः प्रोक्तः।। तदेव- ४/१८

६- मध्यतनुर्वज्राख्यः क्षुद्भयदः सम्भ्रमाय राज्ञां च।
चन्द्रो मृदङ्गरूपः क्षेमसुभिक्षावहो भवति।। तदेव- ४/१९

७- ज्ञयो विशालमूर्तिर्नरपतिलक्ष्मीविवृद्धये चन्द्रः।
स्थूलः सूभिक्षकारी प्रियधान्यकरस्तु तनुभूर्त्तिः।। तदेव- ४/२०

४- यदि चन्द्रशृंग मंगल से वेधित हो तो दूर में रहने वाले बड़े राजाओं का नाश करने वाला होता है, शनि से वेधित होने पर शस्त्र और क्षुधा का भय करने वाला होता है। बृहस्पति से वेधित होने पर श्रेष्ठ राजाओं का नाश करता है तथा शुक्र से वेधित होने पर छोटे राजाओं का नाश करने वाला होता है। यह पुर्वोक्त ग्रहकृत फल शुक्लपक्ष में अल्प और कृष्णपक्ष में सम्पूर्ण होता है।[1]

५- यदि चन्द्रबिम्ब शुक्र से वेधित हो तो मगध, यवन, पुलिन्द, नेपाल, भृंगि, मरुदेश, कच्छ, सूरत, मद्रास, पंजाब, काश्मीर, कुलूतक, पुरुषद, उशीनर इन देशों में सात महीने तक भयानक मृत्यु होती है।[2]

६- यदि चन्द्रबिम्ब बृहस्पति से बेधित हो तो कन्धार, सौबीरक, सिन्ध, कीर पर्वतीय, द्रविड इन देशों के ब्राह्मणों और धानों का दश महीने तक नाश करता है।[3]

७- यदि मंगल से चन्द्रबिम्व बेधित हो तो अश्व आदि वाहनों के द्वारा योद्धाओं का नाश होता है तथा मालवा कौलिन्द, गणों में प्रधान, शिबि और अयोध्या में उत्पन्न जन और राजाओं का नाश करता है। इस तरह कुरू, मत्स्य, शुक्ति इन देशों के जनों और राजाओं का छै महीने के अन्दर नाश करता है।[4]

८- यदि शनैश्चर से चन्द्रमा बेधित हो तो दश महीने तक देश वासियों को पीड़ित करके योद्धाओं, मन्त्रियों, कुरुवंशीयों, पूर्व दिशाओं में स्थित राजा और अर्जुनावन जनों का नाश करता है।[5]

९- यदि चन्द्रमा को वेधित करके बुध निकला हो तो मगध, मथुरा और वेणा नदी के तट पर स्थित देशों के मनुष्यों को पीड़ित करता है तथा पश्चिमीय देशों में स्थित मनुष्यों के लिऐ सतयुग के समान समय करता है अर्थात् उन देशों में मनुष्य सब प्रकार से सम्पन्न होते हैं।[6]

१- प्रत्यन्तान् कुनृपांश्च हन्त्युडुपतिः शृङ्गे कुजेनाहते।
शस्त्रक्षुद्रयकृद्यमेन शशिजेनावृष्टिदुर्भिक्षकृत्।।
श्रेष्ठान् हन्ति नृपान् महेन्द्रगुरुणा शुक्रेण चाल्पान्नृपान्।
शुक्ले याप्यमिदं फलं ग्रहकृतं कृष्णे यथोक्तागमम्।। बृ० सं०- - ४/२१

२- भिन्नः सितेन मगधान् यवनान् पुलिन्दान् नेपालभृंगिमरूकच्छसुराष्ट्रमद्रान्।
पांचालकैकयकुलूतकपुरुषादान् हन्यादुशीनरजनानपि सप्तमासान्।। बृ० सं०-४/२२

३- गन्धारसौवीरकसिन्धुकीरान् धान्यानि शैलान् द्रविडाधिपाञ्च।
द्विजांश्च मासान् दश शीतरश्मिः सन्तापयेद्वाक्पतिना विभिन्नः।। बृ० सं० - ४/२३

४- उद्युक्तान् सह वाहनैर्नरपतींस्त्रैगर्तकान् मालवान् कौलिन्दान्,
गुणपुंगवानथ शिवीनायोध्यकान् पार्थिवान्।
हन्यात्कौरवमत्स्यशुक्तयधिपतीन् राजन्यमुख्यानपि,
प्रालेयांशुरसृग्ग्रह तनुगते षण्मासससमयादर्या ।। तदेव - ४/२४

५- यौधेयान् सचिवान् सकौरवान् प्रागीशानथ चार्जुनायनान्।
हन्यादर्कजभिन्नमण्डलः शीतांशुर्दशमासपीडया ।। तदेव - ४/२५

६- मगधान् मथुरां च पीडयेद्वेणायाश्च तटं शशांकजः।
अपरत्र कृतं युगं वदेद्यदि भित्वा शशिनं विनिर्गतः।। तदेव - ४/२६

१०- यदि केतु से चन्द्रमा वेधित हो तो सब प्रकार से मगंल, आरोग्य, सुभिक्ष और शस्त्रसे जीवन यात्रा चलने वाले मनुष्यों का नाश करता है तथा चोरों को विशेष पीड़ा देता है।[1]

११- यदि ग्रहण कालिक चन्द्र को उल्कापात हो तो उस समय जिस राजा के जन्म नक्षत्र में चन्द्रमा बैठा हो तो उस का नाश करता है।[2]

१२- यदि चन्द्रबिम्ब भस्म के समान रुक्ष, रक्तवर्ण, किरणों से हीन, कृष्णवर्ण, खण्डित या काँपता हुआ हो तो देश में दुर्भिक्ष, कहल, रोग और चोरों का भय देने वाला होता है।[3]

१३- यदि शुक्लपक्ष में कोई तिथि बढ़ जाय तो ब्राह्मण, क्षत्रिय और प्रजागण अत्यन्त बढ़ते हैं, यदि तिथियाँ घट जायें तो ब्राह्मण क्षत्रिय और पूजागणकी हानि होती है और समान रहने पर उनको साधारण फल मिलता है।[4]

१४- यदि अमावस्या के दिन में चन्द्रमा और सूर्य के साथ नक्षत्र और पाप ग्रहों के साथ मिलते हों और उसी अहोरात्र में त्र्यहस्पर्श होता हो तो यह सब क्षय दिखलाने के लक्षण होते हैं।[5]

१५- यदि कार्तिक पूर्णिमा के दिन समान वर्ण के आकाश में चन्द्रमा ज्योति रहित हो और लाल रंग के हो कर अलक्ष्य हो जाय तो देश को क्षय करने वाला होता है।[6]

१६- यदि चन्द्रमा का मृगचिह्न अपने उचित स्थान पर दिखाई न दे तो क्षयकारक होता है अर्थात् देश का नाश करने वाला होता है।[7]

१- क्षेमारोग्यसुभिक्षविनाशी शीतांशुः शिखिना यदि भिन्नः।
कुर्यादायुधजीविविनाशं चौराणामधिकेन च पीडाम्।। बृ० सं०- - ४/२७

२- उल्कपा यदा शशी ग्रस्त एव हन्यते।
हन्यते तदा नृपो यस्य जन्मनि स्थितः।। तदेव- - ४/२८

३- भस्मनिभः पुरुषोऽरूणमूर्तिः शीतकरः किरणैः परिहीणः।
श्यावतनुः स्फुटितः स्फुरणो वा क्षुड्डमरामयचौरभयाय।। तदेव - ४/२९

४- शुक्ले पक्षे सम्प्रवृद्धे प्रवृद्धिं ब्रह्मक्षत्रं याति वृद्धिं प्रजाश्च।
हीने हानिस्तुल्यता तुल्यतायां कृष्णे सर्वं तत्फलं व्यत्ययेन।। बृ० सं०- ४/३१

५- ज्वलितार्केन्दुनक्षत्रं निर्विशषेदिनक्षपम्।
अहोरात्रं मया दृष्टं तत्क्षयाय भविष्यति।। म० भा० भी०- १/२२

६- अलक्ष्यः प्रभया हीनः पौर्णमासीं च कार्तिकीम्।
चन्द्रोऽभूदग्निवर्णश्च समवर्णे नभस्थले।। तदेव - - १/२३

७- व्यावृत्तं लक्ष्य सोमस्य भविष्यति महद्भयम्। तदेव - - २/३२

शुभ फलदायी चन्द्र विकार के लक्षण-

१- यदि चन्द्रमा हिम, कुन्दपुष्प या स्फटिकमणि के समान रात्रि में दिखाई दे तो वह लोक के लिये कल्याणकारी होता है अर्थात् हिम आदि के समान स्वच्छ चन्द्र को रात्रि में जो देखता है उसका सर्वदा मंगल होता है।[1]

२- यदि विकार रहित गति और विकार रहित किरणवाला चन्द्र कुमुद, मृणाल या मुक्ताहार के समान वर्ण का होकर तिथिके अनुसार घटता-बढ़ता हो तो मनुष्यों की विजयके लिये होता है अर्थात् अतिशुभदायक होता है।[2]

३- जिस महीने में चन्द्रमा यदि कुन्द, कुमुद, निर्मल, श्वेत, कोमल, शंख तथा तपे हुए चाँदी तथा निर्मल वज्र कान्ति के समान यदि उदित हो तो प्रजाओं के लिए कल्याण करने वाला तथा अत्यधिक सुभिक्ष करने वाला होता है।[3]

भौम से सम्बद्ध उत्पात

भौम द्वारा उत्पन्न शुभाशुभ उत्पातों के लक्षण एवं फल-

मंगल ग्रह के पांच मुख होते हैं। उन के नाम इस प्रकार से हैं-
१-उष्णमुख, २-अश्रुमुख, ३-व्यालमुख, ४-रुद्रराननूमुख और ५- असिमुसलमुख हैं।[4] इन मुखों के अनुसार उत्पन्न विकारों का शुभाशुभ फल देता है।

मुखों के लक्षण एवं फ़ल-

१- जिस नक्षत्र में मंगल का उदय हो उस से सप्तम, अष्टम् या नवम नक्षत्र में जाकर यदि वक्री हो तो वह वक्रीमंगल **'उष्णमुख'** कहलाता है। इस उष्णमुख वाले मंगल के उदय काल में अग्नि से आजीविका करने वाले (सोनार, लोहार आदि) को पीड़ा होती है।[5]

१- प्रालेयकुन्दकुमुदस्फटिकविदातो यत्नादिवादिसुतया परिमृज्यचन्द्रः ।
उच्चैः कृतो निशि भविष्यति मेशिवाय यो दृश्यते स भविता जगतः शिवाय।। बृ० सं०- ४/३०

२- यदिकुमुदमृणलहारगौरस्थितिनियमात् क्षयमेति वर्द्धते वा।
अविकृतगतिमण्डलांशुयोगी भवति नृणां विजायय शीतरश्मिः।। तदेव - -४/३३

३. प्रालेयकुन्दकुमुदामलपुण्डरीकशंखप्रतप्तरजतामलवज्रकान्तिः।
एवं विधोऽभ्युदितशीतकरः प्रजानां क्षेमं सुभिक्षमतुलं कुरुतेऽत्र मासे।। बृ० सं०-४/२२

४- उष्णमश्रुमुखं व्यालं रुधिराननमवे च।
निस्त्रिंशं मुशलं चेति पंचवक्त्राणि ।। बृ० सं०- ५/०१

५- यद्युदयर्क्षाद्वक्रं करोति नवमाष्टसप्तमर्क्षेषु ।
तद्वक्त्रमुष्णमुदये पीडाकरमग्निवार्तानाम्।। तदेव - -५/०२

२- यदि मंगल उदय नक्षत्र से अर्थात् जिस नक्षत्र में उदय हुआ है उस से दशम, एकादश या द्वादश नक्षत्र में यदि मंगल वक्री हो तो वह 'अश्रुमुख' कहलाता है। यह वक्री मंगल रसों में दोष पैदा करता है अर्थात् रसीले पदार्थों, रस वाली वस्तुओं में दोष उत्पन्न करता है तथा रोग की वृद्धि करता है और अनावृष्टि करता है।[1]

३- यदि अस्तकालिक नक्षत्र से अर्थात् मंगल जिस नक्षत्र में अस्त हुआ है उस से पन्द्रहवें या सोलहवें नक्षत्र में जाकर मंगल यदि वक्री होता है तो वह वक्रमंगल 'रुधिराननमुख' कहलाता है। इस मंगल मुख के उदय समय में लोगों को मुख का रोग, भय और सुभिक्ष होता है।[2]

४- जिस नक्षत्र में मंगल अस्त हो उस से तेरहवें या चौदहवें नक्षत्र में जाकर वक्री हो तो वह वक्री मंगल **'व्यालमुख'** कहलाता है। इस मुख वाले मंगल के समय में दंष्ट्री(सूकर, कुत्ता आदि) सर्प और मृग के द्वारा लोगों को पीड़ा होती है तथा संसारमें सुभिक्ष होता है।[3]

५- यदि अस्तकालिक नक्षत्र से सत्रहवें या अठारहवें नक्षत्र में जाकर मंगल पीछे की तरफ लौटता है अर्थात् वक्री हो तो वह **'असिमुसल'** नाम का मुख कहलाता है। इस मुखके समय में देश चोरों से पीड़ा, अनावृष्टि और शस्त्रभय होता है।[4]

नक्षत्रों के अनुसार मंगल फल-

१- यदि पूर्वाफल्गुनी या उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उदित होकर मंगल उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में जाकर वक्री होता है और बाद में रोहिणी नक्षत्र में जाकर अस्त होता हो तो तीनों लोकों अर्थात् स्वर्ग, मृत्यु और पाताल लोक के वासियों को पीड़ित करता है।[5]

२- यदि श्रवण नक्षत्र में उदित मंगल पुष्य नक्षत्र में जाकर वक्री होता है तो राजाओं को पीड़ित करता है तथा जिस नक्षत्र में मगंल उदित हो उस नक्षत्र की दिशा कूर्मचक्र के अनुसार और नक्षत्र व्यूह के अनुसार नक्षत्र जिस देश के साथ सम्बन्ध रखता हो उस देश के जनों का नाश करता है।[6]

१- द्वादशदशमैकादशनक्षत्राद्वक्रिते कुजेऽश्रुमुखम्।
दूषयति रसानुदये करोति रोगानवृष्टिं च।। बृ० सं०- ५/०३

२- रुधिराननमि[illegible] वक्त्रं पंचदशात् षोडषशाच्च विनिवृत्ते।
तत्काले मुखरोगं सभयं च सुभिक्षमावहति ।। तदेव- ५/०४

३- व्यालं त्रयोदशर्क्षाच्चतुर्दशाद्वाविपच्यतेऽस्तमये।
दंष्ट्रि[illegible]लमृगेभ्यः करोति पीडां सुभिक्षं च ।। तदेव- ५/०३

४- असि[illegible]सलं सप्तदशादष्टादशतोऽपि वा तदनुवक्रे।
दस्युगणेभ्यः पीडां करोत्यवृष्टिं सशस्त्रभययम्।। तदेव- ५/०५

५- भाग्यार्यमोदितो यदि निवर्तते वैश्वदैवते भौमः।
प्राजापत्येऽस्तमितस्त्रीनपि लोकान्निपीडयति।। बृ० सं०- ५/६

६- श्रवणोदितस्य वक्रं पुष्ये मुर्धाभिषिक्तपीडाकृत्।
यस्मन्नृक्षे [illegible] जनान् हन्ति।। तदेव- - ५/७

३- यदि मघा नक्षत्र में जाकर मंगल उसी नक्षत्र में वक्री होता है तो पाण्ड्यदेशीय रा
का नाश करता है तथा शस्त्रभय और अनावृष्टि करता है।[1] (पाण्डय देश आधुनिक
और उस के आस पास के स्थान)

४- मघा नक्षत्र को भेद कर के यदि मंगल विशाखा को भेदता हो तो दुर्भिक्ष करता
यदि रोहिणी नक्षत्र को भेदता हो तो जनों में भयंकर मरक (मरी) करता है।[2]

५- यदि रोहिणी नक्षत्र के दक्षिण से मंगल विचरण करता हो तो देश में महँगी
अनावृष्टि करता है। यदि धूमयुक्त या शिखा युक्त मंगल देखने मे आवे तो 'पारि
पर्वतपर स्थित मनुष्यों का नाश करता है।[3]

६- यदि मंगल रोहिणी, श्रवण, मूला, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा या
नक्षत्र में विचरण करता है तो उस समय मेघों का नाश करता है अर्थात् जितने समय
मंगल इन उपर्युक्त नक्षत्रों में से एक नक्षत्र पर जितने दिन रहेगा उतने दिन वर्षा नहीं है

७- यदि उदय से १७वें या १८वें नक्षत्र में मंगल वक्र हो तो उस को 'मुसल' नाम
कहते हैं इस योग के होने से अकाल या भुखमरी का भय उत्पन्न होता है।

८- यदि मंगल पूर्वाफाल्गुनी या उत्तराफाल्गुनी में उदित होकर उत्तराषाढ़ा में व
तथा रोहिणी में अस्त हो तो तीन लोकों के लिए नाशकारी होता है।[5]

९- मंगल जिस दिशा में उदय या अस्त हो उसी दिशा के शासक के लिये अकल्याण
होता है। यदि मंगल श्रवण, पुष्य नक्षत्र से चलता हुआ वक्री हो जाय तो उस से आ
लड़ाई-झगड़े की सम्भावना होती है और गो अश्वादि की हानि होती है।[6]

१०- जब मंगल मघा, विशाखा या रोहिणी के योगतारा का भेदन करे तो उस समय
में अकालमृत्यु और बीमारी लाने वाला होता है अर्थात् देश में बीमारी उत्पन्न होती

१- मध्येन यदि मघानां गतागतं लोहितः करोति ततः।
पाण्ड्यो नृपो विनश्यति शस्त्रोद्योगाद्भयमवृष्टिः।। बृ० सं०- ५/८

२- भित्वा मघां विशाखां भिन्दन् भौमः करोति दुर्भिक्षम्।
मरकं करोति घोरं यदि भित्वा रोहिणीं याति।। तदेव- ५/६

३- दक्षिणतो रोहिण्याश्चरन्महीजोऽर्घवृष्टिनिग्रहकृत्।
धूमायन् सशिखो वा विनिहन्यात् पारियात्रस्थान्।। तदेव- ५/१०

४- प्राजापत्ये श्रवणे मूले त्रिषु चोत्तरेषु शाक्रे च।
विचरन् धननिवहानामुपघातकरः क्षमातनयः।। तदेव- ५/११

५- दुर्भिक्षं धनधान्यादिनाशने भयकृत् सदा।
फाल्गुन्योरुदितो भौमो वैश्वदेवे प्रतीपगः।। न० पु०-त्रि०- १६

६- अस्तगश्चतुरास्यार्क्षे लोकत्रयविनाशकृत्।
उदितः श्रवणे पुष्ये वक्तृगोश्वनहानिदः।। न० पु०-त्रि०- - २०

७- यद्दिग्गोऽस्युदितो भौमस्तद्दिग्भूप भयप्रदः।
मघामध्यगतो भौमस्तत्र चैव प्रतीपगः ।। तदेव- - - २२

११- यदि तीनों उत्तरा नक्षत्र, रोहिणी, मूल, श्रवण और मृगशिरा इन नक्षत्रों के बीच होकर मंगल चले अथवा रोहिणी नक्षत्र के दक्षिण की ओर होकर चले तो उस समय वर्षा नहीं होती और जब इन्हीं नक्षत्रों में हो कर मंगल नक्षत्रों के उत्तर की ओर होकर चले तो शुभ होता है एवं वर्षा होती है।[1]

१२- श्रवण, मघा, पुनर्वसु मूला हस्त, पूर्वाभाद्रपदा, अश्विनी, विशाखा और रोहिणी नक्षत्र में मंगल यदि उत्तर दिशा में हो कर संचार करे तथा उदय हो तो अधिक प्रशस्त होता है अर्थात् अतिशुभदायक होता है।[2]

१३- अधिक निर्मल मूर्तिवाला किंशुक और अशोक पुष्प के समान वर्ण वाला, स्पष्ट सुन्दर किरण वाला तथा तपाये हुए ताँबे के समानवर्ण वाला मंगल यदि उत्तरा क्रान्तिमें विचरण करे तो राजाओं का शुभ करने वाला और प्रजाओं को सन्तोष देने वाला होता है। ऐसा ही आचार्य गर्ग ने भी कहा हुआ है।[3]

१४- यदि मंगल सम्पूर्ण नक्षत्रों में सौम्य मार्ग से गमन करे तो शुभ देने वाला होता है। जबकि याम्य मार्ग से गमन करे तो सम्पूर्ण प्रणियों के लिए अरिष्ट फल देने वाला होता है।[4]

राशी अनुसार मंगल उत्पात फल-

१- यदि मंगल अथवा शनि, मेष, सिंह, मीन, धनु राशि पर स्थित होकर वक्री हो जायें तो गौ, मनुष्य, घोड़ा, हाथी तथा पक्षी समूह का अथवा सम्पूर्ण दल नाश कर देता है।[5]

२- यदि मंगल और बृहस्पति एक राशि में हो तो वर्षाकाल में भी वर्षा नहीं होती।[6]

१- त्रिषूत्तरासु रोहिण्यां नैर्ऋते श्रवणे मृगे। अवृष्टिदश्चरन्भौमो दक्षिणे रोहिणीस्थितः।।
भूभिजः सर्वाधिष्ण्यानां [illegible]गामी शुभप्रदः। न० पु०-त्रि०- - २४-२५

२- चारोदयाः प्रशस्ताः श्रवणमघादित्यहस्तमूलेषु।
एक पदाश्विविशाखा प्राजापत्येषु च कुजस्य।। बृ० सं०- ५/१२

३- विपुलविमलमूर्तिः किंशुकाशोक वर्णः। स्फुटरुचिरमयूखस्तप्तताम्रप्रभाभः।
विचरति यदि मार्गं चोत्तरं मेदिनीजः। शुभकृदवनिपानां हार्दिदश्व प्रजानाम्।। तदेव--५/१३

क- याम्यादि[illegible] पर्यन्तं नवर्क्षं मार्गमुत्तरम्। भाग्यादिनैर्ऋतान्तं तु मध्यमं मार्गमुच्यते।।
आषाढाद्यपश्विनान्तं तु दक्षिणं समुदाहृतम्। सौम्यमार्गस्थितो भौमः प्रजानामुपकारकः।।
मध्यमे मध्यफलदो याम्ये तु भयदः स्मृतः।। 'गर्ग सं०'

४. [illegible]दः सर्वधिष्ण्यानां सौम्यमार्गचरः कुजः।
अरिष्टफलदः सर्वजन्तूनां याम्यमार्गगः।। बृ० सं०- भौमाध्याय/१३

५. मेषसिंहझषचापभसंस्थे वक्रिते क्षितिसुते रविजे वा।
गोनराश्वगजपक्षिसमूहं नाशमेति निखिलं च दलं वा।। बृ०सं०- भौमाध्याय/१४

६- एकराशिगतावेतौ धरापुत्रांगिरः सुतौ।
तदा मेघा न वर्षन्ति वषकाले न संशयः।। ज्यो० प्र०-१०/१४१

३- यदि मंगल की राशि से पिछली राशि में सूर्य हो अर्थात् मंगल यदि वृष राशि हो और सूर्य मेष राशि में हो तो जलशोष होता है अर्थात् जलाशयों में पानी सूख जाता है और वर्षा नहीं होती है। यदि मंगल पीछे और सूर्य आगे की राशि हो तो वर्षा होती है।[१]

दुर्भिक्ष योग-

यदि मंगल और राहु वृष राशि में हों, तो छठे महीने में दुर्भिक्ष होता है।[२] अशोक का फूल, दोपहरी का फूल, मणि, मूँगा, तपे हुए ताम्बे अथवा स्वच्छ पलास के फूल की कान्ति के समान इस प्रकार के रंग वाला मंगल यदि उदित हो तो सम्पूर्ण प्राणियों के लिए अरिष्ट फल देने वला होता है।[३]

बुध से सम्बद्ध उत्पात

बुध ग्रह का नक्षत्रों में विचरण करने से एवं अन्य ग्रहों के साथ संयोग से होने वाले शुभाशुभ उत्पातों का लक्षण एवं फल-

बुध के उदय का फल-

बुध ग्रह का उदय कभी भी उत्पात रहित होकर नहीं होता अर्थात् जब भी बुध का उदय होता है उस समय किसी न किसी प्रकार का उत्पात होता है। जैसे- जल, अग्नि और वायु का भय रूप उत्पात तथा अन्नादि में मंहगी या सस्ती करता है।[४] इस प्रकार का वर्णन समाससंहिता एवं गर्ग संहिता में भी मिलता है।[५]

१-- भौमस्य पृच्छतो याति भानुश्चेज्जलशोषकः।
भवत्यत्र न सन्देहो विपरीता जलप्रदः।। ज्यो० प्र०- १०/१४२

२- वृष राहुर्यदा भौमः षष्टे मासि महद्भयम्।
भवत्यत्र न सन्देहस्तदा दुर्भिक्षपीडनम् ।। तदेव- १०/१४३

३. अशोकवन्धूकमणिप्रवालसन्तप्तताम्रामलकिंशुकाभः।
एवंविधः सन्नुदितो महीजः शुभाय वृक्ष्यै भवति प्रजानाम्।। बृ०सं०- भौमाध्याय/१५

४- नोत्पातपरित्यक्तः कदाचिदपि चन्द्रजो व्रजत्युदयम्।
जलदहनपवनभयकृद्धान्यार्घक्षयविवृद्धये ।। बृ० सं०-६/०१

५- उदयं याति शशिसुतो नोत्पातविवर्जितः कदाचिदपि।
पवनाग्निसलिलभयदो धान्यार्धवृद्धि क्षयकृद्वा।। 'समास संहिता'

क. अवर्षे कुरुते वर्षं वर्षं न गच्छति।
भये च कुरुते क्षेमं सर्वत्र प्रतिलोमगः।। 'गर्ग संहिता'

१- यदि श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा या उत्तराषाढ़ा को भेद करते हुये बुध विचरण करे अर्थात् जब-२ इन-२ नक्षत्रों में बुध रहता है तो वर्षा का अभाव और रोग का भय करता है।[1]

२- आर्द्रा से मघा अर्थात् आर्द्रा, पुनर्वसु , पुष्य, आश्लेषा और मघा इन नक्षत्रों में से किसी नक्षत्र में भी जब बुध का संचार हो तो देश में शस्त्रनिपात (युद्ध), क्षुधा, रोग, अनावृष्टि और अनेक प्रकार के दुःखों से प्रजा को पीड़ित करता है।[2]

३- हस्त से छै नक्षत्रों तक अर्थात् हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में होकर तारा का भेद करते हुए बुध विचरण करे तो देश में गौओं को अशुभ फल करता है अर्थात् गौओं, पशुओं आदि को अनेक प्रकार के रोग और मरी पड़ती है। स्नेह अर्थात् तेल, घृत, रस, मधु, तिल आदि के मौल्य में वृद्धि करता है और भूमि को अनेक प्रकार के अन्नों से परिपूर्ण करता है अर्थात् सुभिक्ष करता है।[3]

४- उत्तराफाल्गुनी, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपदा या भरणी नक्षत्र को जब बुध भेद करता है तो प्राणियों के धातुओं अर्थात् वसा, रक्त, मांस, मेधा, अस्थि, मज्जा और शुक्र का नाश करता है।[4]

६- यदि बुध पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा या पूर्वाभाद्रपदा को भेद कर विचरण करे तो क्षुधा, शस्त्र, चोर और रोगों का भय देने वाला होता है।[5]

५- यदि बुध अश्विनी,· शतभिषा, मूला या रेवती को भेदता है अर्थात् इन इन नक्षत्रों को पार करता है तो व्यापारी, वैद्य, नौका से जीविका करने वाले, जल में उत्पन्न होने वाले द्रव्य तथा घोड़ों का नाश करता है।[6]

१- विचरन् श्रवणधनिष्ठाप्राजापत्येन्दुवैश्वदेवानि।
मृद्गन् हिमकरतनयः करोत्यवृष्टिं सरोगभयाम्।। बृ० सं०- ६/०१

२- रौद्रादीनि मघान्तान्युपाश्रिते चन्द्रजे प्रजापीडा।
शस्त्रनिपातक्षुद्भयरोगानावृष्टिसन्तापैः ।। तदेव- - ६/०३

३- हस्तादीनि चरन् षड्ऋक्षाण्युपपीडयन् गवामशुभः।
स्नेहरसार्घविवृद्धिं करोति चोर्वीं प्रभूतान्नाम्।। तदेव- - ६/०४

४- आर्यम्णं हौतभुजं भद्रपदामुत्तरां यमेशं च ।
चन्द्रस्य सुतो निघ्नन् प्राणभृतां धातुसङ्क्षयकृत्।। तदेव - ६/०५

५- आश्विनवारुणमूलान्युपमृद्गन रेवतीं च चन्द्रसुतः।
पण्यभिषग्नौजीविकसलिलजतुरगोपघातकरः।। तदंव- - ६/०६

६- पूर्वात्रितयादेकमपीन्दोः सुतोऽभिमृद्गीयात्।
क्षुच्छस्त्रतस्करामयभयप्रदायी चरन् जगतः।। बृ० सं०- ६/७

७- यदि धनिष्ठा, श्रवण, उत्तराषाढ़ा, मृगशिरा और रोहिणी में चलता हुआ बुध यदि योगताराओं का भेदन करे तो वह लोगों में झगड़े और अनावृष्टि की सम्भावना उत्पन्न करता है।[1]

८- यदि बुध आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रों में दिखाई पड़े तो अकाल, कलह, रोग और अवृष्टि का भय होता है।[2]

६- माणिक्य, शङ्ख, सोना, निर्मल, पुखराज, कुन्द के समान चन्द्रमा तथा निर्मल मरकत मणि के समान कान्ति वाला स्निग्ध यदि बुध उदित होता हो तो अधिक महँगाई और संसार में अन्यमूर्ति(बुध) रोग तथा भयकारी होता है।[3]

१- हस्त नक्षत्र से आगे के छै नक्षत्रों में बुध के रहने पर जनता में सुभिक्ष, कल्याण और आरोग्य करता है अर्थात् हर प्रकार के सुख होते हैं।[4]

२- बुध की सात प्रकार की गतियाँ होती हैं। यह नक्षत्रों में भिन्न भिन्न गतियों से संचार करता है और उन के अनुसार फल देता है।[5]

१- गतियों के नाम-

प्राकृत, विमिश्र, संक्षिप्त, तीक्ष्ण, योगन्तिक, घोर और पाप यह पराशरतन्त्र के अनुसार हैं।

१. स्वाति, भरणी, रोहिणी, या कृत्तिका नक्षत्र में प्राकृत गति से, २. मृगशिरा, आर्द्रा, मघा या आश्लेषा में विमिश्र गति से, ३. पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, संक्षिप्त गति से, ४. ज्येष्ठा, अश्विनी या रेवती में तीक्ष्ण गति से, ५. मूला, पूर्वाषाढ़ा या उत्तराषाढ़ा में योगान्तिक गति से, ६. श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा या शतभिषा में घोरा नाम की गति से और ७. हस्त, अनुराधा या विशाखा में पाप संज्ञक गति से बुध इन इन नक्षत्रों में उपर्युक्त गतियों के नाम से संचार करता है।[6]

१- वसुवैष्णव विश्वेन्दु धातृभेषु चरन्बुधः।
भिनत्ति यदि तत्तारां बाधावृष्टि भयंकरः।। न० पु० त्रि०- २६

२- आर्द्रादिपितृभांतेषु दृश्यते यदि चन्द्रजः।
तदा दुर्भिक्षकलहरोगानावृष्टि भीतिकृत्।। तदेव- - - २७

३. माणिक्यशङ्खकनकामलपुष्पराग, कुन्देन्दुसन्मरकतोमशुद्धकान्तिः।
स्निग्धः शशाङ्कतनयः प्रचुरार्धदश्च लोकेऽन्यमूर्तिरूदितो भयरोगकृत्सः।। बृ०सं०- बुधाध्याय/१७

४- हस्तादिसुतारासु विचरन्निन्दुनंदनः। क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं कुरुते रोगनाशनम्।।
अहिर्बुध्न्यार्यमाग्नेययाम्यभेषु चरन्बुधः। न० पु० त्रि०- - २८

५- प्राकृतविमिश्रसङ्क्षिप्ततीक्षणयोगान्तघोरपापाख्याः।
सप्त पराशरतन्त्रे नक्षत्रैः कीर्तिता गतयः।। बृ० स०- - ६/८

६- प्राकृतसंज्ञा वायव्ययाम्यपैतामहानि बहुलाश्च। मिश्र गतिः प्रदिष्टा शशिशिवपितृभुजगदेवानि।
सङ्क्षिप्तायां पुष्य पुनर्वसुः फलगुनीद्वयं चेति। तीक्षणयां भद्रपदाद्वयं सशाक्राश्वयुक् पौष्णम्।।
योगन्तिकेति मूलं द्वे चाषाढे गतिः सुतस्येन्दोः। घोरा श्रवणरत्वाष्ट्रं वसुदैवं वारूणं चैव।।
बृ० सं०- ६/६-११

ो के अनुसार बुध की स्थिति-

यदि 'प्राकृत' नाम की गति में बुध का उदय हो तो ४० दिन तक उदित रहता है और द बुध अस्त हो तो ४० दिन तक अस्त रहता है।

यदि मिश्रगति में बुध का उदय या अस्त होता है तो ३० दिन तक उदय या अस्त ता है। इस प्रकार संक्षिप्तागति में २२ दिन, तीक्ष्णागति में १८ दिन, योगान्तिकागति ९ दिन, घोरगति में १५ दिन और पापगति में स्थित बुधका उदय हो तो ९ दिन तक दित रहता है और अस्त हो तो ९ दिनतक बुध अस्त रहता है।[1]

तिफल-

प्राकृतगति में स्थित बुध आरोग्य, वृष्टि, धान्यकी वृद्धि और क्षेम करता है। क्षिप्त गति में स्थित बुध मिश्रित फल अर्थात् साधारण आरोग्य, वृष्टि, धान्य की वृद्धि र क्षेम देता है। शेष तीक्ष्णा, योगान्तिका, घोरा और पापा गतियों में विपरीत फलदेता अर्थात् अवृष्टि, रोग्य, धान्य का नाश और अक्षेम करता है।[2]

न अनुसार बुधफल-

यदि पौष, आषाढ़ या माघ में बुध का उदय हो तो संसार में भय और अस्त तो शुभफल देता है।[3] यदि कार्तिक या अश्विन मास में बुध का उदय हो तो शस्त्र, र, अग्नि, रोग, जल, और दुर्भिक्ष का भय होता है।[4]

- बुध के वर्ण अनुसार शुभ लक्षण एवं फल-

- सुवर्ण के समान कान्ति वाला, तोता पक्षी के समान वर्ण वाला, धान्य अथवा ामणि के सदृश और निर्मल तथा विस्तीर्ण बुध का बिम्ब दिखाई दे तो संसार के हित लिये होता है अर्थात् संसार को लाभ देता है। इस के विपरीत वर्ण का यदि बुध खाई दे तो अशुभ फल देता है।[5]

जब बुध नक्षत्र, गति, मास या वर्ण के अनुसार अशुभ फल देता है तो उस समय जिस शा में बुध स्थित हो तो उस दिशा के देशों में उत्पात आदि अशुभ फल घटित होते हैं।

पापख्या सावित्रं मैत्रं शक्राग्निदैवतं चेति।
उदयप्रवास दिवसैः स एव गतिलक्षणं प्राह।।
चत्वारिंशत् त्रिंशत-द्विसमेता विंशतिर्द्विनवकं च।
नव मासार्द्ध दश चैकसंयुताः प्राकृताद्यानाम्।। बृ० सं० - ९/१२-१३

प्राकृतगत्यामारोग्यवृष्टिसस्यप्रवृद्धयः क्षमेम्।
संक्षिप्तमिश्रयोर्मिश्रमेतदन्यासु विपरीतम्।। तदेव- - ९/१४

पौषाषाढश्रावणवैशाखेष्विन्दुजः समाघेषु।
दृष्टो भयाय जगतः शुभफलकृत्प्रोषितस्तेषु।। तदेव- - ९/१७

कार्तिकेऽश्वयुजि वा यदि मासे दृश्यते तनुभवः शिशिरांशोः।
शस्त्रचौरहुतभुग्गदतोयक्षुद्भयानि च तदा विदधाति।। बृ० स० - ९/१८

हेमकान्तिरथवा शुकवर्णः सस्यकेन मणिना सदृशो वा।
स्निग्धमूर्तिरलघुश्च हिताय व्यत्यये न शुभकृच्छशिपुत्रः।। तदेव- - ९/२०

गुरु से सम्बद्ध उत्पात

गुरु द्वारा उत्पन्न शुभाशुभ उत्पातों के लक्षण एवं फल-

जिस प्रकार बुध गति के अनुसार शुभाशुभ फल देता है उसी प्रकार बृहस्पति के नक्षत्रों के अनुसार द्वादश मास की भान्ति द्वादश वर्ष होते हैं। जिस नक्षत्र में रहते हुये बृहस्पति उदय होता है उस से वर्ष की गणना होती है।[1]

द्वादश वर्ष के लक्षण-

कृत्तिका आदि दो दो नक्षत्रों में बृहस्पति के रहने से कार्तिक आदि बारह मास की तरह बारह वर्ष होते हैं इन में केवल पंचम, एकादश और द्वादश वर्ष तीन तीन नक्षत्र के होते हैं।[2] यथा- जब बृहस्पति कृत्तिका और रोहिणी नक्षत्र में हो तो कार्तिक नामक वर्ष हो गा। मृगशिरा और आर्द्रा नक्षत्र में बृहस्पति हो तो 'मार्गशीर्ष' नामक वर्ष हो इस प्रकार अन्य नक्षत्रों के अनुसार वर्ष जान लें।

वर्ष अनुसार गुरु विकार फल-

१- कार्तिक नामक वर्ष में गाड़ी से तथा अग्नि से आजीविका चलाने वाले(लोहार सोनार आदि) और गौ इन सबों को पीड़ित करता है। लोगों में व्याधि और लड़ाई होती है पर लाल और पीले पुष्पोंकी वृद्धि होती है।[3]

२- मार्गशीर्ष वर्ष में अनावृष्टि होती है, जंगली जानवर, चूहा, शलग (टीडी) और पक्षियोंसे धान्य का नाश होता है। मनुष्यों में व्याधि का भय होता है तथा मित्रों से भी राजाओं को द्वेष होता है अर्थात् देश में राजाओं मन्त्रियों एवं जनता में द्वेष भाव उत्पन्न होता है।[4]

३- पौष वर्ष में संसार का शुभ होता है, राजा लोग पारस्परिक द्वेष त्याग देते हैं,धान्य का मोल्य द्विगुणित हो जाता है और पौष्टिक कर्म की सिद्धि होती है।[5]

४- माघ नामक वर्ष में पितरों की पूजा की वृद्धि होती है, सब प्राणियों को संतुष्टि, आरोग्य, सुन्दर वृष्टि, धान्यों के मौल्य में समता और मित्रों का लाभ होता है।[6]

१- नक्षत्रेण सहोदयमुपगच्छति येन देवपतिमन्त्री।
तत्सञ्ज्ञं वक्तव्यं वर्षं मासक्रमेणव ।। बृ० सं०- ७/०१

२- वर्षाणि कार्तिकादीन्याग्नेयाद्भद्वयानुयोगीनि।
क्रम शस्त्रिभं तु पंचमपुन्त्यमन्त्यं च यद्वर्षम्।। तदेव- ०७/०२

३- शकटानलोपजीवकगोपीडा व्याधिशस्त्रकोपश्च।
वृद्धिस्तु रक्तपीतककुसुमानां कार्तिके वर्षे।। तदेव- ०७/०३

४- सौम्येऽब्देऽनावृष्टिर्मृगाखुशलभाण्डजैश्च सस्यवधः।
व्याधिभयं भूपानां जायते वैरम्।। तदेव- ०७/०४

५- शुभकृज्जगतः पौषो निवृत्तवैराः परस्परं क्षितिपाः।
द्वित्रिगुणो धान्यार्घः पौष्टिककर्मप्रसिद्धिश्च।। तदेव- ०७/०५

६- पितृपूजापरिवृद्धिर्माघे हार्दिश्च सर्वभूतानाम्।
आरोग्यवृष्टिधान्यार्घसम्पदो मित्रलाभश्च।। तदेव- ०७/०६

५- फाल्गुन वर्ष में किसी-किसी स्थान में मंगलकार्य और धान्य होता है,किन्तु सर्वत्र मंगल कार्य नहीं होते और धान्य की उत्पत्ति नहीं होती तथा स्त्रियों की अभाग्यता अर्थात् विधवा होती हैं, चोरों की प्रबलता और राजाओं की उग्रता बढ़ती है अर्थात् सर्वत्र अशान्ति होती है।[1]

६- चैत्र वर्ष में थोड़ी वृष्टि, दुर्लभ अन्न, लोगों में कुशलता, राजाओं में कोमलता, एकत्रित किये हुये धान्यों की वृद्धि और सुन्दर मनुष्यों को पीड़ा होती है।[2]

७- वैशाख वर्ष में राजाओं के साथ प्रजागण धर्मनिरत, भयरहित, आनन्दयुक्त और यज्ञ कर्म में प्रवत होते हैं, सब धान्यों की वृद्धि होती है और सब ओर सुभिक्ष होता है।[3]

८- ज्येष्ठ वर्ष में अच्छे कुल में उत्पन्न, अतिधनी, बहुतों में प्रधान, राजा लोग, धर्म को जानने वाले और कंगनी तथा शमी के अतिरिक्त सब धान्य पीड़ित होते हैं अर्थात् व्याधियों से दुःखी होते हैं।[4]

९- आषाढ़ वर्ष में कहीं-कहीं पर धान्य और कहीं-कहीं पर वर्षा का अभाव होता है योगक्षेम (अलब्ध का लाभ, लब्ध का पालन) मध्यम रूप से होता है तथा राजा लोग अपने काम में व्यग्र रहते हैं अर्थात् बड़ी उग्रता से करते हैं।[5]

१०- श्रावण नामक वर्ष में सबधान्य अच्छी तरह पक जाते हैं तथा क्षुद्र(क्रूर), पाखण्डी गण(वेदनिन्दक), और अनेक भक्तलोग पीड़ित होते हैं अर्थात् व्याधियों द्वारा कष्ट पाते हैं।[6]

११- भाद्रपद वर्ष में वल्लीज (मूँग आदि अन्न) और पहले के बोये हुए धान्य पक जाते हैं परन्तु इस वर्ष के आरम्भ के बाद के बोये हुए धान्य नहीं होते हैं तथा संसार में कहीं- कहीं पर सुभिक्ष और कहीं- कहीं पर भय होता है अर्थात् अनेक प्रकार के उपद्रव हो सकते है।[7]

१२- अश्विन वर्ष में बहुत वृष्टि, सर्वथा सानन्द प्रजा, सब प्राणियों में प्राणचय अर्थात् अत्यधिक बल की वृद्धि और अन्न की अधिकता होती है।[8]

१- फाल्गुनवर्षे विन्द्यात्क्वचित्क्वचित्क्षेमवृष्टिसस्यानि।
दौर्भाग्यं प्रमदानां प्रबलाश्चौरा नृपाश्चोग्रा।। बृ० सं०- ०७/०७

२- चैत्रे मन्दा वृष्टिः प्रियमान्नं क्षेममवनिपा मृदवः।
वृद्धिश्च कोशधान्यस्य भवति पीडा च रूपवताम्।। तदेव- - ०७/०८

३- वैशाखे धर्मरता विगतभयाः प्रमुदिताः प्रजाः सनृपाः।
यज्ञक्रियाप्रवृत्तिनिर्ष्पत्तिः सर्वसस्यानाम्।। तदेव- ०७/०९

४- ज्येष्ठे जाति कुलधन श्रेणी श्रेष्ठा नृपाः सधर्मज्ञाः।
पीड्यन्ते धान्यानि च हित्वा कङ्गुं शमीजातिम्।। तदेव- ०७/१०

५- आषाढे जायन्ते सस्यानि क्वचिदवृष्टिरन्यत्र।
योगक्षेमं मध्यं व्याग्राश्च भवन्ति भूपालाः।। तदेव- ०७/११

६- श्रावणवेर्षे क्षेमं सम्यक् सस्यानि पाकमु पयान्ति।
क्षुद्रा ये पाखण्डाः पीडयन्ते ये च तद्भक्ताः।। तदेव- ०७/१२

७- भाद्रपदे वल्लीजं निष्पत्तिं याति पूर्वसस्यं च।
न भवत्य परं सस्यं क्वचित्सुभिक्षं क्वचि भयम्।। तदेव - ०७/१३

८- आश्वयुजेऽब्दे ऽजस्रं पतति जलंप्रमुदिताः प्रजाः क्षेमम्।
प्राणचयः प्रणभृतां सर्वेषामन्न बाहुलयम् ।। तदेव- ०७/१४

नक्षत्रों के उत्तर में चलते हुए बृहस्पति संसार में सुभिक्ष और क्षेम करता है, दक्षिण में विपरीत फल अर्थात् दुर्भिक्ष और अक्षेम करता है। नक्षत्रों के मध्यमें चलता हुआ बृहस्पति मध्यम फल करता है अर्थात् सामान्य फल देता है।[1]

यदि बृहस्पति एक वर्ष के अन्दर दो नक्षत्रों में विचरण करे तो शुभ फल देता है, ढाई नक्षत्रों में विचरण करे तो मध्यम फल देता है और यदि कदाचित ढाई नक्षत्रों से भी अधिक नक्षत्रों में विचरण करे, तो धान्यों का नाश करने वाला होता है अर्थात् दुर्भिक्ष करता है।[2]

बृहस्पति के वर्ण अनुसार उत्पात फल-

१- यदि बृहस्पति का वर्ण अग्नि के समान हो तो अग्नि का भय, पीत वर्ण का हो तो व्याधि, श्याम वर्ण का हो तो युद्ध, हरा हो तो चोरों से पीड़ा, लालवर्ण का हो तो शस्त्र का भय और धूम्र वर्ण का हो तो अनावृष्टि करता है।

२- यदि बृहस्पति दिन में दिखाई दे तो राजा का नाश करता है, ताराओं से सुन्दर रात्रि में बृहस्पति का विपुल निर्मल बिम्ब दिखाई दे तो प्रजा को सर्वथा स्वस्थ करता है अर्थात् सुखी करता है।[3]

३- यदि बृहस्पति और शुक्र एक राशि में स्थित हों तो संसार में दुर्भिक्ष के कारण प्रजा दुःखी होती है।[4]

जैसे- गुरु के वारह नक्षत्र वर्ष हैं उसी प्रकार वारह युग हैं और एक युग में पांच-पांच संवत्सर होते हैं इन के क्रमशः पांच स्वामी होते हैं, अग्नि, सूर्य चन्द्र, प्रजापति और शिव इन के स्वामी हैं। बारह युगों के बारह देवता ये हैं-

विष्णु, सुरेज्य(बृहस्पति), बलभित (इन्द्र), हुताश(अग्नि), त्वष्टा (प्रजापति), आहिर्बुध्न्य, पिता, विश्वेदेव, सौम , शक्रनल (इन्द्राग्नि), अश्वि (अश्विनी कुमार) और भग(सूर्य)।

१- उदगारोग्यसुभिक्षक्षेमकरो वाक्पतिश्चरन् भानाम्।
योम्ये तद्विपरीतो मध्येन तु मध्यफलदायी।। बृ० सं०- ०७/१५

२- विचरन भद्वयमिष्टस्तत्सार्द्धं वत्सरेण मध्यफलः।
स्यानां विध्वसी विचरेदधिकं यदि कदाचित्।। तदेव- - ०७/१६

३- अनलभयमनलवर्णेव्याधिः पीते रणागमः श्यामे।
हरिते च तस्करेभ्यः पीडा रक्ते तु शस्त्रभयम्।।
धूमाभेऽनावृष्टिस्त्रिदश गुरौ नृपवधो दिवा दृष्टे।
विपुलेऽमले सुतारे रात्रौ दृष्टे प्रजाः स्वस्थाः।। तदेव- ०७/१७-१८

४- गुरु शुक्रावकेराशिं गतौ दुर्भिक्षदुःखदौ। ज्यो० प्र०-१०/१४७

फल-

विष्णु, इन्द्र, बृहस्पति और अग्नि जिन युगों के देवता हैं वे उत्तम फल देते हैं। प्रजापति, अहिर्बुध्न्य, पिता और विश्वेदेव जिन के देवता हैं ये मध्यम फल और सोम, शक्रानल, अश्वि और सूर्य जिन के देवता हैं ये अशुभ फल देते हैं।

जब धनिष्ठा के प्रथम अंश में स्थित होकर बृहस्पति माघ मास में उदित होता है उसी समय में प्रथम प्रभव नामक संवत्सरका प्रारम्भ होता है। फिरक्रमशः ये संवत्सर चले रहते हैं और अपने नामों के अनुसार शुभाशुभ फल देते हैं। इन संवत्सरों का सम्बन्ध बृहस्पति के साथ होता है।[1]

संवत्सर पुरुष के लक्षण-

संवत्सर पुरुष के रोहिणी और कृत्तिका नक्षत्र शरीर, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नाभि, आश्लेषा मघा, और पुष्य हृदय हैं।

फल-

यदि संवत्सर पुरुष के यह अंगों में शुभ ग्रह स्थित हों तो शुभ फल देते हैं यदि पाप ग्रह रोहिणी और कृत्तिका में हो तो उस संवत्सर में अग्नि और वायु का भय होता है। नाभि में (पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा) पाप ग्रह हों तो दुर्भिक्ष का भय होता है। पुष्य, मघा में पाप ग्रह हो तो मूल पदार्थ और फलों का क्षय करता है। यदि आश्लेषा नक्षत्र में पाप ग्रह स्थित हो तो धान्यों का नाश होता है।[2]

गुरु विकार शुभ फल -

चन्द्रमा के समान, शंख, स्फटिक, मूंगा तथा बर्फ, मोती के फल के समान आभा वाला बृहस्पति जब उदित होता है तो लोगों के लिए शुभ फल देने वाला होता है तथा कष्ट का निवारण करने वाला हो जाता है।[3]

१- द्रष्टव्य- बृ० सं० बृहस्पति चाराध्यायः - श्लो०- २० से ५३ तक।

२- रोहिण्योऽनलभं च वत्सरतपुन्नाभिस्त्वषाढादूयं ।
सार्पं हृतिपतृदैवतं च कुसुमं शुद्धैः शुभं तैः फलम् ।।
देहे क्रूरनिपीडिते ऽग्न्यनिलजं नाभ्यां भयं क्षुत्कुतं।
पूष्ये मुलफलक्षयोडथ हृदये सस्यस्य नाशोध्रुवम्।। बृ०सं०-७/१९-२०

३. कुन्देन्दुशंखस्फटिकप्रवालनीहारमुक्ताफलसन्निभाभः।
एवं विधो देवगुरुर्जनानां शुभ प्रदः क्लेशनिवारकश्च।। तदेव - बुधाध्याय/१०१

शुक्र से सम्बद्ध उत्पात

शुक्र द्वारा उत्पन्न शुभाशुभ उत्पातों के लक्षण एवं फल-

जैसे बुध गति के अनुसार और गुरु वर्ष, संवत्सर आदि के अनुसार फल देते हैं उसी प्रकार शुक्र वीथी के अनुसार फल देता है। वीथी के लक्षण पूर्वोक्त अध्याय में वर्णित हैं। शुक्र के उत्पात नौ वीथियों, तीन मार्गों और छः मण्डल के अनुसार घटित होते हैं।

नौ वीथिया के नाम इस प्रकार हैं:- नाग, गज, ऐरावत, वृष, गो, जरद्गौ, मृग, अज और दहन यह नौ वीथियाँ हैं। यह नौ वीथियों में तीन-तीन नक्षत्र, उत्तर, मध्य और दक्षिण मार्ग एवं छः मण्डल होते हैं।[1]

१. वृषभ, ऐरावत, गज, नाग वीथि का **उत्तर मार्ग** होता है।

२. जरद्गौ, मृग, अज तथा दहन वीथियों का **दक्षिण माग** होता है।

३. गो वीथि का **मध्य माग** होता है।[2]

अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, नागवीथि, रोहिणी, मृगशिरा और आर्द्रा गज, पुनर्वसु, पुष्प एवं आश्लेषा ऐरावत वीथी, मघा, पूर्वा फाल्गुनी एवं उत्तरा फाल्गुनी वृष वीथी, हस्त, चित्रा, स्वाती की गौ वीथि, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा की जरद्गौ, मूला पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा की मृग, श्रवण, घनिष्ठा, शतभिषा की अज वीथि और पूर्वाभद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती नक्षत्र की दहन (अग्नि) वीथि होती है।[3]

शुक्र का वीथी के अनुसार नक्षत्रों में फल-

१- नाग आदि नव वीथियों में क्रम से शुक्र अत्युतम, उत्मतम, ऊन, सम, मध्म, न्यून, अधम, कष्ट और कष्टतम फल देता है।

जैसे- नाग वीथी में शुक्र अत्युत्तम, गजवीथी में उत्तम, ऐरावतवीथी में ऊन, वृष वीथी में सम, गोवीथी में मध्यम, जरद्गववीथी में न्यून, मृगवीथी में अधम, अजवीथी में कष्ट और दहनवीथी में कष्टत्तम फल देता है।[4]

---

१. दक्षिणतोऽपि जरद्गमृगाजदहनाश्च नवभेदाः।
वीथेरेकैकस्यर्क्षत्रितयं क्रमेण धिष्ण्यानि।। व० सं०- शुक्र०/२

२. मध्यमरेखानियतं गोवीथिर्भवति मध्यनेखातः।
वृषभैरावतगजनागाख्या वीथयः कुबेरदिगभागे।। व० सं०- शुक्र०/०१

३. आश्विनभादिद्वाशधिष्ण्यान्युत्तरवीथेश्चतुष्ठयस्थानि।
अथ कथयामि नवानां वीथीनां फलानि तान्यधुना।।
दिकनधिष्ण्यात्त्रितयं गोवीथीगतं द्विदैवधिष्ण्यत्तः।
द्वादश भानि क्रमशो दक्षिणवीथेश्चतुष्टस्थानि।। वशिष्ठ सं०- शुक्र०- ३, ४

४- अत्युत्तमोत्तमोनं सममध्यन्यूनमधम कष्टफलम्।
कष्टतरं सौम्याद्यासु वीथिषु यथाक्रमं ब्रूयात्।। बृ० सं०- ८/६

वीथि फल-

नाग वीथि के अन्तर्गत विचरण करता हुआ शुक्र पश्चिम दिशा में वृष्टि का नाश करता है गज वीथि के अन्तर्गत गमन करने पर कल्याण एवं सुख के साथ अत्यधिक महँगाई करता है।[1]

ऐरावत एवं नाग वीथि में विचरण करने पर शुक्र धान, गन्ना, गेहूँ, जौ आदि फसलों से सम्पूर्ण पृथ्वी शोभायमान होती है किन्तु राजा का नाश होता है। गो वीथि में शुक्र के भ्रमण करने पर पृथ्वी अनेक प्रकार के अन्नों की वृद्धि से शोभायमान होती है।[2]

जरद्गौ एवं मृग वीथि में शुक्र के गमन करने पर मध्यम, मंगाई तथा मध्यम वृष्टि होती है।[3]

अज और अग्नि वीथि में शुक्र के गमन करने पर राजाओं में परस्पर युद्ध का भय, इति का भय, अग्नि का भय तथा लोगों को जल का भय बना रहता है। मेघ भी कहीं-कहीं बरसते हैं।[4]

उत्तर वीथि स्थित शुक्र का उदय या अस्त हो तो सुभिक्ष होता है। मध्य वीथी में हो सामान्य तथा दक्षिण वीथी में कष्ट देने वाला होता है।[5]

स्वाति, विशाखा और अनुराधा इन नक्षत्रों का शुक्र पूर्व दिशा में, मघा पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त एवं चित्रा इन नक्षत्रों का शुक्र पश्चिम में उदय या अस्त हो तो अनावृष्टि करने वाला होता है। किन्तु इसके विपरीत रहने पर सुभिक्ष करता है।[6]

शुक्र यदि रोहिणी चक्र अथवा मघा नक्षत्र का भेदन करे तब सम्पूर्ण पृथ्वीं को अस्थि और कपालमयी कर देता है अर्थात् सम्पूर्ण पृथ्वी पर नरसंहार होता है।[7]

यदि बृहस्पति और शुक्र राशि परस्पर पूर्व या पश्चिम कहीं भी स्थित हो जायें तब लोगों को राग जल, अग्नि, अस्त्र, चोर तथा राक्षसों से मनुष्यों को पीड़ा होती है।[8]

---

१. नाग वीथिविचरन्भृगोः सुतः पश्चिमदिशि च वृष्टिनाशकृत्।
क्षेमकृत्सुखकरो गजवीथ्यांमर्घवृद्धिमतुलां करोति सः।। बृ० सं०--०८/१०

२. शालीक्षुगोधूमयववदिसस्यसम्पूर्णधात्री नितरां विभाति।
ऐरावतोक्षाह्वययोश्च वीथ्योः स्थिते सिते संयति राजनाशः।। वशिष्ठ सं०- शुक्र०- ५-६

३. गोवीथिगे दैत्यपुरोहिते भूविर्भाति नानविधसस्यवृक्ष्या।
जरद्गवायां मृगसंज्ञिताया मध्यार्घवृष्टिर्महदावश्च।। तदेव - शुक्र० - ७

४. क्षितीशसंग्रामजभीतिरीतिवर्हिर्भयं वारिभयं जनानाम्।
अजाग्नि वीथ्योरतुलाग्निभीतिः क्वचित्क्वचिद्वर्षति वासवोऽपि।। तदेव- शुक्र०- ८

५. उदग्वीथिषु दैत्येज्यश्चस्तगश्चोदितोऽपि च।
सुभिक्षकृन्मध्यवीथ्यां सामान्यो याम्यगोत्र भः।। तदेव- शुक्र०- ०६

६. स्वातीत्रये पूर्वदिशि पश्चिमे पितृपंचके।
अनावृष्टिकरः शुक्रो विपरीतः सुवृष्टिकृत्।। तदेव - शुक्र० - १०

७. भिनति रोहिणीचक्रं शुक्रः पीतृभतारकम्।
यदा तदा करोत्येनां कपालास्थिमयीं धराम्।। तदेव - शुक्र० - १२

८. प्राक्पश्चिमस्थौ सुरदानवेज्यौ परस्परं सप्तमराशिसंस्थौ।
तदा जनानां भयदो जलाग्निरोगास्त्र चौराग्निनिशाचरेभ्यः।। तदेव- शुक्र०- १४

शुभदायक शुक्र-

वक्र चन्द्रमा के समान, कुन्द पुष्प के समान, कुमुद पुष्प के समान स्फटिक समान, मूँगा के समान, वैदूर्य मणि के समान, शंख के समान, देहि के समान तथा के समान कान्ति वाला अथवा मोती के दानों के समान, विशाल कान्ति वाला शुक्र तो मनुष्यों के लिए शुभदायक होता है।[1]

नक्षत्र मण्डल में शुक्र के विकारों का फल-

१- भरणी, कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिरा नक्षेत्रों का प्रथम मण्डल होता है। इस मण्ड में यदि शुक्र का उदय या अस्त हो तो संसार में सुभिक्ष तथा अंग, वंग, महिष, वाह्ली और कालिंग देशों में भय होता है अर्थात् इन देशों के लोगों को कष्ट देता है। यदि प्र मण्डल में उदित शुक्र के ऊपर कोई ग्रह हो तो भद्राश्व, शूरसेनक, यौधेयक और कोटि देशों के राजाओं का नाश करता है।[2]

२- आर्द्रा, पनुर्वसु, पुष्य और आश्लेषा नक्षत्रों तक द्वितीय मण्डल होता है। यदि इ मण्डल में शुक्र का उदय या अस्त होता है तो अधिक वृष्टि और धान्यों की विशे उत्पत्ति होती है पर ब्राह्मणों के लिए अशुभकारी होता है। दुष्टों के लिये तो विशे अशुभकारी होता है। यदि इस मण्डल में उदित शुक्र किसी अन्य ग्रह से आक्रान्त ह तो मलेच्छ मनुष्य, वनमें रहने वाले, कुत्तों से आजीविका करने वाले, गौ रखने वाले गोनर्द अर्थात् पतञ्जल की जन्मभूमि चिदरम्बरम देशमें निवास करने वाले, अधर्म क करने वाले, शूद्र, विदेह के देश अर्थात् मिथिला में निवास करने वाले इन सवों क अनीति स्पर्श करती है अर्थात् यह सब मनुष्य उपद्रवके कारण कष्ट पाते हैं।[3]

३- मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त और चित्रा तक तृतीय मण्डल होता है यदि इस मण्डल में शुक्र का उदय हो तो धान्यका नाश करने वाला, दुर्भिक्ष और चोर का भय देने वाला होता है, अधम कर्मकरने वालों की उन्नति करने वाला तथा वर्णसक की उत्पत्ति करने वाला होता है। यदि इस मण्डल में स्थित शुक्र अन्य ग्रह से आक्रान्त हो तो वृक्ष, शबर, शूद्र, पुण्ड्र, पश्चिम, शूलिक देश और वन में रहन वाले जन्तु और द्रविड तथा समुद्र तीर में रहने वालों का नाश करता है।[4]

१- वक्रेन्दुकुन्दकुमुदस्फटिकप्रवालवैदूर्यशंखदाधिपुष्पमहिमोपमाभः।
मुक्ताफलप्रकरतुल्यविशालकान्तिरेवंविधोभृगुसुतः शुभदोनराणाम्।। वशिष्ठ सं०- शुक्र०-१६

२- भरणीपूर्वं मण्डलमृक्षचतुष्कं सुभिक्षकरमाद्यम्। वङ्गाङ्गमहिषवाह्लिककलिंङ्गदेशेषु भयजननम्।
अत्रोदितमारोहेद् ग्रहाऽपरो यदि सितं ततो हन्यात्। भद्राश्वशूरसेनकयौधेयककोटिवर्षनृपाम्।
बृ० सं०- ०८/१०-११

३- भचतुष्टयमार्द्राद्यं द्वितीयममिताम्बुसस्सम्पत्त्यै। विप्राणामशुभकरं विशेषतः क्रूरचेष्टानाम्।।
अन्येनात्राक्रान्ते म्लेच्छाटविकश्वजीविगोमन्तान्। गोर्नदनीचशूद्रान् वैदेहाश्चानयः स्पृशति।।
तदेव - ०८/१२-१३

४- विचरन् मघादिपंचकमुदितः सस्यप्रणाशकृच्छुक्रः। क्षुत्तस्कर भयजननो नीचोन्नतिसंकरश्च।
पित्राद्येऽवष्टब्धो हन्त्यन्ये नाविकान् शवरशूद्रान्। पुण्ड्रापरान्त्यशूलिक वनवासिद्रविडसामुद्रान्।।
बृ० स०- ०८/१४-१५

४- स्वाती, विशाखा और अनुराधा तक चतुर्थ मण्डल होता है। यदि इस मण्डल में शुक्र का उदय या अस्त हो तो ब्राह्मण और क्षत्रियों के लिये सुभिक्ष करता है तथा उन्नति करने वाला होता है पर मित्रों से परस्पर द्वेष उत्पन्न कराता है। यदि इस मण्डल में स्थित शुक्र किसी अन्य ग्रह से आक्रन्त हो तो किरातों के स्वामी की मृत्यु, इक्ष्वाकु वंशोत्पन्न, प्रत्यन्त (मलेच्छ देश), अवन्ती, पुलिन्द, तंगण और शूर सेन नामक देशमें निवास करने वालों का नाश करता है।[1]

५- ज्येष्टा, मूला, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और श्रवण नक्षत्र तक पंचम मण्डल होता है। यदि इस मण्डल में शुक्र का उदय या अस्त हो तो दुर्भिक्ष, चोर और रोग का भय होता है तथा काश्मीर, अश्मक, मत्स्य, चारुदेवी नदी के तट और अवन्ती देश वासियों को पीड़ित करता है। यदि इस मण्डलमें स्थित शुक्र किसी अन्य ग्रह से आक्रान्त हो तो द्रविड़, आभीर(शबर), अम्बष्ट, त्रिगर्त, सौराष्ट्र, सिन्धु और सौवीकदेश वासियों का तथा काशिराज का नाश करता है अर्थात् इन दशों में दुर्भिक्ष, द्वेष और अशान्ति उत्पन्न करता है।[2]

६- धनिष्टा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती और अश्विनी नक्षत्र तक षष्ठ मण्डल होता है। यदि इस मण्डल में शुक्र का उदय या अस्त हो तो शुभ होता है। पृथ्वी पर वहुत धन, गौ और धान्यों से व्याप्त होती है। परन्तु कहीं कहीं पर भय की मात्रा रहती है। यदि इस मण्डल में शुक्र किसी ग्रह से आक्रान्त हो अर्थात् दूसरा कोई ग्रह उस पर आक्रमण कर रहा हो तो शूलिक, गान्धार अवन्ती, इन देशों में स्थित मनुष्यों को पीडा होती है। विदेहदेश में स्थित जनों का मरण होता है तथा गुहा में निवास करने वाले, पचन, शक में रहने वाले मनुष्यों की और दासों की वृद्धि होती है।[3]

७- चतुर्थ और पंचम मण्डल पश्चिम दिशा में शुभ करने वाले होते हैं। तृतीय मण्डल पूर्व दिशा में शुभ होता है। प्रथम, द्वितीय और षष्ठमण्डल का फल जैसा वर्णित किया है वेसा ही होता है।[4]

१- स्वात्याद्यं भत्रितयं मण्डलमेतच्चतुर्थमभयंकरम्। ब्रह्मक्षत्रसुभिक्षाभिवृद्धये मित्रभेदाय।।
अत्राक्रान्ते मृत्युः किरातभर्तुः पिनष्टि चेक्ष्वाकून। प्रत्यन्तावन्तिपुलिन्दतङ्गणान् शूरसनांश्च।।
बृ० सं०- ०८/१६-१७

२- ज्येष्ठाद्यं पंचर्क्षं क्षुत्तस्कररोगदं प्रबाधयते। काश्मीराश्मकमत्स्यान् सचारूदेवीनवन्तींश्च।।
अत्रारोहेद् द्रविडाभीराम्ब त्रिगर्तसौराष्ट्रान्। नाशयति सिन्धुसौवीरकांश्च काशीश्वरस्य वधः।।
बृ० सं०- ०८/१८-१६

३- षष्टं षड्नक्षत्रंशुभमेतन्मण्डलं धनिष्ठाद्यम्। भूरिधनगोकुलाकुलमनल्प धान्यं क्वचित्सभयम्।
अत्रारोहेच्छूलिकगान्धारावन्तयः प्रपीडयन्ते। वैदेहवधः प्रत्यन्तयवनशकदासपरिवृद्धि।। तदेव- ०८/२०-२१

४- अपरस्यां स्वात्याद्यं ज्येष्ठायं चापिमण्डलं शुभदम्। पित्र्याद्यं पूर्वस्यां शेषाणि यथोक्तफलदानि।।
तदेव- - ०८/२२

१. जब कृत्तिका नक्षत्र में शुक्र संचार करता है तो उस समय किनारा करने वाली नदियाँ और जल से पूर्ण रहने वाली नदियों के द्वारा ऊबढ़-खबाढ़ स्थल लुप्त होकर पृथ्वी समान हो जाती है अर्थात् नदी की बाढ़ से पृथ्वी भर जाती है।[१]

२- यदि रोहिणीशकट का भेदन करते हुये शुक्र गमन करे तो पातीकी होकर मनुष्य मुण्डन करते हैं और अस्थिखण्डों को धारण करके कालिक व्रत धारण करते हैं अर्थात् पृथ्वी पर अत्यधिक मरी पड़ती है।[२]

६- यदि शुक्र मृगशिरा नक्षत्र में आवे तो रस और धान्यों का नाश करता है। यदि आर्द्रा में आवे तो कोसल तथा कालिंग देश का नाश और अतिवृष्टि करता है।[३]

४- जब शुक्र पुनर्वसु नक्षत्र में स्थित हो तो अश्मक और विदर्भ देश में अनय अर्थात् उपद्रव होता है। यदि शुक्र पुष्यनक्षत्र में हो तो अधिक वृष्टि तथा विद्याधरों के युद्ध में विमर्द होता है।[४]

५- जब अश्लेषा नक्षत्र में शुक्र गमन करता है तो उसी समय लोगों को सर्पों से अत्यन्त पीड़ा करता है तथा मघानक्षत्र को जब शुक्र भेदन करता है तो हस्तिपतिको पीड़ित करता है और अतिवृष्टि करता है।[५]

६- पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र को जब शुक्र भेदन करता है तो शबर-पुलिन्द जनों का नाश और अतिवृष्टि करता है। उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में जब स्थित होता है तो कुरु देश में निवास करने वाले और पंजाबियों का नाश करता है तथा वृष्टि करता है अर्थात् वृष्टि होती है।[६]

७- हस्त नक्षत्र में स्थित शुक्र कौरवों और चित्रकारों को पीड़ित करता है तथा अवृष्टि करता है। चित्रा में स्थित शुक्र कुआँ बनाने वालों और पक्षियों को पीड़ित करता है तथा सुन्दर वृष्टि करता है।[७]

१- भिन्दन् गतोऽनलर्क्षं कुलातिक्रान्तवारिवाहाभिः।
अव्यक्ततुंगनिम्ना समा सरिद्भिर्भवति धात्री।। बृ० सं०- ०८/२४

२- सौम्योपगतो रससस्यसंक्षयायोशनाः समुद्दिष्टः।
आर्द्रागतस्तु कोशलकलिङ्गहा सलिलनिकटकरः।। तदेव- ०८/२६

३- प्राजापत्ये शकटे भिन्नेंकृत्त्वेव पातकं वसुधा।
केशास्थिशकलशबला कापालमिव व्रतं धत्ते।। तदेव- ०८/२५

४- अश्मकवैदर्भाणां पुनर्वसुस्थे सिते महाननयः।
पुष्ये पुष्टा वृष्टिविद्योधरणविमर्दश्च।। बृ० सं०- ०८/२७

५- आश्लेषासु भुजंगमदारुणपीडावहश्चरन् शुक्रः।
भिन्दन् मघां महामात्रदोषकृद्भूरिवृष्टिकरः ।। तदेव- - ०८/२८

६- भाग्ये शवरपुलिन्दप्रध्वसकरोऽम्बुनिवहमोक्षाय।
आर्यम्णे कुरु जांगलपाञ्चालघ्नः सलिलदायी।। तदेव- - ०८/२६

७- कौरवचित्रकराणां हस्ते पीडा जलस्य च निरोधः।
कुपकृदण्डजपीडा चित्रास्थे शोभना वृष्टिः ।। तदेव- - ०८/३०

८- स्वाति नक्षत्रमें स्थित शुक्र अतिवृष्टि करता है तथा द्वेत,वाणिज्य कर्म करने वाले, नाव चलाने वाले इन में उपद्रव फैलाता है। विशाखा नक्षत्रमें स्थित शुक्र सुन्दरवृष्टि तथा वाणिज्य कर्म करने वालोंको पीड़ित करता है।[1]

९- अनुराधा नक्षत्र में स्थित शुक्र क्षत्रियों में विरोध करता है, ज्येष्ठा में स्थित शुक्र क्षत्रियों में प्रधान का नाश करता है। मूला में स्थित शुक्र वैद्यों में प्रधान का नाश करता है तथा इन तीनों नक्षत्रों में जब तक शुक्र बैठता है तब तक अनावृष्टि करता है।[2]

१०- पूर्वाषाढा नक्षत्र में स्थित शुक्र जल में उत्पन्न जीवों को पीड़ित करता है। उत्तराषाढा में स्थित शुक्र रोगों की उत्पत्ति करता है। श्रवण में स्थित शुक्र कर्ण पीड़ा करता है। धनिष्ठा में स्थित शुक्र पाखण्डियों में भय उत्पन्न करता है।[3]

११- शतभिषा नक्षत्र में शुक्र स्थित हो तो शौण्डिकों को पीड़ित करता है। पूर्वभाद्रपद नक्षत्र में स्थित शुक्र जुआरी लोग, कुरु तथा पंजाव देश में स्थित जनों को पीड़ित करता है और वृष्टि करता है।[4]

१२- उत्तराभाद्रपद में स्थित शुक्र फल-फूलों को नष्ट करता है, रेवती में पथिकों को, अश्विनी में अश्वपालकों को पीड़ित करता है तथा भरणी नक्षत्र में स्थित शुक्र किरात देश तथा यवनदेश के वासियों को पीड़ित करता है।[5]

शुक्र के दिखाई देने पर विकारों का फल-

यदि शुक्र सूर्यास्त से पहले दिखाई दे तो भय करता है, दिन भर दिखाई दे तो दुर्भिक्ष और रोग करता है तथा मध्याह्न काल में चन्द्र के साथ दिखाई दे तो राजा, सेना और नगर इन में भेदभाव उत्पन्न करता है।[6]

१- स्वाती प्रभुत वृष्टिर्द्वतवणिज्याविकाम् स्पृशत्यनयः।
ऐन्द्राग्नेऽपि सुवृष्टिर्वणिजां च भयं विजानीयात्।। तदेव- - ०८/३१

२- मैत्रे क्षत्रविरोधो ज्येष्ठायां क्षत्रमुख्यसन्तापः।
मौलिकभिषजां मूले त्रिष्वपि चैतेष्वनावृष्टिः ।। तदेव- - ०८/३२

३- आप्ये सलिल[illegible] विश्वेशे व्याधयः प्रकुप्यन्ति।
श्रवणे श्रकणव्याधिः पाखण्डिभयं धनिष्ठा सु ।। तदेव- - ०८/३३

४- शतभिषजि शौण्डिकानाम जैकभे द्युतजीविनां पीडाम्।
कुरु[illegible]चालानामपि करोति चास्मिन् सितः सलिलम्।। तदेव - ०८/३४

५- दृष्टोऽनस्तमितेऽर्के भयकृत् क्षुद्रोगकृत्समस्तमहः।
अर्द्धदिवसे च सेन्दुर्नृपबलपुरभेदकृच्छुक्रः।। बृ० सं०- ०८/२३

६- आहिर्बुध्न्ये फलमूलतत्पकृद्धायिनां च रेवत्याम्।
अश्विन्यां हयपानां तु किरातयवनानाम्।। तदेव- - ०८/३५

तिथियों में शुक्र के विकारों का फल-

यदि कृष्णपक्ष की चर्तुदशी, अमावस्या और कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि में शुक्र का उदय या अस्त हो तो पृथ्वी जल से परिपूर्ण होती है अर्थात् अतिवृष्टि होती है।

शुक्र का अन्य ग्रहों के साथ विकार युक्त होने का फल-

१- यदि बृहस्पति और शुक्र परस्पर सप्तम राशि में स्थित हों अर्थात् बृहस्पति से सप्तम शुक्र और शुक्र से सप्तम बृहस्पति स्थित हो तो रोग और अनेक प्रकारके भयसे प्रजागण पीड़ित होते हैं तथा अवृष्टि होती है।[२]

२- यदि शुक्र के आगे अर्थात् शुक्र से अगली राशि में बृहस्पति, बुध, मंगल, और शनि हों तो मनुष्य, नाग और विद्याधरों में युद्ध होता है, भंयकर वायु से वृक्षादिकों का नाश होता है, मित्रों में परस्पर मित्रता का अभाव होता है, ब्राह्मणों के काम का अभाव होता है अर्थात् ब्राह्मण कर्महीन होते हैं, वर्षा नहीं होती और वज्रपातों से पर्वतों का नाश होता है अर्थात् सभी ओर अनर्थ होता है।[३]

३- यदि शुक्र के आगे शनैश्चर गमन करे अर्थात् शुक्र की अगली राशी में शनैश्चर हो तो म्लेच्छ जाति विल्ली, हाथी, गदहा, भैंस, काले धान्य, सुकर निषाद, शूद्र और दक्षिण दिशा में स्थित जनों को नक्ष रोग तथा वायु के विकार से नष्ट होते हैं अर्थात् रोग ग्रसित हो कर नष्ट होते हैं।[४]

४- यदि शुक्र के आगे मंगल गमन करे तो अग्नि, शस्त्र, क्षुधा, अवृष्टि और चोरों से प्रजा पीड़ित होती है। उत्तरदिशा में स्थित जंगम तथा स्थावर प्राणियों का अग्नि, विद्युत और धूलि से दिशाओं का नाश होता है।[५]

१- चतुर्दर्शीं पंचदर्शीं तथाष्टमीं तमिस्रपक्षस्य तिथि भृगो सुतः।
यदा व्रजेद्दर्शनमस्तमेति वा तदा मही वारिमयीव लक्ष्यते।। तदेव- ०८/३६

२- गुरुर्भृगुश्चापरपूर्वकाष्ट्योः परस्परं सप्तमराशिगौ यदा।
तदा प्रजा रुग्भयशोकपीडिता न वारि पश्यन्ति पुरन्दरोज्झितम्।। तदेव- ०८/३७

३- यदा स्थिता जीवबुधारसूर्यजाः सितस्य सर्वेऽग्रपथानुवर्तिनः।
नृनागविद्याधरसंगरास्तदा भवन्ति वाताश्च समुछ्रितान्तकाः।। तदेव- ०८/३८

४- शैनश्चरे म्लेच्छबिडालकुंजराः खरा महिष्योऽसितधान्यशुकराः।
पूलिन्दशूद्राश्च सदक्षिणापथाः क्षयं व्रजन्त्यक्षिमरुदगदोद्रदोदभवै।। तदेव- ०८/४०

१- निहन्ति शुक्रः क्षितिजेऽग्रतः प्रजां हुताशशस्त्रक्षुदवृष्टिस्करैः
चराचरं व्यक्तमथोत्तरापथं दिशोऽग्निविद्युतदजसा च पीडयेत्।। बृ० स० - ०८/४१

५- यदि शुक्र के आगे बृहस्पति गमन करे अर्थात् अगली राशि या नक्षत्र में हो तो सफेद वस्तु, ब्राह्मण, गौ तथा देवताओं के गुरू और पूर्वदिशा के जन्तु का नाश करता है। मेघ से ओले की वृष्टि होती है, लोगों के गले में रोग होता है तथा शरदृऋतु में होने वाले धान्य अधिक होते हैं।[1]

६- यदि शुक्र के आगे बुध गमन करे अर्थात् शुक्र से अगले नक्षत्र में बुध हो तो वृष्टि होती है, लोगों में पित्तज और कामला रोगों की उत्पत्ति तथा ग्रीष्म में उत्पन्न होने वाले धान्यों को पुष्ट करता है। वनवासी, अग्नि होत्री, वैद्य, योद्धा, घोड़ा, वैश्य, राजा पीली वस्तुएँ और पश्चिम दिशा का नाश करता है अर्थात् इन उक्त वर्णित जनों का नाश होता है।[2]

७- यदि शुक्र का वर्ण अग्नि के समान हो तो अग्नि का भय होता है, रक्त वर्ण हो तो शस्त्र का, कसौटी पर घिसे हुये सुवर्ण की रेखा के समान हो तो रोग होता है, तोते के समान हो या पीला वर्ण हो तो श्वास और कास रोग की उत्पत्ति तथा भस्म रुक्ष या काला वर्ण हो तो अवृष्टि होती है।[3]

८- जब शुक्र और शनि दोनों एक राशि में अस्त हों तो अन्नपीड़ा अर्थात् अन्न को रोग लगते हैं, महायुद्ध तथा हर एक देश में युद्ध आदि छिड़ते हैं अर्थात् सर्व ओर अशान्ति फैल जाती है और प्रजा दुखी होती है।[4]

९- जब सूर्य आगे शुक्र पीछे तथा बुध मध्य में हो तो अन्न मंहगा हो जाता है।[5]

शुक्र के शुभदायक फल-

१- यदि दही, कुमुदपुष्प या चन्द्र की तरह कान्ति वाला, स्पष्ट विस्तृत किरण वाला, विपुल मूर्ति वाला, सुन्दर गति वाला (अवक्री), विकार रहित और विजयी शुक्र हो तो प्रजाओं को कृतयुग की तरह अर्थात् व्याधि, दारिद्रय और शोक से रहित करता है।[6]

२- उत्तर मार्ग की तीन वीथियों में चलने पर शुक्र धान्य, धन, वृष्टि और अन्नकी उत्पत्ति की वृद्धि करता है।[7] इस प्रकार शुक्र नक्षत्रों में, ग्रहों के साथ, राशि में, वर्ण के अनुसार अनेक प्रकार के शुभाशुभ उपद्रव कराता है।

१- बृहस्पतौ हन्ति पुरः स्थिते सितः सितं समस्तं द्विजगोसुरालयान्।
दिशं च पूर्वां करकासृजोऽम्बुदा गले गदा भूरिभवेच्च शारदम्।। तदेव- ०८/४२

२- सौम्योऽस्तोदययोः पुरो भृगुसुतस्यावस्थितस्तोयकृद्रोगान्
पित्तजका[illegible]श्च कुरुते पुष्णाति च गेष्मिकान्।
हन्यात्प्रव्रा[illegible]ाग्निहोत्रिकभिषग्रङ्गोपजीपजीण्यान् हयान्
वैश्यान गाः सहवाहनर्नरपतीन पीतानि पश्चाद्दिशम्।। तदेव- ०८/४३

३- [illegible]खिभयमनलाभे शस्त्रकोपश्च रक्ते कनकनिकषगौरे व्याधयो दैत्यपूज्ये ।
[illegible]तपिलरूपे श्वासकासप्रकोपः पतति न सलिलं खाद्भस्मरूक्षसिताभे।। तदेव- ०८/४४

४- दधिकुमुदशशांककान्तिभृत्स्फुटविकसत्किरको बृहत्तनुः।
सुगतिरविकृतो जयान्वितः कृतयुगरूपकरः सिताह्वयः।। तदेव- ०८/४५

५- शक्रसौयोर्द्वयोरस्तमेकराशौ यदा भवेत्। अन्नपीडामहायुद्धं देशे देशे च विग्रहाः।। ज्यो०प्र०-१०/१४३

६- अग्रेयाति दिवानाथः पृष्टे च भृगुनन्दनः। मध्ये सोमसुतो याति भवत्यन्नमहर्घता।। ज्यो० प्र०-१०/१५१

७- सौम्य मार्गे चतिसृषु चरन्वीथिषु भार्गवः। धान्यार्थ वृष्टि सस्यानां [illegible] ०-३६

द्वितीय अध्याय

शनि से सम्बद्ध उत्पात

शनि द्वारा उत्पन्न शुभाशुभ उत्पातों के लक्षण एवं फल-

शनि ग्रह द्वारा भिन्न-भिन्न नक्षत्र, राशि में स्थित होने से और वर्ण आदि के अनुसार भूमण्डल पर उत्पन्न होने वाले विकार ।

नक्षत्रों में शनि उत्पात फल-

१- यदि शनैश्चर श्रवण, स्वाती, हस्त, आर्द्रा, भरणी, या पूर्वाफाल्गुनी में स्थित होकर निर्म मूर्ति वाला हो तो पृथ्वी वृष्टि के जल से परिपूर्ण होती है अर्थात् अतिवृष्टि होती है।

२- यदि शनि आश्लेषा, शतभिषा या ज्येष्ठा नक्षत्र में स्थित हो तो सुन्दर क्षेत्र अर्थात् क्षेत्रों में हरियाली होती है और थोड़ी वृष्टि होती रहती है।

३- यदि मूला नक्षत्र में शनि स्थित हो तो संसार में दुर्भिक्ष, युद्ध और वर्षा का अभाव होता है अर्थात् सर्व ओर से अनिष्ट करता है। इस प्रकार अन्य नक्षत्रों में शनि का शुभाशुभ फल वर्णित है।[1]

४- यदि शनैश्चर अश्विनी नक्षत्र में स्थित हो तो घोड़ा, घोड़े का उपचारक अर्थात् घोड़े का कवि, वैद्य और मन्त्रियों का नाश करता है और इन के लिए अनिष्टकारी होता है

५- यदि भरणी नक्षत्र में शनि स्थित हो तो नाचनेगाने वाले, अन्याय पग पर चलनवाले तथा निषाद इन सभी को अनिष्ट करता है अर्थात् नाश करता है।[2]

६- शनि कृत्तिका नक्षत्र में स्थित हो तो अग्नि से आजीविका चलानेवालों और सेनापति का नाश करता है।

७- रोहिणी नक्षत्र में जब शनि स्थित होता है तो उस समय अनेक प्रकार के उपद्रव और युद्ध करवाता है एवं कोशल, मद्र, काशी तथा पांचाल देश में रहने वाले मनुष्यों और गाड़ी से आजीविका चलानेवालों का नाश करता है अर्थात् अनिष्ट करता है।[3]

८- जब शनि ग्रह रोहिणीको पीड़ा देते हुए इसी नक्षत्रमें स्थित रहे तो युद्ध आदि अनिष्ट घटनायें होती हैं।[4]

१- श्रवणानिलहस्तार्द्रा भरणीभाग्योपगः सुतोऽर्कस्य। प्रचुरसलिलोपगूढां करोति धात्री यदि स्निग्धः॥ अहिवरुणपुरन्दरदैवतेषु सुक्षेमकृन्न चातिजलम् । क्षुच्छस्त्रावृष्टिकरो मूले प्रत्येकमपि वक्ष्ये ॥
बृ० सं०- १०/१,२

२- तुरगतुरगोपचारककविवैद्यामात्यहर्कजोऽश्विगतः। याम्ये नर्तकवाद गेयज्ञक्षुद्रनैकृतिकान् ॥
तदेव - - १०/०३

३- बहुलास्थे पीडयन्ते सौरेऽग्न्युपजीविनश्चमूपाश्च। रोहिण्यां कोशमद्रकाशिपांचालशाकटिकाः
तदेव - - १०/०४

४- रोहिणीं पीडयन्नेष स्थितो राजञ्शनैश्चरः। म० भा० भी०- ०२/२८

९- शनि जब पूर्वाफल्गुनी नक्षत्र पर आक्रमण करके पीड़ा देता है और शुक्र पूर्वाभाद्रपद पर सवार हो कर प्रकाशमान होता हो और परिध नामक उपग्रहके साथ मिलकर परिक्रमा करके उत्तराभाद्रपद नक्षत्र पर आक्रमण करने की चेष्टा जब शुक्र करता हो, इस प्रकार के योग होने से राज्य, नगर या देश में अनेक प्रकार के उपद्रव एवं नरसंहार होने के चिह्न होते हैं।[1]

१०- जब मृगशिरा नक्षत्र में शनैश्चर स्थित हो तो वत्स देश में रहने वाले मनुष्य, याचक, यजमान, प्रधान मनुष्य और मध्यदेश को पीड़ित करता है अर्थात् उपर्युक्त नामों वाले देश मनुष्य आदि को कष्ट होता है।

११- जब शनि आर्द्रा नक्षत्र में स्थित हो तो पारतरदेश में रहने वाले, मद्र देश में रहने वाले, तेली, रजक (धोबी, रंगरेज) और चोरों को पीड़ा करता है अर्थात् दुःखी करता है।[2]

१२- जब पुनर्वसु नक्षत्र में शनि स्थित हो तो पंजाब, गुहा, सौराष्ट, सिन्धु के समीप तथा सौवीर देश में रहने वाले इन सबों को पीड़ित करता है। जब शनैश्चर पुष्यनक्षत्र में स्थित हो तो घंटा वजाने वाले, घोषिक(ढंढोरा पीटने वाले अथवा घोष-गुहामें निवास करने वाले), धवन, अर्थात् यवन देश में रहने वाले, वणिक् अर्थात् वणिज्य आदि के कार्य करने वाले, नाई आदि और किरात् अर्थात् किरात् देश में रहने वाले मनुष्य, धूर्त अर्थात् निंधित कर्म करने वाले मनुष्य और पुष्पों को पीड़ित करता है अर्थात् इन सब को अनेक प्रकार के कष्ट, व्याधियाँ और हानि होती है।[3]

१३- जब आश्लेषा नक्षत्र में शनैश्चर बैठा हो तो जल में उत्पन्न प्राणियों और सर्पों को पीड़ित करता है। जब मघा नक्षत्र में शनि बैठा हो तो बाह्लीक, चीन, गान्धर, शूलिक और पारत देश में रहने वाले मनुष्य, वैश्य, कोष्ठागार, वाणिक्, किरात में रहने वाले इन सब को दुःख देता है और अनेक प्रकार की हानियाँ होती हैं।[4]

१४- जब पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में स्थित शनि रस (मधुर, अम्ल, लवण, तिकत, कटु और कषाय) बेचने वाले, वेश्या, कुमारी, महाराष्ट्र देश में निवास करने वाले मनुष्य इन सबोंको पीड़ित करता है।

१- भाग्यं नक्षत्रमाक्रम्य सूर्यपुत्रेण पीडयते। शुक्रः प्रोष्ठपदे पूर्वे समारुह्य विशां पते।।
उत्तरे तु परिक्रम्य सहितः प्रत्युदीक्षते। बृ० स०- ०२/२६

२- मृगशिरसि वत्सयाजकयजमानार्यजनमध्यदेशाश्च।
रौद्रस्थ पारातरमठास्तैलिकरजकचौराश्च ।। तदेव - - १०/०५

३- आदित्ये पांचनदप्रत्यन्तसुराष्ट्रसिन्धुसौवीराः।
पुष्ये घण्टिकघौषिकयवनवणिक्वितकुसुमानि।। तदेव - १०/०६

४- सार्पे जलरूहसर्पाः पित्र्ये वाह्लीकचीनगान्धाराः।
शूलिकपारतवैश्याः कोष्ठागारणि वणिजश्च।। तदेव- १०/०७

१५- उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें स्थित शनि राजा, गुड़ नमक, भिक्षुक, जल और तक्षशिला नगरी को पीड़ित करता है।[1]

१६- जब हस्त नक्षत्र में स्थित शनि हजाम, चक्रिक (कुम्भकार, तेली आदि), चोर, वैद्य शिल्पी, हाथी पकड़ने वाले, वेश्या, कौशल देश में निवास करने वाले, माली इन सब को पीड़ित करता है अर्थात् अनेक प्रकार के दुःख होते हैं।[2]

१७- जब चित्रा नक्षत्र में शनि स्थित हो तो स्त्रीगण, लेखक, चित्रकार, भाण्ड(अनेक प्रकार के वैश्यों के धन) इन सबों को पीड़ित करता है अर्थात् इनके लिए कष्टदायी होता है। जब स्वाती नक्षत्र में शनि स्थित हो तो मागध (कीर्ति गाने वाले या मगध देश में रहने वाले) गुप्तचर, दूत, सारथी, नाव पर चलने वाले, आदि इन सबों को शनि पीड़ित करता है।[3]

१८- यदि शनि विशाखा नक्षत्र में स्थित हो तो त्रिगर्त, चीन और कुलूत देश में रहने वाले मनुष्य, कुंकुम, लाख, धान्य, मंजीठ और कुसुम्भ के पुष्यों को नष्ट करता है अर्थात् इन के लिए हानिकारक होता है।[4]

१९- जब शनि अनुराधा नक्षत्र में स्थित हो तो कुलूत, तंगण, खम(नेपाल), काश्मीर इन देशों में स्थित मनुष्य, मन्त्री और चक्रचर (कुम्भार, तेली आदि), घण्टा बजाने वाले और शिल्पियों को पीड़ित करता है तथा मित्रों में परसपर भेदभाव उत्पन्न करता है।[5]

२०- शनि जब ज्येष्टा नक्षत्र में स्थित हो तो राजा, पुरोहित, राजाओं से पूजित शूर गण (सन्यासियों के मठ), प्रधान कुल और जनसंघियों को पीड़ित करता है अर्थात् इन को कष्ट, दुःख और हानि पहुँचाता है। मूला नक्षत्र में स्थित शनि काशि, कोशल, पंजाव इन देशों में रहने वाले मनुष्य, फल, औषध और युद्धकरने वालों को पीड़ित करता अर्थात् कष्टदेता है।[6]

१- भाग्ये रसविक्रयिणः पण्यस्त्रीकन्यकामहाराष्ट्राः।
आर्यम्णे नृपगुडललवणभिक्षुकाम्बूनि तक्षशिला।। बृ० स०- - १०/०८

२- हस्ते नापितचाक्रिकचौरभिषक्सूचिका द्विपग्राहाः।
बन्धक्यः कौशलका मालाकाराश्च पीडयन्ते।। तदेव- - १०/०९

३- चित्रास्थे प्रमदाजलेखकचित्रज्ञाचत्रभाण्डानि।
स्वातौ मागधचरदूतसूतपोतप्लवनटाद्याः।। बृ० सं०- १०/१०

४- ऐन्द्राग्नाख्ये त्रैगर्तचीन कौलूत कुंकमं लाक्षा।
सस्यान्यक्ष माजिष्टं कोसुम्भं च क्षयं याति।। तदेव- - १०/११

५- मैत्रे कुलूततंगखसकाश्मीराः समत्रिचक्रचराः।
उपतापं यान्ति च घाण्टिका विभेदश्च मित्राणाम्।। तदेव- - १०/१२

६- ज्येष्ठासु नृपपुरोहितनृपसत्कृतशूरगणकुलश्रेण्यः।
मूले तु काशिकोशलपांञ्चालफलौषधीयोधाः।। तदेव- - १०/१३

२१- पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में स्थित शनि अंग, वंग, कोशल, गिरिव्रज, मगध, पुण्ड्र मिथिला और ताम्रलिप्ती देश में रहने वाले मनुष्यों को कष्ट देता है।[1]

२२- उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में स्थित शनि दर्शाण देश में रहने वाले मनुष्य, यवन, उज्जयिनीदेश में स्थित मनुष्यों को कष्ट देता है अर्थात् इनको किसी भी प्रकार की हानि हो सकती है।[2]

२३- शनि श्रवण नक्षत्र में स्थित हो तो राजा के अधिकारी, प्रधान ब्राह्मण, वैद्य और पुरोहितों को पीड़ित करता है। धनिष्ठा नक्षत्र में स्थित शनि हो तो मगधेश्वर को विजय अर्थात् मगधदेश के राजा को विजय और धनाधिकारी की वृद्धि करता है अर्थात् लाभ प्रधान करता है।[3]

२४- शनि शतभिषा या पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र में स्थित हो तो वैद्य, कवि शौण्डिक (वैद्य वेचने वाले), खरीद-विक्री करने वाले और नीतिशास्त्र जानने वाले पीड़ित होते हैं। उत्तराभाद्रपदा में शनैश्चर बैठा हो तो नदीतीर में निवास करने वाले, रथाधिकारी, शिल्पी, स्त्री और सुवर्णका नाश करता है अर्थात् इन को अनिष्ट करता है।[4]

२५- रेवती नक्षत्र में शनि बैठा हो तो राजा के आश्रय में रहने वाले, क्रौंच द्वीप में रहने वाले, शारदीय धान्य, शवर जाति और यवन देश के वासियों को पीड़ित करता है।[5]

शनि का अन्य ग्रहों के साथ होने से घटित होने वाले उत्पातों के लक्षण--

१- जव विशाखा नक्षत्र में गुरू और कृत्तिका नक्षत्र में शनैश्चर बैठा हो तो उस समय प्रजाओं में भयंकर अनीति उत्पन्न होती है तथा जव एक नक्षत्र में वृहस्पति और शनि दोनों बैठे हों तो उस समय नगरों में परस्पर द्वेष उत्पन्न होता है।[6]

२- जव शनि और वृहस्पति एकराशि पर स्थित हों तो अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं।[7]

१- आप्ये ऽङ्गवंगकोशलगिरिव्रजा मगधपुण्ड्रमिथिलाश्च।
उपतापं यान्ति जना वसन्ति ये ताम्रलिप्त्यां च।। वृ० सं०- १०/१४

२- विश्वेश्वरे ऽर्कपुत्रश्चान् दशार्णन्निहन्ति यवनांश्च।
उज्जयिनीं शवरान् पारियात्रिकान् कुन्तिभोजांश्च।। तदेव- - ०६/१५

३- श्रवणे राजाधिकृतान् विप्राग्र्यभिषक्पुरोहितकलिंगा[illegible]।
वसुभे मगधेशजयो वृद्धिश्च धनेष्वधिकृतानाम्।। तदेव- - ०६/१६

४- साते शतभिषजि भिषक्कविशौण्डिकपण्यनीतिवृत्तीनाम्।
आहिर्वुध्न्ये नद्यो यानकराः स्त्रीहिरण्यं च।। वृ० सं०- १०/१७

५- रेवत्यां राजभृताः क्रौंचद्वीपाश्रिताः शरत्सस्यम्।
शवराश्च निपीडयन्ते यवनाश्च शनैश्चरे चरति।। तदेव- - १०/१८

६- यदा विशाखासु महेन्द्रमन्त्री सुतश्च भानोर्दहनर्क्षयातः।
तदा प्रजानामनयो ऽतिघोरः पुरप्रभेदा गतयोर्भमेकम्।। तदेव- - १०/१६

७- सर्वेप्येकर्क्षगाः खेटा एकर्क्षे शनिवाकपती ----। मु० ग०-मि०-६८

३- जब तेजोमय बृहस्पति और शनैश्चर विशाखा के पास जाकर एक वर्ष तक स्थित हो जायें तो दुर्भिक्ष और युद्ध द्वारा नरसंहार होता है।[१]

४- वृश्चिक, मेष, सिंह तथा कर्क राशियों में जब शनि भ्रमण करता है तो छोटे पदो वाले प्रजाओं का अनुकूल किन्तु वृष्टि का कहीं-कहीं भय पीड़ा और कष्ट देता है।[२]

५- कन्या राशि, मिथुन राशि, वृष राशि, कुम्भ राशि तथा धन राशि स्थित होने पर अपने क्षेत्र पर स्थित होने पर लोगों के लिए शुभप्रद रहता है। बङ्गाल, बिहार तथा काश्मीर, कलिङ्ग, गौड़ एवं सौराष्ट्र देश के लिए अशुभ हो जाता है।[३]

६- जब सूर्य पुत्र शनि मीन राशि में आता है उस समय राजा लोग क्षुभित होते हैं। पृथ्वी चलायमान हो जाती है। चोरों डाकुओं का समूह हर्षित हो जाता है। बुद्धिमानों की बुद्धि नष्ट हो जाती है। जनपद का हरण होता है। बादल विचित्र वर्षा करते हैं। सूर्य और चन्द्रमा की किरणें ग्रह गणों के साथ मन्द पड़ जाती है। प्रचण्ड आँधी चलती है और सम्पूर्ण जगत चक्राकार भ्रमण करने लगता है।[४]

७- जब सूर्य, राहु और मंगल या चन्द्रमा, शुक्र और शनि एक राशि में स्थित हों तो पृथ्वी भय से व्याकुल होती है अर्थात् पृथ्वी पर हर प्रकार के उपद्रव व्याधियाँ और विकार होते हैं।[५]

८- जब शनि और राहु एक साथ स्थित हों, तो सब प्रकार के अन्न मंहगे होते हैं और अनेक प्रकार की व्याधियाँ दशों में उत्पन्न होती हैं।[६]

९- जब शनि बृहस्पति से युक्त हो या शनि से बृहस्पति सातवें स्थान में हो, तब राजा प्रजा दोनों का विनाश तथा अन्न का सर्वनाश होता है अर्थात् दुर्भिक्ष होता है।[७]

१- विशाखयोः समीपस्थौ बृहस्पतिशतैश्चरौ।। मु० ग०-मि०- ०३/२५

२- कीटाजपंजटानकर्कटेषु चरञ्छनिः क्षुद्रपदः प्रजानाम्।
वृषेर्भयं कुम्भदामयश्च तथापि जीवन्ति जनाः कथचित्।। वशिष्ठ सं० - शनि० - ०४

३- कन्यानृयुग्गोघटचापसंस्थः स्वक्षेत्रसंस्थोऽपि शुभप्रदःस्यात्।
वङ्गकाश्मीरकलिंगगौडसौराष्ट्रदेशेष्वशुभप्रदः स्यात्।। तदेव - शनि० - ०५

४. प्रक्षुभ्यन्ति क्षितीशाः प्रचलितवसुधा मोदते दस्युवर्गो।
धीभ्रंशो बुद्धिभाजां जनपदहरणं चित्रचर्षी पयोदः।।
चन्द्रार्कौ मन्दरश्मी ग्रहगणसहितो वान्ति वाताः प्रचण्डाः।
चक्राकारं समग्रं भ्रमति जगदिदं मीनगे सूर्यसूनौ।। वशिष्ठ सं० - शनि० - ०६

५- रविराहुमहीपुत्राः शशिशुक्रशनैश्चराः।
एक राशिगता ह्येते तदा पृथ्वी भयाकुलाम्।। ज्यो० प्र०- १०/१८६

६- शनिराहु यदैकत्र भवेतां सहितौ यदा।
सर्वधान्यमहघर्त्वं जायते नात्र संशयः। तदेव- - १०/१४०

७- यदा जीव युतो मन्दो जीवाद्वा सप्तमे स्थितः।
तदा प्रजा विनश्यन्ति भूपाश्चान्नपरिक्षयः।। तदेव- - १०/१४९

१०- यदि शनि का वर्ण अनेक वर्णों का हो तो पक्षियों का नाश करता है, पीला हो तो दुर्भिक्ष, रक्त वर्ण का हो तो युद्ध और भस्म के सदृश वर्णका हो तो प्रजाओं में द्वेष होता है अर्थात् प्रजा में द्वेष के कारण अशान्ति उत्पन्न होती है।[1]

११- यदि शनि का वर्ण वेदूर्यमणि के समान निर्मल हो तो प्रजाओं को शुभ करने वाला होता है। वाण या अतसी पुष्प के समान काला हो तो भी शुभ है तथा शनि का जिस प्रकार का वर्ण हो उस के समान वर्ण वाले मनुष्यों का नाश करता है। जैसे श्वेत वर्ण का शनि हो तो ब्रह्मण का, रक्त वर्ण हो तो क्षत्रियका, पीत वर्ण हो तो वैश्य का तथा कृष्ण वर्ण हो तो शूद्र का नाश करता है।[2]

१२- श्रवण, स्वाती, हस्त, आर्द्रा, भरणी और पूर्वफाल्गुनी नक्षत्रों विचरण करने पर शनि सुभिक्ष, आरोग्य और कृषि की उपज को बढ़ाने वाला होता है। अन्य नक्षत्रों में शनि अशुभ फल प्रधान करता है।[3]

शनि उत्पात घटित होने के फलस्थान-

शनि का वर्तमान अर्थात् वर्तमान में शनि जिस नक्षत्र में हो उस के अन्तर्गत राशि और राशि के अनुसार जो देश और मनुष्य आते हैं एवं अंगविभाजन के अनुसार जिस अंग में शनि पड़ा हो उस के अनुसार रोग, लाभ, हानि-लाभ, मित्रता, बन्धन, परिश्रम, श्रेष्ठ यात्रा व धनलाभ आदि के फल एवं उपद्रव आदि उत्पन्न करता है।[4]

प्रायः शनि वक्रगामी होने पर अर्थात् जब शनि वक्र चलता है उसी समय उपर्युक्त गिनाये गये अनिष्ट फल का पूर्ण प्रभाव पड़ता है। यदि शनि सम मार्ग पर हो तो अर्थात् न मार्गी और न वक्री हो तो सम फल देता है। यदि शनि मार्गी हो तो मध्यम फल देता है। यदि शनि शीघ्र गति वाला हो तो उत्तम फल प्रधान करता है।[5]

इस प्रकार शनि ग्रह नक्षत्र, राशि वर्ण और अन्य ग्रहों के साथ अपना शुभाशुभ फल इस सौरमण्डल पर घटित करता है।

१- अण्डजहा रविजो यदि चित्रः क्षुद्भयकृद्यदि पीतमयूखः।
शस्त्रभयाय च रक्तवर्णो भस्मनिभो बहुवैरकरश्च।। बृ० सं०- ०६/२०

२- वैदूर्यकान्तिविमलः शुभकृत्प्रजानां वाणातसीकुसुमवर्णनिभश्च शस्तः।
यं चपि वर्णमुपगच्छति तत्सवर्णान् सूर्यात्मजः क्षपयतीतिमुनिप्रवादः।। तदेव- ०६/२१

३- श्रवणानिलहस्तार्द्रा भरणी भाग्य भेषु च ।
चरन्छनैश्चरो नृणां सुभिक्षारोग्य सस्यकृत।। न० पु० -त्रि० -३८

४- रोगो लाभस्तथा हानिर्लाभः सौख्यंय बंधनम्।
आयासः श्रेष्ठयात्रा च धनलाभः क्रमात्फलम्।। तदेव - - ३९

५- बहुधारविजस्त्वेतद्वक्रगः फलमीहशम्।
करोत्येव सम साम्यं शीघ्रगेषूत्क्रमात् फलम्।। तदेव- - - ४०

राहु से सम्बद्ध उत्पात

राहु द्वारा भू-मण्डल पर घटित होने वाले शुभाशुभ उत्पातों के लक्षण एवं फल-

ग्रहण लगने के विभिन्न मत-

१. अमृत पी लेने के बाद राहु को आठवें ग्रह का स्थान मिला। विधाता के वरदान से वह सभी पर्वों पर चन्द्रमा को कष्ट देता है।[1] वह राहु राक्षस होने के कारण सर्व के आकार से सदा भ्रमण करता भूगोल के आधे भाग में दर्पण सदृश सूर्य को ग्रहण करता है।

२. सम्पूर्ण पृथ्वी का छाया अद्भुत होकर चन्द्रमा और सूर्य को ऊपर से ढकता है। पश्चिम भाग से आकर शीघ्र चन्द्रमा को ग्रहण करता है।[2] अवनति और विक्षेप के कारण दूर से देर निरन्तर गमन होने के कारण छः महीने के अन्दर प्रायः ग्रहण सम्भव होता है।[3] ग्रहण के लगने से इष्ट पर्वों के सात परिवेश हैं।

१. धात्री, २. चन्द्रमा, ३. इन्द्र, ४. कुबेर, ५. वरुण, ६. अग्नि, और ७ यम क्रमशः जानने चाहिए।[4]

३. राहु ग्रह का भूमण्डल पर शुभाशुभप्रभाव सूर्य-चन्द्र के साथ युति होने से होता है। अन्य ग्रहों की भान्ति राहु भी आकार, वर्ण और नक्षत्र के अनुसार फल देता है। राहु का सूर्य के साथ या चन्द्र के साथ होने से ग्रहण होता है। यह ग्रहण भूमण्डल पर अपना अशुभ प्रभाव जिस देश में दिखाई दे उसी देश में घटित करता है।

४. सूर्य के मध्य में पृथ्वी के आ जाने के कारण चन्द्रग्रहण और सूर्य तथा पृथ्वी के मध्य में चन्द्रमा के आ जाने के कारण सूर्य ग्रहण होता है।

५. सूर्य या चन्द्र को राहु नामक राक्षस का उक्त पिण्डों को ग्रसने या खाने के लिए दौड़ता है। प्राचीन भारतीय ज्योतिषयों ने ग्रहण का मुख्य कारण उक्त छाया को ही माना है।

६. सूर्यग्रहण केवल अमावस्या के दिन और चन्द्रग्रहण केवल पूर्णिमा की रात को लगता है। सूर्य और चन्द्र ग्रहण एक वर्ष में कम से कम दो बार और अधिक से अधिक उक्त छाया को ही माना है। सूर्यग्रहण केवल अमावस्या के दिन और चन्द्रग्रहण केवल पूर्णिमा की रात को लगता है।

---

१. दत्त्वाष्टग्रहत्वं पितो विगर्सज तं राहुम्।
धातृवराच्चन्द्रमसं तुदति ततः सर्वपर्वणि च।। वशिष्ठ सं०- राहु०- ०३

२. राहुरसौ दनुजत्वाद्भुजगाकारेण गृह्णाति।
भूगोलाधोभागे दर्पणसदृशे रवौ सदा भ्रमति।।

क. उद्भुताखिलधरणीछाया छादयति सेन्दुमुपरिस्थम्।
स्थगयति रविमुपरिस्थयं पश्चदागत्य शीघ्रगश्चन्द्रः।। तदेव- राहु०- ०६

३. अवनतिविक्षेपवशाद्दूराद्दूरं गतः सततम्।
षण्मासाभ्यन्तरिताद्ग्रहणं प्रायेण सम्भवति।। तदेव- राहु० - ०५

४. धातृशशीन्द्रकुवेरा वरुणाऽग्नियमाश्च विज्ञेयाः। पर्वसमूहं यत्तत्सप्तभिरवशिष्टपर्वेशाः।।
एषां पर्वेशानां क्रमशस्तु फलानि वक्ष्यन्ते।। तदेव- राहु० - ०८

सूर्य और चन्द्र ग्रहण एक वर्ष में कम से कम दो बार और अधिक से अधिक सात बार लगते हैं। पर साधारणतः एक वर्ष में तीन या चार ही ग्रहण लगते हैं और सात ग्रहण बहुत कम लगते हैं। प्रायः एक समय में ग्रहण पृथ्वी के किसी विशिष्ट भाग में ही दिखाई पड़ता हैं, समस्त भूमण्डल पर नहीं। ग्रहण में कभी तो सूर्य या चन्द्र जिस ग्रहण में पूरा मण्डल आवृत हो जाय, उसे सर्वग्रास या खग्रास कहते हैं। फलित ज्योतिष के अनुसार ग्रहण लगने की दस अवस्थायें होती हैं उनके नाम उस प्रकार से हैं:-

सव्य, अपसव्य, लेह, ग्रसन, निरोध, अवमर्द्द, आरोह, आघात मध्यतम् और तमोत्य।[1]

वर्ष भर में चार सूर्य ग्रहण तथा दो चन्द्रग्रहण हो सकते हैं, किन्तु बहुत समय के पश्चात लगभग दो शताब्दियों के कालान्तर पर, कुल मिलाकर सात ग्रहण होना सम्भव हैं। जिस वर्ष केवल दो ही ग्रहण होंगे उस वर्ष दोनों सूर्य ग्रहण ही होंगे। सूर्य ग्रहण अधिक और चन्द्र ग्रहण कम संख्या में लगते हैं।[2]

ग्रहण का फल मास पक्षादि के अनुसार-

१- यदि एक ही मास में सूर्य चन्द्र दोनों का ग्रहण होवे तो अपनी सेनाओं में हलचली मच जाती है और शस्त्रप्रहार से राजाओं का नाश होता है। देश में दुर्भिक्ष, उपद्रव व अन्य आकस्मिक घटनायें होती हैं।[3]

२- जब एक ही महीने में चन्द्रमा और सूर्य दोनों के ग्रहण पड़ते हैं तो राजाओं में लड़ाई-झगड़े, अर्थनाश और अवृष्टि का संकट उपस्थित होता है अर्थात् संकट छा जाता है।[4]

३- यदि राहु से चन्द्र या सूर्य उदय या अस्तके समय में ग्रस्त हों तो शारदीय धान्य और राजाका नाश करता है। जैसे-ग्रस्तचन्द्र का उदय हो अर्थात् उदय या अस्त होते समय चन्द्र राहु से ग्रस्त हो तो शरदऋतु में होने वाले अन्न का नाश होता है। यदि सूर्य का उदय या अस्त होते समय राहु ग्रस्त हो तो राजा का नाश होता है। यदि पूर्ण रूप से राहु सूर्य चन्द्र को ग्रस्त करे और पाप ग्रह भी देखें तो दुर्भिक्ष और मरी पड़ती है।[5]

४- ग्रहण का फल दिनमान और रात्रिमान के विभाग करने पर सात युग नाम के विभाग होतें हैं। इन युगों के अनुसार फल घटित होता है।

---

१. द्रष्टव्य- हिन्दी विश्वकोष- पृ०- १३७०

२. हिन्दी शब्द सागर- पृ०- ६१ ग अक्षर

३- यद्येकस्मिन् मासे ग्रहणं रविसोमयोस्तदा क्षितिपाः।
स्वबलक्षोभैः संक्षयमायान्त्जतिशस्त्रकोपश्च।। बृ० सं०- ०५/२६

४- एकस्मिन्नेव मासे तु चंद्रार्कग्रहणं यदा।
विरोधो धरणीशानामर्घवृष्टि विनाशनम्।। न० पु०-त्रिकन्ध- ४१

५- ग्रस्तावुदितास्तमितौ शारदधान्यावनीश्वरक्षपदौ।
सर्वग्रस्तौ दुर्भिक्षमरकदौ पापसन्दृष्टौ।। बृ० स० - ०५/२७

सूर्य ग्रहण या चन्द्रग्रहण यदि ग्रस्तोदय हों अथवा ग्रहण के साथ अस्त हो तो शरद् ऋतुओं के फसलों तथा राजा का नाश करता है। यदि सम्पूर्ण ग्रहण हो जाय तो क्षुद्रभय तथा रोग का भय देता है।[1]

सव्य, अपसव्य, लेह, ग्रसन, निरोध, अवमर्दन, आमर्द (आरोह) आघ्रात, मध्यतम तथा तमोन्त्य नाम के सूर्य और चन्द्र के दस ग्रास ग्रहण होते हैं।[2]

इन दस भेदों के अनुसार घटित होने वाले उत्पातों के लक्षण एवं फल -

१. यदि ग्रहण समय में सूर्य या चन्द्रमा के सब्द (दक्षिण भाग) में होकर राहु गमन करे अथवा सर्वग्रास ग्रहण हो जाय तो संसार केलिए शुभप्रद होता है। जबकि अपसव्य (बाम भाग) में राहु गमन करे तो बामाचारी तथा राजा के लिए क्षोभ उत्पन्न करता है।[3]

२. यदि सूर्य या चन्द्र ग्रहण को राहु जिह्वा के समान चाटता हो तो लेह नाम का ग्रास होता है। यह सम्पूर्ण लोगों के प्रति देने वाला सुन्दर वृष्टि करने वाला तथा धान्यों को देने वाला होता है।[4]

३. यदि सूर्य या चन्द्र ग्रहण बिम्ब के आधे से कम ग्रहण हो तो अथवा स्पर्श और मोक्ष तृतीयांश या चतुर्थांश बिम्ब का हो तो संसार को विविध रोग प्रदान करता है।[5]

४. यदि अधिक मण्डल बिम्ब को पान कर कुछ विलम्ब से मोक्ष हो तो इसे निरोध नामक ग्रहण जानना चाहिए और यह सम्पूर्ण प्राणियों को हानि करने वाला होता है।[6]

५. विमर्द नामक ग्रहण सम्पूर्ण प्राणियों को कष्टकारी तथा मगध, गौड़, किरात तथा द्रविड़ देश वालों को नियमपूर्वक रोग देता है। यदि सूर्य ग्रहण या चन्द्र ग्रहण के बाद पुनः लौटकर उसी क्षण राहु या ग्रहण दिखाई दे तो मर्द नामक ग्रास होता है। यह

---

१. ग्रस्तोदयगेऽस्तमिते शारदसस्यावनीशनाशः स्यात्।
क्षुद्रयमामयभयदं निखिलग्रहणं भवेद्यदि वा।। वशिष्ठ सं०- राहु०/१५

२. सव्यापसव्यलेहग्रसनूनिरोधावमर्द्दनामर्द्दाः।
आघ्रान्तं मध्यतमस्तमोऽन्त्य इति ते दश ग्रासाः।। तदेव- राहु०/१६

३. सव्यगते तमसि सति सर्वग्रासः शुभप्रदो जगतः।
अपसव्ये तमसि सति त्वसव्याख्या क्षितीशसंक्षोभः।। तदेव- राहु०/१७

४. परितो जिह्वालोढः स ग्रासो मण्डलस्य लेहनो नाम्ना।
प्रतिदमखिलजनानां सुवृष्टिदं सर्वसस्यानाम्।। तदेव- राहु०/१८

५. अर्द्धादूनं ग्रहणं ग्रसनं विविधामयप्रदं जगतः।
स्वर्शविमर्द्दान्मोक्षविमर्द्दमधिकं यदा भवति।। तदेव - राहु०/१६

६. स निरोधो विज्ञेस्त्वनिष्टटदः सर्वभूतानाम्।
मण्डलमधिकं पीत्वा कंचित्कालं विलंब्य स निवृत्तः।। तदेव - राहु०/२०

सम्पूर्ण राष्ट्र का नाशकारी होता है। यह ग्रहण गणित से संम्भव नहीं है। यदि ऐसा ग्रहण कभी दिखाई पड़े तो उस को उत्पात रूप ही जानना चाहिए।[1]

६. यदि वाष्य युत निश्वास वायु से मलिन दर्पण की भाँति सूर्य या चन्द्रमा का मण्डल दिखाई दे तो इसे आघात नामक ग्रास कहते हैं। यह सम्पूर्ण प्राणियों के लिए शुभ देने वाला होता है।[2]

८. यदि छाद्य विम्ब का मध्य भाग राहु से झका हो और चारों ओर निर्मल हो तो मध यतम नामक ग्रास होता है। यह मध्यम देश का नाश करता है।[3]

६. यदि सूर्य या चन्द्रमण्डल के क्रान्त भाग में किन्तु मध्य में नहीं राहु देखने में आवे तो तमोन्त्य नामक ग्रास होता है। इस में धान्यों को ईति का भय तथा अधिक चोरों का भय होता है।[4]

युग अनुसार राहु विकारों के लक्षण एवं फल-

युग लक्षण-

दिनमान या रात्रिमान को सात स्थान पर विभक्त करने पर सातभाग या युग होते हैं।

फल- यदि प्रथम भाग में उदित चन्द्र या सूर्य ग्रस्त हो तो अग्नि से जीविका चलाने वाले, गुणी अर्थात् जो लोग कलादि जानते हैं, ब्राह्मण अर्थात् वेदाध्ययन करने वाले और आश्रम वासियों का नाश करता है अर्थात् इन का अनिष्ट करता है। द्वितीय भाग में अर्थात् दिन या रात्रि में युग के द्वितीय भाग में सूर्य या चन्द्र ग्रहण हो तो किसान, पाखण्डी, व्यापारी, क्षत्रिय और सेनापति का नाश करता है। तीसरे भाग में चित्र बनाने वाले, शूद्र, म्लेच्छ जाति और मन्त्रियों का नाश करता है। चतुर्थ भागमें राजा और मध्य देशका नाश करता है तथा अन्नों के मूल्यमें समानता करता है। पंचम भाग में चतुष्पद, मन्त्री, अन्तःपुर और वैश्यों का नाश करता है। षष्ठ भाग में स्त्री और शूद्रों का नाश करता है। सप्तम भाग में सूर्य या चन्द्र के अस्तकाल में ग्रहण लगे तो चोर और गुहा में निवास करने वालों का नाश करता है जिस भाग में ग्रहण का मोक्ष होता है अर्थात् ग्रहण उतरता है उस भाग के सम्बन्धि वस्तु एवं जनों को शुभ होता है।[5]

---

१. आवृत्त्यारोहणवच्चक्राकारेण दृश्यते तमः पटलम्।
स च मर्द्दो विज्ञेयः समस्तराष्ट्रस्य नाशकरः।। वशिष्ठ सं०- राहु०/२२

२. मुकुरोपरि निश्वासानीलसदृशं दृश्यते तमश्छन्नम्।
आघ्रातह्वयमखिलं शुभप्रदं सर्वजन्तूनाम्।। तदेव - राहु०/२३

३- मध्ये तमसाऽविष्टं वितमस्कं सर्वमण्डलं परितः।
तन्मध्यतमस्पर्शो मध्यमदेशस्य नाशकरः।। वशिष्ठ सं०- राहु०/२४

४- पर्यन्तो भवति तमो न तु मध्ये तमोऽन्तकः सोऽपि।
ईतिभयं सस्यानां डामरमधिकं भवेत्तत्र।। वशिष्ठ सं० - राहु०/२५

५- द्रष्टव्य- बृ०सं०- ०५/२७-३१

राशि अनुसार ग्रहण के विकारों का फल-

१- मेष राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण होने से पंजाब, कालिंग, शूरसेन, कम्बोज, अंगदेश, किरात, शस्त्र से जीवन यात्रा चलाने वाले और अग्नि से जीविका चलाने वालों को कष्ट होता है अर्थात् व्याधियों के कारण प्रजा दुःखी होती है।[1]

२- वृषराशि में स्थित सूर्य या चन्द्रग्रहण हो तो गौ को पालने वाले, चतुष्पदों और मनुष्योंको पीड़ित करता है।[2]

३- मिथुन राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण हो तो उत्तम स्त्री, राजा, नृपमात्र (राजा के समान मन्त्री आदि उच्च व्यक्ति), प्राणधारी अन्य जीव, कलाओं में निपुण व्यक्ति (चित्र, गीत, नृत्य और वाद्य आदि) को जानने वाले, यमुना नदी के तट में निवास करने वाले, बाह्निक (धीर मनुष्य, बाह्लीक), मध्यदेश में स्थित तथा गया, विन्ध्याचल और सुह्यदेश में निवास करने वाले मनुष्यों को पीड़ित करता है अर्थात् कष्ट देता है।[3]

४- यदि कर्क राशि में स्थित सूर्य-चन्द्र का ग्रहण हो तो आभीर, शबर, पह्लव (दक्षिणदेश का राजवंश) बाहुयुद्ध जानने वाले, मत्स्य, कुरू, शक, पंजाब इन देशों में निवास करने वाले और अंग हीन मनुष्यों को पीड़ित करता है। इन देशों में अनेक प्रकारके उपद्रव होते हैं जिससे प्रजाको अनेक प्रकारके कष्ट पहुँचते हैं।[4]

५- सिहं राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण हो तो पुलिदों का समुह, मेकल में निवास करने वाले, वलवान जन्तु, राजा और राजा के समान व्यक्ति, वन में निवास करने वाले मनुष्य पीड़ित होते हैं।

६- कन्या राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र ग्रहण हो तो धान्य, कवि, लेखक, गानविद्या जानने वाले, पत्थर से आजीविका करने वाले, त्रिपुर नामक देश और धान्य युत प्रदेश इन सभी का नाश करता है अर्थात् दुर्घटना, उपद्रव, रोग आदि अनेक प्रकारके कष्ट उत्पन्न करता है।[5]

७- तुलाराशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण हो तो अवन्तिदेश में निवास करने वाले, पश्चिम समुद्र के निकट रहने वाले, इन सबों का नाश करता है।

१- पांचालकालिंगशूरशेनाः काम्बोजड्रकिरात शस्त्रवार्ताः।
जीवन्ति च ये हुताशवृच्या ते पीडामुपयान्ति मेषसंस्थे।। बृ० सं०- ०५/३५

२- गोपाः पश्वोऽथ गोमिनो मनुजा ये च महत्त्वमागताः।
पीडामुपयान्ति भास्करे ग्रस्ते शीतकरेऽथवा वृषे ।। तदेव- ०५/३६

३- मिथुने प्रवरांगना नृपा नृपमात्रा वलिनः कलाविदः।
यमुनातटजाः सवाह्लिका मत्स्याः सुह्मजनैः समन्विता।। बृ० सं०- ०५/३७

४- आभीरांछबरान् सपह्लवान् मलूलान् मत्स्यकुरूञ्छकानपि।
पांचालान्विकलांश्च पीड्यत्यन्नं चापि निहन्ति कर्कटे।। तदेव- ०५/३८

५- सिंहे पुलिन्दगणमेकलसत्त्वयुक्तान् राजोपमान्नरपतीन् वनगोचरांश्च।
षष्ठ तु सस्य कविलेखकगेयसक्तान् हन्त्यश्मकत्रिपुरशालियुतांश्च देशान्।। तदेव- ०५/३९

८- वृश्चिक राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण हो तो उदुम्बर, मद्र, और चोल देश में निवास करने वाले मनुष्य, वृक्ष, युद्ध करने वाले मनुष्य, कठोर शस्त्र धारण करने वाले इन सभी का नाश करता है।[1]

६- धनु राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण हो तो मन्त्री, प्रधानमनुष्य, घोड़ा, विदेह देश में निवास करने वाले मनुष्य, वैद्य, व्यापारी, कठोर अस्त्र को चलाने वाले इन सबों का नाश करता है अर्थात् इन में उपद्रव, अशान्ति और अन्य विकारों द्वारा देश और प्रजा को हानि करता है।

१०- मकर राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण हो तो मछली, मन्त्रियों का कुल, नीच कर्म करने वाले मनुष्य, मन्त्र और औषध को जानने वाले, वृद्ध, शस्त्र से आजीविका चलाने वाले इन सवों का नाश करता है।[2]

११- कुम्भ राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण हो तो पहाड़ी मनुष्य, पाश्चात्य देश में रहने वाले मनुष्य, बोझ ढोने वाले, चोर,अहीरदरद देश में रहने वाले, प्रधान मनुष्य, सिंह, नगर, बर्वर देश में रहने वाले मनुष्य, इन सवों का नाश करता है अर्थात् इन सब को अनेक प्रकार के कष्टों से हानि होती है।

१२- मीन राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण हो तो समुद्र के तीर और जल में उत्पन्न हुये द्रव्य, जंगली मनुष्य, बुद्धिमान, जल के विक्रय से जीवन यात्रा चलाने वाले मनुष्य इन सबों का नाश करता है।[3]

१३- नक्षत्र फल कूर्म-विभाग के अनुसार होता है यथा सूर्य या चन्द्र ग्रहण जिस नक्षत्र में हो वह नक्षत्र कूर्म विभाग से जिस देश में पड़े उस देश में स्थित मनुष्यों को पीड़ित करता है।

१४- यदि चन्द्र ग्रहण के पन्द्रह रोज बाद सूर्य ग्रहण हो तो प्रजाओं में अनीति और स्त्री-पुरुषों में द्वेष उत्पन्न होता है।[4]

१५- यदि सूर्य ग्रहण के पन्द्रह रोज बाद चन्द्र ग्रहण हो तो ब्राह्मण गण अनेक यज्ञों का फल भोगने वाले और प्रजागण हर्षित होती है अर्थात् सभी सुखी होते हैं।[5]

१- तुलाधरेऽवन्त्यपदान्त्यसाधून्वणिग्दशार्णान्मरूकच्छपांश्च।
अलिन्यथोदुम्बरमद्रचोलान्द्रुमान्सयौधेयविषायुधीयान्।। बृ० सं०- ०५/४०

२- धन्विन्यमात्यवरवाजिविदेहमल्लान् पांचालवैद्यवणिजो विषमायुधज्ञान्।
हन्यान्मृगे तु झषमन्त्रि कुलानि नीचान् मन्त्रौषधीषु कुशलान् स्थविरायुधीयान।। तदेव- ०५/४१

१- कुम्भेऽन्तर्गिरिजान् सपश्चिमजनात् भारोद्वहारस्तस्करान-
भीरान्दरदाऽऽर्यसिहंपुरकान् हन्यात्तथा बर्वरान्।
मीने सागरकूलसागरजलद्रव्यणि वन्यान् जनान्
प्राज्ञान्वायुर्पजीविनश्च भफलं कूर्मोपदेशद्वदेत्।। बृ० सं०- ०५/४२

२- सोमग्रहे निवत्त पक्षान्ते यदि भवेद् ग्रहोऽर्कस्य।
तत्रानयः प्रजानां दम्पत्योर्वैरमन्योन्यम्।। तदेव- ०५/६७

३- अर्कग्रहात्तु शशिनो ग्रहणं यदि दृश्यते ततो विप्राः।
नैकक्रतुफलभाजो भवन्ति मुदिताः प्रजाश्चैव ।। तदेव- ०५/६८

सूर्य-चन्द्र पर अन्य ग्रहों की दृष्टि से होने वाले उत्पातों का फल-

१- ग्रहणकालिक सूर्य या चन्द्र के ऊपर बुध की दृष्टि हो तो घी, शहद, तैल और राजाओं का नाश करता है। यदि मंगल की दृष्टि हो तो युद्ध, अग्निभय और चोरों का भय कराता है। यदि शुक्र की दृष्टि हो तो पृथ्वी पर धान्यों का नाश और अनेक प्रकार के कलेश उत्पन्न करता है और यदि शनि की दृष्टि हो तो दुर्भिक्ष, अनावृष्टि और चोरों का भय उत्पन्न करता है।[1]

ग्रहण कालिक सूर्य या चन्द्र के ऊपर यदि गुरु की दृष्टि हो तो सारे अशुभ फलों का नाश हो जाता है जैसे प्रज्चलित अग्नि को जल से शान्त कर देता हैं उसी भान्ति।[2]

वर्ण अनुसार ग्रहण का फल-

१- यदि ग्रहण काल में राहु का वर्ण-अग्नि के समान, हरित वर्ण, पीला, लाल, कपिल वर्ण हो तो दुर्भिक्ष, अग्नि भय,अनावृष्टि और उपद्रव करता है। पीत वर्ण हो तो मरी पड़ती है। विलोहित हो तो वृष्टि का नाश करता है। श्वेत और लोहित वर्ण का राहु सामान्य फल देता है, सुभिक्ष करता है।[3]

ग्रहण द्वारा सूर्य चन्द्र के साथ अन्य ग्रह ग्रस्ति होने का फल-

लक्षण-

सूर्य या चन्द्र के साथ ग्रहण के समय में एक ही राशि में अल्पांशान्तर पर अन्य ग्रह हों तो वे ग्रस्त ग्रह कहे जाते है।

फल-

१- यदि ग्रहण काल में मंगल ग्रस्त हो तो अवन्ती देश में स्थित मनुष्य, कावेरी और नर्मदा नदी के तीर में रहने पाले, गर्वयुत राजाओं को पीड़ित करता है इन सबों को अनेक प्रकार के कष्ट देता है।[4]

१- पश्यन् ग्रस्तं सौम्यो घृतमथुतैलक्षयाय राज्ञां च।
भौमः समरविर्मदं शिखिकोपं तस्करभयं च ।।
शक्रः सस्यविर्मदं नानाक्लेशांश्च जनयति धरित्र्याम्।
रविजः करोत्यवृष्टिं दुर्भिक्षं तस्करभयं च ।। बृ० सं०- ०५/६०-६१

२- यदशुभमवलोकनाभिरुक्तं ग्रहजनितं ग्रहणे प्रमोक्षणे वा।
सुरपतिगुरुणाऽवलोकिते तच्छमुपयाति जलैरिवाग्निरिद्धः।। तदेव- ०५/६२

३- द्रष्टव्य - वृ०सं०- ०५/६२-६६

४- आवन्तिका जनपदाः कावेरीनर्मदातटाश्चयिणाः।
दृष्टाश्च मनुजंपतयः पीडयन्ते क्षितिमुते ग्रस्ते ।। बृ० सं०- ०५/६८

२- यदि बुध ग्रस्त हो तो अन्तर्वेदी (गंगा यमुना के मध्य का देश) सरयू , नेपाल, पूर्वी समुद्र, शोण नद, स्त्री, राजा, योद्धा, बालक, विद्वान् इन सबों का नाश करता है।[1]

३- यदि गुरु ग्रस्त हो पण्डित, राजा, मन्त्री, हस्ती, घोड़ा, सिन्धुनद के तट पर रहने वाले, उत्तर दिशा में रहने वाले, सबों का नाश होता है।[2]

४-यदि शक्र ग्रस्त हो तो दाशरेक, कैकप (कश्मीर),यौध्ये और शिवि देश में स्थित मनुष्य, स्त्री, गण, मन्त्री इन सबों को पीड़ित करता है।[3]

५- यदि शनैश्चर ग्रस्त हो तो मरू भूमि, पुष्कर और सौराष्ट्र देश के निवासी जन, अर्बुद पर्वत पर निवास करने वाले मनुष्य, अन्त्यजन(निकृष्ट जाति के मनुष्य), गोस्वामी, पारियात्र पर्वत पर रहने वाले इन सबोंका नाश करता है अर्थात् अकस्मात् उपद्रव आदि से इनका नाश करता है।[4]

ग्रहण के उपरान्त अन्य उत्पात होने का फल-

१- यदि सूर्य या चन्द्र के ग्रहण समय में वायु उल्कापात, धूलीवर्षण, भूकम्प, अन्धकार और वज्रपात हो तो क्रम से छै-छै मास की वृद्धि करके फिर ग्रहण होता है-

यथा- ग्रहण में वायु प्रकोप हो तो ग्रहण काल के छै मास बाद फिर ग्रहण लगता है, उल्कापात हो तो बारह मास बाद, धूलीवर्षण हो तो अट्ठारह मास बाद, भूकम्प हो तो चौबीस मास बाद, अन्धकार हो तो तीस मास बाद और वज्रपात हो तो छत्तीस मास बाद फिर ग्रहण लगता है।[5]

२- यदि सूर्य या चन्द्र ग्रहण के बाद सात दिन के अन्दर रजोवृष्टि हो तो अन्न का नाश, नीहार हो तो रोग, भूकम्प हो तो प्रधान राजा का मरण, उत्कापात हो तो मन्त्री का नाश, नानावर्ण के मेघ दिखाई दें तो अतिशय भय, मेघ का गर्जन हो तो गर्भ का नाश, विद्युपात हो तो राजा, सर्प सूकर आदि को पीड़ा, परिवेष हो तो रोग और पीड़ा, दिग्दाह हो तो राजभय और अग्नि भय, कठोर प्रचण्ड वायु बहे तो चोर का भय, निर्घात (वायु से वायु

१- अन्तर्वेदीसरयू-नेपालं पूर्वीसागरं शोणम् ।
स्त्रीनृपयोधकुमारान् सह विद्धद्भिर्बुधो हन्ति।। बृ० स०- ०५/६५

२- ग्रहणोपगते जीवे विद्धन्नृपमन्त्रिगजहयध्वंसः।
सिन्धुतटवासिनामप्युदग्दिशं संश्रितानां ।। तदेव- ०५/६६

३- भृगुतनये राहुगते दाशेरककैकयाः सयौधयाः ।
आर्यावर्ताः शिवयः स्त्रीसचिवगणाश्च पीडयन्ते।। तदेव- ०५/६७

४- सौरे मरुभवपुष्करसौराष्ट्रकधातवोऽर्वुदान्त्यजनाः।
गोमन्तपारियाताश्रिताश्च नाश व्रजन्त्याशु।। तदेव- ०५/६८

५- ग्रस्ते क्रमान्निमितः पुनर्ग्रहो मासषट्कपरिवृद्धया।
पवनोल्कापातरजः क्षितिकम्पातमोऽशनिनिपातैः ।। बृ० स०- ५/६३

अभिहत) हो तो दुर्भिक्ष और परराष्ट्र का भय, ग्रहयुद्ध या केतु का दर्शन हो तो राजाओं में युद्ध और निर्मल जल की वर्षा हो तो सुभिक्ष तथा ग्रहण में उत्पन्न अशुभ फलों का नाश होता है।[1]

३- जब वृष राशि में राहु और मंगल हों तो छठे महीने में दुर्भिक्ष होता है।[2]

राहु द्वारा भूकम्पयोग-

१- जब राहु से सप्तम स्थान में मंगल हो, मंगल से पंचम स्थान में बुध हो, बुध से केन्द्र में चन्द्रमा हो तो, भूकम्प योग होता है अर्थात् भूकम्प होता है।[3]

२-जब एक पक्ष में तिथि का क्षय हो और कभी तिथि की वृद्धि हो जाये एवं पूर्णिमा और अमावस्या में चन्द्र वा सूर्य ग्रहण होते हों, तेरह दिन का पक्ष आये और तेरहवें दिन ग्रहण हो तो देश में दुर्भिक्ष, युद्ध और नरसंहार होने के लक्षण होते हैंअर्थात् देश का नाश होता है। इस प्रकार के योग एवं लक्षण महाभारत युद्ध के समय उपस्थित हुए थे।[4]

केतु से सम्बद्ध उत्पात

केतु द्वारा उत्पन्न शुभाशुभ उत्पातों के लक्षण एवं फल-

केतु ग्रह एवं अग्नि शिखा दो प्रकार के अर्थ अमर कोष ने किये हैं। केतु को उत्पात के लक्षण प्रकट करने वाली पताका बता कर सूर्य के साथ सत्ताईस प्रकार के केतु के लक्षण बताये हैं जिनमें से प्रमुख यह हैं-

सूर्यपुत्र केतु, अग्नि पुत्र केतु, भूमि पुत्र केतु, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि और राहु पुत्र केतु एवं वायु, प्रजापति, ब्रह्मा, काल, विदिशा, अस्थि, शस्त्र, कपाल, रौद्र, संवर्त्त, चल, श्वेत, रश्मि, ध्रुव, कुमुद, मणि, भव, पद्म, आवर्त्त, नक्षत्र, धूमकेतु, और

१- द्रष्टव्य - वृ० सं०- ०५/९२-९६

२- वृष राहुर्यदा भौमः षष्टे मासि महद्भयम् ।
भवत्यत्र न सन्देहस्तदा दुर्भिक्षपीडनम्।। ज्यो० - १०/१४३

३- उपप्लवात्सप्तमगो महीजो महीसुतात्पंचमगो यदा बुधः।
बुधाद्विधुः स्या... चतुष्टयस्थितः स चहे भूकम्पनयोगा उक्तः।। तदेव- १०/१५५

४- चर्तुदर्शी पंच दर्शी भूतपूर्वां च षोडशीम्।
इमां तु नाभिजानाभि अमावस्यां त्रयोदशीम् ।।
चन्द्र सूर्यावुभौ ग्रस्तावेकमासे त्रयोदशीम्।
अर्पवणि ग्रहावेतो प्रजाः संक्षपयिष्यतः।। म० भा० भी० - ०३/२८,२९

सहस्रकेतु होते हैं।[1] पताका विशेष, अग्नि पताका जिसमें धूम लगी होती है। उत्पात विशेष, सूर्य प्रभा से उत्सृज, ग्रह भेद उपग्रह।[2]

उपर्युक्त सभी केतु धूमकेतु के समान फल देने वाले हैं तथापि इनका विशेष विचार वीथि, प्रभा और वर्ण आदि के अनुसार करने का उल्लेख मिलता है।[3] लोक में शुभाशुभ फल को घटित करने के लिए एक ही केतु मूलतः दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम तीन प्रकार के केतु के रूप में प्रकट होता है। मूलतः दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम तीन प्रकार के केतु के रूप में प्रकट होता है। ध्वज, शस्त्र, ग्रह, अश्व और हस्ती आदि में केतु रूप जो दिखलायी देते हैं वह अन्तरिक्ष केतु है। नक्षत्र एवं ग्रहों जो केतु दिखाई देते हैं वह दिव्य केतु और इन दोनों के अतिरिक्त अन्य केतु भौम केतु कहे जाते हैं।[4]

धूमकेतु लक्षण-

विपरीत रूप, अशुभकारी, इन्द्रधनुष कारी, ह्रस्वतनु दो, तीन या अतिरिक्त शिखा वाला पापकारी और अनेक प्रकार का होता है। ऋग्वेद में केतु, धूमकेतु, अग्निकेतु,

---

१. केतुः –"केतुर्ना रूक्तपता विग्रहोत्पातेषु लक्ष्मणि।
शखी।"शिखी वही बली वर्दे शरे केतु ग्रहे द्रुमे।
मयूरे कुक्करे चाश्वे, शिखावत्यन्यलिङ्गकः"। इति स्वामी। द्वे केतोः।।
सूरसूर्यार्यामदित्यद्वादशात्मदिवाकराः। भारकराहस्करब्रध्नप्रभाकरविभाकराः।। २८
भास्वद्विवस्वत्सप्ताश्वहरिदश्वोष्णरश्मयः। विकर्तनार्कमार्तण्डमिहिरारूणापूषणः।। २९
द्युमणिस्तरणिर्मित्रश्चित्रभानुर्विरोचनः। विभावसुर्ग्रहपतिस्त्विषांपतिरहर्पतिः।। ३०
भानुर्हसः सहस्रांशुरतपनः सविता रविः।. अमरकोष – ०१/०३/३१

२. धूमकेतुः पुं० (धूमः केतुच्चिहं यस्य अग्निः) प्रभां समुत्सृजेदर्को धूमकेतुस्तथो भताम्"।।
उत्पातविशेषः स धूमाभा तारका। इत्यमर भरतौ -- अमर कोष

क. द्रष्टव्य – बृहत्संहिता – केतु अध्याय

ख.. शतमेकाधिकमेके सहस्रमपरे वदन्तिकेतुनाम्।
बहुरूपमेकमेव प्राह मुनिर्नारदकेतुम्।। शब्दकल्पद्रुम :

३. एते च केतवः सर्वे धूमकेतुसमं फलम्।
विचार्य विथिभिश्चापि प्रभाभिश्च विशेषतः।। भद्रबाहु सं० – २१/२१

४. द्रष्टव्य – भद्रबाहु सं० – २१/५३, पृ० – ३७३
दिव्यान्तरीक्षभौमस्य एकः केतुः प्रकीर्त्तितः।
शुभाशुभफलं लोके ददात्यस्तमयोदये।। 'युक्तिकल्पतरौ'

सहस्रकेतु का वर्णन आया है जैसे सहस्र केतु, अग्नि केतु-[1]

क. 'आ वां रथं पुरुमायं मनोजुवं जीराश्वं यज्ञियं जीवसे हुवे।
सहस्र केतुं वनिनं शतद्वसुं श्रुष्टिवानं वारि वोधामभि प्रयः।।'

ऋग्वेद - ०१/११९/०१

ख. अग्ने केतुर्विशामसिः प्रेष्ठः श्रेष्ठ उपस्थसत्। बोधा स्तोत्रे वयो दधत्।।

ऋग्वेद - १०/१५६/०५

ऋग्वेद में केतु को प्रकाश रूप सूर्य की किरण समूह[2] अज्ञान रूपी अन्धकार, दरिद्रता निवारक[3] विज्ञान अद्भुत आश्चर्य रूप श्रेष्ठ बुद्धि और रोग निवारक वाला बताया है।[4] धूमकेतु को सूर्य किरणों के समूह से निर्मित धूम में व्याप्त भौतिक अग्नि को बताया है।[5] गुणों के योग सब वस्तुओं में व्याप्त होने वाली अद्भुत अग्नि को भी धूमकेतु कहा है।[6] धूमकेतु का पुष्य नक्षत्र पर आक्रमण करने को अति भयंकर माना जाता है और महाभारत के युद्ध समय में धूमकेतु के दिखाई देने एवं भयंकर उत्पात प्रकट का वर्णन मिलता है।[7]

---

१. "उक्तविपरीतरूपो न शंभकरो धूमकेतुश्चतूपन्नः। इन्द्रायुधानुकारी विशेषतो द्वित्रिचूलो वा।।" ह्रस्वतनुः प्रसंन्न इत्यास्मादुक्तात् योविपरीतो विशेषतः शुक्रचापरूपकेतुरूत्पन्नः स धूमकेतुः स च न शुभकरः पापं करोतीत्यर्थः इन्द्रधनुः सदृशो न शुभकर एव तथा द्विशिखस्त्रिशिश्च विशेषतः पापफलदः तथा च समय संहितायाम्।

पुच्छदेशे यदावर्त्तो वाजिनः संप्रदृश्यते। धूमकेतुरिति ख्यातः स त्याज्यो दूरतो नृपैः।।
"पृष्टवंशे यदा वर्त्त एकः संपरिलक्ष्यते। धूमकेतुरिति व्यातः स त्याज्यो दूरतो नृपैः।।
'युक्तिकल्पतरौ'

२. "उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। .शे विश्वाय सूर्यम्"।। ऋग्वेद -०१/५०/०१

क.. केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशोमर्य्या अपेशसे। समुषाद्भरजायधाः।। ऋग्वेद - ०१/०६/०१

३. आदित्या रूद्रा वसवः सुनीधा द्यावाक्षामा पृथिवी अन्तरिक्षम्।
सजोषसो यज्ञमवन्तु देवा ऊर्ध्वं कृण्वन्त्वध्वरस्य केतुम्।। ऋग्वेद - ०३/०८/०२

४ अधा हि काव्या युवं दक्षस्य पूर्भिरद्भुता। नि केतुना जनानां चिकेथे पूतदक्षसा।। ऋग्वेद- ५/६६/४

५. स रेवाँ इव विश्पतिर्दैव्यः केतुः शृणोतु नः। उक्थैरग्निर्बृहद्भानुः।। ऋग्वेद- ०१/२७/१२
देवो देवान्परिभूर्ऋतेन वहा नो हव्यं प्रथमश्चिकित्वान्।
धूमकेतुः समिधा भाऋजीको मन्द्रो होता नित्यो वाचा यजीयान्।। ऋग्वेद- १०/१२/०२

६. धूमः केतुर्ध्वजावद्यस्मिन्रथे तेन अग्ने" 'धूमकेतुनाग्ने'।
धूमकेतुना रथने सर्वान् व्यवहारानिन्वसि व्याप्नोति व्याप्नोति वा"
यद्युवधा अरुणा रोहिता रथेवातजूता वृषभस्येव ते रवः।
आदिन्वसि वनिनो धूमकेतुनाग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।। ऋग्वेद - ०१/९४/१०

७. धूमकेतुर्महाघोरः पुष्य चाक्रम्य तिष्ठिति। सेनयोन शिवं घोरं करिष्यति महाग्रहः।।
म० भा० - भीष्म पर्व - ०२/१३

अग्निकेतु का ज्येष्ठा नक्षत्र में स्थित होने एवं इस से भयंकर उत्पात होना बताया गया है।[1] कुमारसम्भवम् में धूमकेतु के उदय होने से लोकों का नाश अर्थात् संसार की प्रजा एवं देशों में अशान्ति, रोग, व्याधियाँ, युद्ध एवं अनेक प्रकार के उपद्रव होने का वर्णन मिलता है।[2]

इस प्रकार से अनेक ऐतिहासिक घटनाओं के समय उदित हुए धूमकेतु का वर्णन पुराणों, काव्यग्रन्थों आदि में मिलता है जिन में से कुछ धूमकेतु के स्वरूप, लक्षण, फल एवं उदय काल का वर्णन आगे प्रस्तुत है।

१. जिस दिशा को केतु अग्निमयी किरणों के द्वारा धूमित करते हैं और जलाते हैं वह दिशा क्षुधा, रोगादि के द्वारा अत्यन्त पीड़ित होती है। यदि केतु किसी नक्षत्र या ग्रह को अभिधूमित करे तो शस्त्र में आजीविका करने वाले एवं स्थावरों की हिंसा होती है।[3]

२. धूमकेतु के उत्पात चिन्ह प्राचीनकाल से प्रसिद्ध है। इसके प्रसिद्धि मूल में धूमकेतु का आकाश में विरले अर्थात् कभी-कभी आकाश में दर्शन देना। मानव के शतवर्ष की आयु जीवन में लगभग दश बार नेत्रदृष्टि से धूमकेतु का दर्शन सम्भव हो सकता है। परन्तु आजकल धूमकेतु की कोई रहस्यपूर्ण शक्ति नहीं मानते और दूरबीन आदि यन्त्रों के द्वारा उसके दर्शन सुलभ हैं। अचानक नक्षत्र देखने के लिए सायंकाल में आकाश के पश्चिम भाग में, सूर्योदय के पूर्व भाग में कभी-कभी देखे जाते हैं। प्रतिवर्ष पच केतु दिखाई देते हैं और कभी-कभी तीन या चार भी दिखाई देते हैं।[4] सभी केतु एकरूप से दिखाई देते हैं, यह सजातीय होते हैं। जो भिन्न होते हैं उन में स्पष्ट भेद देखा जाता है। इसके दो मार्ग होते हैं- १. दीर्घ वृत्ताकार २. परवलयाकार।

---

१. श्वेतो ग्रहः प्रज्वलितः सधूम इव पावकः।
ऐन्द्रं तेजस्वि नक्षत्रं ज्येष्ठामाक्रम्य तिष्ठिति।। तदेव - भीष्म पर्व - ०३/१५

२. "धूमकेतुरूत्पातविशेष इव लोकानामुपप्लवायोपद्रवयोत्थितः उत्पन्न।"
भवल्लब्धवरोहिर्णस्तारकाख्योमहासुरः।
उपप्लवाप लोकानां धूमकेतुनिवोत्थित्।। कुमार सम्भवम् - ०२/३२

३. यां दिशं केतवोऽर्चिभिधूर्मयन्ति दहन्ति च।
तां दिशं पीडयन्त्येते क्षुधाद्यैः पीडनैभृशम्।।
नक्षत्रं यदि वा केतुर्ग्रहं वाऽप्यथ धूमयेत्।
ततः शस्त्रोपजीनां स्थावरं हिंसते ग्रहः।। भद्रबाहु सं० - २१/२२-२३

४. धूमकेतव उत्पातचिह्नानीति प्रचीनानां प्रसिद्धिः। अस्याः प्रसिद्धेर्मूलं तेणां विरलागमनमेव, यतो विरलदर्शनेषु प्रायेण रहस्पूर्णशक्तिमत्ता मन्यते। वस्तुतः प्रकाशमानानां चाक्षुष धूमकेतुनां दर्शनं विरलमेव। मानवस्य शतवर्षायुष्के जीवने दशाधिकानां नैत्र दृष्ट धूमकेतूनां दर्शनं प्रयोऽसम्भवम्। परमधुना धूमकेतु न कापि रहस्यपूर्णा शक्तिर्मन्यते, यतो दूरदर्शकयन्त्रेण तेषां दर्शनानि सुलभान्येव। आकस्मोदव नक्षत्रावलोकनकार्ये सायंकाल आकाशस्य पश्चिम भागे, सूर्योदय आकाशस्य पूर्वभागे ते काले काले दृष्टि पथमवतरन्ति। प्रतिवर्ष पञ्चकेतव अलोक्यन्ते। एषां त्रयश्चत्वारो वा नूतना धूमकेतवः, शेषाः पुनरागताः पूर्वपरिचिताश्चा।। अर्वाचीनंज्योतिर्विज्ञानम्- अध्याय- ०६/०१/०६

१. दीर्घ वृत्ताकार नियमित होता है। २. परवलयाकार धूमकेतु अनियमित होता है।[1] दीर्घवृत्ताकार धूमकेतु सूर्य के चारों ओर दीर्घ वृत्त में भ्रमण करता है। दीर्घवृत्त धूमकेतु की एक नाभि सूर्य में रहती है। मार्ग दीर्घवृत्ताकार करके धूमकेतु बार-बार सूर्य के पास आता है। उस का भगण काल उदय भी ग्रह भगण काल के सादृष नियमित होता है। परिक्रमा ग्रह की भान्ति पश्चिम से पूर्व जाता है।[2]

परवलयाकार मार्ग से जो धूमकेतु भ्रमण करते हैं उनकी परवलयकार मार्ग की भी एक नाभि सूर्य में रहती है परन्तु परवलकी दो शाख अनन्त स्थान की ओर जाती है दोबारा नहीं आती। यह धूमकेतु एकबार सौरमण्डल में अतिथि के रूप में आते हैं और दोबारा नहीं आते। इस का मार्ग पूर्व से पश्चिम भ्रमण करता है और अर्धमार्ग से पश्चिम से पूर्व भ्रमण करते हैं।[3]

धूमकेतु का स्वरूप- धूमकेतु के तीन प्रमुख अंग होते हैं- १. शिर, २. नाभि ३. पुच्छ।

पुच्छ धूमकेतु का महत्त्वपूर्ण अङ्ग है। सभी धूमकेतु का शिर अवश्य होता है। न्यूनाधिक आकार में होते हैं। यह मेघ के सदृश धूमिल और महापरिमाण के होते हैं। इन का व्यास कभी भी १५,००० क्रोश के आधे से अल्प नहीं होता। इस का आकार गोल और ५०० कोस से अधिक और ६०० कोस से कम होता है। धूमकेतु की कभी एक नाभि और कभी दो नाभियाँ होती हैं। इसकी पूच्छ प्रधानाग होता है। धूमकेतु जैसे-जैसे सूर्य के समीप जाता है वैसे-वैसे उसकी पूच्छ दीर्घ से दीर्घ होती जाती है। पहला धूमकेतु १८२२ में एकवर्गीय धूमकेतु दृश्य हुआ था। यह सूर्य के अतिसमीप से गया था।[4]

---

१. सर्वे धूमकेतव एकरूपेण दृश्यन्ते। न.श्यते तेषांकिमपि स्पष्टं प्रत्यक्षं भेदकम् येन ते सजतीयेष्वभिज्ञाता भवेयुः। परिक्रमणामार्गका धूमकेतवो नियमिता आख्यायन्ते, परवलयाकार मार्गकाश्चायिमिताः।।

अर्वाचीन ज्येतिर्विज्ञानम् - ०६/८/११

२. दीर्घवृत्ताकारमार्गका धूमकेतवः सूर्य परितो दीर्घ वृत्तेण भ्रमन्ति। दीर्घवृत्तानामेकस्मिन्नाभौसूर्यस्तिष्ठति। मार्गस्य दीर्घवृत्ताकारत्वात्ते धूमकेतवः पुनः पुनः सूर्यं प्रत्यागच्छन्ति, तेषां भगणकालादयो ऽपिग्रहभगणकालादिवन्नियमिताः। न कस्यापि धूमकेतोर्भगणकालः शतवर्षाधिकः परिक्रमणे ते ग्रहवत् पश्चिमतः पूर्वं गच्छन्ति।। अर्वाचीनं ज्योति विज्ञानं - ०८/८/११

३. परवलयाकारमार्गेण ये धूमकेतवो भ्रमन्ति तेषां परवलयाकारमार्गस्याप्ये कस्मिन्नाभौ सूर्यस्तिष्ठति। परं यथा परवलयस्य द्वे शाखे अनन्तस्थानंप्रति सर्वदा गच्छतः न च कदापि परिवर्तते, तथा धूमकेतव एत एकदासौरमण्डलेऽतिथिरूपेणगच्छन्ति, पुनश्च न दृश्यन्ते। एषामर्धाः पूर्वतः पश्चिमं भ्रमन्ति, अर्धाश्च पश्चिम भ्रमन्ति, अर्धाश्च पश्चिमतः पूर्वं भ्रमन्ति।। तदेव- ०८/८/११

४. धूमकेतोः त्रीणि प्रमुखाङ्कानि- १. शीर्षम् २. नाभिः, ३. पुच्छच। अत्र पुच्छमस्य महत्तममङ्गम्।। सर्वेषां धूमकेतूनां शीर्षमवश्यं विद्यते। तन्नूनाधिकं वृत्तकारम् इदं मेघसदृशं पर्याप्तं धूमिलं महापरिमाणकञ्च। अस्य व्यासो न कदापि १५,००० क्रोशार्धाल्पः।। अस्याकारश्च गोलः परिमाणञ्चाल्पं ५००-६०० क्रोशार्धामितकम्। धूमकेतोः क्वचिद् द्वे नाभि, क्वचिदेका नाभिः, क्वचिदेकापि न। तृतीयमङ्ग पुक्षछस्य प्रधानामङ्गम्।। यथा यथा सूर्यस्य समीपं धूमकेतुर्गच्छति तथा तथा पुच्छं दीर्घं दीर्घतरञ्च भवति। १८२२ प्रथम धूमकेतव एकवर्गीया कथ्यन्ते।। अर्वाचीनं ज्योतिर्विज्ञान् - ०८/८.१२

सितम्बर मास १८८२ को द्वितीय अद्भुत धूमकेतु था। वह दिन में देखा गया था। वह सूर्य के मध्य से सूर्य पृष्ठ के ३,००,००० कोस दूर अन्तर तक प्रतिहोर कोटिकोस गया था। इस की दो नाभियाँ थीं। इस का परिक्रमण काल क्रमशः ६६४, ७६६, ८७५, ६५६ वर्ष होता है। २५ शतक से २८ शतक पर्यन्त पुनः एक बाद दिखाई देता है।[1]

सर्वप्रथम न्यूटन के मित्र हालि महोदय ने १६८२ में धूमकेतु के कक्षा वृत्ता की गणना की, उन का मान- ७५ वर्ष का मिला।[2] शवासमन- वाश्मन धूमकेतुः - १६२५ में द्वितीय धूमकेतु और १६२७ में धूमकेतु जैसा ग्रह भ्रमण करता देखा गया। १६३४ में चार दिनों के अन्तर में सूर्य मण्डल में सौ ग्रहण देखे गये थे।[3]

बिएला- धूमकेतु सर्वप्रथम बिएला महोदय ने धूमकेतु के परिक्रमणकाल की गणना ६१/२ वर्ष निश्चित की इनके अनुसार १८४६ जो देखा गया वह दूसरा था। उसके दो भाग पृथक्- २ भ्रमण करते देखे गये।

१८५२ में दो भागों में धूमकेतु दृष्ट हुआ। १८५३ से १८६६ तक महा प्रयत्न के साथ देखे गये। परन्तु १८७२ ई० में गणना के अनुसार २७ नवम्बर को पृथ्वी पर एक उल्का का पतन हुआ। इससे ऐसा लग रहा था जैसे धूमकेतु छिन्न-भिन्न होकर उल्का पुञ्ज हुआ हो। इससे यह प्रतीत होता है कि धूमकेतु यदा कदा विनाशकारी भी होते हैं।[4]

---

१. १८८७ द्वितीय-धूमकेतुरद्भुत आसीत्। स दिवाप्यदृश्यत। ससूर्यप्रभामण्डलमध्यात् सूर्यपृष्ठस्य ३,००,००० क्रोशार्धद्वरत्वान्तरे प्रति होरं कोटि क्रोशार्धगत्या निरगच्छत्। सूर्यस्यातिसामीप्यातस्य नाभिश्चतुर्थाभवत्। तेषां परिक्रमणकालः क्रमशः ६६४ वर्षाणि, ७६६ वर्षाणि, ८७५ वर्षाणि, ६५६ वर्षाणि चास्ति, अत एव ते २५- तमशतकात् प्रारभ्य २८तमशकतकपर्यन्तं पुनरेकबारं .श्यन्ते।।
अर्वाचीनं ज्योतिर्विज्ञान् - ०८/८.१२

२. सर्वप्रथमं न्यूटन महोदयेस्यतस्य मित्रेण हालि महोदेन १६८२ तमे खिस्ताब्दे तत्कालदर्शनागत धूमकेतोः कक्षावृत्ततत्त्वानि गणयित्वा, तस्य परिक्रमणकालस्य मानं ७५ वर्षाणि लब्धम्।।
अर्वाचीनं ज्योतिर्विज्ञान् - ०८/८.१२

३. श्वासमन - वाश्मन - धूमकेतुः (१६२५- द्वितीय- धूमकेतुः) १६२७- तमू खिस्ताब्दे लब्धो धूमकेतुर्ग्रहवत् भ्रमति। १६३४ तमे खिस्ताब्दे चतुर्दिवसान्तरे तस्य भास्वरत्वमकस्मात् शतगुणितम-भवत्।।
अर्वाचीनं ज्योतिर्विज्ञानं - ०८/८.१८

४. सर्वप्रथमं १८२६ तमे खिस्ताब्दे 'बिएला' महोदयेन गणनायांस्य परिक्रमणकालः ६१/२ वषमितो निश्चितः। यदायं केतुः १८४६ तमे खिस्ताब्दे दृष्टस्तर्हि स द्विधा दृष्टः। तस्य द्वौ भागौ पृथक पृथक भ्रमन्तौ दृष्टौ। १८५२ तमे खिस्ताब्दे च महाप्रत्नैरत्येतयोर्दर्शनं नाभवत। परन्तु १६७२- तमे खिस्ताब्दे गणनागतदर्शनकाले २७- नवम्बरे प्रथिव्या उपसंख्या उल्का अपतन्। एवं प्रतीपते यह धूमकेतुः छिन्नभिन्ने भूत्वा त्युल्क पुञ्जोऽभवत्। एवं धूमकेतवो यदा कदा विनाशं गच्छन्ति।।
अ० ज्यो०- ०८/८-१८

१- खद्योत, पिशाचालय (यक्ष का स्थान), मणि (चन्द्रकान्त इत्यादि), रत्न (मरकत इत्यादि) कांच आदि इन को छोड़ कर अग्नि से भिन्न जिस किसी स्थान में अग्नि के समान रूप देखने में आवे वहाँ केतु का रूप समझना चाहिये।[1]

२- अन्य ग्रहों की भान्ति केतु ग्रह अपना शुभाशुभ प्रभाव भूमण्डल पर डालता है। अपने वर्ण, उदय- अस्त, मुख आदि के अनुसार फल देता है। केतु के भेद तीन प्रकार के होते हैं- दिव्य, आन्तरिक्ष, और भौम।

३- ध्वज, शस्त्र, ग्रह, वृक्ष, घोड़ा, हाथी आदि की आकृति में जिस केतु का दर्शन हो तो वह आन्तरिक्ष केतु कहलाता है। पृथ्वी पर प्रकट होने वाला **'भौमकेतु'** एवं ग्रहों और नक्षत्रों में प्रकट होने वाले **'दिव्यकेतु'** कहलाते हैं।[2]

केतु उत्पात के शुभाशुभ लक्षण-

यदि छोटा, पतला, निर्मल, स्निग्ध, सरल, थोड़े ही दिनों में अदृश्य, श्वेत और उदय काल में वृष्टि हो तो वह केतु सुभिक्ष और सुख देने वाला होता है। इन लक्षणों से भिन्न लक्षण वाले केतु अशुभ फल देने वाले होते हैं, इन्द्रधनु के समान दो या तीन शिखा वाले केतु विशेष कर अशुभ फल देने वाले होते हैं।[3]

केतु को भिन्न-२ प्रकार का कहा गया है। भिन्न-भिन्न दिशाओं में दृश्य होने वाले केतु भिन्न-२ देवताओं एवं ग्रहों के पुत्र कहे गये हैं।

सूर्यपुत्र केतु के लक्षण एवं फल-

पूर्व और पश्चिम में मुक्ताहार, मणि और सुवर्ण के समान वर्ण वाले शिखा सहित उदय होने वाले पच्चीस प्रकार के केतु सूर्यपुत्र कहे गये है। इन केतुओं में से एक का दर्शन भी हो तो राजाओं में परस्पर द्वेष उत्पन्न होता है एवं अशान्ति फैलती है।[4]

अग्निपुत्र केतु के लक्षण-

तोता, अग्नि, बन्धुजीवक (काला पुष्प) लाख या रक्त के समानवर्ण वाले अग्नि के पुत्र पच्चीस प्रकार के केतु हैं। ये अग्नि कोण में दृश्य होते हैं।

यमपुत्र केतु के लक्षण-

कुटिल शिखा वाले, रुक्ष और काले यम के पुत्र पच्चीस प्रकार के केतु हैं। ये दक्षिण दिशा में उदित होते हैं।

१- अहुताशेऽनलरूपं यस्मिंस्तत्केतुरूपमेवोक्तम्।
खद्योतंपिशाचालयमणिरत्नादीन् परित्यज्य ।। बृ० सं०-११/०३

२- ध्वजशस्त्रभवनतरूतुरगकुंचराद्येष्वथान्तरिक्षास्ते।
दिव्या नक्षत्रस्तथा भौमाः स्युरतोऽन्यथा शिखिनः।। तदेव- ११/०४

३- ह्रस्वस्तनुः प्रसन्नः स्निग्धस्त्वृजुरचिरसंस्थितः शुक्लः।
उदितोऽथवाऽभिवृष्टः सुभिक्षसौख्यावहः केतुः।।
उक्तविपरीतरूपो न शुभकरो धूमकेतुरुत्पन्नः।
इन्द्रायुधानुकारी विशेषतो द्वित्रिचूलो वा।। तदेव- ११/०८-०६

४- हारमणिहेमरूपाः किरणाख्याः पञ्चविंशतिः सशिखाः।
प्रागपरदिशोर्दृश्या नृपतिविरोधावहा रविजाः।। तदेव - ११/१०

भूमिपुत्र केतु के लक्षण-

ईशान कोण में बाईस प्रकार के केतु, वृत्ताकार, दर्पण के समान, शिखा रहित, किरणों से युक्त, जल और तेल के समान दिखाई देने वाले केतु (भूमिपुत्र) कहलाते हैं।

चन्द्रपुत्र केतु-

उत्तर दिशा में उदित, चन्द्रकिरण, चाँदी, हिम (बर्फ) कुमुद या कुन्दपुष्प के समान वर्ण वाले तीन प्रकार के 'चन्द्रपुत्र' केतु होते हैं।

ब्रह्मदण्डसंज्ञक केतु-

ब्रह्मा का पुत्र, तीन शिखा वाला, तीन वर्णों से युक्त एक केतु होता है। यह सब दिशाओं में उदय होता है।

फल- उपर्युक्त(१०१) एक सौ एक केतु का उदय जिस देश में होता है उस देश में राजाओं में परस्पर द्वेष, अग्नि भय, पृथ्वी पर मरी पड़ती है, दुर्भिक्ष और सब प्रदेशों का नाश होता है अर्थात् अकस्मात् घटनाओं से देश की हानि होती है। केवल चन्द्रपुत्र केतु के उदय होने से सुभिक्ष होता है।[1]

८९९वे प्रकार के केतु-

उत्तर और ईशान कोण में उदित, विस्तीर्ण, शुक्ल और निर्मल शरीर वाले चौरासी प्रकार के केतु शुक्र पुत्र होते हैं।[2]

शनिपुत्र केतु- निर्मल, कान्ति से युक्त, दो शिखा वाले शनैश्चर के पुत्र साठ(६०) प्रकार के केतु हैं ये कनक संज्ञक और सब दिशाओं में उदित होते हैं।

गुरुपुत्र केतु- दक्षिणदिशा में उदित विकचसंज्ञक, श्वेत, एक तारे वाले, शिखा रहित, निर्मल शरीर वाले पैंसठ(६५) प्रकार गुरुपुत्र केतु होते हैं।

बुधपुत्रकेतु- पचास अस्पष्ट सूक्ष्मशरीर वाले, लम्बे, श्वेत सब दिशाओं में उदित होने वाले बुधके पुत्र केतु हैं।

मंगलपुत्र केतु- रक्तया अग्नि के समान कान्ति वाले, तीन शिखा और तीन तारे वाले साठ प्रकार के मंगल पुत्र केतु हैं।

१- शुकदहनबन्धुजीवकलाक्षाक्षतजोपमा हुताशसुताः। आग्नेय्यां .श्यन्ते तावन्तस्तेऽपि शिखिं भयदाः।।
वक्रशिषा मृत्युसता रूक्षाः कृष्णाश्चं तेऽपि तावन्तः। दृश्यन्ते याम्यायां जनमरकावेंदिनस्ते च।।
दर्पणवृत्ताकारा विशिखाः किरणान्विता धरातनयाः। क्षुद्रयदा द्वाविंशतिरैशान्यामाम्बुतैलनिभाः।।
शशिकिरणरजतहिमकुमुदकुन्दकुसुमोपमाः सुताः शशिनः। उत्तरतो दृश्यन्ते त्रयः सुभिक्षावहाः शिखिनः।।
ब्रह्मसुत एक एक त्रिशिखो वर्णैस्त्रिभिर्युगान्तकरः। अनियतदिक्सम्प्रभवो विज्ञेयो ब्रह्मदण्डाख्यः।।
बृ०सं०- ११/११-१५

२- शतभिहितमेकसमेतमेतदेकेन विरहितान्यस्यात्। कथयिष्ये केतूनां शतानि नव लक्षणैः स्पष्टेः।।
सौम्येशान्योरूदयं शुक्रसुता यान्ति चतुरशत्याख्याः। विपुलसिततारकास्ते स्निग्धाश्च भवन्ति तीव्रफलाः।।
तदेव-११/१६-१७

राहुपुत्र केतु- कीलक संज्ञक तैंतीस प्रकार के केतु हैं। ये सूर्य और चन्द्र मण्डल में दिखाई देते हैं।

अग्नि पुत्र केतु- एक सौ बीस प्रकार के अतिशयजाज्वल्यमान मूर्तिवाले अग्नि पुत्र केतु ये विश्वरूप संज्ञक और बड़ा भयंकर अग्नि भय देने वाले होते हैं। वायुपुत्र केतु- ७० प्रकार के वायु पुत्र केतु श्यामवर्ण लेकर लोहित वर्ण, ताराओं से रहित, चामर के समान, विस्तृत किरण और रूक्ष वायुपुत्र केतु अरुणसंज्ञक होते हैं।

प्रजापति पुत्र केतु- आठ प्रकार के तारापुंज के समान 'गणकसंज्ञक' प्रजापति पुत्र केतु होते हैं। यह सब दिशाओं में उदित होते हैं।

ब्रह्मापुत्र केतु- एक सौ चार चतुर्भुजाकार 'चतुरसंज्ञक' ब्रह्मा के पुत्र केतु हैं। यह सर्व दिशाओं में उदित होते हैं।

वरुण पुत्र केतु- बत्तीस प्रकार के वंश और गुल्म (लता) के समान आकृति वालें कंकसंज्ञक और चन्द्र के समान कान्ति वाले वरुण पुत्र केतु हैं।

काल पुत्र केतु- छियानबे प्रकार के कवन्ध संज्ञक, छिन्न शिर वाले पुरुष के समान आकृति वाले, अस्पष्ट तार वाले और सब दिशाओं में उदित होने वाले काल पुत्र केतु कहे हैं।

वदिशा पुत्र केतु- नव प्रकार के श्वेत वर्ण विस्तृत और एक तारा वाले विदिशा के पुत्र केतु हैं। यह विदिशा में उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार सहस्र केतु कहे जाते हैं।

फल- जिस देशमें इन केतुओं का उदय होता है अर्थात् दिखाई देते हों, उस देश में अत्याचार, पाप, अकस्मात्, दुर्घटना, संकट, भय, अग्नि भय, मृत्यु रोग, शस्त्र युद्ध, दुर्भिक्ष आदि अनेक प्रकार के संकटों का सामना करना पड़ता है।[1]

१- स्निग्धाः प्रभासमेता द्विशिखाः षष्टिः शनैश्चराङ्गरूहाः। अतिकष्टफला दृश्याः सर्वत्रैते कनकसंज्ञाः।।
विकचा नामि गुरुसुताः सितैकताराः शिखापरित्यक्ताः। षष्टिः पचभिरधिका स्निग्धा याम्याश्रिताः पापाः।।
बृ० सं० - ११/१८-१९

क. नातिव्यक्ताः सूक्ष्मा दीर्घाः शुक्ला यथेष्टदिक्प्रभवाः। बुधजारतस्करसंज्ञा पापफलास्त्वेकपंचाशत्।।
क्षतजानलानुरूपास्त्रिचूलताराः कुजात्मजाः षष्टिः। नाम्ना च कौङ्कुमास्ते सौम्याशासंस्थिताः पापाः।।
तदेव- ११/२०-२१

ख. त्रिंशत्त्र्यधिका राहोस्ते तिामसकीलका इति ख्याताः। रविशशिगा दृश्यन्ते तेषां फलमर्कचारोक्तम्।।
विशंत्याधिकमन्यच्छतमग्नेर्विश्वरूपसंज्ञानाम्। तीव्रानलभयदानां ज्वालामालाकुलतननूनाम्।।
तदेव - ११/२२-२३

ग. श्यामारूणा वितारश्चामररूपा विकीर्णदीधितयः। अरुणाख्या वायोः सप्तसप्ततिः पापदाः परुषाः।।
तारापुंजनिकाशा गणका नाम प्रजापतेरष्टौ। द्वे च शते चतुरधिके चतुरस्ना ब्रह्मसन्तानाः।।
तदेव - ११/२४-२५

घ. कङ्का नाम वरुणजा द्वात्रिंशद्वंशगुल्मसंस्थानाः। शशिवत्प्रभासमेतास्तीव्रफलाः केतवः प्रोक्ताः।।
षण्णवतिः कालसुताः कबन्धसंज्ञा कबन्धसंस्थानाः। पुण्ड्रा भयप्रदाः स्युर्विरूपताराश्च ते शिखिनः।।
शुक्ल विपुलैकतारा नव विदिशां केतवः समुत्पन्नाः। एवं केतुसहस्रं विशेषमेषामतो वक्ष्ये।।
तदेव - ११/२६-२८

विशेष प्रकार के केतुओं का लक्षण एवं फल-

वसा केतु- उत्तरदिशा में विस्तृत, स्थूल, निर्मल पश्चिम दिशा में उदित होने वाला 'वसानामक' केतु है। इस के उदय से पृथ्वी पर मरी पड़ती है तथा उत्तम सुभिक्ष होता है।

अस्थि केतु- उत्तर दिशा में विस्तृत, स्थूल, निर्मल और रूक्ष अस्थि केतु होता है। यह दुर्भिक्ष करने वाला होता है।

शस्त्रकेतु- उत्तर दिशा में विस्तृत, निर्मल और पूर्वदिशा में उदित होने वाला 'शस्त्रकेतु' होता है। यह शस्त्र युद्ध कराने वाला और मनुष्यों को मारने वाला होता है।

कपाल केतु- धूम्र वर्ण की किरणों वाला, अमावस्या में पूर्व दिशा में उदित होने वाला और आकाश के अर्द्ध भाग में विचरण करने वाला कपाल केतु होता है। इस के दिखाई देने से पृथ्वी पर दुर्भिक्ष, मरी, अवृष्टि और रोग उत्पन्न होता है।

रौद्र केतु- पूर्व और अग्निकोण में उदित होने वाला शूलाग्र (तीन शिखा वाला) कापिश, रूक्ष या ताम्र के समान किरण वाला और आकाश के तीन भागमें गमन करने वाला रौद्रकेतु है। इस के उदय होने से पृथ्वी पर दुर्भिक्ष, मृत्यु, रोग और अनावृष्टि होती है।[1]

संवर्त्तकेतु- पश्चिम दिशा में सन्ध्याकाल में आकाश के तीसरे भाग तक जाकर दिखाई देने वाला धूम्र या ताम्र वर्ण की तीन शिखा वाला संवर्त्तकेतु है। यह जितने क्षण तक दिखाई देता है उतने वर्ष तक युद्ध के द्वारा राजाओं का नाश करता है तथा उदय कालिक नक्षत्र को पीड़ित करता है।[2]

चलकेतु- पश्चिम दिशा में उदित होने वाला, दक्षिण दिशा में एक अंगुल उच्छ्रित अर्थात् ऊंची शिखा वाला, जैसे-२ उत्तर की ओर जाय वैसे-वैसे दीर्घ होने वाला, सप्तर्षि, ध्रुवतारा और अभिजित नक्षत्र को स्पर्श कर के लौटने वाला और आकाश के अर्द्ध-भाग में जाकर दक्षिण दिशा में अस्त होने वाला चलनामक केतु होता है। इस के उदय होने से प्रयाग से लेकर अवन्ती तक के देश, पुष्करारण्य नामक स्थान और उत्तर दिशा में देविका नदी तक के देश का नाश करता है। मध्य देश में विशेष कर नाश होता है। अन्य देशों में रोग और दुर्भिक्ष के द्वारा नाश होता है। दर्शन काल से इस का फल दश मास तक होता है।

१- उदगायतो महान् स्निग्धमूर्तिरपरोदयी वसाकेतुः। सद्यः करोति मरकं सुभिक्षमप्युत्तमं कुरुते।।
तल्लक्षणोऽस्थिकेतुः स तु रूक्षः क्षुद्भयावहः प्रोक्तः। स्निग्धस्ताहक्प्राच्यां शस्त्राख्यो डमरमरकाय।।
दृश्योऽमावासयायां कपालकेतुः सधूम्ररश्मिशिखः। प्राग्नभसोऽर्द्धविचारी क्षुन्मरकावृष्टिरोगकरः।।
प्राग्वैश्वानरमार्गे शूलाग्रः श्यावरूक्षताम्रार्चिः। नभसस्त्रिभागगामी रौद्र इति कपालतुल्यफलः।।
बृ० सं०- ११/२६-३२

२- पश्चात् सन्ध्याकाले संवर्त्तो नाम धूम्रताम्रशिखः। आक्रम्य वियत्त्र्यंशं शूलाग्रावस्थितो रौद्रः।।
यावत एव मुहूर्त्तान् .श्यो वर्षाणि हन्ति तावन्ति। भूपान शस्त्रनिपातैरुद्र रूद्रयर्क्षं चापि पीडयति।।
तदेव- ११/५१-५२

श्वेत केतु- श्वेत नामक केतु जटा के सदृश, रूक्ष, कपिश और आकाश के तीन भाग तक जा कर बायीं तरफ से हो कर लौट आता है। इस के उदय से तृतीयांश प्रजा अर्थात् तृतीय भाग प्रजा का जीवित रहता है अर्थात् बाकी प्रजा नष्ट हो जाती है।

रश्मि केतु- धूम्रवर्ण की शिखा वाला और कृत्तिका नक्षत्र में स्थित होने पर दिखाई देने वाला रश्मि केतु होता हे। इस के दर्शन होने से श्वेत वर्ण की प्रजा का तृतीय भाग ही शेष रहता है।

ध्रुव नामक केतु- अनिश्चित गमन, प्रमाण, वर्ण और आकृति वाला, सब दिशाओं में दिखाई देने वाला ध्रुव नामक केतु नाश होने वाले राजाओं के सेनांग में नाश होने वाले देशों के गृह,वृक्ष, पर्वत, तथा नाश होने वाले गृहस्तों के उपकरणों में दिखाई देता है।

कुमुद नामक केतु- कुमुद पुष्प की तरह कान्ति वाला पश्चिम दिशा में उदित होने वाला, कुमुद केतु होता है। इस का दर्शन होने से पृथ्वी पर दशवर्ष तक सुभिक्ष होता है।'

शुभफलदायी केतु-

मणिकेतु- पश्चिम दिशा में एक पहर मात्र शेष रात्रि में एक बार दिखाई देने वाला और दुग्ध धारा की तरह स्पष्ट शिखा वाला मणि केतु है। यह केतु उदय काल से ही साढ़े चार महीने तक सुभिक्ष और अधिकतर नकुलादि क्षुद्र जन्तुओं की उत्पत्ति करता है।

जलकेतु- पश्चिम दिशा में दिखाई देने वाला, निर्मल और पश्चिमोन्नत शिखा वाला जल केतु है। यह उदित हो तो नव मास तक सुभिक्ष और लोगों का कुशल करता है।

भवकेतु- पूर्व दिशा में केवल एक रात्रि में दिखाई देने वाला, सूक्ष्म तारा से युत और सिंह की पूँछ की तरह दक्षिणावर्त शिखा से युत भव केतु है। यह निर्मल मूर्ति का हो कर जितने क्षण तक दिखाई देता है उतने मास तक सुभिक्ष और रुक्ष मूर्ति का हो कर

१- अपरस्यां चलकेतुः शिखया याम्याग्रयाङ्गुलोच्छ्रितया। गच्छेद्यथायथोदक् तथा तथा दैर्घ्यमायाति।।
सप्तमुनीन् संस्पृश्च ध्रुवमभिजितमेव च प्रतिनिवृतः। नभसोऽर्द्धमात्रामित्वा याम्येनास्तं समुपयाति।।
बृ० सं०- ११/३३-३४

क. हन्यात्प्रयागकूलाद्यावदवन्तीं च पुष्कराण्यम्। उदगपि च देविकामपि भूयिष्ठं मध्यदेशाख्यम्।।
अन्यानपि च स देशान् क्वचित्क्वचिद्धन्ति रोगदुर्भिक्षैः। दश मासान् फलपाकोऽस्य कैश्चिदष्टादश प्रोक्तः।।
तदेव- ११/३५-३६

ख. प्रागर्द्धरात्रदृश्यो याम्याग्रः श्वेतकेतुरन्यश्च। इति युगाकृतिरपरे युगपत्तौ सप्तदिन.श्यौ।।
स्निग्धौ सुभिक्षशिवदावथाधिकं दृश्यते कनामा यः। दश वर्षाण्युषतापं जनयति शस्त्रप्रकोपदृतम्।।
तदेव- ११/३७-३८

ग. श्वेत इति जटाकारो रूक्षः श्पावो वियत्त्रिभागगतः। विनिवर्त्ततेऽपसव्यं त्रिभागशेषा प्रजाः कुरुते।।
आधूम्रया तु शिखया दर्शनमायाति कृत्तिकासंस्थः। ज्ञेयः स रश्मिकेतुः श्वेतसमानं फलं धत्ते।।
तदेव - ११/३९-४०

घ. ध्रुवकेतु रनियतगतिप्रमाणवर्णा.तिर्भवति विष्वक्। दिव्यान्तरिक्षभौमो भवत्ययं स्निग्ध इष्ठफलः।।
सेनाङ्गेषु नृपाणां गृहतरूशैलेषु चापि देशानाम्। गृहिणामुपस्करेषु च विनाशिनां दर्शनं याति।।
कुमुद इति कुमुदकान्तिर्वारूण्यां प्राक्शिषो निशामेकाम्। दृष्टः सुभिक्षमतुलं दश किल वर्षाणि स करोति।।
तदेव- ११/४१-४३

जितने क्षण तक दिखाई देता है,उतने मास तक प्राणन्तिक रोग की उत्पत्ति करता है अर्थात् मृत्यु कारक रोग उत्पन्न करता है। पद्मकेतु- पूर्व दिशा में केवल एक रात्रि में दिखाई देने वाला और मृणाल की तरह गौर पद्म केतु है। यह उदित हो तो सात वर्ष तक सुभिक्ष और लोगों में आनन्द मंगल करता है।

आवर्तकेतु-

पश्चिम दिशा में रात्र्यर्ध समय में उदित होने वाला दक्षिणस्थ शिखा वाला,रक्त वर्ण, निर्मल शरीर वाला आवर्त केतु है। यह जितने क्षणतक दिखाई देता है उतने मास तक सुभिक्ष होता है।[1]

शुभ केतुओं के अतिरिक्त अन्य अशुभ केतुओ से धूपित स्पृष्ट नक्षत्र अर्थात् उस समय जो नक्षत्र हो उस के अनुसार फल-

नक्षत्रों में स्पृष्ट केतु फल-

अश्विनी नक्षत्र में केतु धूपित या स्पृष्ट हो तो अश्मक देशादिपति, भरणी में किरातों के अधिपति, कृत्तिका में कलिंग देश, रोहिणी में शूरसेन, मृगशिरा में उशीनर देश के स्वामी, आर्द्रा में मत्स्य देश के स्वामी, पुनर्वसु में अश्मक देश के स्वामी, पुष्य में मगधाधिपति, आश्लेषा में अस्किेश्वर, मघा में अंगदेशाधिपति, पूर्वाफाल्गुनी में पाण्डयदेशाधिपति, उत्तराफाल्गुनी में उज्जयिनी के पति, हस्त में दण्डक वान के स्वामी, चित्रा में कुरुक्षेत्राधिपति, स्वाती में काश्मीर और कम्बौज देश, विशाखा में अलकाधिपति अनुराधा में पुण्ड्राधिपति, ज्येष्ठा में सार्वभौम, मूला में आन्ध्र और मद्रक देश के अधिपति, पूर्वाषाढ़ा में काशीधिपति और उत्तराषाढ़ा में यौधेयक, अर्जुनायन शिवि और चोद्य देश के अधिपति, श्रवण में केकय देश के स्वामी, धनिष्ठा में पंजाब के स्वामी, शतभिषा में सिंहल देश के स्वामी, पूर्वभाद्रपदा में नैमिषारण्य के स्वामी और रेवती नक्षत्र में किरातों के स्वामी का नाश होता है अर्थात् इन-इन नक्षत्र में केतु का स्पष्ट या धूपित होने से इन-इन देशों के स्वामी अर्थात् राजा

१- सकृदेकयामदृश्यः सुसूक्ष्मतारोऽपरेण मणिकेतुः। ऋज्वी शिखाऽस्यशुक्ला स्तनोद्गता क्षीरधारेव।।
उदयन्नेव सुभिक्षं चतुरो मासान् करोत्यसौ सार्द्धान्। प्रादुर्भावं प्रायः करोति च क्षुद्रजन्तूनाम्।।
बृ० सं० - ११/४४-४५

क.जलकेतुरपि च पश्चात् स्निग्धः शिखायाऽपरेण चोन्नतया। नव मासान् स सुभिक्षं करोति शान्तिं च लोकस्य।।
भवकेतुरेकरात्रं दृश्यः प्राक् सूक्ष्मतारकः स्निग्धः। हरिलाङ्गूलोपमया प्रदक्षिणावर्तया शिखया।।
तदेव - ११/४६-४७

ख. यावत एव मुहूर्त्तान् दर्शनमायाति निर्दिशेन्मासान्। तावदतुलं सुभिक्षं रूक्षे प्राणान्तिकान् रोगान्।।
अपनेण पद्मकेतुर्मृणालगौरो भवेन्निशामेकाम्। सप्त करोति सुभिक्षं वर्षाव्यतिहर्षयुक्तानि।।
तदेव - ११/४८-४९

ग. आवर्त्त इति निशार्द्धे सव्यशिखोऽरूणनिभोऽपरे स्निग्धः। यावत् क्षणान् स दृश्यस्तावन्मासान् सुभिक्षकरः।।
पश्चात् सन्ध्याकाले संवर्त्तो नाम धूम्रताम्रशिखाः। अक्रम्य वियत्त्र्यंशं शूलाग्रावस्थितो रौद्रः।।
तदेव - ११/५०-५१

या मन्त्री का नाश करता है एवं देश में आकस्मिक् घटनायें एवं दुर्भिक्ष होता है।[1]

केतु का विशेष फल-

जो केतु उलका से ताड़ित हो वह शुभ करने वाला होता है। जो वृष्टि युक्त [illegible] वह अतिशय शुभ करने वाला होता है तथा वही केतु चोल अवगाण, सितहूण और [illegible] देश में स्थित मनुष्यों का अशुभ करने वाला होता है।[2] केतुकी शिखा जिस दिशा में [illegible] हो, जिस दिशा में फैलती हो या जिस नक्षत्र को र्स्पश करती हो उस के सम्बन्धित दे[illegible] को अपना शुभाशुभ फल देता है जैसे पराक्रमी राजा राज्यों का भोग करता है एवं गरु[illegible] दिव्य प्रभाव से सर्पो के अंगों का भोग करता है।[3]

अन्य ग्रहों के साथ केतु का फल-

जब केतु शनि या मंगल रोहिणी शकट को भेदन करे अर्थात् रोहिणी नक्षत्र में गम[illegible] करे समस्तचराचर जगत का विनाश हो जाता है।[4] जब धुआँ छोड़ता हुआ अग्नि के सम[illegible] प्रज्वलित होकर इन्द्र देवता के समान तेजस्वी केतु ज्येष्ठा नक्षत्र के ऊपर आक्रमण करे [illegible] देश में दुर्भिक्ष, भयंकर युद्ध द्वारा नरसंहार और अनर्थ होता है।[5] जब महाघोर महाग्रह धू[illegible] केतु पुष्य नक्षत्र को दबा कर विराजमान हों तो उस समय कुरुवंश का नाश और महायु[illegible] होने के लक्षण सामने दिखाई देते हैं अर्थात् सब का नाश होता है।[6]

जब प्रज्वलित होता हुआ तीव्र ग्रह (धूम केतु) कृत्तिका नक्षत्र में अपने तेज [illegible] अन्य ग्रहों के तेज को मन्द करता हुआ दिखाई पड़े तो देशमें दुर्भिक्ष, मरी और यु[illegible] के सार करवाता है।[7]

---

१. यावत एव मुहूर्त्तान् दृश्यो वर्षाणि हन्ति तावन्ति। भूपान् शस्त्रनिपातैरूदयर्क्षं चापि पीडयति।
ये शस्तारतान् हित्वा केतुभिराधूपितेऽथवा स्पृष्टे। नक्षत्रे भवन्ति वधो येपां राज्ञां प्रवक्ष्ये तान्।
बृ० सं० - ११/५२-५[illegible]

क.अश्न्यामश्मकपं भरणीषु किरातपार्थिवं हन्यात्। बहुलासु कलिङ्गेशं रोहिण्यां शूरसेनपतिम्।
औशीनरमपि सौम्ये जलजा जीवाधिपं तथार्द्रासु। आदित्येऽश्मकनाथान् पुष्ये मगधाधिपं हन्ति।
तदेव - ११/४५-५[illegible]

२–उल्काभिताडितशिखः शिखी शिवः शिवतरोऽतिवृष्टो यः। अशुभः स एव चोलावगाणसितहूणचीनानाम्।
तदेव - - ११/६[illegible]

३– नम्रा यतः शिखिशिखाभिसृता यतो वा। ऋक्षं च यत् स्पृशति तत्कथितांश्च देशान्।
दिव्यप्रभावनिहतान् स यथा गुरुत्मान्। भुक्ते गतो नरपतिः परभोगि भोगान्।।
तदेव - ११/६[illegible]

४–रोहिणी शकट केतुर्भिन्द्यात्सौरोऽथवा कुजः। यदा तदा जगत्सर्वं संक्षयं यात्यसंशयम्।।
ज्यो० तत्त्व- १०/१[illegible]

५– श्यामो ग्रहः प्रज्वलितः सधूमः सहपावकः। ऐन्द्रं तेजस्वि नक्षत्रं ज्येष्ठामाक्रम्य तिष्ठति।।
म० भा० भी०- ३/१[illegible]

६– अभावं हि विशेषेण कुरूणां प्रतिपश्यति। धूमकेतुमहा घोरः पुष्यमात्तम्य तिष्ठति ।।
तदेव - - - ३/१[illegible]

७– कृत्तिका[illegible] प्रज्वलितो [illegible]। [illegible]भासा धूमकेतुरिवस्थितः ।। तदेव - ३/[illegible]

केतु की आकृति का फल--

१- मूसल की भान्ति आकृति वाला तथा धूम्राभा वा दीर्घ पुच्छ अर्थात् धूम्रकासा रंग जिस का तथा श्वेत शिखाकार तथा जल की सी धारा इत्यादि सैकड़ों रूप के केतु जहाँ उदित होते हैं। वहाँ के राज्य को भंग करने वाले होते हैं।

२- धूम्रकेतु के उदय से राजा की मृत्यु होती है, श्वेत शिखाकार व जल की धारा सदृश केतु शुभ फल दायी होते हैं। सफेद रंग का या चिकने रंग का या छोटा स्वरूप और दीर्घ उदय एवं शीघ्र अस्त होने वाला केतु शुभफलदायक होता है। लाल वर्णवाले केतु से अग्नि का भय, कृष्णवर्ण वाला केतु अनिष्ट करता है। दो शूल या त्रिशूल या चतुःशूल वाला केतु उत्पात करता है। केतु के लाल वर्ण की पंक्तियाँ या सुवर्ण की सदृश वर्ण की पंक्ति पूर्व या पश्चिम में उदय हो तो राजा का नाश करता है। ईशान्य कोण में भी राज्य का नाश करता है। तेल की सदृश आभा वाला केतु दुर्भिक्ष या मंहगी करता है। तीन कोण का या तारे सदृश जो केतु उदय हो तो प्रजा का नाश होता है। कबन्ध के सदृश केतु उदय हो तो दक्षिण देशवासियों को दुःख होता है।

३- जितने दिन तक केतु उदित रहता है उतने दिनतक उत्पात बना रहता है तथा जितने मास तक उदय रहे उतने ही वर्ष पर्यन्त उस का फल होता है। जितने दिनों तक केतु (पुच्छलतारा) आकाश में दिखाई देता है, उतने ही महीने या सौर वर्षों तक वह अपना शुभाशुभ फल प्रकट करता है। जो केतु दिव्य होता हैं वे प्राणियों को विविध प्रकार के फल देने वाले होते हैं।[1]

४- ह्रस्व, स्निग्ध, स्वच्छ, श्वेत वर्ण का केतु सुवृष्टि का सूचक होता है। शीघ्र अस्त होने वाला विशाल आकार का केतु अवृष्टिकारक होता है। जिस धूमकेतु का वर्ण इन्द्रधनुषके तुल्य जान पड़े उसे अनिष्ट कारक समझना चाहिये। दो, तीन या चार प्रकार के रूपों में शूलाकृति दिखाई दे वह राज्य को नष्ट करने वाला होता है। जो केतु पूर्व अथवा पश्चिम दिशा में मणि, हार, और सुवर्ण के तुल्य प्रभायुक्त दिखाई दे तो उन दिशाओं के राजाओं के लिये हानि कारक होता है।[2]

इस प्रकार केतु के उदय होने से शुभाशुभ घटित होने वाले उत्पात के फलों का भिन्न भिन्न ग्रन्थों के अनुसार विस्तार से विवेचन किया गया है ।

१- द्रष्टव्य- मु० मि०-१२२-१२६ तक

२- द्रष्टव्य- न०पु०-त्रि०-४२-४५ तक

ग्रह युद्ध एवं उत्पात ग्रह योग

ग्रह युद्ध के लक्षण एवं फल-

गृहयुद्ध- (सं क्ली०) (ग्रहस्य युद्धं, ग्रहयुद्धम् ६- तत्) मंगल आदि पाँच तारा ग्रहों में से कोई दो या अधिक ग्रह तरज पर स्थित होने से उनकी किरण आपस में स्पर्श करती है; इसी का नाम ग्रह युद्ध है। ग्रहों का एक साथ एक राशि एक ही अंश पर इस प्रकार एकत्र होना कि उस पर ग्रहण लगा हुआ जान पड़े इसी को ग्रह युद्ध और ग्रहयुति भी कहते है।[1] आकाश में चलते हुये, ऊपर अपने मार्ग में स्थित, अतिदूर से देखने, आमने- सामने ग्रहों के होने से,अधः स्थित बिम्ब से ऊर्ध्वस्थित बिम्ब आच्छादित होने से, दक्षिणोत्तर में स्थित होने से, दोनों ग्रहों के परस्पर किरण का संयोग होने से, एक परिधि से दूसरे की बिम्ब परिधि स्पर्श करने से ग्रहयुद्ध होता है। चन्द्रमा के साथ मंगलादि ग्रहों का योग होना ग्रह समागम होता है।[2] सूर्य सिद्धान्त के अनुसार पाँच प्रकार के ग्रह युद्ध बताये हैं।

१- भेद, २- उल्लेख, ३- अंशुमर्दन, ४- अपसव्य और समागम।

पाँच प्रकार के ग्रह युद्ध के लक्षण-

अधः स्थित बिम्ब से ऊर्ध्वस्थित बिम्ब आच्छादित होने से भेदनामक युद्ध होता है। एक बिम्ब परिधि से दूसरे की बिम्ब परिधि स्पर्श करे तो उल्लेखनामक युद्ध होता है। आसन्न स्थित दोनों ग्रहों के परस्पर किरण का संयोग होने से अशुमर्दननामक युद्ध होता है। ठीक दक्षिणोत्तर में स्थित होने से अपसव्यनामक ग्रहयुद्ध होता है। यदि दोनों ग्रह बलवान् अर्थात् स्थूलता से युक्त हों तो व्यक्त समागम अन्यथा अव्यक्त समागम होता है। दो ग्रहों का याम्योत्तर अन्तर एक अंश से अधिक हो तो समागम होता है।[3]

सूर्य सिद्धान्त के अतिरिक्त बृहत्संहिता, भद्रबाहु संहिता आदि ग्रन्थों में ग्रहयुद्ध के चार भेद गिनाये गये हैं। अन्य ग्रन्थकारों ने समागम को ग्रह युद्ध में नहीं गिना है। ग्रहों का व्यास - भौम का ३०, शनि का ३७१/२, बुध का ४५, बृहस्पति का ५२१/२, और शुक्र का ६० योजन के तुल्य चन्द्र कक्षा में बिम्बव्यास कहा है।[4] अपनी-अपनी कक्षा में स्थित भौम आदि ग्रह दूर होने के कारण चन्द्रकक्षा में देख पड़ते हैं।

१. द्रष्टव्य - हि० वि० कोश- ६- ७६०, क. 'ग्रहाणां समागमः ६ तत्'- हि० वि० कोश-६- ७६०

२- "अन्तरून्नतवृक्षाश्च वनप्रान्ते स्थिता इव। द्वरत्वाच्चन्द्रकक्षायां दृश्यन्ते सकला ग्रहाः।। व्यर्धाष्टवर्धितास्त्रिशद्विष्कम्भाः शास्त्रदृष्टितः।।" 'शाकल्य संहिता'

३. उल्लेखं तारकास्पर्शाद्भेदे भेदः प्रकीर्त्यते। युद्धमंशुविमर्दाख्यमुशुयोजे परस्परम्।।
अंशाद्वनेऽपसव्याख्यं युद्धमेकोऽत्र चेदणुः। समागमोऽशादधिके भवतश्चेद्बलन्वितौ।।
सूर्य सिद्धान्त - ग्रहयुत्यधिकार १८-१६

४. कुजार्किज्ञामरेज्यानां त्रिंशदर्धार्धवर्धिताः। विष्काम्भाश्चन्द्रकक्षायां भृगोः पष्टिरूदाहृताः।।
तदेव - ग्रहयुत्यधिकार- १३

युद्ध विशेष माह–

यदि दोनों ग्रहों के बिम्ब आसन्न अर्थात् युद्ध लक्षणों से युक्त होने पर भी प्रभायुक्त हों तो समागम संज्ञक युद्ध होता है। यदि दोनों के बिम्ब सूक्ष्म और विध्वस्त अर्थात् पराजय लक्षणों से युक्त हों तो क्रूर, विग्रह संज्ञक युद्ध होता है, अर्थात् दोनों के सूक्ष्म बिम्ब हों तो कूटसंज्ञक युद्ध और दोनों ग्रहों के बिम्ब विध्वस्त हों तो विग्रह संज्ञक युद्ध होता है।[1]

ग्रहों का जयविजय लक्षण–

अपसव्यसंज्ञक युद्ध में जिस ग्रह का बिम्ब आच्छादित को और जिस का बिम्ब छोटा और प्रभारहित, रूखा, स्वाभाविक वर्ण से हीन और दक्षिण दिशा में स्थित हो उस ग्रह को पराजित समझना चाहिए।[2] दूसरे ग्रह की अपेक्षा उत्तर दिशा में स्थित, दीप्तिमान, पृथुबिम्बवाला ग्रह जयी होता है। दक्षिण दिशा में भी बलवान् अर्थात् जिस ग्रह का बिम्ब दीप्तिमान और बड़ा हो वह ग्रह जयी होता है।[3] उत्तर दिशा में वा दक्षिण दिशा में स्थित शुक्र बहुत जयी ही होता है अर्थात् कदाचित् पराजित होता है।[4]

पराजित ग्रहों का लक्षण–

दक्षिण दिशा में स्थित, रुक्ष, कम्पायमान, दूसरे ग्रह के पास में नहीं जाकर लौटने वाला, सूक्ष्म बिम्ब वाला, अन्यग्रह से आक्रान्त, विकारयुत, किरण रहित, विवर्ण इन लक्षणों से युत ग्रह पराजित होते हैं।[5]

विजयी ग्रहों के लक्षण–

उत्तर दिशा में स्थित, स्निग्ध, कम्पन से रहित, दूसरे ग्रह को प्राप्त करने वाला, ऊपर में स्थित और तेजस्वी हो तथा दक्षिण में स्थित होने पर ग्रह यदि विपुल, निर्मल, कान्तियुत बिम्ब वाला ग्रह हो तो विजयी होता है।[6] यदि समागम-समय में दोनोंग्रह किरणयुक्त, विपुल या स्निग्ध हों तो दोनों ग्रहों के वर्गों में प्रति और विपरीत हों तो अपने अपने पक्षों का नाश करते हैं।[7]

---

१. आसन्नावप्युभौ दीप्तौ भवतश्चेत्समागमः। स्वल्पौ द्वावपि विध्वस्तौ भवेतां कूटविग्रहौ।।
सू० सं० - ग्रहयुत्यधिकार - २२

२. अपसव्ये जितो युद्धे पिहितोऽणुरदीप्तिमान्। रूक्षो विवर्णो विध्वस्तो विजितो दक्षिणाश्रितः।।
तदेव - - - २०

३. उदक्स्थो दीप्तिमान् स्थलो जयी याम्येऽपि यो बली।। तदेव - - - २१

४. उदक्स्थो दक्षिणस्थो वा भार्गवः प्रायशो जयी।। तदेव - - - - - २३

५- दक्षिणदिक्स्थः परुषो वेपथुरप्राप्य सन्निवृत्तोऽणुः। अधिरूढो विकृतो निष्प्रभो विवर्णश्च यः स जितः।।
बृ० सं०- १७/०८

६- उक्तविपरीतलक्षसम्पन्नो जयगतो विनिर्देश्यः। विपुलः स्निग्धो द्युतिमान् दक्षिणदिक्स्थोऽपि जययुक्तः।।
तदेव- १७/१०

७- द्वावपि मयूखयुक्तौ विपुलौ स्निग्धौ समागमे भवतः। तत्रान्योन्यं प्रीतिविर्परीतावात्मापक्षघ्नौ।।
तदेव - १७/११

ग्रह युद्ध का फल-

यदि भेदयुद्ध हो तो वर्षा का नाश तथा मित्र और उत्तम कुलोत्पन्न मनुष्यों में परस्पर भेद होता है। उल्लेख युद्ध हो तो शत्रुभय, मन्त्रियों में विरोध और दुर्भिक्ष होता है। अंशुविरोधयुद्ध होतो राजाओं में परस्पर युद्ध, शस्त्र, रोग और क्षुधाओं से मनुष्य को अत्यन्त पीड़ा होती है। अपसव्ययुद्ध हो तो राजाओं में परस्पर युद्ध होता है।[1] उत्पातों में से ग्रहघात-उत्पात अत्यन्त दारुण, उत्तर दिशा का ग्रहघात समस्त प्राणियों के लिए कष्टप्रद और दक्षिण दिशा का ग्रहघात केवल पशु-पक्षियों को कष्टकारक होता है।[2]

३. जब ग्रह परस्पर में भेदन करते हैं उस भेदन नक्षत्र राशि के अन्तर्गत देश में युद्ध होता है।[3] उल्का, तारा, अशनि, धिष्ण्य, विद्युत, अभ्र और मारुत ग्रहयुद्ध के द्वारा घटित होने शुभाशुभ फल में ये वधकारक होते हैं।[4]

४. जब युद्ध में नागर ग्रह उल्कादि के द्वारा घटित हों तो नागरिकों को अत्यन्त भय देने वाला होता है।[5]

५. यदि चन्द्रमा के द्वारा ग्रह पीड़ित हो और आकाश धूम से व्याप्त हो तो चन्द्रनामधारी, चन्द्रभक्त तथा इन्हीं के समान अन्य व्यक्ति पीड़ित होते है। तथा ब्राह्मण, चन्द्रनक्षत्र और चन्द्र राशि वाले, उदीच्च और पंचाल देश के लोग भी पीड़ित होते हैं।[6] जब ग्रहों का युद्ध होता है तो वर्णों का सम्मिश्रण, द्विजातियों को भय तथा स्वपक्ष और परपक्ष में चातुर्वर्ण्य दिखलायी पड़ता है।[7]

१(क) वियति चरतां ग्रहाणामुपर्युपर्यात्ममार्गसंस्थानम्। अतिदूराद् दृग्विषये समतामिव सम्प्रयातानाम्।। आसन्नक्रमयोगाद्भेदोल्लेखांशुमर्द्दनासव्यैः। युद्धं चतुष्प्रकारं पराशराद्यैर्मुनिभिरुक्तम् ।।

बृ० सं०- १७/२-३

(ख) भेदनमारोहणमुल्लेखनं रश्मिसंसर्गश्चेति, ग्रहयुद्धं चतुर्विधमाचक्षते कुशलाः तेषां पूर्वात्पूर्वो गरीयान्।

'पराशर संहिता'

(ग) छादनं रोधनं चैव रश्मिमर्द्दस्तथैवच अपसव्यं ग्रहाणां च चतुर्धा युद्धमुच्यते------'गर्ग संहिता'

२. उत्पाता विविधा ये तु ग्रहाऽघाताश्च दारुणाः। उत्तराः सर्वभूतानां दक्षिणा मृगपक्षिणाम्।।

भद्रबाहु सं० - ०४/१०२

३. ग्रहाः परस्परं यत्र भिन्दन्ति प्रविशन्ति वा। तत्र शस्त्रवाणिज्यरनि विन्द्यादर्थविपर्ययम्।।

तदेव- ०४/६८

४. उल्का ताराऽशनिश्चैव विद्युतेऽभ्राणि मारुतः। विमिश्रको गणोज्ञेयो वधायैव शुभाशुभे।।

तदेव- २४/०५

५. उल्कादयो हतान् हन्युर्नागरान् संयुगे ग्रहान्। नागराणां तदा विन्द्याद्भयं घोरमुपस्थितम्।।

तदेव - २४/१०

६. सौम्यजातं तथा विप्रासोमनक्षत्र राश्यः। उदीच्यः पार्वतीश्च पाञ्चलाद्यास्तथैव च।। पीड्यन्ते सोमघातेन नभो धूमाकुलं भवेत्। तन्नामधेयास्तद्भक्ताः सर्वे पीडयन्ते तान्समान्।।

तदेव- २४/१२-१३

७. वर्णानां संकरो विन्द्याद् विजातीनां भयंकरम्। स्वपक्षे परपक्षे च चातुर्वर्ण्यं विभावयेत्।।

तदेव - - २४/३४

ग्रहों की वर्ण अनुसार संज्ञा एवं फल-

गुरु, शनि, बुध और सूर्य एवं केतु की नागर संज्ञा, मंगल, चन्द्र, शुक्र और राहु की यायी संज्ञा होती है। ग्रहयुद्ध में श्वेत, पाण्डु, पीत, कपिल, लोहित वर्ण नागरिक संज्ञक माने जाते हैं और कृष्ण, नील, श्याम, कपोत, और भस्म के समान वर्ण के ग्रह यायी संज्ञक कहे जाते हैं।[1]

फल- नगर संज्ञक ग्रहों के युद्ध होने या घटित होने से नागरिकों को महान् कष्ट, भय होता है एवं यायी ग्रहों के युद्ध होने पर यायियों के लिए महान् भय होता है।[2]

ग्रहों की समय अनुसार संज्ञा- सूर्य की तीन संज्ञायें होती हैं। मध्याह्न में सूर्य की आक्रन्द संज्ञा, पूर्व में पौर संज्ञा और पश्चिम में यायी संज्ञा होती है। अर्थात् सूर्य की प्रातः काल में पौर, मध्याह्न में आक्रन्द और सायंकाल में यायी संज्ञा होती है। बुध, बृहस्पति और शनि की साद पौर संज्ञा होती है। चन्द्रमा की आक्रन्द संज्ञा होती है। केतु, मंगल, राहु और शुक्र की यायी संज्ञाहोती है।

संज्ञाओं के फल-

यदि आक्रन्दसंज्ञक ग्रह पीड़ित हो तो आक्रन्द अर्थात् रक्षक(सुरक्षा करने वालों) का नाश होता है। यायीसंज्ञक ग्रह पीड़ित हो तों यायी (गमन करने वालों) का नाश होता है। पौर संज्ञक ग्रह पीड़ित हो तो पुरवसियों का नाश करता है तथा यदि यह ग्रह विजयी होतो अपने वर्ण की विजय करते हैं।[3] यदि पौर संज्ञक ग्रह से पौर संज्ञक ग्रह पीड़ित हो तो पुरवासी राजाओं से पुरवासी राजा का नाश होता है अर्थात् पुरवासी राजाके द्वारा पुरवासी राजा को हानि, कष्ट, संकट आदि प्राप्त होते हैं।

इसी प्रकार यायी ग्रह आक्रन्द ग्रह से पीड़ित हों तो यायी मनुष्य से आक्रन्द मनुष्य का और आक्रन्द से यायी पीड़ित हो तो आक्रन्द मनुष्य से यायी मनुष्य को कष्ट प्राप्त होता है या नाश भी हो सकता है।

---

१. गुरुः सौरश्च नक्षत्रं बुधार्कश्चैव नागराः। केतुरंगारकः सोमो राहुः शुक्रश्च यायिनः।।
श्वेतः पाण्डुश्च पीतश्चकपिलः पद्मलोहितः। वर्णास्तु नागराज्ञेया ग्रहयुद्धे विपिश्चतेः।।
कृष्णो नीलश्च श्यामश्च कपोतो भस्मन्निभः। वर्णास्तु यायिनो ज्ञेया ग्रहयुद्धे विपश्चितेः।।
तदेव- २४/०२-०४

२. नागरे तु हते विन्द्यान्नागराणां महद्भयम्। एवं यायिवधे ज्ञेयं यायिनां तन्महद्भयम्।।
तदेव- - २४/०७

३- रविराक्रन्दो मध्ये पौरः पूर्वेऽपरे स्थितो यायी। पौरा बुधगुरुरविजा नित्यं शीतांशुराक्रन्दः।।
केतुकुजराहुशुक्रा यायिन एते हता घ्नन्ति। आक्रन्दयायिपौरान् जयिनो जयदाः स्वसर्गस्य।।
बृ० सं०- १७/६-७

पौर ग्रह से यायी ग्रह पीड़ित हो तो पौर मनुष्य से यायी मनुष्य का और यायी से पौर ग्रह पीड़ित हो तो यायी मनुष्य से पौर मनुष्य का नाश होता है।[1]

ग्रहों से पराजित मंगल आदि ग्रहों का फल-

१- **मंगल.** यदि मंगल बृहस्पति से पराजित हो तो बाह्लीक देश में निवास करने वाले, विजयकी इच्छुक, अग्नि से जीविका चलाने वाले सब पीड़ित होते हैं।

२- बुध से पराजित मंगल हो तो शूरसेन, कलिङ्ग और शाल्वदेश में मनुष्यपीड़ित होते हैं।

३- यदि मंगल शनैश्चर से पराजित हो तो नगरों में निवास करने वाले विजयी और प्रजा गण दुखी होते हैं।

४- यदि मंगल शुक्र से पराजित हो तो कोष्ठागार, म्लेच्छ जाति और क्षत्रिय पीड़ित होते हैं।[2]

५- यदि मंगल से बुध पराजित हो तो नदी तपस्वी अश्मक देशमें निवास करने वाले,

६. राजा उत्तर दिशा में निवास करने वाले और यज्ञ में दीक्षित मनुष्य पीड़ित होते हैं।

७- यदि बृहस्पति से बुध पराजित हो तो म्लेच्छ जाति, शूद्रजाति, चोर, धनी, पुरों में रहने वाले, त्रिगर्त देशमें रहने वाले और पर्वत पर निवास करने वाले पीड़ित होते हैं और भूकम्प होता है।

८- यदि शनैश्चर से बुध पराजित हो अर्थात् पीड़ित हो तो नाव चलाने वाले, योध, जल से उत्पन्न वस्तु, धनी और गर्भिणी स्त्री पीड़ित होती है।

९- यदि शुक्र से पराजित बुध हो तो अग्नि का प्रकोप, धान्य, मेघ और गमन करने वाले राजाओं का नाश होता है।[3]

१०- **बृहस्पति-** यदि शुक्र से बृहस्पति पराजित हो तो कुलूत, गान्धार, कैकय, मद्र, शाल्व, वत्सू और वङ्ग देश में निबास करने वालेमनुष्य, गौ तथा धान्य पीड़ित होते हैं।

११- यदि मंगल से बृहस्पति पराजित होतो मध्यदेश, राजा और गौ पीड़ित होती है। शनि से पराजित हो तो अर्जुनायन, वस, यौधेय, शिबि इन देशों में निवास करने वाले और ब्राह्मण पीड़ित होते हैं।

१- पौरे पौरेण हते पौराः पौरान् नृपान्विनिघ्नन्ति। एवं याय्याक्रन्दा नागरयायिग्रहाश्चैव।।
बृ० सं०- -१७/०८

२- गुरुणा जितेऽवनिसुते वाहीका यायिनोऽग्निवार्ताश्च। शशिजेन शूरसेनाः कलिङ्गशाल्वाश्च।
सौरणारे विजिते जयन्ति पौराः प्रजाश्च सीदन्ति। कोष्ठागारम्लेच्छ क्षत्रियतापश्च शुक्र जिते।।
तदेव- १७/१३-१४

३- भौमेन हते शशिजे वृक्षसरित्तापसाश्मकनरेन्द्राः। उत्तरादिकस्थाः क्रतु दीक्षिताश्च सन्तापमायान्ति।।
गुरुणा जिते बुधे म्लेच्छशूद्रचौरार्थयुक्तपौरजनाः। त्रैगर्तपार्वतीयाः पीडयन्ते कम्पते च मही।।
रविजेन बुधे ध्वस्ते नाविकयोधाब्जसधनगर्भिव्यः। भृगुणा जितेऽग्निकोपः सस्याम्बुदयापिविध्वंसः।।
बृ० सं० - १७/१५-१७

१२- यदि बुध से बृहस्पति पराजित हो तो म्लेच्छ जन, सत्य भाषण करने वाले, शस्त्र धारण करने वाले, और मध्य देश का नाश होता है तथा गुरुभक्ति के फल का भी नाश होता है।[1]

१३- शुक्र- बृहस्पति से शुक्र पराजित हो तो यायी (नायक) और प्रधान जनों का नाश, ब्राह्मण और क्षत्रियों में परस्पर विरोध, अवृष्टि, कोशल, कलिंग वंग, वत्स, मत्स्य और मध्य देश में निवास करने वाले मनुष्य पीड़ित होते हैं।

१४- यदि मंगल से शुक्र पराजित हो तो सेनापतिका मरण और राजाओं में परस्पर युद्ध होता है।

१५- यदि बुध से पराजित शुक्र हो तो पर्वत पर निवास करने वालों का नाश, गौओं के दूध का नाश और थोड़ी वृष्टि होती है।

१६- यदि शनैश्चर से शुक्र पराजित हो तो संधियों में प्रधान, शस्त्र से आजीविका चलाने वाले, क्षत्रिय वर्ण अैर जल में उत्पन्न वस्तु पीड़ित होती हैं तथा सामान्य भक्ति फल और स्वभक्ति फल का नाश करता है।[2]

७- यदि शुक्र से पराजित शनि हो तो सब द्रव्योंके मौल्य की वृद्धि, सर्प,पक्षी और मनुष्यों को पीड़ा होती है।

१८- यदि मंगल से शनि पराजित हो तो तंगण,ऑंध्र, उड्र ,काशी और बाह्लीक देश में निवास करने वालों को पीड़ा होती है। यदि बुधसे पराजित शनि हो तो अंगदेश में निवास करने वाले, क्रय-विक्रय से आजीविका चलाने वाले, पक्षी, पशु और हाथी पीड़ित होते हैं।

१९- यदि बृहस्पति से पीड़ित शनि हो तो अधिक स्त्री वाला देश, महिषक देश में रहने वाले और शकदेश में रहने वाले पीड़ित होते हैं। जो ग्रह पीड़ित होता है उसके सम्बन्धित पदार्थों, देशों और मनुष्यों को कष्ट, हानि और अनेक प्रकार के रोगों से पीड़ा होती है।[3]

१- जीवे शुक्राभिहते कुलूतगान्धारकैकया भद्राः। शाल्वा वत्सा वङ्गा सस्यनि पीडयन्ते।।
भौमेन हते जीवे मध्यो देशे नरेश्वरा गावः। सौरेण चार्जुनायनवसातियौधेयशिविविप्राः।।
शशिततनयेनापि जिते वृहस्पतौ म्लेच्छसत्यशस्त्रभृतः। उपयान्ति मध्यदेशश्च साडक्ष्यं यच्च भक्तिफलम्।।
बृ० सं०- १७/१८-२०

२- शक्रे बृहस्पतिजिते यायी श्रेष्ठो विनाशमुपयाति। ब्रह्मक्षत्रविरोधः सलिलं च न वासवस्त्यजति।।
कोशलकलिङ्गवङ्गा वत्सा मत्स्याश्च मध्यदेशयुताः। महतीं व्रजन्ति पीडां नपुंसकाः शूरसेनाश्च।।
कुजविजिते भृगुतनये बलमुख्यवधो नरेन्द्रसङ्ग्रामाः। सौम्येन पार्वतीयाः क्षीरविनाशोऽल्पवृष्टिश्च।।
रविजेन सिते विजिते गणमुख्याः शस्त्रजीविनः क्षत्रम्। जलजाश्च निपीडयन्ते सामान्यं भक्तिफलमन्यत्।।
तदेव- १७/२१-२४

३- असिते सितेन निहतेऽर्घवृद्धिरहिविहगमानिनां पीडा। क्षितिजेन तङ्गणान्ध्रोड्रकाशिबाह्लीकदेशानाम्।।
सौम्येन पराभूते मन्देऽङ्गवणिग्विहङ्गपशुनागाः। सन्ताप्यन्ते गुरुणां स्त्रीबहुला मषिकशकाश्च।।
बृ० सं०- १७/२५-२६

ग्रहों के विकारों का दिशा अनुसार फल-

जिस देशा में ताराग्रह (मंगल बुध, गुरु, शुक्र, और शनि) दिखाई दें तथा जिस दिशा में रवि में प्रविष्ट होते हैं अर्थात् जिस दिशा में मंगल, गुरु, शुक्र, बुध और शनि अस्त होते हैं उस दिशा के देशों में शस्त्रकोप क्षुधा, दुर्भिक्ष और आतंक (उपद्रव) होते हैं।[१] सूर्य के अस्तसमय में जिस देश के आकाश भाग में ग्रहमाला दिखाई दे वहाँ पर अन्य राजा का आगमन होता है और स्थानीय राजा का नाश होता है।[१]

ग्रहों के विकारों का नक्षत्र अनुसार फल-

जिस नक्षत्र के साथ ग्रहों का समागम होता है, उस नक्षत्र के नक्षत्रकूर्म और नक्षत्रव्यूह के अन्तर्गत आने वाले देशों एवं जनों का नाश करता है। यदि दोनों(ग्रह, नक्षत्र) परस्पर निर्मल किरण वाले हों तो उन का शुक्ल अर्थात् शुभफल प्रधान करते हैं।[२]

ग्रहों का समागम योग लक्षण-

ग्रहों का आपस में मेल छः प्रकार के योगों द्वारा होता है और निम्न यह छः योग होते हैं।[३] **ग्रहसंवत्त, ग्रहसमागम, ग्रहसम्मोह ग्रहसमाज, ग्रहसन्निपात और ग्रहकोश।**

ग्रहयोग लक्षण-

एक नक्षत्र में पौर ग्रह (सूर्य, बुध, बृहस्पति और शनि) के साथ पापी ग्रह मिल कर चार या पांच संख्यक हों तो **'संर्वत्त'** नामक योग होता है। राहु या केतु का अन्य ग्रह के साथ नक्षत्र में मिलें तो **'सम्मोह'** योग होता है। पौरग्रह (सूर्य, बुध बृहस्पति और शनि) के साथ पौर ग्रह या पापी ग्रह के साथ पापी ग्रह हो तो **'समाज'** नामक योग होता है। शनैश्चर और गुरु के संयोग में कोई दूसरा ग्रह आ जाय तो **'कोश'** नामक योग होता है।[४]

एक ग्रह पश्चिम दिशा में और दूसरा पूर्व दिशा में उदित होकर दोनों एक नक्षत्र में हों तो **'सन्निपात'** नामक योग होता है। इन पाँच लक्षणों से भिन्न लक्षणयुक्त होने से **'समागम'** नामक योग होता है।

१- यास्यां दिशि दृश्यन्ते विशन्ति तराग्रहा रविं सर्वे।
भवति भयं दिशि तस्यामायुधकोपक्षुधातंकेः।। बृ० सं०- - २०/०१

२- यस्मिन् खांशे दृश्या ग्रहमाला दिनकरे दिनान्तगते।
तत्रान्यो भवति नृपः परचक्रोपद्रवश्च महान्।। तदेव- - २०/०३

३- यस्मिन्नृक्षे कुर्युः समागमं तज्जनान् ग्रहा हन्युः।
अविभेदिनः परस्परमलमयूखाः शिवास्तेषाम्।। तदेव- - २०/०४

४- ग्रहसंवर्त्तसमागमसम्मोहसमाजसन्निपाताख्याः।
कोशश्चेत्येतेषामभिधास्ते लक्षणं सफलम्।। तदेव- - २०/०५

फल-

समागम योग में ग्रह निर्विकार शरीर वाले, निर्मल और विपुल बिम्ब वाले यदि हों तो शुभ फल देते हैं। यदि विकार युक्त हों तो अशुभ फल प्रधान करते हैं। सम्मोह और कोश में प्रजाओं को भय होता है। समाज में सुसम अर्थात् पूर्व से पश्चात् अधिक फल होता है। सन्निपात में परस्पर द्वेष होता है।[1]

ग्रहयुति योग एवं फल-

मंगल शनि की युति राशि के अनुक्रमण से होती है। इस युति का परिणाम सदा अनिष्ट होता है। पास पास ये युति दूसरी राशि के होने तक टिकने वाली है। इस युति में देश में रक्तपात, दंगे, मारपीट, लड़ाई-झगड़े, राजवर्ग में मृत्यु, रोग, तूफान, हड़ताल, असन्तोष होता है। कहीं-कहीं भूकम्प भी हो जाता है। जल राशि में युति हो तो नदियों में भारी पूर आता है।

मंगल गुरु युति एवं फल-

इस युति में राजकीय व धार्मिक सम्बन्ध के प्रश्न में असन्तोष और बेचैनी फैलती है। वायु मंडल पर, अनिष्ट परिणाम घटित होता है। मेघ की भयंकर गर्जना होती है विजली गिरती है। अदालतों में मुकद्दमें बहुत बढ़ जाते हैं।

गुरु शनि युति योग एवं फल-

यह युति साधारण २०-३० वर्ष में होती है और एक ही तत्त्व की राशि की यह युति
२४० वर्ष में होती है। सब राशियों में इस युति का भ्रमण पूरे होने में ९६० वर्ष लग जाते हैं।
राजा, अधिकारी वर्ग व राज्य व्यवस्था पर होता है। राजकीय हक सम्बन्ध से अन्तर्राष्ट्रीय व
परराष्ट्रीय प्रश्न उपस्थित होकर युद्ध व रक्तपात होता है। केई समय भूकम्प होकर बहुत हानि
होती है। सामान्यतः राज व्यवस्था में बदलना या सुधार होना इस युति का धर्म है।

ग्रह युति का फल देश, स्थान, राज्य आदि के नक्षत्र राशि दृष्टि योग आदि के अनुसार एवं संक्रमण ग्रहण इत्यादि के अनुसार होता है। जो स्थान, राज्य एवं देश इन के अन्तर्गत आयेंगे वहाँ यह फल घटित होता है।[2]

शनि हर्षल युतियोग एवं फल-

यह युति प्रत्येक ४५ वर्ष में होती है। इस में युद्ध, रक्तपात, भूकम्प का भयङ्कर प्रकोप होता है।

१- एकर्क्षे चत्वारः सह पौरैर्यायिनोऽथवा पंच। संवर्त्तो नाम भवेच्छिखिराहुयुतः स सम्मोहः।।
पौरः पौरसमेतो यायी सह यानिना समाजाख्यः। यमजीवसंगमेऽन्यो यद्यागच्छेतदा कोशः ।।
उदितः पश्चादेकः प्राक् चान्यो यदि स सन्निपाताख्यः। अविकृततनवः स्निग्धा विपुलाश्च समागमे धन्याः।।
बृ० सं० - २०/६-८

२- द्रष्टव्य- सचित्र ज्योतिष [illegible] पृ० ४०

नेपच्यून शनि युति योग एवं फल-

यह योग प्रत्येक ३६ वर्ष में होता है। इस योग में अत्याचार होते हैं। सूर्य राशि में हो तो उत्पात से देशों को पीड़ा करे।

मेष, वृष, कर्क राशि के सूर्य में उत्पात हो दक्षिण दिशा में युद्ध हो दुर्भिक्ष हो। मिथुन के सूर्य में उत्पात हो, विन्ध्याचल में सिंहल देश में भय हो। कुम्भ में सूर्य में उत्पात हो तो मद्र देश का नाश खेती उपज हो। कन्या तथा वृष के सूर्य में उत्पात कान्यकुब्ज देश में पीड़ा। वृश्चिक व मकर के सूर्य में नर्मदा नदी के तट पर दुर्भिक्ष तुला के सूर्य में पिंगल देश में दुर्भिक्ष हो राज भंग हो। धन के सूर्य में कलिंजर देश आदि नष्ट हों।[1]

घबड़ाहट योग-

तुला में शनि, भौम वक्री हो तो लोक में विशेष कर दक्षिण में हाहाकार मचे।

वक्र ग्रह फल-

भौम वक्री अनावृष्टि करे, बुध वक्री हो तो धन क्षय, गुरु वक्र हो तो रोग स्थिर रहे, शुक्र वक्री अग्नि भय। क्रूर ग्रह वक्री और सौम्य ग्रह अतिचारी हो तो राजाओं में युद्ध, नाश, घोर भय और पीड़ा होती है। चार ग्रह वक्री हों तो प्रजा में महाभय, सब ग्रह वक्री हों तो उस समय राजाओं में विग्रह महा युद्ध आदि का भय होता है।[2]

दुर्भिक्ष योग-

१. चन्द्र क्षेत्र में शुक्र, चन्द्र, बुध का उदय, होने अति वर्षा से ६ महीने में दुर्भिक्ष हो, बुध के घर शनि राहु का उदय हो तो पशु क्षय, प्रजा में पीड़ा, शुक्र के घर सोम शनि उदय हों तो राजाओं में युद्ध अन्न महंगे होते हैं।

२. जिस वर्ष एक राशि पर शनि, राहु, मंगल, सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र और चन्द्र हों तो उस वर्ष दुर्भिक्ष, छत्र भंग, राजविग्रह, महायुद्ध एवं भयंकर उत्पात होते हैं।

३. जिस वर्ष में १३ मास हो और सूर्य के आगे मंगल रहे तो उस वर्ष यह योग वर्षा ऋतु में हो तो दुर्भिक्ष होता है।

४. जिस वर्ष में रात्रि को काग बोलें दिन को सियार बोलें तो गाय व स्त्री जुड़वां जनें, उस वर्ष दुर्भिक्ष पड़े, तृण कम हो, मनुष्य व चौपायों में कष्ट हो।

५. जिस वर्ष कर्क संक्रान्ति, रवि, मंगल, शनिवार को हो और वर्ष का राजा मंगल हो तो उस वर्ष में दुर्भिक्ष पड़े, मनुष्यों में पीड़ा, खुजली और रक्त विकार हो।

६. जिस वर्ष में सूर्य चन्द्र का ग्रहण एक मास में हो तो दुर्भिक्ष हो, मनुष्यों में बहुत रोग हों, बहुत विग्रह हो। जिस वर्ष चोटिल पुच्छल तारा उगे उस वर्ष में आकाल पड़े, मनुष्य और पशुओं में कष्ट व रोग हो।[3]

---

१. द्रष्टव्य - सचित्र ज्योतिष भाग - ०८, पृ० - १३१
२. द्रष्टव्य - सचित्र ज्योतिष भाग - ०८, पृ० - १७१
३. द्रष्टव्य - सचित्र ज्योतिष भाग - ०८, पृ० - [illegible]

७. वृष में राहु और मंगल हों ६ महीने में भय हो, दुर्भिक्ष, पीड़ा हो।

८. पौष, माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ कार्तिक, मार्गशीष, इतने महीनों में तारे फिरें, तारामण्डल फिरता दिखे तथा अग्नि सरीखा दिखे तो पृथ्वी पर प्रलय काल पड़े, बहुत दुकाल पड़े। जिस वर्ष का राजा क्रूर ग्रह हो, क्रूर ग्रह से युक्त हो तो महा विपत्ति पड़े, छत्र भंग हो, मनुष्य पर्वतों पर चढ़कर रहें।

९. जिस वर्ष में गुरु, शनि, राहु, मंगल एक नक्षत्र पर आवें तो राज विग्रह हो छत्र भंग हो भिन्न सम्प्रदायों में लड़ाई हो। मिथुन के शनि या राहु जिस वर्ष में हो उस वर्ष दुर्भिक्ष हो पश्चिम के राजाओं का भय हो।

१०. जिस वर्ष एक महीने में ३ ग्रह वक्री हों, शनि, मंगल, गुरु, शुक्र एक राशि में हों तो दुर्भिक्ष एवं युद्ध हो।

११. जिस वर्ष में सम्वत् का राजा अस्त हो मन्त्री वक्र हो कोतवाल क्रूर ग्रह हो या इनसे युक्त हो तो काल पड़े, दुर्भिक्ष हो। जिस वर्ष में तारा मण्डल फिरें, चन्द्र से इकट्ठे तारा हों तो काल पड़े धान्य नहीं मिले।

१२. जिस वर्ष में धुंध बहुत पड़े, राखी को श्रवण नक्षत्र न हो, अक्षय कृत्तिका को रोहिणी न हो पौष वही ३० को मूल न हो तो उस वर्ष अकाल पड़े। जिस महीने की संक्रान्ति में रवि, मंगल, शनिवार हो उस महीने में घोर भय हो, दुर्भिक्ष हो, वर्षा नहीं पड़े।

१३. वृष में शुक्र, शनि, मंगल तीनों ग्रह एकत्रित हों तो दुर्भिक्ष, लोक में भय और राज भंग हो। वृष में सूर्य, शनि, मंगल तीनों स्थित हों तो दुर्भिक्ष, लोक में पीड़ा, युद्ध हो। वृष में सूर्य, शुक्र, मंगल, शनि हों तो दुर्भिक्ष, पीड़ा हो। मीन में शनि, कर्क में गुरु, तुला में मंगल हो तो दुर्भिक्ष हो। गुरु शुक्र एकत्रित हों तो दुर्भिक्ष, दुःख हो। शनि, मंगल एकत्र हों तो दुर्भिक्ष, युद्ध हो। जब कोई शुभग्रह अतिचारी हो तो दुर्भिक्ष राजाओं का क्षय हो। ग्रह एकत्र हों तो गोल योग होता है, इस में दुर्भिक्ष, पीड़ा होती है। मकर, कुम्भ के सूर्य, शुक्र, मंगल और चन्द्र हों तो दुर्भिक्ष हो। एक राशि पर शुक्र, शनि, गुरु हों तो दुर्भिक्ष हो मेघ नहीं बरसाये।

१४.राजा व पशु नाश योग–

रवि मंगल, शनिवार में कार्तिक की अमावस्या हो तो आयुष्मान में यदि स्वाति नक्षत्र हो तो राजा व पशुओं का नाश हो।

१५. शोक युद्ध योग–

पौष की अमावस्या या पूर्णिमा मंगलवारी या शनिवार हो तो प्रजा में शोक हो, राजाओं का युद्ध हो।

१६. भय योग–

गुरु अतिचार (शीघ्र गति) हो तब शनि व मंगल वक्री हों तो जगत में हाहाकर मचे, दक्षिण दिशा में विशेष भय हो।'

---

१. द्रष्टव्य – सचित्र ज्योतिष भाग – ८८, पृ० – १०५-१०६

१७. राज भंग एवं पशु नाश- शुभ ग्रह अतिचार हुआ हो और पाप ग्रह वक्री हुआ हो तो राज भंग होता है। राजा का नाश, पीड़ा, पशुओं की हानि दूसरे देश का राज हो।

१८. पशु मनुष्य नष्ट- जब धन, मीन, वृष, वृश्चिक इन राशियों पर मंगल आवे और शनि वक्री हो तो गौ, हाथी, घोड़े, मनुष्य नष्ट हों, पृथ्वी पर केवल तीसरा हिस्सा रहें।

१९. भय विग्रह योग- मेष का सूर्य, वृष का मंगल, लोक में भय राजाओं में विग्रह होता है।

२०. घोर युद्ध योग- शुक्र, शनि, मंगल तीनों तुला पर हों तो राजाओं में घोर युद्ध होता है।

२१. राजाओं का नाश योग- मंगल, शुक्र, शनि एकत्र हों तो राजाओं का नाश और प्रजा का क्षय हो।

२२. प्रजा नाश योग- स्वाति पर मंगल, रेवती पर सूर्य हो तो प्रजा नाश और राजा चंचल हो।

२३.भय, पीड़ा योग- सूर्य, राहु, मंगल, चन्द्र, शनि, ग्रह एक राशि पर भय, पूर्व दिशा में पीड़ा, राजाओं का क्षय, प्रजा का नाश, व्याधियों से भय हो।

२४. दक्षिण में भय योग- सूर्य, मंगल, चन्द्र, बुध, शनि, राहु एक राशि पर ६ ग्रह हों तो दक्षिण दिशा में भय होता है।[1]

२५. छत्र भंग योग- सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, ५ ग्रह सिंह राशि में हों तो भय एवं प्रजा का नाश, छत्र भंग हो।

२६. युद्ध योग- अनुराधा पर शनि और ज्येष्ठा नक्षत्र पर गुरु हो ता पश्चिम में युद्ध प्रजा का नाश हो।

२७. जल कष्ट योग- उषा, पर शनि और शनि से सातवें नक्षत्र पर सूर्य हो तो जल का त्रास हो।

२८. शुभ वर्षा योग- श्लेषा पर मंगल, बुध, शुक्र हों तो प्रजा में सुख, सौभाग्य बढ़े, बहुत अच्छा सम्वत हो। एक राशि पर सूर्य, चन्द्र, मंगल, गुरु हों तो पृथ्वी पर बहुत भय हो राजा, प्रजा का नाश हो। सिंह राशि पर सूर्य, चन्द्र, मंगल, गुरु हों तो पृथ्वी पर बहुत भय हो, राजा प्रजा का नाश हो। एक राशि पर मंगल, शुक्र, शनि हो तो राजा और प्रजा का नाश हो।[2]

२९. युद्ध योग- मेष का सूर्य, वृष का मंगल हो तो भय, रोग से सब व्याकुल हो राजाओं में युद्ध हो। तुला पर मंगल और शुक्र हो तो राजाओं में आपस में युद्ध हो।

३०. उल्का पात योग- सूर्य से सातवीं या पाँचवीं राशि पर चन्द्र हो मंगल छठी राशि पर हो तो दिग्दाह या उल्का पात का योग होता है।[3]

---

१. द्रष्टव्य - सचित्र ज्योतिष भाग - ०८, पृ० - १७५-१७६
२. द्रष्टव्य - सचित्र ज्योतिष भाग - ०८, पृ० - १७७
३. द्रष्टव्य - सचित्र ज्योतिष भाग - ०८, पृ० - १८०

३१. **भूकम्प योग**- राहु या केतु से ७वें मंगल हो और मंगल से ५वें बुद्ध हो, बुध से चौथे घर चन्द्र हो तो भूकम्प होने का योग होता है।[1]

३२. श्री मद्भागवत महापुराण में सूर्य की प्रभा के मन्द पड़ने एवं ग्रहयुद्ध का वर्णन मिलता है।[2]

३३. महाभारत में केतु का चित्रा नक्षत्र पर अतिक्रमण करके स्वाति पर स्थित होने को महा अनिष्ट कारक बताया है।[3]

३४. धूमकेतु का पुष्य नक्षत्र पर आक्रमण करके वहीं स्थित होने को घोर अमङ्गल कारक बताया है।[4]

राहु का सूर्य के निकट जाने, अमावस्या के बिना ही राहु का सूर्य को ग्रसना अर्थात् सूर्य ग्रहण के लगने का वर्णन मिलता है।[5]

३५. मंगल का वक्र हो कर मघा नक्षत्र और ब्रह्मराशि के श्रवण नक्षत्र को पूर्ण रूप से आवृत करना अर्थात् नक्षत्र पर स्थित रहना, बृहस्पति का श्रवण नक्षत्र में स्थित होना, शनि का पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र में पहुँचना, शुक्र का पूर्वा भाद्रपदा पर आरूढ़ होना और राहु का चित्रा, स्वाति आदि नक्षत्रों में वक्री हो कर रोहिणी नक्षत्र तथा सूर्य चन्द्रमा को पीड़ित करना, धूमकेतु का ज्येष्ठा नक्षत्र पर स्थित होना और क्रूर कर्मों को उपालक्षित करने वाला राहु कृत्तिका नक्षत्र में होना यह सब कुयोग अशुभ फल को घटित करने वाले हैं चित्रा एवं स्वाति के बीच रहकर सर्वतोभद्रगतवेध के अनुसार धूमकेतु का होना प्रचण्ड आँधी उठने का योग होता है।[6]

---

१. द्रष्टव्य - सचित्र ज्योतिष भाग - ०८, पृ० - १८०-१८१

२. सूर्य हत प्रभं पश्य ग्रहमर्दं मिथो दिवि। श्री मद्भ० म० पु० - १४/१७

३. श्वेतो ग्रहस्तथा चित्रां समतिक्रम्य तिष्ठति।
अभावं हि विशेषेण कुरुणां तत्र पश्यति।। म० भा० भीष्म पर्व - ०२/१२

४. धूमकेतुर्महाघोरः पूष्यं चाक्रम्य तिष्ठति।
सेनयोर शिवं घोरं करिष्यति महांग्रह :।। तदेव- - - - ०२/१३
तदेव - - - ०२/११

५. 'अर्कं राहुरूपेति च'।।

क. सहश्चग्रसदादित्यमपर्वणि विशाम्पते।
चार्कापिध महाकम्पं पृथिवी सवनद्रमा।। तदेव - - - १७/१०

६. मघांस्वङ्र को वक्रः श्रवणे च बृहस्पतिः। भंग नक्षत्रमाक्रम्य सूर्यपुत्रेण पीडयते।।
शुक्रः प्रोष्ठपदे पूर्वे समारूह्य विरोचते। उत्तरे तु परिक्रम्य सहितः समुदीक्षते।।
श्वेतो ग्रहः प्रज्वलितः सधूम इव पावकः। ऐन्द्रं तेजस्वि नक्षत्रं ज्येष्टामाक्रम्य तिष्ठति।।
ध्रुवं प्रज्वलितो घोरमपसव्यं प्रवर्तते। रोहिर्णीं पीडयत्येवमुभौ च शशिभास्करौ।।
चित्रास्वात्यन्तरे चैव विष्ठितः परुषग्रहः। वक्रानुवक्रं कृत्वा च श्रवणं पावकप्रभः।।
ब्रह्मराशिं समावृत्य लोहिताङ्गने व्यवस्थितः। म० भा० भीष्म पर्व- १६/१८

क. कृत्तिकां पीडयंस्तीक्ष्णैर्नक्षत्रं पृथिवीते।
[illegible]।। तदेव - - - - ०३/३०
अभीक्ष्णवाता वायन्ते धूमकेतु[illegible]

३६. दुर्योग-
मंगल का वक्र होकर मघा नक्षत्र पर स्थित होना, बृहस्पति का श्रवण नक्षत्र पर विराजमान होना, शनि का पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र पर पहुँचना, शुक्र का पूर्वा भाद्रपदा पर आरूढ़ होना, केतु का उत्तरा भाद्रपदा पर होना, धूमकेतु नामक उपग्रह का ज्येष्ठा नक्षत्र पर होना, चित्रा और स्वाति के बीच में स्थित होकर राहु का रोहिणी तथा चन्द्रमा और सूर्य को पीड़ा देना, मंगल का बारम्बार वक्र हो कर श्रवण नक्षत्र में होना, वर्षपर्यन्त एक राशि पर रहने वाले दो प्रकाशमान ग्रह बृहस्पति और शनैश्चर तिर्यग्वेध के द्वारा विशाखा नक्षत्र के समीप होना और अत्यन्त प्रज्वलित होकर ध्रुव की बायीं ओर रहना यह सब योग घोर अनिष्ट के सूचक हैं।[1]

३७. अश्विनी आदि नक्षत्रों को तीन भागों में बाँटने पर जो नौ-नौ नक्षत्रों के तीन समुदाय होते हैं, वे क्रमशः अश्वपति, गजपति तथा नीपति के छत्र कहलाते हैं, ये ही पाप ग्रह से आक्रान्त होने पर राजाओं के विनाश सूचित करने का कुयोग होता है। यदि इन तीनों अथवा सम्पूर्ण नक्षत्र में शीर्षस्थान पर पाप ग्रह से वेध हो तो वह ग्रह महान् भय उत्पन्न करने वाला होता है। यह ग्रहवेध योग जो ग्रह वेधित होता वह अनिष्ट कारक होता है।

३८. तेरह दिन का पक्ष और साथ में सूर्य एवं चन्द्र ग्रहण एक ही मास में होने से यह कुयोग अत्यन्त अशुभ दायक और प्रजा का विनाश करने वाला होता है।[2]

३९. एक ही दिन त्रयोदशी तिथि को बिना पर्व के ही चन्द्रमा और सूर्य को ग्रहण का लगना यह दोनों ग्रह ग्रहणावस्था को प्राप्त हुए प्रजा का संहार होने का योग होता है।[3]

४०. उत्पात योग एवं फल- बुध-शुक्र के साथ सूर्य का योग हो तो बड़ा उत्पात कारक माना जाता है। इस योग में धान्य-महर्घता, अल्यल्प वृष्टि, अधिक उष्णता आदि का भय होता है।[4]

४१. दुर्भिक्षयोग- शनि के घर में सूर्य, मंगल या शुक्र स्थित हों तथा चन्द्रमा भी हो तो दुर्भिक्ष होता है अर्थात् जिस देश में नक्षत्र के अनुसार शनि का सम्वन्ध होगा उसी देशमें दुर्भिक्ष होता है।[5]

---

१. विषमं जनयन्त्येत आक्रन्दजननं महत्। त्रिषु सर्वेषु नक्षत्रनक्षत्रेषु विशाम्पते।।
गृध्रः सम्पतते शीर्षं जनयन् भयमुत्तमम्।। म० भा० भीष्म पर्व - ०३/३१

२. चतुर्दशीं पञ्चदशीं भूतपूर्वां च षोडशीम्। इमां तु नाभिजानेऽहमावास्यां त्रयोदशीम्।।
अपर्वणि ग्रहणैतौ प्रजाः संक्षपयिष्यतः। तदेव- - - - ०३/३३

३. चन्द्रादित्यावुभौ ग्रस्तावेकाह हि त्रयोदशीम्।
अपर्वणि ग्रहं यातौ प्रजासंक्षयमिच्छतः।। तदेव - - - ०३/२८

४. एक राशिस्थिताह्येते सौम्यशुक्रदिनाधिपाः।
सर्वधान्य महार्घत्वं मेघाः स्वल्प जल प्रदाः। बृहद् नै० परि०- पृ०- १६

५- भानु भौमी भृगुश्चैव शनिक्षेत्रं समाश्रितः।
यदा निशापतिस्तत्र तदा दुर्भिक्षतो भयम्।। ज्यो० प्र०- -१०/१४४

४२- मिथुन राशि में शनि या राहु हों तो देश में दुर्भिक्ष तथा रोगों की वृद्धि होती है अर्थात् अनेक प्रकार के रोग देश में उत्पन्न होते हैं।[1]

४३- जगत विनाश योग- जब केतु, शनि या मंगल रोहिणी शकट को भेदन करें अर्थात् रोहिणी नक्षत्र में हों तो समस्त चराचर जगत का विनाश हो जाता है।[2]

४४. भूकम्प योग- चार प्रकार के भूकम्प ऐन्द्र, वारुण, वायव्य और आग्नेय होते हैं। राहु और केतु के विशेष योग से चार प्रकार के भूकम्प होने का योग होता है।

४५. भूकम्प योग- जब राहु से सातवें मंगल, मंगल से पाँचवें बुध और बुध से चौथे जब चन्द्रमा होता है, उस समय भूकम्प होता है। स्वाति, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, मृगशिरा, अश्विनी, पुनर्वसु- इन नक्षत्रों में अग्नि केतु या संवर्त केतु दिखलायी पड़ें तो भूकम्प योग होता है। पुष्य, कृत्तिका, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, पूर्वाफाल्गुनी और मघा इन नक्षत्रों में कीलक या आग्नेय केतु दिखलायी पड़े तो उस समय भूकम्प होने का योग होता है।

चल, जल, ऊर्मि, औद्दालक, पद्म और रविरश्मि केतु जब प्रकाशमान होकर किसी भी मध्यरात्रि में उदित होते हैं तो उस के तीन सप्ताह में भयंकर भूकम्प पूर्व के देशों में तथा हल्का भूकम्प पश्चिम के देशों में आता है।

वसाकेतु और कपालकेतु यदि प्रतिपदा तिथि को रात्रि के प्रथम प्रहर में दिखलायी पड़ें तो भूकम्प होता है। भूकम्पों का प्रधान निमित्त केतुओं का उदय है।[3]

४६. भूकम्प योग- सूर्य के नक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र अर्थात् चन्द्र नक्षत्र सातवाँ हो तो भूकम्प योग होता है अर्थात् इस योग में भूकम्प आता है।

सूर्य के नक्षत्र से चन्द्र नक्षत्र ५वाँ हो तो विद्युतपात योग होता है।

सूर्य के......................१६वाँ .... उल्कापात योग.........

सूर्य के......................२२वाँ .... नर्घात योग.............

सूर्य के......................२३वाँ .... कम्प योग...............

सूर्य के......................२४वाँ .... वज्रपात योग ....

सूर्य के......................२५वाँ ....परिवेषण योग होता है अर्थात् जिस दिन यह योग बनते हैं उस दिन नामानुसार योग फल घटित होता है।[4]

१- मिथुनर्क्षे सूर्यपुत्रो राहुर्वा यदि संस्थितः। दुर्भिक्ष जायते तत्र रोगाणां च विवर्धनम्। ज्यो० प्र०- १०/१४५

२-रोहिणीशकटं केतुर्भिन्द्यात्सौरोऽथवा कुजाः। यदा तदा जगतसर्व संक्षयं यात्यसंशयम्।। तदेव- १०/१५२

३. दृष्टव्य- भद्रबाहु संहिता- पृ०- ३८०, क. दृष्टव्य- सचित्र ज्योतिष भाग - ०८ पृ०- १७७-१८१

४. भूकम्पः सूर्यभात्सप्तमर्क्षे विद्युच्च पञ्चमे। शूलोष्टमेऽब्धिदिग्भे तु शनिरष्टादशे तथा।।
केतुः पंचदशे दण्ड उल्का एकोनविंशतिः। मोहनिर्घातकंपाश्च कुलिशं परिवेषणम्।।
विज्ञेयमेकाविंशर्क्षादाराभ्य च यथाक्रमम्। चन्द्रयुक्तेषु भेष्वेषु शुभकर्म न कारयेत्।।
नारद संहिता - १०/१-३

तूफान योग- जब बृहस्पति और बुध सूर्य के साथ स्थित होकर स्वराशियों में स्थित ग्रहों के अनुवर्त्ती हों और मनुष्य, सर्प तथा अन्य छोटे जन्तु युद्ध करते दिखलायी पड़ें तब भयंकर आँधी तूफान आता है।[1] (भद्रबाहु संहिता)

अनावृष्टि एवं विद्युत्पात/वज्रपात योग- यदि शुभ ग्रह मित्रभाव में स्थित न हो तो वर्षा का अभाव रहता है तथा इन्द्र पर्वतों के मस्तक को वज्र से चूर करता है अर्थात् पर्वतों पर विद्युतत्पात होता है और अवर्ष रहता है।[2]

दुर्भिक्ष योग- राहु द्वारा चन्द्रमा और केतु द्वारा सूर्य अपसव्य मार्ग से ग्रहण किया गया हो और ये बादल से आच्छादित हों और उस समय उनसे बिजली निकले तो धान्य नहीं उगते।[3]

अति वृष्टि योग- सूर्य के आगे या पीछे ग्रह स्थित हों और नीच और शुभ राशि में न गये हों तो अतिवृष्टि करते है।[4] चार या पाँच ग्रह बली होकर एक राशि में स्थित हो जायें तो राजा के लिए भय देने वाले तथा महँगाई एवं रोग का भय देते हैं।[5] वक्री दो ग्रह हों तो राजा को क्षोभ देने वाले होते हैं और तीन ग्रह वक्री हो जायें तब युद्ध या भय देने वाले होते हैं।[6]

यदि चार ग्रह वक्री हो जायें तो राजा के लिए अन्यथा करते हैं तथा पाँच ग्रह वक्री होने पर राज्य पर राज्य और राष्ट्र को विनाश देने वाले होते हैं।[7]

उत्पात एवं मृत्यु योग- रविवार को विशाखा, सोमवार को पूर्वाषाढ़ा, मंगलवार को धनिष्ठा, बुधवार को रेवती, गुरुवार को रोहिणी, शुक्रवार को पुष्य और शनिवार को उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र हो तो उत्पात योग होता है। रविवार को अनुराधा, सोमवार को उत्तराषाढ़ा, मंगलवार को शतभिषा, बुध को अश्विनी, गुरु को मृगशिरा, शुक्र को अश्लेषा, शनि को हस्त नक्षत्र हो तो मृत्यु योग होता है।[8] इसी प्रकार क्रम से काम और सिद्धि-योग भी वनते हैं।

---

१. यदा स्थितौ जीवबुधौ ससूर्यौ राशिस्थितानाञ्च तथामुर्तिनौ।
नृनागबद्धावरसंगरस्तदा भवन्ति वाताः समुपस्थितान्ताः।। भद्रवाहुसं०-अध्याय- २७/१

२. न मित्रभावे सुहृदो समेता चाल्पतरम्बु ददाति वासवः।
भिनत्ति वज्रेण नदा शिरांसि महीभृतां चाप्यपवर्षणं च।। तदेव - अध्याय - २७/२

३. राहुणा संवृतं चन्द्रमादित्यं चापि सर्वतः।
कुर्यात् विद्युत् यदा साभ्रा तदा सस्यं न रोहति।। तदेव - - - ०५/२१

४. अग्रगाः पृष्ठगा वापि खेटाः सन्निहिता रवेः।
तदाऽतिवृष्टिं कुर्वन्ति न चेन्नीचारिराशिगः।। वशिष्ट सं० - शुक्राचाराध्याय/१५

५. चत्वारः पंच वा खेटा बलिनस्त्वेकराशिगाः।
राजाहवभयं दध्युरर्धमामयभीतिदाः।। तदेव - ..../१६

६. यदा प्रतीपगौ खेटो नृपसंक्षोभदौ तदा।
प्रतीपगास्त्रयो यत्र युद्धवृष्टिभयप्रदाः।। तदेव - .... /१७

७. राजान्यत्वं च कुर्वन्ति चत्वारो यदि वक्रितः।
प्रतीपगाः पंच खेटा राजराष्ट्रविनाशदाः।। तदेव - ..../१८

८. विशाखादिचतुर्वर्गमर्कवारादिषु क्रमात्।
उत्पातमृत्युकाणाख्याः सिद्धियोग प्रकीर्तिताः।। न० सं० - १४/२०

तृतीय अध्याय

आन्तरिक्ष उत्पात

आन्तरिक्ष उत्पातके भेदों का विवेचन विभिन्न शास्त्र ग्रन्थों के अनुसार-

आन्तरिक्ष उत्पात के भेद-

उल्कापात, दिग्दाह, वायुविकार, इन्द्रधनुष का दिखना, गन्धर्व नगर का दिखना, अतिवृष्टि या अनावृष्टि का होना आन्तरिक्ष उत्पात के भेद गिनाये गये हैं। इन भेदों के क्रमशः लक्षण एवं फल निम्न प्रकार से हैं-

उल्कापात

उल्का अर्थात् चमक, अद्भुत प्रकाश, बादलों के फटने से उत्पन्न चमक आदि, अकस्मात् उत्पन्न चमक का पतन होना या गिरना। उल्कापात के अनेक रूप होते हैं, जिस में से मुख्य रूप यह हैं-

१- धरणी, प्राणीसंचार, घोरसत्त्वा, तटद्रवा विद्युज्ज्वलंती, दीर्घवक्त्रा, दीर्घपादा, अल्प पुच्छा, अग्निभा, धरणी संज्ञक, दो हाथ वाली, तिरछी, ऊर्ध्वगत, श्वेतरक्त और छोटे रंग वाली ये उल्का के रूप हैं। इस में से कृष्णपक्ष उल्का अति दारुण है अर्थात् अति भंयकर, विनाशकारी होती है।[1]

२- जब रात के बीतने और प्रातःकाल होने पर सारी दिशाओं में जलती हुई उल्कायें गिरें और उनके प्रकाश के उदय होने से सूर्य का प्रकाश फीका पढ़ जाये तो उस समय हजारों राजाओं के रक्त से भूमि तृप्त होती है अर्थात् महाघोर युद्ध होते हैं। ऐसे सूर्य की उपासना करने वाले महार्षियों के वचन हैं।[2]

उल्कापात के प्रमुख भेद-

१. धिष्ण्या २. उल्का ३. अशनि ४. बिजली ५. तारा।[3]

१. धिष्ण्या के लक्षण-

चक्राकार, विशाल, ज्वलिता वन में बहुत दूर तक पड़ती हुई जले हुए अंगार सदृश, अंत में पूंछ से आकार वाली, जो गोल हो, बहुत जलती हुई हो, वनादि में गिरे, उसे के अन्त में पूंछ जैसी हो, अंगार के समान उस का वर्ण हो। पतली पूंछ वाली धिष्ण्या

१- धरणी प्राणिसंचारा घोरतत्वा विनिर्मिता । तटत्तटद्रवा विद्युज्जवलंती दीर्घवक्त्रपात्।
धरणी प्राणिसंचारा घोरतत्वा विनिर्मिता । तिर्यगूर्ध्वं गता श्वेता रक्ता तन्वी तु तारका।।
अल्पपुच्छाग्नि भाधिष्ण्याद्विहस्तया समीपगा। मु० मि० प्र०-१३८,१३६,१४०
उल्का तु विविधाकारा कृष्णापुच्छातिदारुणा।। ज्वलन्तीर्भिर्महोल्काभिश्चतुर्भिः सर्वतोदिशम्।।

२- अद्य चैव निशां व्युष्टामुदय भानुराहतः। भूमिपालसहस्रणां भूमिः पास्यति शोणितम्।।
आदित्यमुपतिष्टद्भिस्तत्र चोक्तं महर्षिभिः। तदेव- - - -३/३३-३४

न० सं० - ४३/०१

३. धिष्ण्योल्काविद्युदशनितारा: पंचविधाः स्मृताः।।

जलते हुए अंगार के समान १० धनुष से कुछ अधिक स्थान तक दिखाई देती है इस का परिमाण २ हाथ का ही ऐसी धिष्ण्या नामक उल्का होती है।[1]

२. उल्का- ओषति, उष, षकारस्य ल्यत्वं क ततः टाप्। तेज, पुंज, ज्वाला, श्वाला, लपट, अग्नि शिखा।[2] उल्का वह पिण्ड है जो आकाश में गिरते तारे के समान जान पड़ता है। इस का अधिकांश भाग हमारे वायुमण्डल में ही भस्म हो जाता है। जो अंश बचकर भूमि तक पहुँचता है उसे उल्का पिण्ड कहते हैं।[3] आकाश से पतित अग्नि, आसमान से गिरी आग, वैदिक ऋषि उल्का को अग्नि का अंश जानते हैं और उल्का की उत्पत्ति भी सूर्य से मानते थे।[4] 'ऋग्वेद'

एक हाथ लम्बी, लाल कमल सरीखी लाल, आकाश में ऊपर को अथवा नीचे को तिरछी होती है, पड़ती हुई का विस्तार हो जाता है जिस का मस्तक चैड़ा होता है ऐसी उल्का होती है। लम्बी पूंछ वाली होती है इसके बहुत से लक्षण हैं, सर्प, गीदड़, गधा, गौ, हाथी, कीजाड़, इन के समान आकार वाली उल्का सभी प्राणियों को पीड़ा करती है।[5] इस प्रकार का लक्षण काश्यप ऋषि भी करते हैं।[6] स्वर्ग में शुभ फल भोग कर गिरते हुए प्राणियों का स्वरूप उल्का है। लोकपाल अपने अस्त्रों को प्राणियों के शुभाशुभ फल की जिज्ञासा से छोड़ा करते हैं। उसी का नाम उल्का है। काश्यप एवं गर्गादि महार्षियों के वचन हैं।[7]

---

१. चक्रा विशालज्वलिता पंतति वनराजिषु। धिष्ण्यान्त्यपुच्छां पतति ज्वलितांगारसन्निभा।।
तदेव - - ४३/०६

क. द्रष्टव्य - सचित्र ज्योतिष शिक्षा भ० - ०८, पृ० - ६७- १८

२. उल्का- स्त्री- अग्निर्गतज्वालायाम्। अनले। तेजः पुंजे। रेखाकारेऽन्तरीक्षात् पतज्ज्योतिषि। अस्यारूपप्रदर्शनन्तु। दिविभुक्तशुभफलानां पततां रूपाणियानि तान्युल्काः। धिष्णोल्काशनिविद्युतूतारा इति पंचधाभिन्नाः। शब्दार्थचिन्तामणि- प्र०भा०- पृ०- ४०६

३. उल्का शिरसि विशाला निपन्ती वर्द्धतेप्रतनुपुच्छा। दीर्घाचभवति पुरुषं भेदावहबो भवन्त्यस्याः।। काश्यपोपि। वृहच्छिखा चसूक्ष्माग्रारक्तनीलशिखोज्वला। पौरुषीय प्रमाणेन उल्का नानाविधास्मृता। इति ओषति। अर्यतेवा। ऋगतौ। शुकलवल्कोलका। अग्निशिखावत्तेजः पाते। उल्कायाः पातः। शब्दार्थचिन्तामणि - प्र० भा० - पृ० - ४०६

४. "शुकवल्कोल्वका" ३/४२ इति उणादिसूत्रेण। क- प्रत्यात् साधुः। तेजः पुंजः अग्नि शिखा अग्निः इत्यमरटीकायां भरतः एवं इत्युणादि कोषः।।

क. द्रष्टव्य - सचित्र ज्योतिष भाग - ०८, पृ० - ६७

५. आकाशत्पतितग्निः। इति रायमुकुटादयः। क. "अवचिपन्नर्उल्कामिव द्योः" ऋग्वेद-१०/६४/०४

६. हस्तद्वयप्रमाणा सा दृश्यते च समीपतः। ताराब्जतनुवच्छुल्का हस्तदीर्घांबुजारूणा।।
उर्द्धवाप्यथवा निर्यगधो वा गगनांतरे। उल्काशिरो विशाला तु पंतती वर्द्धते तनुम्।।
दीर्घपुच्छा भवेत्तस्या भेदाः स्युर्बदवस्तिथा। पीडाशाचोष्ट्राहिगोमायुखगोगजदांष्ट्रिकाः।।
न० सं०- ४३/०४- ०६

७. "वृहच्छिख च सूक्ष्माग्र रक्तनीलशिखोज्वला पौरुषीय-प्रमाणेन उल्का नाना विधा स्मृता।।" इति कश्यपः। क. द्रष्टव्य - काश्यप एवं गर्ग संहिता।

उल्कापात का वर्णन ऋग्वेद के १०वें मण्डल में बृहस्पति की प्रार्थना करते समय उनके तेज की प्रशंसा की उपमा उल्कापात से की गई है इसे यह स्पष्ट होता है कि उल्कापात आदि काल से ही प्रकृति के साथ सम्बद्ध है।[1] ऋग्वेद में उल्का एवं विद्युत को शत्रुओं पर छोड़ने वाला अस्त्र बताया है।[2]

अथर्ववेद १६/१०/०६ ऋचा में उल्का से फेंके गये नक्षत्र से उत्पन्न उत्पातों को शान्त करने की प्रार्थना की है। इस ऋचा से यह सिद्ध होता है कि उल्का को देवता अस्त्र के रूप में प्रयोग करते हैं।[3]

मनुस्मृति में विद्युत, वज्र, मेघ, रोहित, इन्द्र धनुष, उल्का, निर्घात, केतु (तारा) और नक्षत्रों को ईश्वर द्वारा उत्पन्न हुए बताया गया है।[4]

उल्का कई प्रकार की है तथा इसके भिन्न-भिन्न नाम हैं, धरणी, ध्रांणि, संचारा, धीर, सत्या, तटत्रर, द्रवा, विद्युत्जवलंती, दीर्घ चक्रयान, अल्प पुच्छा, अग्निभा, धिष्णया, द्विहस्ता, अप समीपया, निर्यगाता, उर्द्धगता, श्वेता, तन्वी, ताड़का इत्यादि नाना प्रकार की उल्का होती है। उनमें काली पूंछ की अतिदारुण होती है।[5]

उल्का स्वरूप–

आकाश में ऊपर से नीचे को या तिरछी गिरती हुई अपने रूप को बढ़ाती जाये और उस का सिर बड़ा हो उसकी पूंछ लम्बी होती है उसके कई भेद हैं परन्तु पूच्छा विशाल उल्का गिरते-गिरते बढ़ती है। परन्तु इसकी पूंछ छोटी होती जाती है। इस की दीर्घता पुरुष के समान होती है। कभी वह प्रेत, शस्त्र, खद, नौका, बन्दर दाढ़ वाले जीव या मृग के आकार वाली, कभी गोह, साँप, धूम रूप हो जाती है वह पाप मयी होती है।

कभी ध्वज, मत्स्य, हाथी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, अश्व, हंस के समान, कभी वज्र, सरट और स्वस्तिक के रूप में प्रगट होती है ये सब सुभिक्ष और कल्याणकारी है।[6]

---

१. आप्रुषायन् मथुन ऋतस्य योनिमवक्षिपन्नर्क उल्कामिव द्यौः।। ऋग्वेद- १०/६८/०४

२. विद्युत्प्रयोगाम् ब्रह्मास्त्राद्याञ्छत्रूणामुपरि कृत्वा विजयंप्राप्नुवन्तु।।
तव भ्रमास आशुया पतन्त्यनु स्पृश धृषता शोशुचानः
तपूंष्यग्ने जुह्वा पतङ्गानसन्दितो विष्वगुल्काः। ऋग्वेद- ०४/०४/०२

३. नक्षत्रमुल्काभिहतं शमस्तु नः नोऽभिचासः शमु सन्तु कृत्याः।
शं नो निखाता वल्गाः शमुल्का देशोपसर्गाः शमु नो भवन्तु।। अथर्ववेद- १६/१०/०६

४. विद्युतोऽशनिमेधांश्च रोषितेन्द्रधनूषि च।
उल्कानिर्धातकेतुंश्च ज्योतीष्युच्चावचानि च।। मनुस्मनृस्मृति- ०१/३८

५. सचित्र ज्योतिष शिक्षा भाग- ०८, पृ०- ६७

६. सचित्र ज्योतिष शिक्षा भाग- ०८, पृ०- २१-२८

उल्का पृथिवी पर नाना प्रकार के आकार में गिरती है, कभी मेघ सहित, कभी बिल्कुल मेघ न रहते गंभीर गर्जन से उल्कापात, कभी निर्मल आकाश पर, अल्प समय के मध्य मेघ का अन्धकार चढ़ा और भीषण शब्द के साथ प्रस्तर पड़ा है। कभी आकाश में सहस्र-२ सर्पाकार से झलक, गंभीर गर्जन के साथ उल्का गिरती है।[1] उल्का में जो प्रस्तर का लौह रहता है, वह पार्थिव प्रस्तर वा लोहे से नहीं मिलता। किसी उल्का के लोहे में १०० प्रतिशत या ९६ प्रतिशत लौह होता है। कहीं-कहीं धातव लौह का अभाव भी रहता है।[2]

१. बन्दर, गोह, धूमा, इनके समान अनेक आकार वाली होय तो मनुष्यों को अशुभ फल करती है। घोड़ा, हाथी, चन्द्रमा, चाँदी, वैल, हंस, ध्वजा, इन के समान अथवा हीरा, शंख सीपी, कमल इन्हीं के सदृश उल्का पड़े तो मंगल और शुभदायक जाननी चाहिए। अग्नि में उल्कापात हो जाय तो राजा का और देशों का नाश हो।[3] उल्का का प्रस्तर क्षुद्रकार कभी वृहदाकार होता है। उल्का के लौह में अपर धातु मिलाने से नाना प्रकार के यन्त्रादि बन सकते हैं। सनते-ईरानू के बादशाह और तिब्वत के लामा उल्का के लोहे से बनी तलवार रखने का वर्णन मिलता है।[4]

उल्का गिरने की संख्या-

प्रति होरा में १०००-००० संख्या का उल्का भूमि पर गिरती हैं। प्रतिदिन २,४०,००,००० संख्या उल्का पिण्डमात्र पृथिवी पर गिरते हैं। प्रतिदिन गिरी हुई उल्का का भार २४ सेर के बराबर होता है। उल्का पिण्ड का भार दो तोला से प्रारम्भ मन के ऊपर भी जाते देखा है। उल्का सदा सम संख्या में नहीं जाती है। उल्कापिण्ड में प्रायः **'मेग्नेशिया' 'निकोल'** लौहचूर्णादि होता है।[5]

इनके ठोस पदार्थों में लोहे, निकल और पत्थर की मात्रा अधिक रहती है। अग्नि गोले भी उल्का है परन्तु वे साधारण उल्का से बहुत बड़े होते हैं। जब अग्नि गोले

---

१. द्रष्टव्य- हिन्दी विश्वकोष- पृ०- ३९५
२. कपिगोधाधूमनिभा विविध पापदा नृणाम्। अश्वेभचन्द्ररजतवृषहंसध्वजोपमाः।।
वज्रशंखशुक्तिकाब्जरूपाः शिवंसुखप्रदाः। पंततीह स्वहा वही राजराष्ट्रक्षयाय च।।
नं. सं०- ४३/१०-११
३. द्रष्टव्य - हिन्दी विश्वकोष - पृ० - ३९५
४. प्रतिहोरं १०,००,००० संख्याका उल्का भूवि पतन्ति। प्रतिदिनं २,४०,००,००० संख्याकोल्कानां पिण्डमात्रा पार्थिवपिण्डमात्रया युज्यते।। प्रतिदिनं पतितानामुल्कानां सम्मिलितो भारः २४ सेर मितो भवति। उल्कापिण्डानां भारः 'तोला' द्वयात् प्रारभ्य नैक 'मन' पर्यन्तं दृश्यते।। उल्काः सर्वदः समसंख्यायां न दृश्यन्ते। उल्कापिण्डेषु प्रायः मेग्नेशिया, निकेल, लौह चूर्णादीनि लभ्यन्ते।।
अर्वाचीनज्योतिष ०८/०८/२१
५. द्रष्टव्य - हिन्दी शब्द सागर पृ० - ११४

पृथ्वी से थोड़ी ही ऊँचाई पर से जाते हैं तब उनकी घडघडाहट अथवा गर्जन अतिप्रचण्ड होती है। कुछ अग्नि गोले देखते देखते ही फूट जाते हैं। उल्का के गिरते समय कुछ क्षणों तक एक पतली धीमी ध्वनि सुनाई पड़ने का भी प्रमाण मिलता है। उल्का का मध्यमान गति लगभग १४ मील प्रति सेकेंड होती है। अवलोकन से पता चलता है कि रात के पहले भाग की अपेक्षा पिछले भाग में अधिक उल्काएँ दिखाई देती हैं। देवयानी वाली उल्काएँ भी कई बाद देखी गई हैं।[1]

वैज्ञानिक मत–

वैज्ञानिक दृष्टि से इनका महत्त्व बहुत अधिक है। क्योंमि एक तो ये अति दुर्लभ होते हैं दूसरे आकाश में विचरते हुए विभिन्न ग्रहों इत्यादि के संगठन और संरचना के ज्ञान के प्रत्यक्ष स्रोत केवल ये ही पिण्ड हैं। इनके अध्ययन द्वारा आकाश से आये हुए पदार्थ पर क्या-क्या प्रतिक्रियाएँ होती हैं, उनका ज्ञान होता है। इस प्रकार ये पिण्ड खगोल विद्या और भूविज्ञान के बीच सम्पर्क स्थापित करते हैं।[2]

अभी तक उल्कापिण्डों में केवल ५२ रासायनिक तत्त्वों की उपस्थिति प्रमाणित हुई है। इनमें केवल ८ तत्त्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। हाली, आक्सीजन, सिलिकन, मैग्नीशियम्, गन्धक, ऐल्यूमिनियम्, निकल और कैल्सियम् हैं। इनके अतिरिक्त २० अन्य तत्त्व पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। उल्का पिण्डों का मुख्य वर्गीकरण उनके संगठन के आधार पर किया जाता है। अधिकाँश लोहे-निकल या मिश्रधातुओं से बने होते हैं और कुछ सिलिकेट खनिजों से बने पत्थर सदृश होते हैं। उल्का पिण्डों का संग्रह भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण संस्था के निरीक्षण में भिन्न संग्रहालयों में किया गया है। यह पिण्ड सरकारी सम्पत्ति होती है।[3]

उल्का गिरने का फल–

सूर्य अथवा चन्द्रमा के उदय होने के बाद उल्का सन्धि में पड़े तो शुभदायक जानना, सफेद, लाल, पीली और काले रंग की द्विजातियों को अच्छी नहीं है दोनों बराबर सफेद वर्ण हों। उल्का का पुच्छ भाग दिशाओं में रहे अथवा अग्नि कोण आदि विदिशाओं में रहे तब पृथ्वी पर पड़े तो ऐसे टूटे हुए उल्का पिण्ड ब्राह्मण आदि वर्णों को अशुभ फलदायी होते हैं। १ संध्या समय में उल्कापात हो तो अग्नि की पीड़ा करे। खण्डित हुआ पिण्ड दिखे तो राजा को नष्ट करे।[4]

---

१. द्रष्टव्य- हिन्दी शब्द सागर पृ०- ११६

२. द्रष्टव्य- Gelogical Survey of India पृ०- १४६

३. उदयास्तमयं ऽर्केन्द्वोः परतोल्का शुभप्रदा। सितरक्ता पीतसिता सोल्का नेष्टा द्विजातिभिः।
उदयास्तमयं ऽर्केन्द्वोः ... विप्रादीनामनिष्टानि पतितोल्कादिमान्यपि ।।
सितोदितोभये पार्श्वे पुच्छे दिक्ष विदिक्षु च। विप्रादीनामनिष्टानि पतितोल्कादिमान्यपि ।।
न० सं० - ४३/१७-१८
[illegible]तद्वर्णानामनिष्टदा ।। तदेव- ४३/१६

४. सन्ध्यायां वहिपीडा च दलिता राजनाशिनी।

राजा के भवन में अथवा देवताओं की मूर्तियों पर उल्का पड़े तो राजा को नष्ट करे, घर में पड़े तो घर के मालिक को पीड़ा करे और पर्वतों पर पड़े तो राजाओं को पीड़ा करे। स्थल में पड़े तो दीक्षित, दिशाओं के स्वामी तथा किसान लोगों को पीड़ा करे और किला, कोट, खाही, शहर का दरवाज़ा, शहर का मध्य भाग इन में पड़े तो दूसरा राज्य अपने का भय हो और शहर के लोगों का नाश हो, गोशाला में पड़े तो गौओं के स्वामियों को पीड़ा हो, जल में पड़े तो शिल्पी को पीड़ा हो।[1]

उल्कापात के आकारानुसार फल-

तंतुसमान आकार वाली उल्का पड़े तो राजा को नष्ट करे, इन्द्रधनुष समान पड़े तो भी राजा को नष्ट करे और उल्टी हो कर पड़े तो राजा की रानी को नष्ट करे, तिरछी पड़े तो सेनापति को नष्ट करे।[2]

नीचे को मुख वाली उल्का राजा को नष्ट करे, ऊपर के मुखवाली ब्राह्मणों को नष्ट करे, वृक्ष समान तथा पूंछ समान आकार वाली उल्का मनुष्य मात्र को त्रास देती है। सर्प की भान्ति फैलती हुई उल्का (बिजली) पड़े तो सभी प्रकार के लोगों को अशुभ है। गोल उल्का पड़े तो पुर को नष्ट करे और छत्राकार पड़े तो राजा के पुरोहित को नष्ट करे। बाँस, गुल्म, लता, इनके समान आकार वाली उल्का पड़े तो राष्ट्र को नष्ट करे और सूकर, सर्प तथा खंडित आकार वाली उल्का पड़े तो अशुभदायक होती है।

इन्द्रधनुष समान आकार वाली उल्का पड़े तो राजा को नष्ट करे और मूर्च्छिता अर्थात् कान्ति हीन उल्का पड़े तो जल का काम करने वाले जनों को पीड़ित करे।[3]

इसी प्रकार का वर्णन सचित्र ज्योतिष शिक्षा भाग-८ में भी आया है। जो आकाश में ही रहे तो लोगों को अत्यन्त भ्रम करे और जो सूर्य चन्द्रमा को स्पर्श करे तो राजाओं को कंपित करे। दूसरे राजा के आने का भय हो। मनुष्यों को दुर्भिक्ष तथा जल का भय हो। सूर्य चन्द्रमा के बांयी ओर होकर उल्का पड़े तो शहर से तुच्छ बाहर गाँवों में रहने वाले जनों को पीड़ा करती है।[4]

---

१. राजराष्ट्रस्वनाशाय प्रासादप्रमिमासु च ग्रहेषु स्वामिनां पीडा नृपाणां पर्वतेषु च।।
दीक्षितानां दिगीशानां कर्षकाणां स्थलेषु च। प्रकारे परिखायां वा द्वारि तत्पीरमध्यमे।।
परचक्रागमभयं राज्यं पौरजमक्षयः। गोष्ठे गोस्वामिनां पीडा शिल्पिकानां जलेषु च।।
तदेव- ४३/२०-२२

२. राजहंत्री तंतुनिभा चन्द्रध्वजासमाधवा। प्रतीपगा राजपत्नीं तिर्यगा च चमूपतिम्।।
तदेव- - ४३/२३

३. अधोमुखी नृपं हन्ति ब्राह्माणानूर्ध्वगा तथा। वृक्षोपमा पुच्छनिभा जनसंक्षोभकारिणी।।
प्रसर्पिणी या सर्प्पवत्सा गणानामनिष्टदा। वर्तुलोल्का पुरंहन्च्छित्राकारा पुरोहितम्।।
वंशगुल्मलताकारा राष्ट्रविद्राविणी तथा। सूकरव्यालसदृशा खण्डाकारा च पापदा।।
इन्द्रचापनिभा राज्यं मूर्च्छिता हन्ति तोयदम्।। न० सं०- ४३/२४-२७

४. यद्यंबरे निपतति लोकस्थाप्यतिविभ्रमः। यद्यर्केद्व संस्पृशति तत्र भूपप्रकंपनम्।।
परचक्रागमभयं जनानां क्षुज्जलाद्भयम्। अर्केन्द्वोरपसव्योल्का पौरेतर विनाशदा।।
तदेव- ४३/ १२-१३

उल्का गिरने से घटित होने वाले शुभाशुभ फल की अवधि-

धिष्ण्या, उल्का और अशनि संज्ञक उल्का ४५ दिन में अपना शुभाशुभ फल करती हैं। उल्का, अशनि और विद्युत ये मनुष्यों को पूरा फल देती हैं। विद्युत और तारा छः दिन में फल घटित करता है। तारापात पूरा फल और धिष्ण्यापात आधा फल करती है।[1]

उल्कापात के ऐतिहासिक प्रमाण-

यूरोप के वैज्ञानिक समझते थे कि उल्का वायुमण्डल में से ही आती है। सन् १८३३ के १३ नवम्बर को उल्काओं की एक झड़ी लग गई। यह झड़ी पूर्वी उत्तर अमेरिका से रात भर देखी गई। अनुमान किया गया कि दो लाख से ऊपर उल्काएँ गिरीं। आकाश के जिस बिन्दु से उल्काएँ चलती जान पड़ती हैं उस को उल्का मूल कहते हैं।

सिंह वाली उल्का बौछारें कई बार देखी जा चुकी हैं। साधारणतः ३३-३३ वर्षों के अन्तर पर और सदा अक्तूबर या नवम्बर मास में देखी जाती हैं। १९२६ ई० में जियाकोबिनी जोनर धूमकेतु से एक साधारण उल्का बौछार का पुनः अवलोकन शताब्दी का सबसे प्रमुख दृश्य था जो साढ़े पाँच घंटे तक दिखाई पड़ता रहा।[2]

कलकत्ते के अजायब घर में अनेक उल्का प्रस्तर रखे हैं। उनके मध्य एक उल्कापिण्ड १२ मई १८६१ ई० को गोरखपुर में मिला था। उसका वज़न दो मन से अधिक है। यशोहर, बांकुड़ा प्रभृति ज़िलों से भी वृहत् उल्का के प्रस्तर संग्रह किये गये हैं। अधिकांशतः उल्का लोहे, निकल या मिश्र धातुओं से बने होने और कुछ सिलिकेट खनिजों से बने पत्थर सदृश होते हैं। इन्हें अग्नि गोले भी कहा जाता है। अभी तक उल्कापिण्डों में केवल ५२ रासायनिक तत्त्वों की उपस्थिति प्रमाणित हुई है। उल्कापात के पिण्डों को विभिन्न देशों ने एकत्रित करके अपने संग्रहालय में रखा हुआ है जो विभिन्न आकार के हैं। निकलती हुई आग के समान, असाधारण समूह में, एक स्थान से हजारों उल्काओं का इकट्ठा निकलने, उल्काओं की वृष्टि और गड़गड़ाहट के समान शब्द करती हुई उल्काओं का विभिन्न देशों में गिरने का वर्णन प्राप्त होता है।[3]

अशनि-

पुं०- स्त्री-'अश+ अनि' से निष्पन्न अशनि शब्द[क] बिजली, बिजली की चमक, महास्त्र, अग्नि, इन्द्रास्त्र, मेघ से उत्पन्न, ज्योति, वज्र, उल्का विशेष, विद्युदग्नि, अग्नि आदि नाम हैं।[4]

---

१. सम्यक्पञ्चविधानं च वक्ष्यते लक्षणं फलम्। पाचयंति त्रिभिः पक्षैर्धिष्ण्योल्काशनिसंज्ञिताः।।
विद्युत्षड्भिरहोभिश्च तारास्तद्वत्फलप्रदाः। फलपाककारी तारा धिष्ण्यख्यार्द्धा फलप्रदा।।
उल्काविद्युदशन्याख्याः सम्पूर्णफलदा नृणाम्।। तदेव- ४३ / १-०४

२. द्रष्टव्य हिन्दी शब्दसागर पृ०-२३७, क. Astronimical Survey of Universe, Page . २८६

३. द्रष्टव्य हिन्दी शब्दसागर पृ०- २३७-३९

४. अशनिः- पुं०- स्त्रीं(अश्नाति सङ्घात करोति)। (अश+अनिः) वज्रं इत्यमरः।
शब्दल्पद्रुम - भाग-१, पृ० - १३६

क. अश्नुते व्याप्नोति तेजसा विश्वम्, अश् व्याप्तौ अनि। मेघोत्पन्नं तेजः। हि० वि०- भाग-२, पृ०-३३३

अशनि के लक्षण- बादलों से रहित, देवांगना के समान मिश्रकेशी, शीघ्र गमन करने वाली और वज्र के समान जो विद्युत हो तो वह अशनि नामक होती है।[1]
अशनि स्वरूप- आकार चक्र के समान, बड़े शब्द के साथ गिरने वाली होती है। पृथ्वी को भी फाड़ देती है।[2]

ऋग्वेद के अनुसार अशनि-

वज्रस्वरूप, पदार्थों को छेदन-भेदन करने वाली, वज्र-रूप किरणों का प्रहार कर मेघ को काट कर भूमि में गिरा देने वाली[3] भागवत के षष्ठस्कन्ध के अनुसार इन्द्र ने वृत्तासुर को मारने के लिये दधीचि मुनि की अस्थि लेकर विश्वकर्मा से अशनि बनाया था।[4]

मनुष्य के समूह पर गिरने, घोर रूप से पतन करने एवं जिस द्रव्य पर गिरे उस का विनाश करने एवं अत्यन्त उग्र रूप वाली,[5] चमकीली, तीक्ष्ण, किरणों वाली होती है। इस ऋचा में इन्द्र को विद्युत शक्तिदायक और सोम को ऐश्वर्य प्रदान बताया है। शत्रुवध और दण्डनीय राक्षसों को नष्ट करने के लिए अशनि को प्रकट किया। अर्थात् परमेश्वर ने दण्डनीय प्रणियों को दण्ड देने के लिए अस्त्र शस्त्र के रूप में वज्रप्रहार के लिए अशनि को प्रकट किया हुआ है।[6] अशनि के दीप्ति ताप से प्राणियों का हनन होने का वर्णन भी मिलता है।[7]

---

१. चञ्चलायाम्। विद्युति, पवी, वृक्षादिविनाशके मेघोत्पन्नज्योतिष। अश्नाति सङ्घत करोति। अश्यतेऽनेनेतिवा। अत्तिर्सृधृधमीच्यादिना अनिः। अश्मवर्षर्णे उल्काविशेषे।।

शब्दार्थचिन्तामणि-१ भाग- पृ०- २०६

क. शत्रुघातके, अनुयाजे, "अशिनिरेव प्रथमोऽनुयाज" इत्युपक्रम्य "अशनिरिन्द्रोऽवहन्ति।।" इन्द्रास्त्रे वज्रे, प्रस्तरवर्षिणि, उल्काविशेषे, विद्युति च। "अशनेस्मृतस्य चोभयोर्वशिनश्चाम्बुधराश्च योनयः।" अग्नौ, विद्युदग्नौ,"तमब्रवीदशनिरसीति तद्य तन्नामाकरोद्विद्युत्तद्रुपमभव द्विद्युद्वा अशनिरतस्माद् विद्युदन्त्यशनिरबधीदित्याहुः।।" कुमा०, 'शत ब्राह्मण'

२. सौदागिनी च पूर्वा च कुसुमोत्पलनिभा शुभा। निरभ्रा मिश्रकेशी च क्षिप्रगा चाशनिस्तथा।

भद्रबाहु सं०- ४५/०३

३. द्रष्टव्य सचित्र ज्योतिष शिक्षा भाग- ०८, पृ०- ६८

४. त्वं द्विवोबृहतः सानु कपियोऽव त्मना धृषता शम्बरं भिनत्।
यन्मायिनो व्रान्दिनो मन्दिनो धृषच्छितां गभतिमशनिं प्रतन्यसि।। ऋग्वेद - ०१/५४/०४

५. द्रष्टव्य- 'भागवत पुराण- षष्टस्कन्ध'

६. तिग्मा यदन्तरशनिः पताति कास्मिञ्चिच्छूर मुहुके जनानाम्।
घोरा यदर्य्य स्मृतिर्भवात्यघ स्मा नस्तन्वो बोधि गोपाः।। तदेव - ०४/१६/१७

७. प्रति चक्ष्व वि चक्ष्वेन्द्रश्च सोम जागृतम्। रक्षोभ्यो वधमस्यतमशनिं यातुमद्भ्यः।।

तदेव - ०७/१०४/२५

उपर्युक्त वर्णन के अनुसार अशनि एक विद्युत का दारुण रूप एवं महा अस्त्र शस्त्र का कार्य करने वाली शक्ति है।

अशनि प्रहार का वर्णन संस्कृत साहित्य में अनेक स्थानों पर मिलता है और आज भी अशनिपात से बड़ी भयंकर अनहोनियाँ देखने को मिलती हैं। यह प्रकृति का एक ऐसा महास्त्र है जहाँ पर इस का प्रहार होता है वहाँ पर विनाश हो जाता है।[1]

उत्तर दिशा के अधिपति सोम बताये हैं, उनके रक्षक **'स्वज'** हैं तथा अशनि ही उनका बाण है। यहाँ यह स्पष्ट होता है कि अशनि को देवतागण बाण के रूप में प्रयोग में लाते हैं।[2]

विद्युत

विद्युत- **'वि'** विशेषण द्युत् धातु से निष्पन्न हुआ विद्युत् शब्द।[3] विद्युत के लिए अनेक शब्द आते हैं जैसे- बिजली, उषा, अग्नि, इन्द्र, ज्योति, अप्सरा, वज्र, अशनि, उल्का, धिष्ण्य, चंचला, चपला आदि अमर कोष में विद्युत के दश नाम इस प्रकार गिनाये हैं। शंपा, शतहृदा, ह्रादिन्य, ऐरावत्य, क्षणप्रभा, तड़ित, सौदामिनी, विद्युत, चचला और चपला।[4]

इसके अतिरिक्त विद्युत के गुण धर्मानुसार विद्युतपात, विद्युत्कंप, वज्रपात, अशनि, वज्री, वज्राशनि, वज्राग्ने, वज्रध्वनि, वज्रद्रु और इन्द्रवज्र शब्द आते हैं। वेदों में विद्युत के स्वरूप, गुण, धर्म आदि का वर्णन विस्तारपूर्वक आया है। ऋग्वेद में विद्युत के गुण, स्वरूप, धर्म स्वाभाव आदि का वर्णन इस प्रकार आया है:-

अति प्रकाश से प्रकट होने एवं चपलता के साथ प्रकाशित होने वाली[5], परस्पर पदार्थों के घिसने से उत्पन्न होने वाली[6] मेघ द्वारा छोड़ी जाने, गर्जना करने वाली और मेघ के विजली, वज्रपात आदि युद्ध के साधन बताया है।[7]

---

१. अग्ने त्वचं यातुधानस्य भिन्धि हिंसाशनिर्हरसा हन्त्वेनम्।
प्र पर्वाणि जातवेदः शृणीहि क्रव्यात्क्रविष्णुर्वि चिनोतु वृक्णम्।। तदेव - १०/८७/०५
तदेव - ०३/२७/०४

२. उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः।

३. विद्युत–'विशेषेण द्योतते'। "द्युत दीप्तौ"(भ्वा०आ०से०)"भ्राज भास"(३/२/१७०) इति क्विप्।
विद्युत्तडिति संध्यायां स्त्रियां त्रिषु तु निष्प्रभे। शंपा शतह्रादाह्रादिन्यैरावत्यः क्षणप्रभा।
तडित्सौदामनीविद्युच्चञ्चला चपला अपि। दश विद्युत। अमर कोष- १-३-८

४. विद्युत्तडिवतीति शाकपूर्णिः। सा ह्यवताडयति, दूराच्च दृश्यते।।" निघण्टु- ३-२-१०, पृ०-१२६

५. हस्काराद्विद्युतस्पर्य्यतो जाता अवन्तु नः। मरुतो मृडयन्तु।। ऋग्वेद- ०१/२३/१२

६. "परस्परं पदार्थघर्षणेन विद्युदादिविविद्याप्रकाशका"। तदेव - ०४/०२/१३

७. नास्मै विद्युन्न तन्यतुः सिषेध न यां मिहमकिरद्ध्रादुनिंच।
इन्द्रश्च यद्युयुधाते अहिश्चोतापरीभ्यो मघवा वि जिग्ये।। तदेव- ०१/३२/१३

विद्युत देखने योग्य अद्भुत रूप को धारण करने वाली अग्नि, लौह आदि पदार्थों में गमन करने वाली, तार के सदृश आकाश में दृश्य होने वाली, विद्युतद्वारा आकाश, भूमि एवं जल में चलने वाले विमानों का संकेत, विद्युत के लोहे से बनाये हुए शस्त्र आग्नेयादि अस्त्रों का वर्णन, और बिजली के चलाने योग्य वाहनों को रचने का विधान सुवर्णरूपी चमक धमक वाली, चिलचिलाहट करने एवं लपट झपट से दौड़ने वाली, द्युलोक से अभ्रों के द्वारा शब्द करती हुई अपना विस्तार करने वाली होती है।

जगत् में तीन प्रकार की अग्नि

१- भूमण्डल पर अग्नि, २. सौरमण्डल में सूर्य और

३- सर्व व्याप्त होने वाली बिजली जो चराचर जगत के कार्यों को सिद्ध करती है।[1] विद्युत को ऋण एवं धनरूप से व्यापने वाली, पदार्थों पर गिरने वाली, जल वर्षण करने, चमकने एवं जल को उत्पन्न करने वाली बताया है।[2]

मेघ को विद्युत एवं शब्द युक्त, वृष्टि कारक एवं भूमि को सींचने वाला होता है इस से स्पष्ट होता है कि मेघ विद्युत से ओतप्रोत होता है।[3] शब्द करने एवं शीघ्र चलने वालों के सदृश गमन करने वाली होती है।[4]

प्रकाशमान विद्युत जल का मिश्रण एवं विक्षेपण करने वाली होती है।[5] विद्युत, मेघ, वायु और वायु शब्द आदि की विद्या को जानने वालों को सब प्रकार से लक्ष्मीवान् बताया है।[6] विद्युत को मेघ द्वारा भूमि पर लेने, सम्पूर्ण विश्व में अन्नादिक, औषधियों को उत्पन्न करने एवं वायु को अत्यन्त प्रवाहित करने वाली बताया है।[7] विद्युत में आकर्षण शक्ति, विद्युत शक्ति वाले शस्त्रों का उल्लेख, मेघ मण्डलों-द्युलोक तथा पृथिवी लोक को प्रदीप्त एवं वृद्धियुक्त करने वाली[8]

---

१. रोदसी आ वदता गणश्रियो नृषाचः शुराः शवसाहिमन्यवः।
आ बन्धुरेष्वमतिर्न दर्शता विद्युन्न तस्थौ मरुतो रथेषु वः।। ऋग्वेद- ०१/६४/०६
२. आविद्युन्मत्ऽभिः मरुतः सुऽअर्कैः रथेभिः यात् ऋषिमत्ऽभिः।
अश्वऽपर्णैः आविर्षष्ठया नः इषा वयः न पप्तत सुऽमायाः।। तदेव- ०१/८८/०१
३. आ होता मन्द्रो विदथान्यस्थात्सत्यो यज्वा कवितमः स वेधाः।
विद्युद्रथः सहसस्पुत्रो अग्निः शोचिष्केशः पृथिव्यां पाजो अश्रेत्।। ऋग्वेद- ०३/१४/०१
४. हिरण्यऽनेमय' पद्म विन्दन्ति विद्युतः वित्तम् मे अस्य रोदसी।। तदेव- ०१/०१/१०५
५. 'दिवो न विद्युत्स्तनयन्त्यभ्रैः'। तदेव- ०६/२७/०८
६. त्रिमूर्द्धनं सप्तरश्मिं गृणीयेऽनूनमग्निं पित्रोरूपस्थे।
निषत्तमस्य चरतो ध्रुवस्य विश्वा दिवो रोचनापप्रिवांसम्।। तदेव- ०१/१४६/०१
७. विद्युन्न या पतन्ती दविद्योद्भरन्ती मे आया काम्यानि।
जनिष्टो अपो नर्यः सुजातः प्रोर्वशी तिरत दीर्घमायुगः। तदेव - १०/६५/०६
८. प्रसुष्टुतिः स्तनयन्तं रुवन्तमिडस्पतिं जरितर्नूनमश्याः।
यो अब्दिमाँ उदनिमाँ इयर्ति प्र विद्युता रोदसी उक्षमाणः।। तदेव - ०५/४२/१४

महावलयुक्त और बादलों को छिन्न भिन्न करने वाली मेघ के बादलों को भूमि पर गिराने, बादलों को छिन्न-भिन्न करके, मेघों को अपने अधीन रखती है।[१] विद्युत को वायुओं के योग से उत्पन्न हुई वृष्टि को उत्पन्न करने वाली, बड़े-बड़े शब्दों को करने वाली, मेघ के अवयवों के सेवन के लिए दौड़ने वाली बताया है।[२] पवन, सूर्य और विद्युत को वृष्टिकारक और प्राणियों को सुख देने वाली, बताया है। विद्युत को तेज रूप, सुवर्ण के समान वर्ण युक्त, तेज स्वरूप निरन्तर सब ओर से स्थित और सब का पालन करने वाली[३] अत्यधिक तेज गति से चलने वाले विद्युद्रथा का वर्णन अर्थात् वायु या बादल का रथ विद्युत रथ होता है।[४] विद्युत को पृथिवी में भी वर्तमान होने, निरन्तर अनेक रूप धारण करने वाली[५], और अनेक रूपों को प्रकाशित करने वाली, कुटिलों के ऊपर स्थित एवं मेघ द्वारा आच्छादित रहने वाली बताया है।[६] इस प्रकार ऋग्वेद विद्युत का वर्णन अनेक ऋचाओं में आया है।

---

१. 'विद्युदादिविद्याः प्रापयन्तु' 'विद्युतो मरुतो जझझतीरिव भानुरर्त्तत्मना दिवः'।। तदेव-५/५२/६

क. स हि विद्युता वति साम पृथुं योनिमसुरत्वा ससाद।
स सनीडेभिः प्रसहानो अस्य भ्रातुर्न ऋते सप्तरथस्य मायाः।। तदेव - १०/९९/०२

२. विद्युत्महसो नरो अश्मदिद्यवो वातत्विषो मरुतः पर्वतच्युतः।
शब्दया चिन्मुहुरा ह्रादुनीवृतः स्तनयदमा रभसा उदोजसः।। तदेव - ०५/५४/०३

क. प्र वाता वान्ति पतयन्ति विद्युत उदोषधीजिर्हते पिन्वते स्वः।
इरा विश्वस्मै भुवनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवीं रेतसावति।। तदेव - ०५/८३/०४

३. नरा गौरेव विद्युतं तृषाणास्माकमद्य सवनोप यातम्।
पुरुत्रा हि वां मतिभिर्हवंते मा वामन्ये नि यमन्देवयंतः।। तदेव - ०७/६९/०६

क. इन्द्रस्य सोम पवमान् ऊर्मिणा तविष्यमाणो जठरेष्वा विश।
प्रणः पिन्व विद्युद्भ्रेव रोदसी धिया न वाजां उपमासि शश्वतः। तदेव - ०९/७६/०३

४. न्यविध्यदिलीविशस्य दृढ़ा वि शृङ्गिणमभिनच्छुष्णमिन्द्रः।
यावत्तरो मघवन्यावदोजो वज्रेण शत्रुमबधीः पृतन्युम्।। तदेव - ०१/३३/१२

क. अभिसिध्मो अजिगादस्य शत्रून्वि तिग्मेन वृषभेणा पुरोऽभेत।
संवज्रेणासृजद्वृत्रमिन्द्रः प्रस्वां मतिमतिरच्छाशदानः।। तदेव- ०१/३३/१३

५. वाश्रेव विद्युन मिमाति वत्सं न माता सिषक्ति। यदेषां वृष्टिरसर्जि।। ऋग्वेद- ०१/३८/०८

क. असामि हि प्रयज्यवः कण्वं दद प्रचेतसः।
असांमिभिर्मरूत आ न ऊतिभिर्गन्तो वृष्टिं न विद्युतः।। तदेव- ०१/३९/०९

ख. हिरण्यरूपः स हिरण्यसंदृगपां नपात्सेदु हिरण्यवर्णः।
हिरण्ययात्परि योनेनिर्षद्या हिरण्यदा ददत्यन्नमस्मै।। तदेव- ०२/३५/१०

ग. विद्युद्रथा मरुत ऋष्टिमन्तो दिवो मर्या ऋतजाता आयासः।
सरस्वती शृवणवन्यज्ञियासो धाता रयिं सहवीरं तुरासः।। तदेव- ०३/५४/१३

६. अयं स शिङ्क्ते येन गौर भीवृता मिमाति मायुं ध्वसनावधि श्रिता।
सा चित्तिभिर्नि हि चकार मर्त्यं विद्युद्भवन्ती प्रतिवव्रिमौहत्।। तदेव- ०१/१६४/२९

यजुर्वेद- यजुर्वेद में अग्नि तथा विद्युत का वर्णन समान रूप में है। जिस प्रकार अग्नि व्यापक है उसी प्रकार विद्युत भी व्यापक है, अग्नि तथा विद्युत का साजात्य है विशेष दृष्टि से अवलोकन करने से विद्युत किञ्चित भिन्न है। दाह तथा प्रकाश दोनों में समान गुण है केवल आकर्षण विकर्षण विद्युत के विशेष गुण हैं, पञ्चभूतों में अग्नि प्रधान तत्त्व है। सर्व प्रथम एवं प्रधान अग्नि है, 'अग्निर्वै देवानां प्रथमः'। विद्युदग्नि के गुणों तथा कार्यों की झलक उक्त मन्त्र में ही है। सब प्रकार की सम्पत्ति शक्ति देने वाली अर्थात् विद्युदग्नि का प्रयोग कर विविध समृद्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं।[1] विद्युत में तेज दहन शक्ति अद्भुत है अर्थात विद्युत तेजस्वी रश्मियों को प्राप्त हो स्पार्क रूप में प्रकट होती है। इस ऋचा में यह भी जिज्ञासा बतायी है कि यदि यह विद्युत पकड़ी जा सके तथा उपयोग करने योग्य बनाई जा सके तो बड़ी वेग शाली होने के कारण संसार के लिए अति कल्याणकारी हो सकती है।[2]

विद्युत को पकड़ने की विधि, सत्य शक्तिशाली, विद्युत के लिए तन्तुओं का विविध तत्त्वों से निर्मित कोई यन्त्र बनाने का वर्णन मिलता है।[3] वह विद्युत तन्तु पूर्व से पश्चिम से पूर्व अर्थात् आमने सामने दोनों तारों के सिरे जोड़े जायें, मीटर से दोनों सिरे बाँध लें, विद्युन्मार्ग की देख रेख रखने एवं सावधानी बरतने का वर्णन यजुर्वेद में आया है।[4]

अथर्ववेद के अनुसार विद्युत-

विद्युत में गड़गड़ाहट करने वाले शब्द अन्तरिक्ष में गर्जना करना पानी को अपने अन्दर ग्रहण करना एवं एकत्रित रखना, वज्र का प्रहार करना ऊँचाई से पर्जन्य को नीचे न गिरने देना, अर्थात् अपने शत्रुओं को वज्र का प्रहार फैंक कर अद्भुत समुद्र की नाभि में विद्यमान रहना, रिपु नाशक देवताओं का बाण अर्थात् देवता अपने शत्रुओं पर विद्युत के वज्र प्रहार से अपने शत्रुओं को नष्ट करते हैं।[5]

---

१. त्वमग्ने व्रतपाऽअसि देवऽआ मर्त्येष्वा।
त्वं यज्ञेष्वीड्यः रास्वेयत्सोमा भूयो भर देवो नःसविता वसोर्दाता वस्वदात्।। यजुर्वेद- २/१५/६

२. एषा ते शुक्र तनूरेतद्वर्चस्तया सम्भव भ्राजं गच्छ।
जूरसि धृता मनसा जुष्टा विष्णवे।। यजुर्वेद - ४/१६- १७

३. तस्यास्ते सत्यसवसः प्रसवे तन्वो यन्त्रमशीय।
स्वाहा शुक्रमसि चन्द्रमस्यमृतमसि वैश्वदेवमसि।। तदेव - ४/१८

४. चिदसि मनासि धीरसि दक्षिणासि क्षत्रियासि यज्ञियास्यदितिरस्युभयतः शीर्ष्णी।
सा नः सुप्राची सुप्रतीच्येधि मित्रस्त्वा पदि बध्नीतां पूषाध्वनस्पात्विन्द्राध्यक्षाय।। तदेव- ०४/१९

क. तरुणरविकिरणप्रकीर्ण केशो भृकुटिज्ज्वलपिङ्गलायताक्षः।
सतडिदिवधनः सकण्ठसूत्रो युगनिधने प्रतिमा.तिर्हरस्य।। माध्यमया- 'योग नाटक'

५. नमस्ते अस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे। नमस्ते अस्त्वश्मने येना दूडाशे अस्यसि।।
नमस्ते प्रवतो नपाद् यतस्तपः समूहसि। मृडया नस्तनूभ्यो मयस्तोकेभ्यस्कृधि।।
प्रवतो नपान्नम एवास्तु तुभ्यं नमस्ते हेतये तपुषे च कृण्मः।
विद्म ते धाम परमं गुहा यत् समुद्रे अन्तर्निहितासि नाभिः।।
यां त्वा देवा असृजन्त विश्व इषुं कृण्वाना असनाय धृष्णुम्।
सा नो मृड विदथे गृणाना तस्यै ते नमो अस्तु देवि।। अथर्ववेद सं०- ०१/१३/१-४

विद्युत में अग्नि विद्यमान होती है जो सर्वत्र विचरण करती है, जो सभी दिशाओं और वायु के अन्तर प्रविष्ट होकर विचरण करती है।[1] गड़गड़ाहट की गर्जना से युक्त होकर विद्युत भूमि पर उत्पन्न सभी औषधियों में गर्भ स्थापित करता है। विद्युत अपनी चमक, एवं गड़गड़ाहट के साथ वायु को दिशाओं में प्रेरित करती है और उनके साथ जल प्रवाह कर संसार को तृप्त करती है।[2] मेघों के शरीररूप जल से एकरूप हुए विद्युताग्नि उत्पन्न होने वाली वनौषधियों की पालक होती है।[3] अपशब्द ध्वनि करने वाले और मेघों में गर्जना करने वाले हैं। आपके निमित्त प्रमाण है। आप विद्युत रूप में चमकने वाले और वृष्टि करने वाले हैं। आपको हमारा नमन है। यहाँ मेघ, विद्युत आदि में प्राण का वर्णन आया है इससे यह सिद्ध होता है कि विद्युत प्राण धारण करने वाली शक्ति है।[4]

उपर्युक्त विद्युत वर्णन के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि विद्युत के गुण, धर्म, स्वभाव आदि का ज्ञान आदिकाल से ही नर प्राणियों को था। विद्युत में मेघ माला में चमकने वाली विजली, मेघमाला के संघर्ष से उत्पन्न विद्युतल्लता एवं विद्युत्प्रपात का भी ज्ञान पुरातन काल से है।[5]

आद्य नाटककार महाकवि भास माध्यमयायोगनाक नाटक में विद्युत का परिचय **'सतडिदिव घनः;** कहकर तड़ित द्वारा दिया, इससे यह स्पष्ट होता है कि विद्युत्पात का उल्लेख कवि ने किया है।[6] इसी प्रकार कवि कुल गुरु कालिदास ने भी मेघदूत मे **'मा भूदवं क्षणमपि च ते विद्युत विप्रयोगः'** कह कर विद्युत का उल्लेख किया है।[7]

उपनिषद् साहित्य में भी अनेक स्थलों पर विद्युत का प्रतिपादन किया है **"नमो विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः"** इत्यादि इसके अतिरिक्त संस्कृत साहित्य में अनेक स्थलों पर विद्युत पात, निर्घात, अशनि, वज्रपात आदि का विस्तार से वर्णन आया है जिन में से प्रमुख को आगे प्रस्तुत किया जा रहा है।

---

१. दिवं पृथिवीमन्वन्तरिक्षं ये विद्युतमनुसंचरन्ति।
ये दिक्ष्वऽन्तर्ये वाते अन्तस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्।। अथर्व०- ०३/२१/०७

२. अभि क्रन्द स्तनयार्दयोदधिं भूमिं पर्जन्य पयसा समङ्ग्धि।
त्वया सृष्टं बहुतमैतु वर्षमाशारैषी दृशगुरेत्वस्तम्।। अथर्व०- ०४/१५/०६

३. अयो विद्युदभ्रं वर्षं सं वोऽवन्तुसुदानव उत्सा अजगरा उत।
मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः प्रावन्तु पृथिवीमनु।। अथर्व०- ०४/१५/०६

४. अपामग्निस्तनूभिः संविदानो य ओषधीनामधिपा बभूव।
स नो वर्षं वनुतां जातवेदाः प्राणं प्रजाभ्यो अमृतं दिवस्परि।। अथर्व०- ०४/१५/१०

५. नमस्ते प्राण क्रन्दाय नमस्ते स्तरचित्लवे नमस्ते प्राण विद्युते प्राण वर्षते।। अथर्व०-११/४/२

६. विना वातं विना वर्षं विद्युत्प्रपतनं विना। विना हस्तिकृतान् देवान केनेमौ पातितौ द्रुमौ।।

७. तरुणरविकिरणप्रकीर्णकेशो भ्रुकुटिज्ज्वलपिङ्गलायताक्षः।
सतडिदिवघनः सकण्ठसूत्रो युगनिधने प्रतिमाकृतिर्हरस्य।। 'माध्यायोग० न०'

विद्युतपात के लक्षण-

विद्युत तड़-तड़ शब्द करती, चमकती हुई अचानक प्राणियों को त्रास उपजाती हुई कुटिल और विशाल होकर जलती हुई जीवों के उपर या वृक्षों आदि पर गिरती है।[1]

विद्युत के प्रकार, लक्षण एवं फल-

स्निग्ध बादल से उत्पन्न बिजली स्निग्धा कही जाती है। जिस बिजली में रश्मियाँ नहीं हैं, वह अस्निग्धा कही जाती है। यदि स्निग्ध बिजली पूर्व दिशा में चमके तो अवश्य वर्षा करती है। काले बादल से उत्पन्न हो तो कृष्णा विद्युत कही जाती है और यह वायु की वर्षा करती है। अग्नि कोण के मार्ग में स्थित विद्युत कृष्णा नाम से कही जाती है। इस से तीव्र पवन चलता है।[2]

हरित प्रभावशाली बिजली हरिता कही जाती है। दक्षिण में गमन करने वाली विद्युत रश्मिवती, नैर्ऋत्यकोण में गमन करने वाली हरिता और बहुत रोमवाली बिजली बहुत जल की वृष्टि करने वाली होती है। पश्चिम दिशा में प्रकट होने वाली, उत्तर मुख करके गमन करने वाली, कृष्ण रंग के बादलों से निकलने वाली और स्निग्धा ये चारों प्रकार की बिजलियाँ जल के आने की सूचना देती हैं। वायव्य कोण की बिजली थोड़ी वर्षा करने वाली और उत्तर दिशा की बिजली चाहे किसी भी वर्ण की क्यों न हो, अथवा रुक्ष हो तो भी जलवृष्टि करने वाली होती है।

ईशान कोण की बिजली तिरछी होकर पूर्व में गमन करे और दक्षिण में जाकर विलीन हो जाय तथा श्वेत रंग की हो तो वह जल की वृष्टि करने वाली होती है।[3]

---

१. अथ चन्द्राद् विनिष्क्रम्य विद्युन्मंडलसंस्थिता। श्वेताऽऽभा प्रविशेदर्कं विन्द्यादुदकसंप्लवम्।।
क. अथ सूर्याद् विनिष्क्रम्य रक्तमा समलिना भवेत्। प्रविश्य सोमं वा तस्य तत्र वृष्टिर्भयंकरा।।
भद्रबाहु सं० - ०५/१८-१६
ख. विद्युतं तु यथा विद्युत् ताडयेत् प्रविशेद् यदा। अन्योऽन्यं वा लिखेयातां वर्षं विन्द्यात् तदा शुभम्।।
तदेव - ०५/२०
२. स्निग्धास्निग्धेषु चाभ्रेषु विद्युत् प्राच्या जलावहा। कृष्णा तु कृष्णमार्गस्था वातवर्षावहा भवेत्।।
क. हिन्दी शब्द सागर - ११६ तदेव - ०५/२-४
३. हरिता हरितप्रभा। दक्षिण दक्षिणावर्ता कुर्यादुदकसंभवम्।।
रश्मिवती मेदिनी भाति विद्युदपरदक्षिणे। हरिता भाति रोमाञ्चं सोदकं पातयेद् बहुम्।।
अपरोत्तरा तु या विद्यन्मन्दतोया हि सा स्मृता। उदीच्यां सर्ववर्णस्था रूक्षा तु सा तु वर्षति।।
या तु पूर्वोत्तरा विद्युत् दक्षिणा च पलायते। चरत्यूर्ध्वं च तिर्यक्स्था साऽपि श्वेता जलवहा।।
भद्रबाहु सं०- ५/६५-०६

वर्ण के अनुसार विद्युत के फल-

उत्तर दिशा की विद्युत यदि स्वर्ण के समान वर्ण वाली और दीप्तिमान् हो तो शीघ्र वर्षा होवे।[1] यदि स्निग्ध वर्ण के बादलों में स्निग्ध वर्ण की बिजली हो तो वर्षा होवे और जो कृष्ण वर्ण की तथा कृष्णमार्ग (दक्षिण) की बिजुली चमके तो वायु का भय होवे।[2] अति प्रकाश वाली, स्निग्धवर्ण की तथा हरे प्रकाश वाली हरे रंगे की व प्रदक्षिण फिरने वालीं बिजली हो तो अवश्य वर्षा हावे।[3] पृथ्वी पर भी प्रकाश करने वाली हरताल के सदृश पीले वर्ण की बहुत किरणों वाली बिजली यदि दक्षिण के बिना किसी दिशा को चमके तो बहुत वर्षा होवे।[4] काले बादलों में चिक्कणवर्ण की बहुत बड़ी बिजली यदि उत्तर की ओर चमके तो अवश्य वर्षा होवे।[5]

विद्युत चमकने का लक्षण एवं फल -

यदि भूरी बिजली चमके तो पवन चले, यदि पीली बिजली चमके तो बहुत वर्षा हो, यदि लाल बिजली चमके तो गर्मी अधिक हो और यदि सफेद बिजली चमके तो अकाल हो।[6]

दिशानुसार विद्युत चमकने का फल-

यदि दिन में ईशानकोण में बिजली चमके तो उस समय पृथ्वी जल से बराबर हो जाती है। यदि उत्तर दिशा से सोना वर्ण के समान बिजली चमके तो जल देने वाली होती है शीघ्र वर्षा होती है। यदि पूर्व दिशा की ओर जाये तो बिजली जल देने वाली होती है। आग्नेय में जल सोखती है। दक्षिण दिशा में बिजली चमके तो काली घटा डराने वाली होती है। पश्चिम दिशा में बिजली चमके तो बहुत समय वर्षा देती है। नैऋत्य कोण में बिजली चमके तो आकाश निर्मल की सम्भावना होती है। उत्तर और ईशान दिशा में बिजली चमके तो शुभ दायक होती है। वायव्य दिशा में बिजली चमके तो वर्षा लाती है। शेष दिशा में बिजली चमके तो वर्षा हर लेती है। जिस देश में सुभिक्ष की संभावना हो बिजली उस देश की ओर जाती है। यह बिजली दिशाओं में बिड़ी रहकर मेघों को मार्ग दिखाती है अथवा बादल बिजली बिना नहीं गरजते और जल बिना मेघ नहीं वर्षता। परिघ और पूर्व पश्चिम उत्तर और ईशान में बिजली चमके तो शीघ्र वर्षा हो। पौष शुदी १४ को बिजली चमकना अच्छा है।

---

१. उत्तरस्यां यदा विद्युत्स्वर्णवर्णा प्रदीप्यते। सा विद्युज्जलदा ज्ञेया शीघ्रं मेघमहोदयः।।
२. स्निग्धा स्निग्धेषु चाभ्रेषु विद्युत्प्लाव्या जलावहा। कृष्णा तु कृष्णमार्गस्था वातवर्षावहा भवेत्।।
३. अथ रश्मिती स्निग्धा हरिता हरितप्रभा। दक्षिणा दक्षिणावर्त्या कुर्यादुदकसंप्लवम्।।
४. रश्मीति मेदिनी भाति विद्युदपरदक्षिणा। हरितालातिरोमा च सोदकं पाययेद्गुह्।।
५. अपारेण तु या विद्युच्चरते चोत्तरामुखी। कृष्णाभ्रसंश्रिता स्निग्धा सापि कुर्याज्जलागमम्।।८।।
भ०फ०भा०- विद्युत प्र०-४-८

६. द्रष्टव्य- सचित्र ज्योतिष शिक्षा- भाग- ८, पृ० ८८

इससे आषाढ़ कृष्ण में बहुत वर्षा होती है।[1] मार्ग शीर्ष की अष्टमी को बिजली चमके तो श्रावण में वर्षा हो। आकाश में सूर्य को बादलों से छिपाकर मेघ गरजें और बिजली चमके तो मेघ का उदय होता है। जिस देश में सुभिक्ष होने वाला हो उसी देश की ओर बिजली जाती है तथा सम्पूर्ण दिशाओं में गुप्तरूप से स्थित हो के भी मेघों का मार्ग दिखाती है।[2]

विद्युतपात फल-

प्रातःकाल बिजली चमकने का तत्काल फल होता है। सायंकाल या रात्रि का ३ दिन में फल होता है। संध्या का प्रकाश ४ कोस तक, मेघगर्जना का प्रकाश- २० कोस तक और बिजली की चमक-२४ कोस तक फैलती है। धिष्ण्या और अशनि का फल ४५ दिन में प्रकट होता है। बिजली का फल ६ दिन में प्रकट होता है और बिजली एवं वज्र इनका पूरा फल घटित होता है।[3]

नक्षत्र अनुसार विद्युत एवं अशनिपात का फल-

पू० फा०, पुनर्वसु, धनि, मूल में विद्युत या अशनि गिरे तो युवतियों को पीड़ा, पुष्य, स्वा०, श्रव० में विद्युत या अशनि गिरे तो ब्राह्मण क्षत्रियों को पीड़ा, रोहि०, उत्तरा, मृग०, चित्रा०, अनु०, रेवती में विद्युत या अशनि गिरे तो राजाओं को पीड़ा, तीनों पूर्वा, मघा, आर्द्रा, श्ले०, मूला में विद्युत या अशनि गिरे तो चोरों को पीड़ा और अश्व, पुष्य, अभि०, कृति०, विशा० में विद्युत या अशनि गिरे तो संगीत कलाकारों को पीड़ा हो।[4]

विद्युत का दिशा की ओर जाने का फल- ईशान कोण की श्वेत बिजली यदि शीघ्र गति से दक्षिण की ओर ऊपर व नीचे तिरछी जावे तो वर्षा होवे।[5] ऐसे ही ऊँचे व नीची जाने वाली, श्रेष्ठ गर्जने वाली स्निग्ध बिजली चमके तो सर्वत्र वर्षा करे।[6] नीली, ताम्र (लाल) गौर और श्वेत वर्ण की तथा एक बादल के दूसरे बादल में जाने वाली, मन्द शब्द व ज़्यादा शब्द करती हुई बिजली हो तो बहुत वर्षा करे।[7] यदि बिजली का रंग कपिल हो तो वायु चले, लाल हो तो धूप अधिक पड़े, काला रंग हो तो सर्वनाश करे और श्वेत रंग हो तो दुर्भिक्ष करे।[8]

---

१. ऐंद्री तु जलदा विद्युदाग्नेय्या जलनाशिनी। याम्या स्वल्पजला प्रोक्तां नैर्ऋत्याऽवृष्टिदा मता।।
प्रभूत जलता ज्ञेया वारुणी सर्वशस्यदा। वातं करोति वायव्या कौबेरी जलदा स्मृता।।
ईशानी शीघ्रवृष्टिः स्याद्विद्युल्लक्ष्मीरितम्।। भवि० फ०भा०- विद्युत प्रकरण- २-३

२. यत्र देशे सुभिक्षं स्याद्विद्युत्तत्रैव गच्छति। दिक्षु भूता स्थिता गुप्ता मेघानां मार्गदर्शिनी।।
तदेव - विद्युत प्र०- ०१

३. सचित्र ज्योतिष शिक्षा - ०१ भाग, पृ०- १०४-१०८

४. सचित्र ज्योतिष शिक्षा - ०८ भाग, पृ०- ६८

५. या तु पूर्वोत्तरा विद्युद्दक्षिणा चपलायते। चरेदूर्ध्वं चया तिर्यक्सापि श्वेता जलावहा।।

६. तथैवोदर्ध्वमधो वापि स्निग्धा रश्मिमती भृशम्। सद्घोषा वाप्यघोषा वा विद्युत्सर्वेषु वर्षति।।

७. नीला ताम्रा च गौरा च श्वेता वाभ्रान्तरं चरेत्। संघोषा मन्दघोषा वा विद्यादुदकसंप्लवम्।।

८. वाताय कपिला वायुद्रातपायातिलोहिनी। कृष्णा सर्वविनाशाय दुर्भिक्षाय सिता भवेत्।।
भवि०फ०भा०- विद्युत प्र०- ६-१२

ऋतु के अनुसार विद्युत के फल-

शिशिर ऋतु में लाल व पीली वर्ण की विद्युत चमके तो कभी भी वर्षा नहीं करे। वसन्त ऋतु में नीली व श्वेत वर्ण की, विद्युत चमके तो कभी भी वर्षा नहीं करे। ग्रीष्म ऋतु में हरी व शहद के रंग की विद्युत चमके तो रूखा एवं निश्चल गगन रहे अर्थात् वर्षा नहीं होती। वर्षा ऋतु में ताम्र व गौर वर्ण की विद्युत चमके तो वर्षा को बन्द कारक होती है। शरद ऋतु में नीले रंग की बिजली हो तो वर्षा नहीं करे और हेमन्त ऋतु में श्याम व ताम्र रंग की विद्युत चमके तो वर्षा नहीं करे। किन्तु उत्तर ऋतुओं में भी जो लाल बादल में लाल, हरे बादल में हरी, नीले बादल में नीली बिजली हो तो वर्षा होवे क्योंकि बादल और बिजली का एक रंग होने से वह निर्जल नहीं होती।[1] ऊपर-नीचे जाने वाली, स्निग्धा और बहुत रश्मि वाली शब्द करती हुई अथवा शब्द न भी करने वाली बिजली सभी दिशाओं में वर्षा करने वाली होती है।[2]

आकाश से तारे घिरने वाले उत्पातों का वर्णन-

दिन में ही आकाश में तारे उदित होना और सरोवरों में मछली एवं जलपक्षी का विलीन होना मृत्यु सूचक होता है।[3] तारों का बड़ी भारी धूलि राशि से आच्छादित होकर हतप्रभ होना, जगत के भावी संहार होने की सूचना देते हैं।[4] 'वाल्मीकि रामायण'

रावण की सेना पर सब ओर से बिना बादल के ही दुःसह एवं कठोर ध्वनि के साथ भयानक बिजलियाँ गिरने का उल्लेख मिलता है जो सेना के विनाशा की सूचित देने वाले उत्पात थे।[5]

दक्ष यज्ञ विध्वंस से पूर्व दक्ष को दोपहर के समय ही अद्भुत तारे दीखने का उल्लेख मिलता है जो कि दक्ष को यज्ञ विध्वंस एवं घोर अरिष्ट होने की सूचना देने वाला उत्पात था।[6] 'रुद्र संहिता'

---

१. शिशिरे नैव वर्षन्ति रक्ताः पीताश्च विद्युतः। नीलाः श्वेता वसन्ते च न वर्षन्ति कदाचन।।
हरिता मधुवर्णाश्च ग्रीष्मे रुक्षाश्च निश्चलाः। भवन्ति ताम्रगौराश्चवर्षास्वपि निरोधकाः।।
शारदा नाभिवर्षन्ति नीलवर्णाश्च विद्युतः। हेमन्ते श्यामताम्रास्तुता विद्युन्निर्जलाः स्मृताः।।
रक्ता रक्तेषु चाभ्रेषु हरिता हरितेषु च। नीला नीलेषु चाभ्रेषु वर्षन्ति एकयोनिषु।
भवि० फ० भा० - विद्युत प्रकरण - १३-१६

२. तथैवोर्ध्वमधो वाऽपि स्निग्धा रश्मिमती भृशम्। सघोषा चाप्यघोषा वा दिक्षु सर्वासु वर्षति।।
भद्रबाहु सं० - ०५/१०

३. उत्पेतुश्च विना रात्रिं तारा खद्योतसप्रभाः। सलीनमीनविहगा नलिन्यः शुषकपंकजाः।।
वा०रा० अरण्य का०-२३/१४

४. रजसा महता चापि नक्षत्रानि हतानि च। युगान्तमिव लोकानां पश्य, शंसन्ति लक्ष्मण।।
तदेव - - - - २३/१०

५. निपेतुरिन्द्राशनयः सैन्ये चास्य समन्ततः। दुर्विषह्यस्वरा घोरा विना जलधरोदयम्।। तदेव- १२६/२६

६. द्रष्टव्य- शिवपुराण रुद्रसंहिता - २३-२४ अध्याय

वज्रपात- वज्र- 'वज' धातु और 'रन्' प्रत्यय से निष्पन्न।

पर्याय- ह्रादिनी, कुलिश, भिदुर, स्वरू, शाम्ब, दम्भोलि, अशनि, कुलीश, स्वरूस, साम्ब, वज्राशनि, इन्द्रायुध, शतधार, शतार, आपोत्र, अक्षज, गिरिकण्टक, गौ, अभीत्थ, मेघभूति, गिरिज्चर, जाम्बवि, दम्भ, भिद्र, अम्बुज।

वैदिक पर्याय- विद्युत, नेमि, हेलि, नम, पधि, सुक्, वृक, वथ, वज्र, अर्क, कुत्स, कुलिश, तुज, तिग्म, मेनि, स्वधिति, सायक, परशु।

अर्थ- किरणों का समूह, लौहविशेष, एक प्रकार का लोहा जो बहुत कड़ा मज़बूत घोर और दारुण होता है। यह वज्र लौह अनेक प्रकार का होता है। देखने में वज्र लौह श्लाका की तरह होता है, किन्तु यथार्थ में सो नहीं होता, विद्युत बिजली से उत्पन्न होता है। मेघों के परस्पर संघर्षण से विद्युत के साथ उत्पन्न होता है।[1]

ऋग्वेद में वज्र का वर्णन-

अतिकठोर अर्थात् न टूटने वाला पदार्थ इसके अस्त्र शस्त्र कठोर होते हैं। मेघों को काटने की क्षमता होती है ताप वाला अर्थात् ताप की क्षमता के प्रभाव से पदार्थ में छेदन करने का गुण, तेज प्रकाश युक्त, अतन्त पराक्रमवान् अर्थात् अत्यन्त बलवान् होता है। आग्नेया अस्त्र प्रयोग के लिए वज्र का प्रयोग किया जाता था। पराक्रम तेज युक्त अस्त्र, किरण समूह अस्त्र, सूर्य द्वारा उत्पन्न, प्रहार करने योग्य किरण समूह अस्त्र अर्थात् वज्र प्रहार करने पर अपने तेज एवं किरण समूह छोड़ कर शत्रुओं का नाश करने वाला प्रसिद्ध अस्त्र-शस्त्र में प्रमुखास्त्र होता है।[2]

---

१. वज्र- 'वज' गतौ, (भ्वा०प०से०) 'ऋज्रेन्द्र' (१०२/१८) इति। साधुः 'वज्रं' स्याद्बाधके धाष्यां क्लीवं योगान्तरे पुमान्। वज्रा स्नुह्यां गुडूच्वां च वज्रो सुह्यन्तरे स्मृता। दम्भोली हीरकेऽप्यस्त्री वज्रं त्रपुवरत्रयोः' स्फूजनं, 'टु ओस्फूर्जा वज्रनिर्घोषे (भ्वा० प० से०) "द्वितोऽथुच्"। ३१३/८३ वज्रनिर्घोषोऽशनिशब्दः। वज्रनिष्पेषे, वज्राग्नेः, द्वे वज्रध्वने, 'ह्रादिनी वज्र विद्युतोः' 'वज्रोस्त्री' इति वक्ष्यमाणंतस्यैवानुवादः। अमर कोष- प्र० म०- ४७, पृ०-२०, क. .ष्टव्य- हिन्दी विश्वकोष- पृ०- ५३७

२. इन्द्रे यातोऽवसितस्य राजा शमस्य च शृङ्गिणे वज्रबाहुः।
सेदु राजा क्षयति चर्षणी नाम रान्न नेमिः परिता बभूव।। ऋग्वेद- ०१/३२/१५

क. 'स्वधितिर्षा ततक्ष'- ऋग्वेद- ०३/०८/०६

ख. इन्द्र इद्धर्य्योः सचा सम्मिश्ल आ वचोयुजा। इन्द्रो वज्री हिरण्ययः।। ऋग्वेद- १/०७/०२

ग. इन्द्र वयं महाधन इन्द्रमर्भे हवामेह। युजं वृत्रेषु वज्रिणम्।। ऋग्वेद - ०१/०७/०२

घ. तुञ्जेतुञ्जे य उत्तरे स्तोमा इन्द्रस्य वज्रिणः। न विध्नेर अस्य सुष्टतिम्। ऋग्वेद- १/७/७

च. इन्द्र त्वोतास आ वयं वज्रं यना ददीमहि। जेयम सं युधि स्पृधः।। ऋग्वेद-१/८/३

छ. यावत्तरो मघवन्यावदोजो वज्रेण शत्रुमवधीः [illegible] ...युत्। ऋग्वेद- १/३३/१२

विद्युत भासमान और चुम्बक पदार्थों से निर्मित और इन्द्रधनुष के समान होता है। चम्बुक पदार्थों से निर्मित 'भासमान' नामक वज्र नितान्त कमनीय और चारों ओर से घातक होता है। यह वज्र सूर्य के रसादान और जल प्रदान करने वाले कार्यों से सम्बद्ध होता है।[1]

वज्र न्याय की रीति से दण्ड देने वाला अस्त्र, कठोर, गर्जना करने वाला, अभेद से रहित साधन, लोहे से निर्मित सा कठोर पदार्थ और दुष्टों से रक्षा करने वाला शस्त्र बताया है।[2] भासमान नामक सूर्य की किरणें जो अति वेग वाली होती हैं और एक क्षण में सर्वत्र फैल जाती हैं, उन भासमान किरणों से निर्मित और मेघ को नष्ट करने वाला अर्थात् वज्र मेघों को काटने एवं वृष्टि करने वाला होता है।[3] इस प्रकार वज्र के विषय में ऋग्वेद में और भी वर्णन मिलता है।

श्रुतिरिक्त महापातक अर्थात् महा पाप कर्म होने से वज्राघात से मृत्यु होती है। नारियल आदि वृक्ष के शिखर, वड़े ऊँचे स्तम्भ, घर, जनसमूह एवं प्राणियों आदि पर वज्राघात होते देखा जाता है। जिस वस्तु पर वज्रपतन होता है वह चूर-चूर हो जाती है और प्राणियों पर हो तो वह मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। जिस वृक्ष पर वज्रपतन होता है वह पेड़ सूख जाता है।

अँग्रेज़ी में Thunder-bolt कहते हैं। कई स्थानों पर वज्रपात होने से वह विद्युत पुनः ऊपर नहीं उठ सकता और न भीतर ही घुस सकता है तो वह एक लौह के रूप में एकत्रित हो जाता है जैसे कदली वृक्ष पर या गोबर की ढेर पर वज्र गिरने से वह ऊपर नहीं उठ सकता और न भीतर ही घुस सकता है। इस प्रकार इन स्थानों से वज्रपतन का लौह लोगों को प्राप्त होता है जो अति बहुमूल्य होता है। अनेक बार वज्राघात से मृत या मृत्यु प्राप्त व्यक्ति को मिट्टी में गाड़ रखने से पुर्जीवन का लाभ होते देखा गया है।[4]

---

१. वृषायमाणोऽवृणीत सामें त्रिकद्रुकेष्वपिबत्सुतस्य।
आ सायकं मघवादत्त वज्रभहन्नेनं प्रथमजामहीनाम्।। ऋग्वेद- ०१/३२/०३
क. वर्धी वृत्रं वज्रेण मन्दसानोऽप वज्रं महिमा दाशुणे वम्।। ऋग्वेद- १०/२८/०७
ख. सो अस्य वज्रो हरितो य आयसो हरिनिकामो हरिरागभस्त्योः।
द्युम्नी सुशिप्रो हरिमन्युसायक इन्द्रे नि सपा हरिता मिमिक्षिरे।। तदेव - १०/९६/०३
द्युम्नी सुशिप्रो हरिमन्युसायक इन्द्रे नि सपा हरिता मिमिक्षिरे।। तदेव - ०१/०८/०५
२. महाँ इन्द्रः परश्च नु महित्वमस्तु वज्रिवे। द्यौर्न प्रथिना शवः। तदेव - ०१/१०४/१२
स वज्रभृद्दस्युहा भीम उग्रः सहस्रचेताः शतीनथऋभ्वा। तदेव- ०१/१००/१२
क. 'तस्य वज्रः क्रन्दति' - - -। तदेव- ०१/१००/१३
ख. 'आपो न वज्रिन्नन्वो ववं' - -। तदेव - ०८/४६/०३
ग. 'इन्द्रस्य वज्र आयसः'- - - । तदेव - ०८/९६/०३
घ. आत्सोम इन्द्रियो रसो वज्रः सहस्रसा भुवत्। उक्थं यदस्य जायते।। तदेव- ०९/४७/०३
३. दिवि न केतुरधि धयि हर्यतो विण्यचद्वजो हरितो न रह्या।
तुददहिं हरि शिप्रो य आयसः सहस्रशोका अभवद्धरिम्भरः।। तदेव- १०/९६/०४
४. द्रष्टव्य - हिन्दी विश्वकोश - प१० - ५३७

हर्षचरित में विद्युत के गुणों का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है कि विद्युत चंचल होती है और पहले प्रकाश करती है तदनन्तर दारुण रूप से वज्र प्रहार किया करती है।[1] वज्रपात के चक्र का घूमकर गिरने का संकेत भी किया है।[2] विद्युताग्नि को वनाग्नि एवं चपल लपटों वाली बताया है।[3]

कादम्बरी के पूर्व भाग में वज्रपात के होने का वर्णन आया है।[4] कादम्बरी के उत्तर भाग में विद्युत के चारों ओर चमकने से वृष्टि होने के सूचित एवं बादलों की वृद्धि के लक्षण को बताने वाली बताया है अर्थात् जब चारों ओर विद्युत चमके तो काले-काले बादलों से वर्षा होती है।[5] अत्यन्त कष्ट से देखी जाने वाली और प्रचण्ड आवाज़ (तड़तड़ाहट) की जर्तना से सारे संसार को भयभीत करने वाली होती है।[6]

इस अशनि की ध्वनि सारे संसार में भयानक होती है।[7] वज्रपात होने का वर्णन मनुस्मृति के पाँचवें अध्याय में भी आया है।[8] रघुवंश में वज्रपात को असह्य बताया है। पारस्करगृहसूत्र में भी वज्रपात का वर्णन आया है।[9] उत्तरमेघदूत में मेघ को विद्युत धारण करने की बात कही है इससे यह स्पष्ट होता है कि विद्युत एवं विद्युत्पात का ज्ञान महा कवियों को पूर्ण रूप से था।[10] रघुवंश में भी विद्युत चमक को बादलों में बाँटने का वर्णन आया है।[11] हननरूपी भीषण वज्रपात का वर्णन उत्तर राम चरित के चतुर्थऽध्याय के २४वें श्लोक में भी आया है।[12]

---

१. नियतिर्विधाय पुंसां प्रथमं सुखमुपरि दारुणं दुःखम्।
कृत्वा लोकं तरला तडिदिव वज्रं निपातयति।। हर्ष चरित - ५/०१

२. पातयति महापुरुषान्सममेव बहुनादरेणैव।
परिवर्तमान एकः कालः शैलानिवानन्तः।। हर्ष चरित - ५/०२

३. "चटुल ज्वाला पुञ्जपिञ्जरीकृतसकलककुभा दुर्निवारेण दव हुत भुजा"। हर्षचरित- पृ०-०५

४. "यया चाविष्कृतमदनया वज्रमय्येवेदमनुभूतम्"।। कादम्बरी पूर्वभाग-पृ० - ८०

५. सर्वतो विस्फुरन्ती तडिदिव बलाहकोन्नाहम्।
उपारूढश्यामिका मेघ लेखेव सलिलागमनम् सूचियन्ति।। कादम्बरी उ० भा० - पृ०-१०१

६. दुर्दर्शतडित्सम्पातपीडितदिशमशनिनिर्ह्रादतर्जनापादितभुवनज्वरां ज्वलत्खद्योतनिवहेजजरिततरुगहन तलतमः प्रसरभीषसणतमां तमस्विनीमपि द्वरीकृत्यबलसहभुवं भीतिम्।। तदेव- उ० भा०- पृ०-३२६

७. डिम्भाहवहतानां च विद्युता पार्थिवेन च। मनु० सं० - ०५/९५

८. ममैव जन्मान्तरपातकानां विपाकविस्फूर्जथुरप्रसह्यः।। रघुवंश - १४/६२ पृ० - ४६२

९. अग्न्युत्पातेष्वृतुसन्धिषु चाकालम्। परस्करगृह्यसूत्र - २-११-२-३

१०. विद्युद्वतं ललितवनिताः सेन्द्रचापं सचित्राः सङ्गीताय प्रहतमुरजाः स्निग्ध-गम्भीरघोषम्।
मेघदूत-उत्तर- ०१/पृ०- १०५

११. सहस्रधात्मा व्यरुचद्विभक्तः पयीमुचां पंक्तिविद्युतमेव। रघु० ०६/०५ पृ० - १६८

१२. एतद्वैशसवज्रघोरपतनं शश्वन्ममोतपश्यतः क्रोधस्य ज्वलितुम् धगित्यवसरश्चापेन शापेन।।
उ० राम०- ०४/२४

कुछ ऐसे वृक्ष हैं जिन पर अधिक वज्राघात होता है और कुछ ऐसे वृक्ष हैं जिन पर वज्रपात नहीं होने का वर्णन इस प्रकार किया है।

चम्पकः पनसः शालः श्रीफलश्चन्दनस्तथा।
वकुलश्चाथ निम्बश्च वज्रवारण मित्यपि।।[1]

सहूनी, केला और तुलसी के वृक्षों पर वज्रपात नहीं होता।[2] खुबानी, देवदार और चीड़ आदि के वृक्षों पर अधिक वज्रपात होते देखा जाता है। इस प्रकार और भी अनेक वृक्ष हैं जिन पर वज्राघात होता है। युक्ति कल्प में भी वज्राघात होने वाले वृक्षों का वर्णन आया है।

घर को वज्रपतन से रक्षा हेतु उपाय-

आयस्स्कान्त या चुम्बक लोहे का त्रिशूल बनाकर निम्न मन्त्रों से घर के उदर में स्थापित करने से विद्युताग्नि का घर में भय नहीं रहता।[3]

१. मुनेः कल्याण-मित्रस्य जैमिनेश्चापि कीर्त्तनात्।
प्रचण्ड पवनाघाते निर्घोषस्तनितेऽपि च।
त्रि-पठेत जैमिनिन्तत्र प्राङ्गमुखी वा ह्युदङ्गमुखः।।

२ "जैमिनिश्च सुमतुश्च वैसम्पायन एव च।
पुलहः क्रतु पुलस्त्यौ षड़ेते वज्रवारकाः।।"
"रामं स्कन्दं हनुमन्तं वैनतेयं वृकोदरम्।
ये स्मरन्ति विरूपाक्षं न तेषां विद्युतो भयम्।।"

उपर्युक्त नामों का स्मरण करने से विद्युत एवं वज्रपतन का भय नहीं होता।[4] इस प्रकार के और भी अनेक उपचार वज्रकारक युक्तियों का वर्णन संस्कृत साहित्य में मिलता है जिन के करने से मनुष्य इन प्राकृतिक उत्पातों से बच सकता है।

---

1. युक्तिकल्पतरौ - ४७५ श्लोक०
2. वृक्षेषु स्नुही, नारीकेलः तुलसी च एतान् गृहोपरि आर्य्याः प्राञ्चोरक्षितवन्तः।।
युक्तिकल्प - प्र० - ६५
3. अयस्कान्त - चुम्बको त्रिशूलकारो। एवं मन्त्रेषु -
"मनेः कल्याण-मित्रस्य जैमिनेश्चापि कीर्त्तनात्।
विद्युदग्नि - भयं नस्यात् स्थापिते च गृहोदरे।।" युक्तिकल्प - पृ० - ६५
4. द्रष्टव्य - १- योग विज्ञानशास्त्रे।
युक्तिकल्तरु - पृ० - ६५

निर्घात

निर्घात- सं०- पु० 'निर्+हन्+घम्' शब्दविशेष।
लक्षण- वह शब्द जो हवा के बहुत तेज चलने से होता है, वायु से वायु टकरा कर जब आकाशतल से पृथिवी पर गिरती है तब वही शब्द निर्घात कहलाता है। अस्त्रभेद प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र, बिजली की कड़क।[1]

वायु से प्रतिहत हुआ वायु आकाश से पृथ्वी पर पड़ता है और जो अपने भारी पन से प्रदीप्त होता है वह निर्घात अत्यंत दोषकारक है। यह ही बिजली पड़ने का लक्षण होता है अर्थात् बिजली का पड़ना जो भयंकर जर्जर शब्द करे तो जिस दिशा में पड़े उसी दिशा के राजा को नष्ट करे।[2]

मनुस्मृति के अनुसार सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी ने विद्युत्, वज्र, मेघ, रोहित, इन्द्रधनुष, उल्का, निर्घात, केतु (तारा) और बड़े-छोटे नक्षत्रों को उत्पन्न किया हुआ है।[3] मनुस्मृति में ही मेघ और बिजली के गरजते एवं चमकते हुये वर्षा होने वाले समय को, उल्कापात, निर्घात, भूकम्प, उत्पात, धूल उड़ने, धूलपात, दिग्दाह के समय और शृंगाल, कुत्ते, गधे और ऊँट उच्च स्वर से शब्द करने के समय को अशुभ माना है।[4]

निर्घात होने का फल-

यदि चन्द्रमण्डल से निकलकर श्वेत मेघ युक्त बिजली सूर्यमण्डल में प्रवेश करे तो उसे अधिक वर्षा सूचिका समझना चाहिए। यदि सूर्यमण्डल से निकलकर रक्तवर्ण की मलिन विद्युत चन्द्रमण्डल में प्रवेश करे तो वहाँ पर भयंकर वायु चलती है।[5] बिजली बिजली से ताड़ित तोकर एक-दूसरे में प्रवेश करती हुई दिखलाई दे तो शुभ जानना चाहिए वर्षा यथोचित होती है।[6]

---

१. वायुभिहतवायुप्रपततजन्यशब्दविशेषः। "वायुनाभिहते वायौ गगनाच्च पतत्यथः प्रचण्डघोरनिर्घोषो निर्घात इति कथ्यते।।" इति। क. शब्दमाला। यदान्तरीक्षे बलवान् मारुतो मरुताहतः। पतत्यधः निर्घातो जायते वायुसम्भवः। इति ज्योतिषम्।।
ख. द्रष्टव्य - हि० वि० को० -१२-५८, ग. शब्द कल्प द्रुम - भाग २, पृ० - ८६०
घ. वायुनाभिहितो वायुर्गगनापतति क्षितौ। यदा दीप्तः खगुरुतः स निर्घातातोऽति दोष कृत्।। न०सं०-४३/२२
च. वाय्वभिहतवायुप्रपतनजन्यशब्दविशेषे। यथाहवराहः। पवनः पवनाभिहतो गगनादवनौ यदा समापतति। भवति तदा निर्घातः सच पापो दीप्तविहगरुतः।। शब्दार्थचिन्तामणि प्र० भाग- पृ०-१४०७
२. विद्युतोऽशनिमेघांश्च रोषितेन्द्रधनुंषि च। उल्कानिर्घाकेतुंश्च ज्योतीष्युच्चावचानि च।। मनु० स्मृ०-१-३८
३. विद्युत्स्तनितवर्षेषु महोल्कानां च संप्लवे। आकालिकमनध्यायमेतेषु मनुरब्रवीत।। तदेव-१-१०३
क. निर्घाते भूतिचलने ज्योतिषां चोपसर्जने। तदेव - - ०१-१०५
ख. नीहारे बाणशब्दे चं सन्ध्ययोरेव चोभयोः। तदेव - - ०१-११३
४. पांसुवर्षे दिशां दाहे गोमायुविरुते तथा। श्वखरोष्ट्रे च रूवति पङ्क्तौ च न पठेद् द्वि द्विजः।।१-११५
५. वायुनाभिहितो वायुर्गगनात्पतति क्षितौ। यदा दीप्तः खगुरुतः स निर्घातोऽतिदोष.तृ।। न०सं० - ४३/२२
६. निर्घातोऽर्कोदये नष्टः क्षितीशानां विनाशदः। तदेव - - ४३/२६

सूर्य उदय समय निर्घात होय तो राजाओं को अशुभ है अर्थात नष्ट करने वाला होता है और धनवान, योद्धा, स्त्री, वणिक एवं वेश्या नष्ट होते हैं। प्रहर दिन चढ़े के पहले निर्घात हो तो शहर में रहने वाले शूद्रों को हानि दायक है। मध्याह्न निर्घात होय तो ब्राह्मणों को तथा राजद्वार में नौकर रहने वाले जनों को अशुभ होता है। तीसरे पहर में होय तो वैश्यों को तथा जलचर जीवों को अशुभ है। दिन के चौथे पहर में धन का नाश करे, सायंकाल में नीच जातियों को अशुभ होता है। रात्रि के प्रथम प्रहर में खेती की हानि हो और दूसरे प्रहर में पिशाचों को नष्ट करे। आधी रात के समय घोड़ों को नष्ट करे, रात्रि के तीसरे प्रहर में शिल्पी तथा लेखक जनों को नष्ट करे और रात्रि के चौथे प्रहर में पड़ा हुआ निर्घात (बिजली) सब जनों को नष्ट करता है।[1] इसी प्रकार का वर्णन ज्योतिष तत्त्व में भी आया है। निर्घात अर्थात् बिजली का पड़ना जो भयंकर जर्जरशब्द करे तो जिस दिशा में पड़े उसी दिशा के राजा को नष्ट करे।[2]

प्रचण्ड पवन चले, निर्घात का पतन होने से और पक्षियों का दिन में रोदन करने से अशुभ होता है अर्थात् जिस देशमें यह उत्पात घटित होते हैं उस नगरमें अशुभ होता है। जिस दिशा में निर्घात या प्रचण्ड शब्द मालूम हो तो उस दिशा का नाश होता है। दिन के प्रथम पहर में निर्घात या प्रचण्ड शब्द हो तो ब्राह्मण वर्ण के लोगों का नाश होता है। दिन के द्वितीय पहर में निर्घात या प्रचण्ड शब्द हो तो क्षत्रिय वर्ण के लोगों का नाश होता है। दिन के तीसरे पहर में निर्घात हो तो वैश्यों का नाश होता हैं। चौथे पहर में निर्घात या प्रचण्ड शब्द हो तो शुद्रों का नाश होता है। सूर्यास्त के समय निर्घात हो तो चण्डालों का नाश करता है। रात्रि के प्रथमपहर में निर्घात हो तो अन्नका नाश होता है। रात्रि के दूसरे पहर में निर्घात हो तो पिशाचों का नाश होता है। तीसरे पहर में निर्घात हो तो घोड़ों का नाश होता है।[3]

जब आकाश में बिना मेघ के ही कठोर गर्जन हमेशा सुनाई पड़े और वाहन सब रोते हों अर्थात् रथ में जोते हुए घोड़े रोते हों और उन के अश्रु भूमि पर पड़ें तो राज्य में महायुद्ध होता है।[4]

---

१. आयामात्प्राक्पौरजनशूद्राणां चैव हानिदः। आमध्याह्ने तु विप्राणां नेष्टो राजोपजीविनाम्।।
तृतीययामे वैश्यानां जलजानामनिष्टदः। चतुर्थे चार्थनाशाय संध्याया हन्ति सङ्करान्।।
आद्ये यामे सस्यहानिर्द्वितीये तु पिशाचकान्। हंत्यर्द्धरात्रे तुरुंगास्तृतीये शिल्पिलेखकान्।।
चतुर्थयामे निर्घातः पतन् हन्ति तदा जनान्। भीषजर्जरशब्दः स तत्र तत्र दिगीश्वरम्।।
न० सं०- ४३/३०-३३
मु०ग० मि०-१३५
२- प्रचण्डवातसंजातनिर्घातपतनं भुवि। पक्षिदीप्ते रुते नेष्टं नृपघ्न भास्करोदये।। मु०ग० मि०-१३५
२- प्रचण्डवातसंजातनिर्घातपतनं भुवि। पक्षिदीप्ते रुते नेष्टं नृपघ्न भास्करोदये।।
३- निर्घातश्चण्डशब्दोऽथ गच्छंस्तां नाशयेद्दिशम्। द्विजान् क्षत्रियवैश्याश्च हन्याद्यामक्रमाद्दिवा।
अस्ते चैवात्यजानथार्त प्रहरैश्च यथा क्रमात्। यामिन्यां धान्यपैशांचान् हन्याच्चैव तुरगङ्मान्।।
तदेव- १३६-१३७
प्रपतन्त्यश्रुविन्दवः।। तदेव- २/३३
४- अनभ्रे च महाघोरं स्तनितं श्रूयतेऽनिशम्। वाहनानां च रुदतां

दिग्दाह

लक्षण-

दिशाओं के सहसा लाल-लाल हो जाने, चारों दिशाओं में आग सी लगी हुई दिखे तो दिग्दाह नामक उत्पात होता है। आकाश से लाल-लाल पानी बरसना, रुधिर वृष्टि कही जाती है और दिग्दाह दोनों उत्पात में गिने जाते हैं। एक दैवी घटना जिस में सूर्यास्त होने पर भी दिशाएँ लाल और जलती हुई सी दिखलाई पड़ती हैं।[1]

फल-

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार दिग्दाह होने से युद्ध, दुर्भिक्ष या रोग आदि होने के संकेत होते हैं।[2]

अशुभ फल- पीले वर्ण का दिग्दाह हो तो राजा का नाश होता है अर्थात् जब चारों दिशाओं में पीले वर्ण की अग्नि सी लगी दिखें तो उस देशके राजा का नाश होता है। अग्नि के समान वर्ण वाला दिग्दाह हो तो अपने देश का नाश होता है। उत्तरदिशा में दिग्दाह दिखाई पढ़े तो ब्राह्मणोंका नाश होता है। पूर्वदिशा में दिग्दाह हो तो क्षत्रियवर्ण के लोगों का नाश होता है। दक्षिण दिशा में दिग्ददाह हो तो वैश्य जाति के लोगों का नाश होता है। पश्चिम दिशा में दिग्दाह हो तो शूद्र जाति के लोगों का नाश होता है।

धूम्रवर्ण का दिग्दाह हो तो खेती का नाश करता है, कृष्णवर्ण का दिग्दाह हो तो देश को निर्मल कर देता है अर्थात् साफ कर देता है। ईशान कोण में दिग्दाह हो तो वैश्यों का नाश होता है। आग्नेय कोण में दिग्दाह हो तो शिल्पिकारों का नाश होता है। नैऋत्य कोण में दिग्दाह हो तो चोरों का नाश होता है। वायव्य कोण में दिग्दाह हो तो घोड़ों का नाश होता है। यदि रात्रि के समय सोनेके समान वर्ण वाला दिग्दाह और दक्षिण दिशा की वायु चलती हो तो शुभ होता है। निर्मल आकाश के समय सोने के वर्ण का दिग्दाह हो तो शुभ होता है।[3]

जब सन्ध्या समय में और प्रातः के समय में दिशायें जलती हुई सी प्रकाशित होती हैं और मेघ धूल एवं हड्डी की वर्षा करते हों तो देशमें भयंकर युद्ध एवं नरसंहार होताहै।[4]

---

१. द्रष्टव्य- हिन्दी विश्व कोश- पृ- २२७०, क. 'उत्पातविशेषे'- यथा हास्यलक्षणं वराहाचार्यः। तत्र वर्णभेदेनतस्यफलम्। शब्दार्थचिन्तामणि- दि अक्षर भागे।

२. दिग्दाहः पीतवर्णश्चेत्क्षितीशानां भयप्रदः। देशनाशायाग्नि वर्णोऽरुणवर्णोऽनिलप्रदः।।
धूमः सस्यविनाशाय .ष्णः शस्त्रभयप्रदः। प्राग्दाहः क्षत्रियाणां च नरेशानामनिष्टदः।। न० सं०-४६/१-२

३- दिग्दाहः पीतवर्णश्चेद्भूमिपालं निहंति सः। अग्नि वर्णो निजं देशं वर्णानुत्तरतः क्रमात् ।।
धूम्रोऽलपशस्यतां कुर्यात्कृष्णे देशे तु निर्मलम्। प्राच्यां भूमि भुजं हन्यादीशान्यां विदिशः क्रमात्।।
वैश्यात् शिल्पिजनांश्चौरांस्तुरगान् क्रमतस्त्वथ। निशि स्वर्णनिभः सव्यवामौ खे विमले शुभः।।
मु० ग० मि०- १४१-१४३

४- उभे सन्ध्ये प्रकाशेते दिशां दाहसमन्विते। आसीद्रुधिरवर्ष च अस्थिवर्षं च भारत ।।
म० भा० भी०- ०२/२८

जो दिग्दाह अपनी अत्यधिक कान्ति से प्रकाशित होता है और सूर्य की तरह . श्यमान द्रव्य की छाया को भी प्रकाशित करता है वह राजा को अधिक भय देता है और यदि रक्त वर्ण का हो तो शस्त्र का भय होता है अर्थात् जनता में शस्त्राघात होता है।[1]

असमय में ही जपा (अड़हुल) के फूल की भान्ति लाल रंग वाली सन्ध्या से आवृत हुई लङ्कापुरी की भूमि के दिन में भी जलती हुई सी दिखायी देने का उल्लेख मिलता है जो कि लकापुरी के निवासियों के लिये अशुभ का सूचक था।[2] सारी दिशाओं में धूल के कारण आच्छादन होकर धुँधली होने का वर्णन भी आया है।[3]

सन्ध्या का लाल चन्दन के समान होने का वर्णन श्री मद्वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड में आया है जो लङ्का की प्रजा के लिए अशुभ सूचक उत्पात थे।[4] श्री राम रावण युद्ध समय समस्त दिशाओं और विदिशाओं में अन्धकार आच्छादित होने, धूल की बड़ी भारी वर्षा के कारण आकाश ढक जाने का वर्णन आया है जो रावण के लिए अशुभ सूचक उत्पात था।[5]

जलती हुई दशों दिशाएँ, गधे के कण्ड के वर्ण समान भूरी-भूरी धूल धारण करने एवं धूम उगलने का वर्णन कुमार सम्भव में भी आया है।[6]

शुभफल-

दिग्दाह के समय यदि आकाश निर्मल, तारा, स्निग्ध, वायु की गति सदा प्रदक्षिण और दिग्दाह का वर्ण सुवर्ण जैसा तेजस्वी होवे तो राजाओं का कल्याण हो।[7]

---

१. योऽतीव दीप्त्या कुरुते प्रकाशं छायामपि व्यञ्जयतेऽर्कवद्यः।
राज्ञो महद्वेदयते भयं स शस्त्रप्रकोपं क्षतजानुरूपः।। बृहत्संहिता- ३१/०२

२. संध्याया चावृता लङ्का जपापुष्पनिकाशया। दृश्यते सम्प्रदीप्तमेव दिवसेऽपि वसुन्धरा।।
वा० रा० युद्ध काण्ड - १२६/२३

३. "धूमा दिशः परिधयः...............।" श्री मद्भागवत म० पु० - १४/१४
तमः संवृतमप्यासीत्सर्वं जगदिदं तथा। न दिशो नादिशो राजन् प्रज्ञायन्ते स्म रेणुना।।
म० भा०- उद्योग पर्व - ८४/०८

४. रक्तचन्दनसंकाशा संध्या परमदारुणा। ज्वलताः प्रपतत्येतदादित्यादग्निमण्डलम्।
वा० रा०- युद्ध काण्ड - २३/०४

५. दिशश्च प्रदिशः सर्वाः बभूवुतिमिरावृताः। पांसुवर्षेण महता दुर्दर्शं च नभोऽभवत्।।
तदेव- युद्ध काण्ड- १२६/३१

६. "धूमं ज्वलन्त्यो व्यसृजन्मुखै रजो दुदधुर्दिशो रासभकण्ठधूसरम।" कु० स०- १५/२१

७. नभः प्रसन्नं विमलानि भानि प्रदक्षिणं वातिसदागतिश्च।।
दिशां च दाहः कनकावदातो हिताय लोकस्य सपार्थिवस्य।। भविष्य फल भास्करः- मेघ प्रकरण-३८

गान्धर्व नगर

आकाश में भिन्न-भिन्न प्रकार के आकार की परछाई युक्त प्रकाश का दिखाई देना गान्धर्व नगर कहलाता है। यह सूर्य, चन्द्र और आकाश में प्रतीत होता है।

आकाश में श्वेतवर्ण की आभा हो तो ब्राह्मणों का नाश होता है, रक्त वर्ण की आभा हो तो क्षत्रियों का नाश होता है, पीतवर्ण की आभा हो तो वैश्यों का नाश होता है, श्यामवर्ण की आभा आकाश में दिखाई दे तो शूद्रों का नाश होता है। पूर्वदिशा में गान्धर्व नगर(आकाश में प्रकाश) यदि दिखाई देतो राजा का नाश होता है, दक्षिणदिशा में गन्धर्व नगर दिखाई दे तो मन्त्री का नाश होता है। पश्चिम दिशा में गन्धर्व नगर का दर्शन हो तो सेना का नाश होता है, उत्तर दिशा में गन्धर्वनगर का दर्शन होने से पुरोहितका नाश होता है, रज के समान गन्धर्व नगर का वर्ण हो तो धन का नाश होता है और अग्नि के समान वर्ण हो तो देश या नगर में भय होता है।[1]

गन्धर्व नगर के विषय में वैज्ञानिक मत-

जब गर्मी के दिनों में मेरुभूमि या वायु की तहयों का घनत्व के विच्छेद से दूर के शहर, गाँव, वृक्ष, नौका आदि का प्रतिबिम्ब उलटंकर पृथ्वी पर पड़ता है, जिससे कभी दूर के गाँव, नगर आदि या तो आकाश में उलटे टँगे या समीप दिखाई पड़ते हैं यह दृष्टिदोष वायु की असमान तह के कारण उस समय होता है जब नीचे की वायु इतनी हल्की होती है कि ऊपर की वायु ओर ऊपर नहीं जा सकती। इसी के कारण आकाश में विभिन्न आकृतियाँ दिखाई देती हैं जिन्हें गन्धर्व नगर कहते हैं। चन्द्रमा के किनारे का मण्डल जो उस रात को दिखाई पड़ता है जब आकाश हल्के बादलों की तह से ढका रहता है, वह दृश्य जो कोसों तक फैली हुई चमक को चद्दरों पर सूर्य की किरणों के पड़ने से दिखाई पड़ना ही गन्धर्व नगर कहलाता है।[2]

बिजली सहित श्वेत बादलों जैसा बना हुआ यदि स्निग्ध वर्ण का गन्धर्व नगर दीखे तो बहुत वर्षा होवे। गन्धर्व नगर का वर्ण यदि कपिल हो तो तृणसंज्ञक धान्यादि का नाश हो, लाल वर्ण का हो तो गवादि पशुओं का नाश और मिश्र हो तो राजाओं की सेनाओं का नाश हो।[3]

१- गाधर्वनगरं हंति वर्णान् श्वेतादिवर्णकम्। क्रनात्पूर्वदिशो भूपामात्यसैन्यपुरोहितान् ।।
सद्रजं निर्धनं कुर्यादायुधाग्निनिभं भयम्। मु०ग० मि०- १४८-१४६

२. द्रष्टव्य हि० श० सा० - ११६६, क- Universal astronomical . २४६

३. यदा शुभ्रैर्घनैर्निश्रं सविद्युतसबलाहकम्। गन्धर्वनगरं स्निग्धं विद्यादुदकसंप्लवम्।।
कपिलं शस्यघाताय मंजिष्टाहरणं गवाम्। अव्यक्त वर्णं कुरुते बलक्षोभं न संशयः।।
भविष्यफल भास्कर- मेघ प्रकरण- ४६-४७

रजोवृष्टि

लक्षण- आकाश में धूल सी छा जाने को 'रजोवृष्टि' कहते है।

फल-१. यदि आकाश में धूल छा जाए और ग्राम आदि को ढक ले तो राजाओं का, यह ग्राम के मुखिया का नाश होता है। जिस दिशा में धूम्रवर्ण के रज की या श्याम वर्ण के रज की वर्षा हो तो उस दिशा के देश या ग्राम में रोग का भय होता है। सूर्योदय के समय आकाश में धूलि छा जाय और दो तीन दिन बराबर छाई रहे तो देश में रोग उत्पन्न होता है। एक रात्रि भर धूलि छाई रहे तो राजा का नाश होता है। दो रात्रि में धूलि छाई रहे तो देश में क्षुधा का भय होता है। तीन, चार या पाँच दिन बराबर धूलिछाई रहे तो नगर या देश में मृत्यु का भय होता है।[1]

२- जहाँ दिशाएँ धूलि अथवा धूएँ से व्याप्त दिखायी पड़ती हैं एवं सूर्य, चन्द्र तथा ताराएँ धूमिल रंग की दिखाई पड़ती हैं तो यह भयवृद्धि की सूचना देती हैं।[2] धूलि से सब दिशाएँ जब भर जायें, धूलि की वर्षा हो और भयंकर रूप से मेघ रात्रि में जब रक्तकी वर्षा करें तो उस समय देशमें भयंकर युद्ध और नरसंहार होता है।[3]

३- यदि निर्घात हो तो राजा की मृत्यु होती है, दिशाओं में दाह होने से देश या नगर में वर्षा नहीं होती, धूलि की वर्षा हो तो नगर में दुर्भिक्ष होता है, पत्थरों की वर्षा हो तो अन्न का नाश एवं मंहगी पड़े, यदि उल्कापात गिरे तो जनक्षय होता है अर्थात् जनता का नाश होता है। विजली गिरे तो नदी तड़ागादि का जल सूख जाता है।[4] यदि ऋतु में विकार आ जाय तो उस ऋतु में रोग उत्पन्न होता है और फसल की हानि होती है। दिन में अन्धकार हो तो प्रजा का क्षय होता है।[5]

४- भूमि कम्पन हो, दिशाओं का दाह हो, निर्घात अर्थात् पहाड़ इत्यादि का गिरना, धूलि की वर्षा का होना, उल्कापात का होना, वृक्ष का गिरना या पत्थरो का गिरना, दिन में अन्धकार का होना, विजली का गिरना, ऋतु का विपर्यय हो, आकाश मण्डल में विपरीतता हो, सूर्य चन्द्रमा के स्वरूप में अन्तर हो, ऋतु में विकार हो जाय, कुसमय में ग्रहण हो तो देश या नगर में बालक, स्त्री, ब्राह्मण का वध हो, मनुष्यों को पीड़ा हो।[6]

१-रजश्चेच्छादयेद्ग्रामं प्रमुखान्नृपर्तीस्तदा। भवेत्तद्दिशि धूम्राभे तस्मिन् कृष्णे रुजां भयम्।।
रजः सूर्योदय व्योमं छादयेद् तदा। तदा रोगाः प्रभूताः स्युर्निशामेकां तु भूपतेः।।
नित्यं रात्रिद्वयं नैस्वं क्षुद्भयं त्रिश्चतुर्दिनम्। पंचाहं चेद्भयं घोरमृते कालं च शैशिरम्।।
मु० ग० मि०- १४६-१४८

आदित्यचन्द्रताराश्च विवर्णा भयवृद्धये।। म.पु-२४८/२
२- रजसा वाथ धूमेन दिशो यत्र समाकुलाः।

३- रजोवृता दिशः सर्वाः पांसुवर्षैः समन्ततः। उत्पातमेघा रौद्राश्च रात्रौ वर्षन्ति शोणितम्।।
म० भा० भी०- ३/३०

महर्घं चाश्मनां वृष्ट्या उल्कापाते जनक्षयः ।।
४- अवर्षणं च दिग्दाहे दुर्भिक्षं धूलिवर्षणे। मु०ग० मि०- १०८-१०६
राज्ञां नाशस्तरुच्छेदे विद्युत्पातेऽम्बुशोषणम्। तदेव - - १०६

५- ऋतौ विपर्यये रोगो दिवा ध्वांतः प्रजाक्षयः।।

६- भूमिकम्पो दिशां दाहो निर्घातो धूलिविभ्रमम्। उल्कापातस्तरुच्छेदो नभसो वृष्टिरश्मनाम्।।
अन्धकारो दिवाविद्युत्पातोऽर्थतुविपर्ययः। अकस्मात्तु स्थलार्द्रत्वं खग्रासग्रहणद्वयम्।
बालस्त्रीद्विज... पीड़ा जनस्य च।। तदेव- - ६३- ६६

आकाश में मण्डल, दिग्दाह एवं रजोवृष्टि होने का फल-

१- यदि सूर्यमण्डल या चन्द्रमण्डल, सूर्य या चन्द्र से दूर पड़ें तो उस मण्डल का फल दूसरे देशों में पड़ता है। यदि मण्डल निकट पड़े तो अपने देश में मध्यम फल होता है और देश में दूषित नहीं होता।[1]

२- यदि सूर्य या चन्द्र के चारों ओर दो या तीन मण्डल पड़ें तो तीन-तीन स्थान के वासियों को फल देते हैं। छिन्न मण्डल का फल खंडित होता है। अति दूर में कुछ फल नहीं होता है।[2]

३- यदि सफेदवर्ण का आकाशमण्डल हो तो देश में भय होता है, पीत वर्ण का आकाश मण्डल हो तो देश में रोग पड़ता है। नीलवर्ण का आकाश मण्डल हो तो वर्षा होती है, रक्त वर्ण का आकाश मण्डल हो तो युद्ध होता है। कृष्णवर्ण का आकाश मण्डल हो तो किसी राजा का नाश होता है। धूम्रवर्ण का आकाश मण्डल हो तो बर्फ या पत्थर पड़ें और वर्षा काल में जो आकाश मण्डल श्वेतवर्ण या रुक्षवर्ण हो तो वर्षा होती है।[3]

४- यदि आकाश में एकदम उदार भाव के सप्तर्षि-मण्डल का प्रभाकुंज छिप जाय अर्थात् दिखाई न दे तो नगर में महान् अपत्ति या युद्ध होता है।[4]

५- दोनों सन्ध्याओं में तेज का होना, वन या अग्नि रहित स्थान में धूल की उत्पत्ति होना, छिद्राभाव अर्थात् विना छिद्र के जो भूमि हो उस का अकस्मात् फट जाना या भूमि का कम्पन होना देश या नगर के लिए भयकारी होते हैं।[5]

६- आकाश में गन्धर्व नगर का दिखाई देना, दिन में तारे का दृष्टिगोचर होना, बड़ी उल्का का गिरना, काष्ठ, तृण और रक्त की वर्षा होना, गन्धर्व दर्शन होना, दिग्दाह होना, दिशाओं में धुआँ छा जाना रात्रि में इन्द्रधनुष या परिवेश देखना आदि उत्पात बहुत बड़े भय को सूचित करने वाले चिह्न होते हैं।[6]

यदि सन्ध्या काल में सूर्य के विरुद्ध दिशा में मुख करके पक्षीगण और जङ्गली पशु गण मधुर शब्द करें तथा निर्मल थोड़ी थोड़ी वायु चले तो देश के लिए शुभ होता है। यदि धूलियों से व्याप्त रुक्ष और लोहित वर्ण की सन्ध्या दिखाई दें तो देशों का नाश होता है।[7]

१- रवीन्द्वोः परिघी दूरे फलं चान्यत्र मण्डले। मध्यमं स्वीयदेशे स्यादन्यदेशेन दूष्यति।।
मु० ग० मि०- श्लो०-११२

२-द्वित्रिमण्डलके तद्वत्तत्तत्स्थाननिवासिनाम्। छिन्ने खण्डफलं चातिदूरे नास्ति फलं त्विदम्।। तदेव-११३

३-श्वेते भयं च पीते रुग्वृष्टिनीलेऽरुणे रणः। कृष्णो भूपक्षयो धुम्रे नीहारः परिधौ भवेत्।।
प्रावृट्कालं विनाऽन्यत्र परिधिश्च तदा त्विदम्। तस्मिन्काले तु वृष्टिः स्यात्परिधौ रुक्षिते सिते।।
तदेव - श्लो०-११४-११५

४- सप्तर्षीणामुदाराणां समवच्छाद्य वै प्रभाम्।। म०भ० भी० -३/१६

५- सन्ध्याद्वयस्य दीप्तिर्धूमोत्पत्तिश्च काननऽनग्नौ। छिद्राभावे भूमेर्दरणं कम्पश्च भयकारी।।
बृ० सं०- ४६/७५

६- गन्धर्व नगरं चैव दिवा नक्षत्र दर्शनम्। महोल्कापतनं कष्ठतृण रक्त प्रवर्षशम्।
गंन्धर्व देह दिग्धूनं भूमिकम्प दिवा निशि। निशीद्र चाप मंडूकं शिखरे श्वेतवायसः।।
एवमाद्या महोत्पाता बहवः स्थान नाशदाः।। न० पु० त्रि०- ६७, ६८, ७०

७- शस्ता शान्तद्विजमृगधुष्टा स्निग्धाः मृदुपवना च। पांशुध्वस्ता जनपदनाशं धत्ते रुक्षा रुधिरनिभा वा।।
तदेव-४७/२७

७. दिशा, ग्राम, वन, पर्वत ये सफेद वायु से आच्छादित हो जाय अर्थात् आँधी चलकर आकाश में (आँधी) उड़कर चलके आवे तो उस दिशा के प्राणियों के शस्त्रकोप से हानि करे।[1] जिस दिशा में रज (आँधी) उड़कर चलके आवे उसी दिशा के प्राणियों के शस्त्रकोप से हानि करे।[2]

काले वर्ण की रज (आँधी) राजमन्त्री को व देशों को हानि करती है, सूर्योदय के समय आँधी चलकर आकाश को आच्छादित कर दे तो दो दिन तथा तीन दिन तक अत्यन्त उग्रवायु चले और एक रात्रि तक निरन्तर धूल चढ़ी रहे तो राजा को नष्ट करे। दो रात्रि तक निरन्तर धूल चढ़ी रहे तो परचक्रागमन नहीं होता और तीन रात्रि तक धूल बनी रहे हो दुष्ट डाकू जनों का प्रजा में भय हो, रोग हो।[3] चार रात्रि तक रहे तो टिड्डी आदि ईति तथा दुर्भिक्ष का अत्यन्त भय हो, निरन्तर पाँच रात्रि तक हो तो महाराजा को नष्ट करे।[4]

शुभ फल दायी रजोवृष्टि-

शिशिर ऋतु में आँधी चलने से कुछ दोष नहीं होता शुभदायक होता है।[5]

इन्द्रधनुष

लक्षण- सं०- क्ली० 'इन्द्रे तत् स्वामिके मेघे धनुः इव', इन्द्रायुध, लक्षण, सूर्य की किरण बादल और वायु के संयोग से अनेक प्रकार के रंगों वाली होकर आकाश में धनुष के आकार हो जाती है वह इन्द्रधनुष कहलाता है।[6]

वर्षाकाल के उदय व अस्त होने के समय सूर्य की विपरीत दिशा में यह प्रायः दीख पड़ता है। वृष्टि जल कणों की आणविक शक्ति के प्रभाव से नाना वर्ण बन उक्त नैसर्गिक काण्ड उत्पन्न होता है। इसी प्रकार चन्द्र की आभा से कभी-कभी राम धनुः निकलता है किन्तु वह बहुत कम दिखाई पड़ता है।[7] सर्पराज शेषनाग के उच्च श्वास लेने से इन्द्रधनुष हो जाता है वह जिस दिशा में अथवा जिस कोण में हो उसी देश के राजा को नष्ट करे।[8]

---

१. सितेन रजसा छिन्न दिग्ग्रामवनपर्वताः। यथा तथा भवंत्यंते निधनं यान्ति भूमिपाः।। न० सं० -५०/१०

२. रजः समुद्रवो यस्यां दिशि तस्यां विनाशनम्। तत्रतत्रापि जंतूनां हानिदः शस्रकोपतः।। तदेव- ५०/२

३. मंत्रीजनपदानां च व्याधिदं चासितं रजः। अर्कोदये विजृंभति गगनं स्थगयन्ति च।।
दिनद्वयं च त्रिदिनमृत्युग्रभयदं रजः। रजो भवेदेकरात्रं नृपं हन्ति निरन्तरम्।। तदेव-५०/३-४

४. परचक्तगमं न स्याद्विरात्रं सततं यदि। क्षामडामरमातंकस्त्रिरात्रं सततं यदि।।
ईतिदुर्भिक्षमतुलं यदि रात्रचतुष्टयम्। निरन्तरं पंचरात्रं महाराजविनाशनम्।। तदेव-५०/५-६

५. ऋतावन्यत्र शिशिरात्संपूर्णफलदं रजः। तदेव - ५०/०७

६. हिन्दी विश्वकोश- भाग- ३, पृ०- ५०

क. नानावर्णाशवो भानोः साभ्रवायुविघट्टिताः। यद्वोयोम्नि चापसंस्थानमिंद्रचापं प्रदृश्यते।। नं० सं०- ४५/१

७. वक्री भूतेरोहिते। शक्रधनुषि। रविकिरणा बहुवर्णावाते नविलोडितानभसि।
शक्रायुधसंस्थाना.श्यन्ते ततुइन्द्रधनुः।। शब्दार्थचिन्तामणि - भाग-१, पृ० - ३१८

८. अथवा शेषनागेंद्रदीर्घनिश्वाससंभवम्। विदिक्षुजं दिक्षुजं च ताद्दिङ्नृपविनाशनम्।।
न० सं०- ४५/०२

फल- १. इन्द्रधनुष यदि वर्षा होने पर हो तो वर्षा को बन्द कर देवे तथा पहले तो वर्षा करे। शतभिषा नक्षत्र के दिन प्रभात के समय में यदि पश्चिम में इन्द्रधनुष होवे तो तत्काल वर्षा आवे।[1] पीला, काला, लाल वर्ण ऐसे क्रम से तीन रंगों वाला इन्द्रधनुष होवे तथा सूर्य में ये रंग देख पड़े तो राजाओं का युद्ध होवे।[2]

२. उत्तर दिशा में प्रतिसूर्य दीखे तो वर्षा होवे, दक्षिण दिशा में दीखे तो वायु चले, दोनों ओर से बरावरी में प्रतिसूर्य दिखे तो वर्षा को बन्द करे, सूर्य के ऊपर प्रतिसूर्य दिखे तो राजा को नष्ट करे और सूर्य के नीचे प्रतिसूर्य दिखे तो प्रजा को नष्ट करे। सूर्य के चारों ओर प्रतिसूर्य होकर साक्षात् सूर्य की क्रान्ति को हीन कर देवे तो जगत् का नाश हो, इसी प्रकार चन्द्रमा का भी फल जानना।[3]

३. इन्द्रद्वार, इन्द्र अर्गला तथा इन्द्रध्वज एवं इन्द्रदण्ड यदि नज़र में दिखाई पड़ें तो राजा की मृत्यु।[4]

४. यदि वृष्टि के विना इन्द्रधनुष का उदय हो तो वृष्टि कारक होता है। यदि वृष्टि में उदय हो तो वर्षा निवृत्ति करता है। यदि वर्षा होने के अनन्तर उदय हो तो पूर्व में राजाओं को पीड़ा हो। यात्रा करते समय राजा के सन्मुख यदि इन्द्रधनुष दिखे तो राजा की हार हो। यदि इन्द्रधनुष वर्षा में दो बार दिखें तथा सीधा हो तो बहुत वर्षा हो।[5]

५. इन्द्र धनुष के पडने पर स्थान अनुसार फल-

इन्द्र धनुष यदि वृक्ष में पड़े तो व्याधि करे, भूमि में- धान्य नाश, जल में- अवर्षण, बांवी में गिरे तो युद्ध भय, रात्रि में - मन्त्री वध, भूमि में लगा हुआ प्रकाश दार अनेक रंगों से युक्त दोनों बार उदित व अनुलोभ होने पर इन्द्र धनुष श्रेष्ठ होता है और बहुत वर्षा हो।[6]

मनुस्मृति में इन्द्र धनुष को अशुभ माना है और इस के दर्शन होने पर ओरों को वह न दिखाने का निर्देश किया है।[7] उत्तर राम चरित में इन्द्रधनुष को वायुद्वारा ध ारण करने वाला और मेघ की शोभा को धारण करने वाला कवि ने वर्णन किया है।[8] रघुवंश महाकाव्य के सप्तम सर्ग में भी इन्द्र धनुष के कई रंगों के होने का वर्णन मिलता है।[9] हर्ष चरित में इन्द्र धनुष का वर्णन तृतीय उच्छ्वास में कवि में आया है।[10]

१. प्रभाते पश्चिमेंद्रस्य धनुश्च यदि दृश्यते। वारुणे चैव नक्षत्रे शीघ्रं वर्षति माधवः।
भविष्य फल भास्करः - मेघ प्रकरण - ४६
२. पीताभः कृष्णवर्णोऽपि लोहितस्तु यथाक्रमात्। इन्द्रचापार्द्धमूर्तिश्चद्रानुर्भूपविरोध.त्।।
नारद सं० - ०२-१६
३. पीतपाठलर्नालेश्च वहिशस्त्रास्त्रभीतिदम्। वृक्षजं व्याधिदं चापं भूमिजं सस्यनाशदम्।।
जलदोदक्प्रतिसूर्यो भानोर्याम्येनिलप्रदः। उभयस्थोंबुभयदो नृपहोपर्यथो नृहा।।
क. पराभवंति तीक्ष्णांशोः प्रतिसूर्याः समंततः। जगद्विनाशमाप्नोति तथा शीतद्युतेरपि।। नं० सं०- ४५/१-३
४. इन्द्रद्वारार्गलास्विन्द्रध्वजो वा नगरं यदि। दृश्यते त्विन्द्रदण्डो वा तदा नृपवधं वदेत्।। न०सं०-४८/४
५. सचित्र ज्योतिष शिक्षा भाग- ८, पृ०- ९९, ६. सचित्र ज्योतिष शिक्षा भाग- ८,पृ०- ९९-१००
७. न दिवीन्द्रयुधं दृष्टवा कस्यचिद् दर्शयेद् बुधः।। मनुस्मृति- ०४/४९
८. दर्पेण कौतुकवता मयि बद्ध लक्ष्यः पश्चाद्बलैरनुसृतोऽयमुदीर्णधन्वा।
द्वेधा समुद्धतमरुत्तरलस्य धत्ते मेघस्य माधवतचापधरस्य लक्ष्मीम्।। उ० राम० च०- ५/११
९. तावत्प्रकीर्णाभिनवोपचारमिन्द्रायुधद्योततितोरणाङ्कम्।
वरः स वध्वा सह राजमार्ग प्राप ध्वजच्छायनिवारितोष्णाम्।। रघु०- ७/०३
१०. "मध्यधवल भासेन्द्रायुधेनेवातिदीर्घेण लोचनयुगलेन परितौ।" हर्ष चरित- ३ उच्छ्वास

वृष्टिवैकृत

भूमि पर वृष्टि सम्बन्धि उत्पन्न विकारों को 'वृष्टिवैकृत' उत्पात कहते हैं।

१- देश में अनावृष्टि हो अर्थात् भूमि पर वृष्टि न हो तो दुर्भिक्ष होता है, अतिवृष्टि हो तो भी दुर्भिक्ष होता है तथा शत्रु का भय होता है। वर्षा ऋतु से भिन्न ऋतु में वृष्टि हो तो रोग होता है और बिना मेघ की वृष्टि हो तो राजा की मृत्यु होती है।[1]

२- शीत और उष्णमें व्यत्यय होने से अर्थात् गर्मी के समय में ठण्ढी और ठण्ढके समय में गर्मी के पड़ने से तथा जिस ऋतु का जो धर्म वह ठीक ठीक नहीं होने से छैमास बाद राष्ट्रभय और देवजनित अर्थात् पूर्वजन्म के पापों के द्वारा रोग और भय उत्पन्न होते हैं।[2]

३- वर्षा से भिन्न ऋतु में लगातार एक सप्ताह तक वृष्टि होने पर प्रधान राजा का मरण होता है, रक्तं की वृष्टि होने पर युद्ध होता है, मांस, हड्डी, वसा की, घृत, तैल आदि की वृष्टि होने पर नगर में मरी पड़ती है,धान्य, सोना, वृक्ष की छाल, फल, पुष्प आदि की वृष्टि होतो भय होता है, कोयले और धूली की वृष्टि होने से नगर का नाश होता है।[3]

४- अकाल वर्षा होने से नगर में रोग और राजा द्वारा प्रजा पीड़ित होती है। सात दिन तक बादल घिरा रहे या अकाल वर्षा हो तो देश में दरिद्रता और महामारी द्वारा लोग पीड़ित होते हैं। शीत काल में गरमी और गरमी में शीत हो तो उस देश का नाश होता है। रुधिरकी वर्षा हो जहाँ उस देश का नाश होता है। दिप्त सूर्य में अर्थात् दिन में छाया होने से सूर्य छिप जाय तो देश में भय होता है। दिन में इन्द्र धनुष दिखे तो वर्षा अधिक होती है और आकाश में सूर्य की किरणें प्रचण्ड तथा दीप्त हों तो भी वर्षा अधिक होती है।[4]

५- वर्षाऋतु के सिवाय अन्य ऋतुओं में तीन दिनतक लगातार वृष्टि होने से अतिभय जनक होता है।[5]

६- अतिवृष्टि का होना और अनावृष्टि का होना इन दोनों प्रकार के उत्पातों से देश में दुर्भिक्षादि के पड़ने का भय होता है।[6]

१- दुर्भिक्षमनावृष्टावतिवृष्टौ क्षुद्भयं परभयं च। रोगो ह्यनृतुभवायां नृपतिबधोऽनभ्रजातायाम्।।
बृ० सं०- ४६/३८

२- शीतोषणावपर्यासो ना सम्यगृतुषु च सम्प्रवृत्तेषु । षण्मासाद्राष्ट्रभयं रोगभयं दैवजनितं च ।।
तदेव - ४६/६६

३-अन्यन्र्तौ सप्ताहं प्रबन्धवर्षे प्रधाननृपमरणम्। रक्ते शस्त्रोद्योगो मांसास्थिवसादिभिर्मरकः।।
धान्य हिरण्यत्वक् फलकुसुमाद्यैर्वर्षितैर्भयं विन्द्यात्। अङ्गारपांसुवर्षे विनाशमायाति तन्नगरम्।।
तदेव- ४६/४०,४१

४- अकाले रुङ्नृपार्तिश्च सप्ताहं ह्यभ्रकेपि च। वर्षणे वाग्रजो वृष्टौ नैः स्वं मासादिभिर्मृतिः।।
भयमंगारके धान्यैः फलाद्यैः स्यान्न संशयः । देशनाशः सुकोष्णाम्बु रक्तवृष्टौ प्रजायते ।।
दीप्ते सूर्ये प्रतीपा स्याच्छाया चेदीतितो भयम् । इन्द्रे काप्यतिवृष्टिः स्याद्व्योम्नि चण्डांशुदीपिते।।
मु० मि०प्र०- श्लो० १५२-१५४

५- अनृतौ त्रिदिनारब्धवृष्टिर्ज्ञेया हि। अ० पु० -२६२/१६
 वि० ध० पु०-१३८/१

६- अतिवृष्टिरनावृष्टिदुर्भिक्षायाभय [illegible]

७- वर्षा ऋतु के बिना दिन में अनन्त वृष्टिका होना देश के लिए अत्यन्त भयानक होता है। बादल रहित आकाश में विकृत हुई वृष्टि का होना राजा की मृत्यु का कारण होती है। ऋतुओं का विपरीत दशा में चलना अर्थात् शीतकाल में गर्मी और गर्मी में शीतकाल होने से राजाओं पर शत्रुपक्ष से भय होता हैं अर्थात् शत्रु हानि पहुँचाते हैं।[1]

८- जिस स्थान पर आकाश से रक्त की वर्षा होती है उस स्थान पर शस्त्रभय प्राप्त होता है अर्थात् वहाँ पर शस्त्रों द्वारा एक दूसरे पर प्रहार किये जाते हैं। अंगार और धूलि की वृष्टि होने पर वह नगर विनष्ट हो जाता है। मज्जा, हड्डी, तेल और मांसकी वृष्टि होने पर देश में प्रजा को मृत्यु का भय होता है। आकाश से फल, पुष्प, तथा अन्न की वृष्टि होने से शत्रु पक्ष द्वारा हानि पहुँचाने का भय रहता है।[2]

९- धूलि, जन्तु और उपलों के गिरने से रोग जन्य भय होता है। रुक-रुक कर अन्न की वृष्टि होने से अन्न की फसल में वृद्धि होने का भय होता है। सूर्य के वादल, धूलि से रहित रहने पर जब परछाई नहीं दीखती अथवा विपरीत दिखायी पड़ती है तब सारे देश को भय होता है।[3]

१०- बादलरहित रात्रि में दक्षिण अथवा उत्तरदिशा में श्वेत रंगका इन्द्रधनुष, उल्कापात, दिशाओं में दाह, सूर्य तथा चन्द्रमा में मण्डल तथा गन्धर्वनगर दिखाई दें तो उस समय देश पर शत्रु सेना का आक्रमण और विविध उपद्रवों का होना सम्भव होता है। इस प्रकार के वृष्टिवैकृत उत्पातों का वर्णन विष्णुधर्मोत्तर पुराण के एक सौ अठत्तीसवें अध्याय में भी किया हुआ है।[4]

सद्योऽनावृष्टि लक्षण-

जब अनेक तारें टूटें, दिग्दाह हो, धूलि की वर्षा, निर्घात, इन्द्र धनुष, ग्रह युद्ध हो तो तब अनावृष्टि होती है।[5] जब तक कौवे के पेट जैसे रंग के रूखे बादल हों, जब तक सूर्य का तेज शीतल हो, जब तक नैऋत का वायु हो तब तक वर्षा नहीं होती।[6]

१- अनृतौ तु दिवानन्ता वृष्टिर्ज्ञेया भयानका। अनभ्रे वैकृता चैव विज्ञेया राजमृत्यवे ।।
शीतोष्णानां विपर्यासे नृपाणां रिपूजं भयम्। म० पु०- २३३/१-२

२- शोणितं वर्षते यत्र तत्र शस्त्रभयं भवेत् । अंगारपांशुवर्षेषु नगरं तद् विनश्यति ।।
मज्जास्थिस्नेहमांसानां जनमारभयं भवेत्। फलं पुष्पं तथा धान्यं परेणाति भयाय तु ।।
तदेव- २३३/३-४

३- पांशुजन्तूपलानां च वषतो रोगजं भयम् । छिद्रे वान्नप्रवर्षेण सस्यानां भीतिवर्धनम्।।
विरजस्के रवौ व्यभ्रे यदा छाया न दृश्यते। दृश्येत तु प्रतीपा वा तत्र देश भयं भवेत्।।
तदेव- २३३/५-६

४- निरभ्रे वाथ रात्रो वा श्वेतं याम्योत्तरेण तु। इन्द्रायुधं तथा दृष्ट्वा उल्कापातं तथैव च ।।
दिग्दाहपरिवेषी च गन्धवेनगरं तथा। परचक्रभयं ब्रूयाद् देशोपद्रवमेव च ।। तदेव-२३३/७-८

५. उल्कापातश्च दिग्दाहो निर्घातः पांशुवृष्टयः। इंद्रायुधं च युद्धं च षडेते वृष्टिघातकाः।।
भविष्यफल भास्कर - वृष्टि प्रकरण - ४३

६. यावत्काकोदराः मेघाः यावत्सूर्यः शशिप्रभः। यावन्नैर्ऋति को वायुस्तावद्देवो न वर्षति।।
तदेव- - वृष्टि प्रकरण- ४४

मेघ द्वारा युद्ध, जय विजय एवं शुभाशुभ उत्पातों का ज्ञान-

मेघ यदि रूक्ष हों तो वायु चले, दुर्गंधित हो तो रोग करें और भयंकर शब्द जैसे गाजने वाले तथा कुवर्ग के हों तो वर्षा नहीं करें।[1] सन्ध्या में बादल रूक्ष और विकृतिरूप दिखाई दें तो अनावृष्टि, भय, रोग, दुर्भिक्ष और राजा का उपद्रव होता है।[2] यदि बादल कृष्ण, पीले, तांबे और श्वेत वर्ण के हों तो वे उत्तम वर्षा की सूचना देते हैं। बादल शुक्ल वर्ण के हों, स्निग्ध हों, विद्युत समान विचित्र, कबूतर के समान रंग के बादल हों तो तत्काल वर्षा होती है।[3]

विजय सूचक मेघ-

शुभ शकुन और शुभ-चिन्हों सहित यदि बादल हों तो वे वर्षा करते हैं तथा क्षेम, कुशल, सुभिक्ष और राजा की विजय सूचित करते है। रथ-गाड़ी, मोटर तथा आयुध, तलवार, बन्दूक और हाथी आदि प्राणियों के स.श बादल राजा के आगे-आगे गमन करें तो वे उस की जय की सूचना देते हैं।[4] ध्वजा, पताका, घण्टा, तोरण, इत्यादि की आकृति वाले बादल राजा के प्रयाण समय आगे-आगे चलें उससे राजा की विजय सूचित होती है।[5]

पराजय सूचक मेघ- भैंसा, शूकर, गधा आदि पशुओं और मांस भक्षी क्रूर पक्षियों, गीध, काका बगुला, बाज, तीतर आदि पक्षियों एवं दाँत वाले सिंहादि हिंसक प्राणियों के आकार वाले बादल राजा के युद्धार्थ गमन करते समय प्रतिलोम गति एवं अपसव्य मार्ग से गमन करते हुए दिखाई दें तो राजा का घात अथवा पराजय होती है।[6]

संग्राम सूचक मेघ- तलवार, त्रिशूल, भाला, बर्छी, खड्ग, चक्र और ढाल के समान आकार वाले और प्रतिलोम-विपरीत मार्ग से गमन करने वाले बादल युद्ध की सूचना देते हैं।[7] धनुषाकार, कवचाकार, बाल-हाथी, घोड़ों की पूँछ के समान बादल तथा खण्डित और रूक्ष बादल संग्राम की सूचना देते हैं।[8]

---

१. रूक्षा वातं प्रकुर्वन्ति व्याधयो विष्टगन्धिनः।
कुशब्दाश्च विवर्णाश्च मेघा वर्षं न कुर्वते।। भविष्यफल भास्कर- वृष्टि प्रकरण- ३३

२. अनावृष्टिर्भयं रोगं दुर्भिक्षं राजविद्रवम्।
रूक्षायां विकृतायं च सन्ध्यायामभिनिर्दिशेत्।। भद्रबाहु सं० - ०७/२३

३. शकुनैः कारणैश्यापि सम्भवन्ति शुभैर्यदा।
तदा वर्षं च क्षेमं च सुभिक्षं च जय भवेत!।। तदेव - - ०६/०७

४. रथायुधानामश्वानां हस्तिनां सदृशानि च।
यान्यग्रतो प्रधावन्ति जयमाख्यान्त्युपस्थितम्।। तदेव - - ०६/१०

५. ध्वजानां च पताकानां घण्टानां तोरणस्य च।
सदृशान्यग्रतो यान्ति जयमाख्यान्त्युपस्थितम्।। तदेव - - ०६/११

६. चतुष्पदानां पक्षिणां क्रव्यादानां च दंष्ट्रिणाम्।
सदृशप्रतिलोमानि बधमाख्यानान्त्युपस्थितम्।। तदेव - - ०६/१२

७. असि शक्तितोमराणां खड्गानां चक्र चर्मणाम्।
सदृशप्रतिलोमानि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत्।। तदेव - - ०६/१४

८. धनुषां कवचानां च बालानां सदृशानि च।
खण्डान्यभ्राणि रूक्षाणि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत्।। तदेव - - ०६/१५

नाना प्रकार के रूप धारण कर सब बादल परस्पर में आघात-प्रतिघात करें तो घोर संग्राम की सूचना देते हैं। जड़ से उखड़े हुए वृक्ष के समान यदि बादल गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो राजा के वध की सूचना देते हैं।[1]

छोटे-छोटे वृक्ष के समान आकृति वाले बादलों से युवराज और मन्त्री का मरण होता है। यदि मेघ तिरछे गमन करते हों, रूक्ष हों और सघन हों तो उनसे नायक सहित समस्त सेना के युद्ध से लौट आने या पराङ्मुख हो जाने की सूचना मिलती है।[2]

जिस सेना के ऊपर बदल घोर गर्जना करते हुए बरसते हैं तथा बिजली सहित होते हैं तो उस सेना का नाश सूचित होता है।[3] रुधिर के समान रंग वाली जलवर्षा हो और नीम जैसी गन्ध आती हो तथा बादल गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो युद्ध होने का निर्देश जानना चाहिए।[4]

सेना के पीछे की ओर शब्द सहित अथवा शब्द रहित शकुन रूप धूम जैसी आकृति वाले बादल महान् भय की सूचना देते हैं।[5] मलिन तथा वर्णरहित बादल दीप्ति दिशा-सूर्य जिस दिशा में हों उस दिशा में स्थित हों तो भय की सूचना होती है।[6] अशुभ होने पर बादलों का भ्रमण हो तो बहुत भारी भय की सूचना जाननी चाहिए।[7]

मेघ जिस स्थान पर मूसलाधार पानी वर्षावें वहाँ पर नायक और सेना दोनों ही रक्तरंजित होते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं।[8] रूक्ष वायु, विष्टा गन्ध के समान गन्ध वाली बहती हो तो व्याधि उत्पन्न करती है।[9] कुशब्द अर्थात् कठोर शब्द और विकृत वर्ण वाली हो तो मेघ जलवृष्टि नहीं करते।[10]

---

१. नानारूपप्रहरणैः सर्वे यान्ति परस्परम्। सङ्ग्रामं तेषु जानीयादतुलं प्रत्युपस्थितम्।।
अभ्रवृक्षं समुच्छाद्य योऽनुलोमसमं व्रजेत्। यस्य राज्ञो वधस्तस्य भद्रबाहुवचो यथा।।
भद्रबाहु सं०- ०६/१६-१७

२. बालाऽभ्रवृक्षमरणं कुमारामात्ययोर्वदेत्। एवमेवं च विज्ञेयं प्रतिराजं यदा भवेत्।
तिर्यक्षु यानि गच्छन्ति रूक्षाणी च घनानि च। निर्वतयन्ति तान्याशु चमूं सर्वां सनायकाम्।।
तदेव- ६/१८-१६

३. अभिद्रवन्ति घोषेण महता यां चमूं पुनः। सविद्युतानि चाऽभ्राणि तदा विन्द्याच्चामूवधम्।। तदेव- ६/२०

४. रूधिरोदकवर्णानि निम्बगन्धीनि यानि च। व्रजन्त्यभ्राणि अत्यन्तं सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशते।। तदेव- ६/२१

५. विस्वरं रवमाणाश्च शकुना यान्ति पृष्ठतः। यदा चाभ्राणि धूम्राणि तदा विन्ध्यान्महद् भयम्।। तदेव-६/२२

६. मलिनानि विवर्णानि दीप्तायां दिशि यानि च। दीप्तान्येव यदा यान्ति भयमाख्यान्त्युपस्थितम्।। तदेव- ६/२३

७. संग्रहे चापि नक्षत्रे ग्रहयुद्धेऽशुभे तिथि तिथौ। सम्भ्रान्ति यदाऽभ्राणि तदा विद्यान्महद् भयम्।।

८. मुहूर्त्ते शकुने वापि निमित्ते वाऽशुभे यदा। सम्भ्रान्ति यदाऽभ्राणि तदा विन्द्यान्महद् भयम्।।
तदेव- ०६/२४-२५

६. मेघा यत्राभिवर्षन्ति स्कन्धावार समन्ततः। सनायकम विद्रवते सा चमूनत्रि संशयः।। तदेव-८/१४

१०. रूक्षा वाताः प्रकुवून्ति व्याधयो विष्टगन्धिताः। कुशब्दाश्च विवर्णाश्च मेघो वर्ष न कुर्वते।।
तदेव - - ०८/१५

रुधिर वर्षा के लक्षण- जो मेघ सिंह, सियार, बिल्ली-चीता की आकृति वाले होकर बरसें और भारी कठोर वर्षा करें तो इस प्रकार मेघों का फल रुधिर की वर्षा करना है।[१] यदि माँसभक्षी पक्षियों-गृद्ध आदि पक्षियों की आकृति वाले मेघ तथा उड़ते हुए पक्षियों की आकृति वाले मेघ दिखलाई पड़ें तो वे रुधिर की वर्षा करते हैं।

फल- इस आकृति वाले मेघ, अनावृष्टि, घोर भय, दुर्भिक्ष, मृत्यु आदि फलों को करने वाले होते हैं अर्थात् माँसभक्षी पशु और माँसभक्षी पक्षियों की आकृति वाले मेघ अत्यन्त अशुभ सूचक होते हैं।[२]

अशुभ तिथि, मुहूर्त करण, नक्षत्र और शकुन में यदि मेघ आकाश में आच्छादित हों तो भयंकर पाप का फल देने वाले होते हैं।[३] धूलि, धूम्र, मधु, केश, अस्थि और खाँड के समान लाल वर्ण के मेघ वर्षा करें तो देश का राजा मारा जाता है।[४] जिस देश में धान्य को नाश करने वाले क्षार-लवणयुक्त, कटुक-चरपरे रस और दुर्गन्धित रस की मेघ वर्षा करें तो उस देश का नाश होता है।[५]

दक्षयज्ञ विध्वंस होने से पूर्व दक्षयज्ञशाला के नगर में दिशायें मलिन होने का वर्णन आया है जो दक्ष के अशुभ सूचक उत्पात था।[६] महाभारत युद्ध में दुर्योधन के धराशायी होने पर धूलि की वर्षा होने,[७] आकाश में विजली सहित वज्र की गड़गड़ाहट सुनायी देने और बिना मेघों की घटा के जल की वर्षा होने[८], बिजली की गड़गड़ाहट के साथ प्रचण्ड वायु के चलने, महान शव्द एवं वज्रपात के साथ प्रज्वलित, भयंकर एवं विशाल उल्का भूमि पर गिरने का वर्णन मिलता है।[९] दुर्योधन भीमसेन का युद्ध के लिए आह्वान करते समय बिजली की गड़गड़ाहट के साथ प्रचण्ड वायु का चलने, सब ओर धूल की वर्षा होने, सम्पूर्ण दिशाएँ अन्धकार मय होने, आकाश से महान् शब्द तथा वज्रपात के साथ(सहस्रों) भयंकर, भूमि को विदीर्ण करने वाली सहस्र उल्काएँ गिरने का उल्लेख मिलता है।[१०] जो कि दुर्योधन के लिए अपशकुन प्रकट कर रहीं थीं।

१. सिंहा शृंगालमाजारा व्याघ्रमेघाः द्रवन्ति ये। महता भीम शब्देन रुधिरं वर्षन्ति ते घनाः।। भद्रबाहु सं० - ०८/१६
२. पक्षिणश्चापि क्रव्याहा वा पश्यन्ति समुत्थिताः। मेघास्तदाऽपि रुधिरं वर्षं वर्षन्ति ते घनाः।। तदेव-८/१७
३. अनावृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं मरणं तथा। निवेदयन्ति ते मेघा ये भवन्तीदृशा दिवि।। तदेव-८/१८
४. तिथौ मुहूर्तकरणे नक्षत्रे शकुने शुभे। सम्भवान्ता यदा मेघाः पापदास्ते भयंकरा।। तदेव-८/१९
५. रक्तः पांशुः सधूमं वा क्षौद्रं केशाऽस्थिशर्कराः। मेघाः वर्षन्ति विषये यस्य राज्ञो हतस्तु सः।। तदेव-८/२१
६. क्षार वा कटुकं वाऽथ दुर्गन्धं सस्यनाशनम्। यस्मिन् देशेऽभिवर्षन्ति मेघा देशो विनश्यति।। तदेव-८/२२
७. द्रष्टव्य - शिव पुराण- रुद्र संहिता- ३३-३४ अध्याय
८. 'ववुर्वाताः सनिर्घाताः पांशुवर्षं पपात च'।। म० भा०- शल्य पर्व- ६८/४६
९. सनिर्घाता ज्वलन्त्यश्च पेतुरुल्काः सहस्रशः। चंचाल च मही दृत्सा भये घोरे समुत्थिते।। म० भा० प्रतिज्ञा पर्व-८०-०६
१०. अनभ्रेऽशनिनिर्घोषः स वेद्युत् समजायत। अन्वगेव च पर्जन्यः प्रावर्षद् विघ्नने भृशम्।। म० भा० उद्योग पर्व - ८४/०५

महाभारत युद्ध से पूर्व बड़े-बड़े बादलों का ज़ोर-ज़ोर गर्जना करने एवं वज्रपात होने भयंकर धूलि की वर्षा होने, आँधी चलने, सब ओर रक्त की वर्षा होने[१], बिना वर्षा के ही वज्रपात हाने, आकाश में बिजली की कड़क के साथ भयंकर गर्जना होने,[२] कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तिथि को बड़े ज़ोर से मास की वर्षा होने,[३] महाभारत के भीष्म पर्व में भी बिजली की कड़क के साथ इन्द्र की अशनि के समान प्रकाशित हाने वाली उल्काएँ गिरने,[४] अत्यन्त भयंकर निर्घात होने और रोमाञ्चकारी शब्द प्रकट होने का वर्णन भी दुर्योधन भीमसेन युद्ध के समय में आया है।[५] चारों ओर धूल की वर्षा, सम्पूर्ण दिशाएँ, शोभाहीन, भयंकर मेघों द्वारा रात में रक्त की वर्षा का उल्लेख भी महाभारत में आया है।[६] महाधर्नुधर कर्ण के युद्ध में जाते समय उल्कापात होने, बिना वर्षा के ही बिजलियाँ गिरने और भयंकर आँधी चलने का वर्णन मिलता है।[७]

महाभारत युद्ध समय मे और युद्ध होने से पूर्व दक्षिण-पश्चिम से आँधी उठने और हस्तिनापुर को मथने, झुण्ड के झुण्ड वृक्षों को तोड़ उखाड़ कर धराशायी करने, वज्रपात का सा कठोर शब्द होने, चारों ओर भयंकर आँधी चलने और भयंकर धूल का उड़ने एवं शान्त न होने वाले उत्पातों का वर्णन मिलता है।[८]

बा० रा० में श्री राम द्वारा लङ्का पर आक्रमण के समय लङ्का में मेघों की घटा छा जाने और क्रूरता पूर्वक रक्त की बूँदों से मिले हुए जल की वर्षा होने एवं माँस भक्षी राक्षसों के समान दिखायी देने वाली और बड़ी भयंकर कठोर गर्जना करने वाली ध्वनि का वर्णन मिलता है।[९]

आकाश में गधों के समान धूसर वर्णवाले बादलों का इधर-उधर विचरण करना और प्रचण्ड गर्जना के साथ खून की वर्षा करने वाले उत्पातों का वर्णन वाल्मीकि रामायण के अरण्यकाण्ड के २४वें सर्ग में आया है।

---

१. विष्वग्वाताः सनिर्घाता रूक्षाः शर्कर वर्षिणः। ववुरायाति कौन्तेये संग्रामे समुपस्थिते।।
म० भा० प्रतिज्ञा पर्व - ८०/०७

२. मांसवर्ष पुनस्तीव्रमासीत् .ष्णचतुदशीम्। - - भीष्म पर्व - ०३/३३

३. विनिः सृत्य महोल्काभिस्तिमिरं सर्वतोदिशम्। अन्योन्यमुपतिष्ठद्भिस्तत्र चोक्तं महर्षिभिः।।
शाल्य पर्व-३/३६

४. पतन्त्युल्का सनिर्घाताः शक्राशनिसमप्रभाः। अद्य चैव निशां व्युष्टामनयं समवाप्स्यथ।। भीष्म पर्व-३/३५

५. निर्घातश्च महाघोरा बभूवुलोमहर्षणाः। दीप्तयां दिशि राजेन्द्र मृगाश्चाशुभवेदिनः।। शाल्य पर्व- ६७/१३

६. अशोभिता दिशः सर्वा पांसुवर्षैः समन्ततः। उत्पातमेघा रौद्राश्च रात्री वर्षन्ति शोणितम्। शाल्य पर्व-३/२८

७. उल्कापातश्च संजज्ञुर्दिशां दाहास्तथैव च। शुष्काशन्यश्च सम्पेतुर्बवुर्वाताश्च भैरवाः।। कर्ण पर्व-३६/५

८. व्यपोढाभ्रस्ततः कालः क्षणेन समपद्यत। शिवश्चानुववौ वायुः प्रशान्तमभवद रजः।। उद्योग पर्व-२३/४

९. मेघाः क्रव्यादसंकाशाः परुषाः परुषस्वनाः। क्रूराः क्रूरं प्रवर्षन्ति मिश्रं शोणि[illegible]बिन्दुभिः।।
वा०रा०- युद्ध का०- २३/०५

जो राक्षसों के विनाश की सूचना दे रहे थे।[1] घोर एवं भयंकर मेघों का प्रचण्ड गर्जन-तर्जन के साथ लड्का पर सब ओर से गर्म खून की वर्षा करने का वर्णन मिलता है जो घोर युद्ध एवं भयंकर संहार होने की सूचना देने वाला उत्पात था।[2] आकाश से रक्त एवं हड्डियों के टुकड़ों के साथ धधकते हुए अंगारों की घनी वर्षा होने का वर्णन कुमार सम्भव के १५वें सर्ग में आया है जो अशुभ सूचक उत्पात था।[3] श्री राम के आश्रम पर खर नामक राक्षस का सेना लेकर आक्रमण के लिए जाते समय धूसर रंगवाले बादलों की घटा छा गई, भयंकर गर्जना होने लगी तथा सैनिकों के ऊपर घोर अमंगल सूचक रक्तमय जल की वर्षा होने,[4] भयंकर अन्धकार छा जाने का वर्णन मिलता है जो राक्षसों के लिए अशुभ सूचक उत्पात थे।[5]

हर्ष चरित महाकाव्य के पंचम उच्छ्रवास में उल्काओं के गिरने का वर्णन मिलता है जो राजा की मृत्यु की सूचना दे रही थीं।[6] सुर्जन चरित महाकाव्य में चारों ओर भीषण शब्द करता हुआ एक तारा आकाश से टूट कर गिरने का वर्णन आया है।[7] नागानन्द में उल्काओं एवं धूमकेतु के गिरने का स्वरूप इस प्रकार वर्णित है। देखने में आँखों को अतिशय दुख पहुँचाने वाली खून की सी छटा वाली, किरणों की बिखरने एवं उत्पात सूचक बताया है।[8]

---

१. अभ्यवर्षन्महाघोरस्तुमुलो गर्द भारुणः। आकाशं तदनाकाशं चक्रुर्भीमाम्बुवाहकाः।।
चीचीकुचीति वाश्यन्त्यो बभूवुस्तत्र सारिकाः। उल्काश्चापि सनिर्घोषा निपेतुर्घोरदर्शनाः।।
वा० रा० अरण्य का०-२३/१७-१८

२. बभूव तिमिरं घोरमुद्धतं रोमहर्षणम्।
दिशो वा प्रदिशो वापि सुव्यक्तं न चकाशिरे। तदेव- अरण्य काण्ड-२३/१, ६

क. अमी रुधिरधारास्तु विसृजन्ते खरस्वनाः।
व्योम्नि मेघा निवर्तन्ते परुषा गर्द भारुणाः।। तदेव- अरण्यकाण्ड-२४/३

३. ववर्ष रुधिरं देवो रावणस्य रथोपरि।
वाता मण्डलिनस्तीव्रा व्यपसव्यं प्रचक्रमुः।। तदेव- युद्ध का०-११६/२१

४. सनिर्घाता महोल्काश्च सम्प्रेपेतुर्महास्वनाः।
विषादयंस्ते रक्षांसि रावणस्य तदाहिताः।। तदेव- युद्ध का०-११६/२४

५. खराभिस्तनिता घोरा मेघाः प्रतिभयंकराः।
शोणितेनाभिवर्षन्ति लड्कामुष्णेन सर्वतः।। तदेव- युद्ध काण्ड-३५/२५

६. शिखिनो ज्वालाः प्रतीच्छन्त्य इव पतन्तीरूल्का नभसो ववाशिरे शिवानां राजयः। हर्ष च० -५ उच्छ्रवास

क. "प्रज्वलिताभिरुल्काभिरुग्रं ग्रहयुद्धमिव वियति विलोकयन्ति।" हर्ष च० ३ अध्याय

७. निर्घाताग्रस्वानमिश्रः समन्तादुल्कादण्डः प्रादुरासीत् प्रचण्डः।। सुर्जन चरित मा० क०-११/७३

८. आलोक्यमानमतिलोचनदुःखदायि रक्तच्छटानिजमरीचिरुचोविमुञ्चत्।
उत्पातवाततरलीकृततारकाभमेतत्परः पतति किं सहसा नभस्तः।। नागानन्दम्-५/५,पृ०-१७०

कुमार सम्भव में तारकासुर के विनाश की सूचना देने के लिए दैत्य सेना के चारों ओर दिन में ही चंचल तारे बड़े वेग से टूट-टूट कर गिरने लगे। अपनी जलती हुई ऊँची लपटों की चमक से सभी दिशाओं को प्रकाशित करने वाली तथा भीषण कड़क के से हृदय विदीर्ण कर देने वाली बिजली बिना बादल के आकाश से टूट-टूट कर गिरने का वर्णन मिलता है।[1] इसी प्रकार अन्य कई ग्रन्थों में महा भय को सूचित करने वाले उपर्युक्त उत्पातों का वर्णन मिलता है।

तारकासुर का शिव पुत्र कार्तिकेय के साथ युद्ध समय अकस्मात् बार-बार भयंकर आँधियाँ चलने, दैत्यसेना के छत्र और पताकाएँ टूट-टूट कर छिन्न-भिन्न होकर गिरने, वीरों की आँखें धूल से भर जाने, सेना का व्याकुल होने, हाथी, घोड़ों और रथों के झुण्ड का धूल में विलीन होने जैसे उत्पातों का उल्लेख मिलता है जो रक्तपात, घोर युद्ध और भयंकर संहार की सूचना देने वाले थे।[2]

माली और सुमाली नामक राक्षसों का देवताओं के साथ युद्ध करने से पूर्व राक्षसों की सेना उन पर घने बादल हड्डियों और खून की वर्षा करने लगे जो उनके विनाश का सूचक उत्पात थे।[3] 'रावण संहिता'

रावण के जन्म समय पर मेघ की बहुत भयंकर गर्जना करने और देवतागणों द्वारा रुधिर की वर्षा करने का वर्णन मिलता है जो अशुभ सूचक उत्पात थे।[4]

शुभ सुचक मेघ-

विजली सहित, सुगन्धित, मधुर स्वर वाले, सुन्दर वर्ण और आकृति वाले शुभ घोषणा करने वाले और अमृत समान वर्षा करने वाले मेघों को सुभिक्ष का सूचक समझना चाहिए।[5]

---

१. दिवापि तारास्तरलास्तरस्विनीः परापतन्तीः परितोऽथवाहिनीः।
विलोक्य लोको मनसा व्यचिन्तत्यप्राणण्ययान्तं व्यसनं सुरद्विषः।।
ज्वलद्भिरुच्चैरभितः प्रभाभरैरूद्भासिताशेषदिगन्तराम्बरम्।
रवेण रौद्रेण हृदन्तदारणं पपात् वज्रं नभसो निरम्बुदात्। कु०स०-१५/१८-२०

२. मुहुर्विर्भनातपवारणध्वजश्चलद्धराधूलिकुलाकुलेक्षणः।
धूताश्रमातङ्गमहारथाकरानवेक्षणोऽत्प्रसभं प्रभञ्जन।। कु० सं०- १५/१५

३. अस्थिनी मेधा ववृषुरुष्णं शोणितमेव च। रावण संहिता- प्रथम खण्ड- २०३

क. 'प्रबभौ न च सूर्यो वै महोल्काश्चापतन् भूवि'। रा० सं० - ०१/३३४

४. ववर्ष रुधिरं देवो मेघाश्च खननिस्वनाः। रावण संहिता प्रथम खण्ड - ३३४

क निर्घातश्च महांस्तात् साकं च स्तन[illegible]त्नुभिः।। वायुर्वाति खरस्पर्शो रजसा विसृजंस्तमः।
असृग् वर्षन्ति जलदा बीभत्समिव सर्वतः।। श्री मद्भागवत म० पु०-४/१५-१६

५. मेघाः सविद्युतश्चैव सुगन्धाः सुस्वराश्च ये। सुवेषाश्च सुगताश्च सुधियाश्च सुभिक्षदाः।।
भद्रबाहु सं० - - ०८/२५

क.. शुक्लानि स्निग्धवर्णानि विद्युच्चित्रघनानि च। सद्यो वर्षं समाख्यान्ति तान[illegible]णि न संशयः।।

 तदेव- ६/०६

वायव्यवैकृत

लक्षण-

वायु द्वारा उत्पन्न विकारों को वायव्यवैकृत उत्पात कहते हैं। वायु संसारी प्राणियों के पुण्य एवं पाप से उत्पन्न होने वाले वर्षण, भय, क्षेम और राजा के जय-पराजय को सूचित करती है। आदान, पातन, पचन और विसर्जन का कारण होने से मारुत बलवान् होता है और सब धर्मों का नायक बन जाता है।[1]

फल-

अग्नि कोण का वायु कभी भी श्रेष्ठ नहीं होता, ईशान कोण का वायु सदा श्रेष्ठ होता है। नैर्ऋत का विग्रह, रोग, दुर्भिक्ष और भयकारी होता है।[2] नैर्ऋत कोण, दक्षिण और अग्निकोण का वायु यदि दो घड़ी भी तक भी चलता रहे तो बिजली तथा गर्जना करते हुये महान् मेघों को भी छिन्नभिन्न कर दे, अर्थात् वर्षा को बिल्कुल रोक देवे।[3] पूर्व का वायु चलता हुआ बंद होकर दक्षिण दिशा का चलने लगे तो तीन दिन के बाद वर्षा प्रारंभ हो जावे।[4] उत्तर दिशा की पवन चलते हुए पूर्व की और चलने लग जावे तो पाँच दिन के बाद वर्षा होवे।[5] पश्चिम के वायु चलते यदि नैर्ऋत कोण का चलने लग जाय तो वर्षा कम हो किन्तु पवन ज़्यादा चले।[6]

आषाढ़ की पूर्णिमा को यदि दक्षिण और पश्चिम अर्थात् नैर्ऋत्य कोण का वायु चले तो वह धान्यघातक, चारों की वृद्धिकारक होती है। उस समय पृथ्वी धूलि एवं रजकण से व्याप्त हो जाती है। अनावृष्टि के कारण पृथ्वी धूलि-मिट्टी से व्याप्त हो जाती है। इस प्रकार की वायु चलने से राष्ट्रों में उपद्रव पैदा होते हैं और नगरों का क्षय होता है। पृथ्वी श्वेत हड्डियों से भर जाती है और माँस तथा खून के कीचड़ से सराबोर हो जाती है।[7]

---

१. वर्षं भयं तथा क्षेमं राज्ञो जय-पराजयम्। मारुतः कुरुते लोके जन्तूनां पुण्यापापजम्।।
आदानाच्चैव पाताच्च पचनाच्च विसर्जनात्। मारुतः सर्वगर्भाणां बलवान्नायकश्च सः।।
भद्रबाहु सं० - ०९/२-३

२.आग्नेय्यां न कदापीष्टमीशानः सर्वदा शुभः। नैर्ऋतो विग्रहं रोगं दुर्भिक्षं कुरुते भयम्।।
भविष्यफल भास्कर- वृष्टि प्रकरण - ०९

३. महतोऽपि समुद्धुतः सतडित्साभिगर्जितः। मेघानां हनने वायुर्नैर्ऋतो दक्षिणाग्नियः।।
तदेव - - वृष्टि प्रकरण - ०९

४. पूर्ववातो भवेत्पूर्वः पश्चाद्भवति दक्षिणः। त्रीणि दिनानि हित्वा पश्चाद्भवति नित्यशः।।
तदेव - - वृष्टि प्रकरण - ११

५. पश्चिमो वहते वायुः पश्चाद्भवति नैर्ऋतः। वातवृष्टिं च मुंचति जलं स्तोकं विनिर्दिशते।।
तदेव- - वृष्टि प्रकरण - १३

६. उत्तरो वहते वायुः पश्चाद्भवति पूर्वतः। पंच दिनानि हित्वा च पश्चाद्वर्षति सर्वतः।।
तदेव- - मेघ प्र० - ५६

७. आषाढ़ी पूर्णिमायां तु वायुः स्याद् दक्षिणापरः। सस्यानामुपघाताय चौराणां तु विवृद्धये।।
भस्मपांशुरजस्कीर्णा यदा भवति मेदिनी। सर्वत्यागं तदा कृत्वा कर्त्तव्यो धान्यसंग्रह।।
भद्रबाहु सं० - ०९/२०-२१

यदि पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर के चारों पवन अपसव्य मार्ग से दाहिनी ओर से तेजी के साथ चलें तो वे अल्पवर्षा, धान्य नाश और व्याधि उत्पन्न होने की सूचना देते हैं। यदि वे ही चारों पवन यदि प्रदक्षिणा करते हुए चलते हैं तो सुख एवं शीतलता को प्रदान करने वाले होते हैं तथा लोगों को क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य, राजवृद्धि और विजय की सूचना देने वाले होते हैं।[1]

पूर्व दिशा का पवन यदि कर्कश रूप धारण करके अतिशीघ्र गति से चले तो वह स्वस्थान में वर्षा के न होने की सूचना देता है और उससे अत्यन्त भय उत्पन्न होता है, उस प्रकार का पवन कोट, खाइयों, शस्त्रों और राष्ट्रों का सब ओर से विनाश सूचित करता है।[2]

किसी भी दिशा का वायु यदि साढ़े सात दिन तक लगातार चले तो उसे महान् भय का सूचक जानना चाहिए अथवा इस प्रकार का वायु अतिवृष्टि का सूचक होता है।[3] यदि वायु अपसव्य मार्ग से पूर्व सन्ध्या को वातान्वित करता है तो वह पुर के अवरोध का घेरे में पड़ जाने का सूचक है। इस समय आक्रमणकारियों की विजय होती है।[4] यदि वायु मध्याह्न में अर्धरात्रि में तथा सूर्य के अस्त और उदय के समय शीघ्र गति से चले तो अनावृष्टि, भय और रोग उत्पन्न होते हैं।[5] यदि अशुभ वायु दस दिन या बारह दिन तक लगातार चले तो उससे सेना आदि का बन्धन, राजा की मृत्यु और मनुष्यों का क्षय होता है।[6]

जब अकाल में मेघरहित उत्पात वायु धूलि और भस्म से भरा हुआ चलता है, तब वह शस्त्रघातक एवं महाभयंकर होता है।[7] यदि बिजली और धूल से युक्त वायु अन्य वायुओं के साथ उर्ध्वगामी हो और क्रूरपक्षी के समान शब्द करता हुआ चले तो वह भयंकर होता है।[8] यदि पवन सब ओर से बार-बार शीघ्र गति से चले तो वह जिस देश की ओर गमन करता है, उस देश को हानि पहुँचाता है।[9]

---

१. यदा तु वाताश्चत्वारो भृंश वान्त्यपसव्यतः। अल्पोदकं शास्त्राघातं भयं व्याधिं च कुर्वते।।
प्रदक्षिणं यदा वान्ति त एव सुखशीतलाः। क्षेमं सुभिक्ष मारोग्यं राज्यवृद्धिर्जयस्तथा।।
तदेव - ०६/३३-३४

२. पूर्व वातो यदा पूर्णं सप्ताहं वाति कर्कशः। स्वस्थाने नाभिवर्षेत् महदुत्पद्यते भयम्।।
प्राकारपरिखाणं च शस्त्राणां च समन्ततः। निवेदयति राष्ट्राणां विनाशं तादृशोऽनिलः।।
भद्रबाहु सं०- ०६/३६-४०

३. सप्तरात्रं दिनार्थं च यः कश्चिद् वाति मारुतः। महद्भयं च विज्ञेयं वर्षं वाऽथ महद् भवेत्।।
तदेव- ०६/४१

४. पूर्व सन्ध्यां यदा वायुरपसव्यं प्रवर्तते। पूरावराधं कुरुते यायिनां तु जयावहः।। तदेव- ६/४२

५. मध्याहे वार्धरात्रे वा तथा वाऽस्तमनोदये। वायुपूर्णं यदा वाति तदाऽवृष्टि भयं रुजाम्।। तदेव-६/४४

६. दशाहं द्वादशाहं वा पाप वातो यदा भवेत्। अनुबन्धं तदा विन्द्याद् राजमृत्युं जनक्षयम्।। तदेव-६/४७

७. यदाभ्रवर्जितो वाति वायुस्तूर्णमकालजः। पांशुभस्मसमाकीर्णः सस्यघातो भयावहः।। तदेव-६/४८

८. सविद्युत्सरजो वायुरूर्ध्वगो वायुभिः सह। प्रवान्ति पक्षिशब्देन क्रूरेण स भयावहः।। तदेव-६/४६

९. प्रवान्ति सर्वतो वाता यदा तूर्णं मुर्हुमुहुः। यतो यतोऽभिगच्छन्ति तत्र देशं निहन्ति ते।। तदेव-६/५०

तिथियों करणों, मुहूर्तों और ग्रह-नक्षत्रादि का नेता बलवान् नेता वायु है अतः जहाँ वायु है, वहीं उनका बल समझना चाहिए।[१] अभिग्रह से रहित वायु स्वचक्र में सर्वथा बलवान् होता है और करणादिक से संयुक्त हो तो विशेषरूप से शुभाशुभ होता है। शुभ करणादि से संयवुत होने पर शुभफल सूचक और अशुभ करणादिक से युक्त होने पर अशुभ सूचक होता है।[२] धूल उड़ाती हुई वायु का प्रतिकूल दिशा की ओर से बहना अशुभ सूचक उत्पात होता है[३] 'रामायण'

तारकासुर के युद्ध में जाते समय एक ऐसी उल्टी हवा चलने और हवा में तारकासुर का छत्र पृथ्वी पर गिरने और छत्र के मोती पृथिवी पर गिरने का वर्णन मिलता है जो कि तारकासुर को युद्ध में जाने से रोकने एवं मृत्यु सूचक उत्पात थे।[४]

श्री अर्जुन के युद्ध भूमि में आने और संग्राम का अवसर उपस्थित होने पर रेत की वर्षा करने वाली विकट गर्जन-तर्जन के साथ रूखी एवं चौबाई हवा चलने वाले भयंकर उत्पात का वर्णन मिलता है जो कि अरिष्ट होने की सूचना दे रहे थे।[५]

दुर्योधन भीमसेन का युद्ध के लिए आह्वान करते समय नीचे धूल और कंकड़ की वर्षा करती हुई रूखी हवा चलने, पर्वतों के शिखर टूट-टूट कर पृथ्वी पर गिरने जैसे भयंकर उत्पातों जैसे उत्पातों का उल्लेख मिलता है।[६]

बिना हवा के ही बादलों के समान धूसर रंग की धूल का ऊपर उठकर आकाश में छा जाना भयंकर युद्ध एवं संहार होने की सूचना देने वाला उत्पात होता है।[७]

१- यदि अश्व आदि वाहन, वाह अर्थात् सवार से अलग होकर भागे,सवार के साथ नहीं चले और रथ का पहिया भूमि में गढ़ जाय या टूट जाय तो राष्ट्र को भय होता है।[८]

---

१. तिथीनां करणानां च मुहूर्तानां च ज्योतिषाम्। मारुतो बलवान् नेता तस्माद् यत्रैव मारुतः।। तदेव-६/४६

२. सर्वथा बलवान् वायुः स्वचक्रे निरभिग्रहः। करणादिभिः संयुक्तो विशेषेण शुभाऽशुभः।। तदेव-६/६५

३. प्रतिकूलं ववौ वायु रणे पासून् समुत्किरन्। तस्य राक्षराजस्य कुर्वन् दृष्टिविलोपनम्।।
वा०रा०- युद्धकाण्ड- १२६/२८

४. क्षितौ निरस्तं प्रतिकूलवायुना तदीरयचामीकरधर्मवारणाम्।
रराज मृत्योरिव पारणाविधौ प्रकल्पितं हाटकभाजनम् महत्।। कु० स०-१५/२७

क. विजानता भावि शिरोनि.न्तनं प्रज्ञाने शोकादिव तस्य मौलिना।
मुहुर्गलद्भिस्तरलैरलन्तरामरोदि मुक्ताफलवाष्पबिन्दुभिः।। कु० सं०-१५/२८

५. विष्वग्वाताः सनिर्घाता रूक्षाः शर्कर वर्षिणः। ववुरायाति कौन्तेये संग्रामे समुपस्थिते।।
म०भा०- प्रतिज्ञा पर्व- ८०/०७

६. रूक्षश्चवाताः प्रववुर्नीचैः शर्करकर्षिणः। गिरिणां शिखराण्येव न्यपतन्त महितले।।
म०भा०- शाल्य पर्व- ६७/११

७. 'उद्धूतश्च विना वातं रेणुर्जलधरारुणः"।। वा०रा० अरण्य काण्ड- २३/१६

८- यानं वाहवियुक्तं यदि गच्छेन्न व्रजेच्च बहियुतम्।
राष्ट्रभयं भवति तदा चक्राणां सद भंगे च ।। बृ० सं०- ४६/६०

२- यदि आकाश में गीत या तुरही का शब्द सुनाई दे या स्थिर पदार्थ चर और चर पदार्थ दिखाई दे अर्थात् जो पदार्थ एक जगह स्थित हो वह चलने लगे और जो चलने वाले पदार्थ एक जगह स्थित हो जायें तो मरण ओर रोग होता है। तुरही बजने से विकार युत शब्द हो तो शत्रुओं से पराजय होती है।[1]

३- यदि बिना बजाये तुरही से शब्द होवे और बजाने से शब्द न निकले या अनेक प्रकार के शब्द निकलें तो शत्रु की सेनाओं का आगमन होता है अर्थात् शत्रु की सेना आक्रमण करती है और राजा का मरण होता है।[2]

४- गृह सामग्री में विकार होना बैल और हल का अचन संयोग होना और श्रृंगाल अर्थात् गीदड़ के विकार युत शब्द करने से नगर में भय होता है।[3]

५- आकाश में बिना मेघके ही कठोर गर्जन हमेशा सुनाई पड़े, वाहन के घोड़े आदि सव रोते हों और उन के अश्रुओं के बिन्दु भूमि पर गिरते हों तो उस समय नरसंहार होता है।[4]

६- जिस देश में रथादि घोड़ो के बिना जोते ही चलने लगें अथवा घोड़ो के जोतने पर तथा उन्हें हाँकने पर भी नहीं चलते हैं, वहाँ पर महान भय उपस्थित होता है। बिना बजाये ही जब वाजे बजने लगें अथवा बजाने पर भी उन से ध्वनियाँ नहीं निकलें, अचल-वस्तुएँ चलने लगती हैं तथा चल वस्तुएँ अचल हो जायें, आकाश में तुरूही की ध्वनि तथा गान-वाद्यादि का स्वर सुनाई पढ़ने लगें काष्ठ, करछुल, एवं फावड़े आदि में विकार उत्पन्न हो जाये, गौएँ पूंछ से एक दूसरे को मारने लगें, स्त्रियाँ एक दूसरे की हत्या करने लगें एवं घरेलू वस्तुओं में भी विकार उत्पन्न हों तो उस समय देश में शस्त्रास्त्रों से घोर भय होता है।[5]

७- जब अयोग्य पशु सवारी में आकर जुते जाते हैं, योग्य पशु यान का वहन नहीं करते हैं एवं आकाशमें तूर्यादि नाद की ध्वनि होने लगती है उस समय राष्ट्रमें महान् भय उपस्थित होता है।[6]

८- जब कंकड़ उड़ाने वाली वायु इतने जोर से बहने लगे कि वृक्ष सव जड़ से उखड़ जाये, गांवों और नगरों में वृक्ष और चैत्य अधिक झोंक न सहने के कारण टूट टूट कर गिरने लगें तो देश, नगर या गाँव में महाभय होता है। यह दुर्भिक्ष और नरसंहार के लक्षण होते हैं।[7]

१- गीतरवतुर्यशब्दा नभसि यदा वा चरस्थिरान्यत्वम्।
मृत्यस्तदा गदा वा विस्वरतूर्ये पराभिवः।। बृ० सं०- ४६/६१

२- अनभिहततूर्यनादः शब्दो वा ताडितेषु यदि न स्यात्।
व्युत्पतौ वा तेषां परागमो नृपतिमरणं वा ।। बृ० सं०- ४६/६२

३- गोलाङ्गलयोः साङ्गे दर्वीशूर्पाद्युपस्कर्गविकोर।
क्रोष्टकनादे च तथा शस्त्रभयं मुनिवचश्चेदम्।। तदेव- ४६/ ६३

३- अनभ्रेच महाघोरं स्तनितं श्रूयतेऽनिशम्।
वाहनाना च रुदतां प्रपतन्त्यशबिन्दवः।। म०भ० भी० प०- ६३/३

४- यान्ति यानान्ययुक्तानि युक्तनि न हियान्ति चेत्।...................।। वि०ध० पु०-१४२/१-४

५- यानि यानान्ययुक्तानि युक्तानि च वहन्ति च ।
आकाशे तूर्यनादाश्च महद्भयमुपस्थितं ।। अ० पु०-२६२-२६

६- वृक्षानुन्मथ्य वान्त्युग्रा वाताः शर्कर कर्षिणः ।
पतन्ति चेत्यवृक्षाश्च ग्रामेषु नगरेषु च ।। म० भ० भी०- ३/३७

परिवेष

परिवेष- (परि + विष् + घञ्) सूर्य चन्द्र के आसपास दिख पड़ने वाला भूरा, मण्डल। जो वायु से निहत हुई सूर्य व चन्द्रमा की किरण ऊपर को हो के मण्डलाकार हो जाती हैं उनके अनेक वर्ण और अनेक आकार होते हैं। इन को सूर्य चन्द्रमा के परिवेष (मण्डल) कहते हैं।[1]

लक्षण- वायु के द्वारा मण्डली भूत सूर्य चन्द्र के किरण स्वस्वरूप, मेघ वाले आकाश में प्रतिविम्बित होकर दिखाई देने वाले घेरे को परिवेष कहते हैं।[2]

मण्डल, परिधि और उपसूर्य- इस के पर्याय हैं और सूर्य चन्द्रमा के उत्पात सूचक लक्षण सूर्य चन्द्र के आस-पास देख पड़ने वाला घेरा, चक्र या मण्डल।[3]

वैज्ञानिक मत- सूर्य अथवा चन्द्रमा की किरणें पर्वत के ऊपर प्रतिबिम्बित और पवन के द्वारा मण्डलाकार हो थोड़े से मेघ वाले आकाश में अनेक रंग और आकार की दिखलाई पड़ती हैं, इन्हीं को परिवेष कहते हैं।[4]

मण्डल-

सूर्य और चन्द्र का वहिवर्षेण, अर्थात् सूर्य और चन्द्र के चारों ओर पड़ने वाला घेरा जिसे सूर्य मण्डल या चन्द्रमण्डल कहते हैं। चन्द्र और सूर्य का उत्पातज रश्मिमण्डल।

पर्याय- परिवेष, परिधि और उपसूर्यक हैं।

चक्रवार, चक्र के आकार का घेरा, मण्डलाकार, दिक् समूह, चारों दिशाओं का घेरा जो गोल दिखाई देता है। ग्रह के घूमने का कक्षा[5], परिवेष, परिधि, उपसूर्य और मण्डल का समान अर्थ और समान फल सभी ग्रन्थों में देखने को मिलता है। केवल अन्तर यह है कि ग्रन्थकारों ने इस शब्द को अपनी रुचिऽनुसार पृथक्-२ नाम से उल्लेख किया है।

---

१. किरणा वायुनिहता उच्छ्रिता मण्डली.ताः। नानावर्णा.तयस्ते परिवेषाः शशीनयोः।। नं०सं०-४४/१

२. संमूर्छिता रवीन्द्वोः किरणाः पवनेन मण्डली भूताः। नाना वर्णाकृतयस्तन्वभ्रे व्योम्नि परिवेषाः। बृ०सं०-३४/१

३. परिवेषः मूर्द्धन्यान्तोऽपि। यथा- "पुंलिङ्ग परिवेषः स्यात् परिधौ परिवेषणे।" इति मूर्क्षन्यान्ते रुद्रः तत्पर्य्यायः मण्डलं, परिधिः,उपसूर्य्यकम्, इत्यमरः १/३/३२ "चन्द्रसूर्ययोरूत्पातादिजातमण्डलस्य।" अमर कोष- १/३३, पृ०- ४२

४. द्रष्टव्य- परिजात कोश- पृ०- ७०४, क. .ष्टव्य - सौरमण्डल विज्ञान भाग- २, पृ०- २८१

५.मण्डल- 'बिम्बोऽस्त्री मण्डलं त्रिषु'। मण्डयति भूषयतीति मड़ि (कलस्तृपश्च) (उण् १/१०६) इति कल- इत्यमरः "विम्बं तु प्रतिबिम्बे स्यान्मण्डले विम्बिकाफले।" इति हेमः। चन्द्रसूर्य्ययोर्वहिर्व्वेष्टनम्। चन्द्रसूर्य्यययोरूपातजरशिममण्डलम्। तत्पर्य्यायः परिवेशः, परिधिः उपसूर्य्यकम् इत्यमर - १-३-३२ "पुलिङ्ग परिवेषः स्यात् परिधौः परिवेषणो" सूर्य्यमुपगतं उपसूर्य्य स्वार्थेकः उपसूर्य्यकम्। चन्द्रपक्षे उपसूर्य्यमिव उपसूर्य्यकं इवार्थे कः। इति भरतः। चक्रस्येव वालो वलनमस्य चक्रवालं वलेघर्मि वालः मनोषादित्वात् लस्यडत्वे चक्रवालम्। इति 'नीति सारे'। शब्दकल्पद्रुमः -३/५७८

परिधि- 'परि+धा+कि' परिधि का अर्थ आवरण, घेरा आदि लिया है जैसे-२ परिधि शब्द का उल्लेख ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर मिलता है जैसे-

क- सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः .ताः। ऋग्वेद-१०/९०/१५

ख- कासीत्प्रमा प्रतिमा कि निदानमाज्यं किमासीत्परिधिः कः आसीत्। ऋग्वेद-१०/१३०/३

इसी प्रकार ऋग्वेद के ०७/३३/०९ में परिधि का अर्थ आवरण रूप में लिया है।[1]

बृहत्संहिता के अनुसार विभिन्न देवताओं द्वारा कृत परिवेषों का वर्ण अनुसार वर्गीकरण किया है जैसे - इन्द्र द्वारा कृत परिवेष रक्त वर्ण का होता है। यम द्वारा कृत नील, वरुण द्वारा कृत थोड़ा श्वेत, निर्ऋतिद्वारा कृत कबूतर के रंग समान, वायु कृत मेघ वर्ण, शिव कृत शबल, ब्रह्मा कृत हरा और अग्नि कृत परिवेष श्वेत वर्ण का होता है। यह परिवेष अपने वर्णऽनुसार भूमण्डल पर अपना शुभाशुभ फल घटित करते हैं।[2]

परिवेष के प्रकार-

पाँच वर्ण और पाँच भूतों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश) की अपेक्षा से परिवेष पाँच प्रकार के होते हैं। ये परिवेष ग्रह और नक्षत्रों के काल को पाकर होते हैं।[3]

शुभ परिवेष के लक्षण-

नील कण्ठ के समान कान्ति वाला परिवेष शिशिर ऋतु में, मयूर की भान्ति परिवेष वसन्त में, चाँदी की तरह ग्रीष्म में, तेल की तरह वर्षा ऋतु में, दूध की तरह शरद् ऋतु में और जल के समान कान्ति वाला परिवेष हेमन्त ऋतु में अखण्ड मण्डलाकार और निर्मल हो तो कल्याण कारक और सुभिक्ष दायी होता है।[4]

कपिल वर्ण, चिकने दूध, तेल व जल की भान्ति कान्ति वाले, धनुष चौपट, रथ इनके आकार तथा रक्तसमान लाल ऐसे कुण्डल अर्थात् परिवेष जनकल्याण के लिए शुभदायक होते हैं।[5]

---

१. त इन्निण्यं हृदयस्य प्रकेतैः सहस्रवल्शमभि सं चरन्ति।
ममेन ततं परिधिं वयन्तोऽप्सरस उप सेदुर्वसिष्ठाः।। ऋग्वेद- ०७/३३/०९

२.परिधिः- (परि+घा+किः "उपसर्गे घोः किः" ३/३/९२ इति परिवेशः। चन्द्रसूर्य्यसमीप मण्डलम्। यथा- "अनृणत्वमुपेयिवान् बभौ परिघेर्मुक्त इवोष्णदीधितिः।।" रघु०- ८/३०

३. व्यासे भनन्दाग्निहते विभक्ते खवाणसूर्य्यैः परिधिस्तु सूक्ष्मः"।। इति लीलावती। कनकं सुवर्णमिव पीतं परिधि वस्त्रं यस्य" इतितट्टीका, मेघश्यामः कनकपरिधिः कर्णविद्योतविद्युन्मर्ध्नि भ्राजव्लिुलिकचः स्नग्धरो रक्तनेत्रः।" भारते- ८/७/१७

४. पंच प्रकारा विज्ञेयाः पंचवर्णाश्च भौतिकाः। ग्रहनक्षत्रयोः कालं परिवेषाः समुत्थिताः।। भद्रबाहु सं०-४/२

५. ते रक्तनीलपाण्डुरकापोताभ्रभशवलहरितशुक्लाः। इन्द्रयमवरुणनिर्ऋतिश्वसनेशपितामहाग्निकृताः।। बृ०सं०-३४/२
सितपीतेन्द्रनीलाभा रक्तकापाततवभ्रवः। शबला बहिवर्णाश्च विज्ञेयास्ते शुभप्रदाः।
ऐन्द्रयाम्याप्यनैर्ऋत्यवारुणाः सौम्यवह्निजाः। दृश्या दृश्येन भावेन वायव्यः सोऽपि कष्टदः।। 'काश्यप संहिता'

अशुभ परिवेष लक्षण-

सम्पूर्ण आकाश में गमन करने वाला सूर्य या चन्द्र उदय से लेकर अस्त तक स्थिर रहले वाला परिवेष, अनेक वर्ण वाला, रक्त वर्ण वाला, रूक्ष, अखण्डित तथा गाड़ी, धनुष या त्रिभुज की भान्ति आकृति वाला परिवेष अशुभ फल देने वाला होता है।[१] चन्द्रमा, सूर्य ग्रह और नक्षत्रों के परिवेष अर्थात् मण्डल-कुण्डल यदि रूक्ष, खण्डित, अपूर्ण, टेढ़े, मांसभक्षी जीव अथवा चिता की आकृति के समान हों अग्नि के समान वर्ण वाले हों तो वे मनुष्यों के लिये अशुभ फलदायी होते हैं।[२] 'भद्रबाहु सं०'

परिवेष के वर्ण से शुभाशुभ फल ज्ञान-

मयूर कण्ड की तरह नील वर्ण का परिवेष हो तो अति वृष्टि होती है। अनेक वर्ण का परिवेष हो तो राजा का नाश होता है। धूम्र वर्ण का परिवेष हो तो प्रजा में भय होता है, इन्द्रधनुष की भान्ति और अशोक पुष्प की भान्ति अति लोहित कान्ति वाला परिवेष हो तो युद्ध होता है।[३]

परिवेष द्वारा अति वृष्टि ज्ञान-

बृहत्संहिता, भविष्यफल भास्कर और भद्रबाहु सं० में परिवेष के लक्षणों द्वारा वृष्टि होने के लक्षण इस प्रकार बताये हैं- यदि एक वर्ण वाला, अधिक निर्मल और उस्तरे के समान मेघों से व्याप्त होकर परिवेष अपने ऋतु में दिखाई दे तो शीघ्र वृष्टि करता है। यदि पीत वर्ण का परिवेष हो और उस समय सूर्य के किरण तीक्ष्ण हों तो भी वृष्टि होती है।[४]

नक्षत्र, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरू और शुक्र इन पाँच ग्रहों में से किसी एक के भी साथ चन्द्रमा का परिवेष अवरुद्ध करे तो तीन दिन वर्षा होती है। भौमादि ग्रह, चन्द्र और नक्षत्र तीनों एक परिवेष में हों तो तीन दिन वृष्टि और एक मास में लड़ाई होती है।[५]

चाँदी और कबूतर के समान आभा वाला चन्द्रमा का परिवेष हो तो निरन्तर जल-वर्षा द्वारा पृथ्वी जलप्लावित होती है अर्थात् कई दिनों तक झड़ी लगी रहती है।[६]

---

१. चाषशिखिरजततैलक्षीरजलाभः स्वकालसम्भूतः। अविकलवृत्तः स्निग्धः परिवेषः शिवसुभिक्षकरः।। बृ०सं०-३४/४

२. शुभास्तु कपिलाः स्निग्धाः क्षीरतैलांबुसन्निभाः। चापशृंगाटकरधक्षतजाभारूणाः शुभाः।। न०सं०-४४/३/४

३. सकलगगनानुचारी नैकाभः क्षतजसन्निभो रूक्षः। असकलशकटशरासनशृंगाटकवत् स्थितःपापः।। बृ०सं०-३४/५

४. रूक्षाः खण्डाश्च वामाश्च क्रव्यादायुथन्निभाः। अप्रशस्तः प्रकीर्त्यन्ते विपरीतगुणान्विता।। भद्रबाहु सं०-४/३

५. शिखिगलसमेऽतिवर्षं बहुवर्णे नृपवधो भयं धूम्रे। हरचापनिभे युद्धान्यशोककुसुमप्रभे चापि।। बृ०सं०-३४/६

६. वर्णनैकेन यदा बहुलः स्निग्धः क्षुराभ्रककीर्णः। स्वर्तौ सद्यो वर्षं करोति पीताश्च दीप्तार्कः।। तदेव-३४/७

क. त्रयो यत्रावरूद्यन्ते नक्षत्रं चन्द्रमा ग्रहः। ष्यहाद् वा जायते वर्षं मासाद् वा जायते भयम्।। भद्रबाहु सं०-४/३४

ग. वृष्टिस्त्र्यहेण मासेन विग्रहो वा ग्रहेन्दुभनिरोधो। होराजन्माधिपयोर्जन्मर्क्षे वाऽशुभो राज्ञः।। बृ०सं०-३४/११

परिवेष द्वारा राजा नाश का ज्ञान-

यदि प्रत्येक दिन सूर्य का और रात्रि में चन्द्र का रक्त वर्ण का परिवेष दिखाई दे तो राजा का नाश करता है। तथा सदा उदय या अस्तकाल में सूर्य या चन्द्र का परिवेष दिखाई दे तो भी देश के राजा का नाश होता है। अनेक वृक्षों के समान आकार वाले हरे वर्ण वाले परिवेष राजाओं को नष्ट करते हैं। चन्द्रमा के लाल वर्ण का मण्डल बना रहे तो राजा की मृत्यु होती है।[1]

यदि दो मण्डल होवें तो सेनापति को नष्ट करे, तीन मण्डल होवें तो राजा को नष्ट करें, मण्डल के मध्य में शनि प्राप्त होवे तो तुच्छ धान्यों का नाश, वायु युत वृष्टि स्थावर (वृक्ष आदि) की हानि और किसानों का नाश करता है। यदि मण्डल में मंगल पड़ा हो तो कुमार, सेनापति और सेनाओं को व्याकुलता, अग्नि भय और शस्त्र भय करता है अर्थात् सेना को हानि होने की सूचना देता है। बृहस्पति परिवेष में हो तो पुरोहित, मन्त्री और राजाओं को पीड़ा होती है। बुध पड़ा हो तो मन्त्री, स्थावर और लेखक की वृद्धि और सुन्दर वृष्टि होती है। शुक्र पड़ा हो तो गमन करने वाले क्षत्रियों तथा रानियों को पीड़ा और दुर्भिक्ष होता है। केतु पड़ा हो तो दुर्भिक्ष, अग्नि, मरण, राजा और शस्त्र का भय होता है। तथा परिवेष में यदि राहु पड़ा हो तो गर्भपात, व्याधि और राज भय होता है। इसी प्रकार का वर्णन नारद संहिता और भद्रबाहु संहिता में भी मिलता है।

यदि सूर्य या चन्द्र के परिवेष में दो ग्रह हों तो युद्ध, तीन ग्रह हों तो दुर्भिक्ष और अवृष्टि का भय, चार हों तो मन्त्री और पुरोहित के साथ राजा की मृत्यु और सूर्य या चन्द्र के परिवेष में पाँच ग्रह हों तो संसार की प्रलय ही जानना अर्थात् सर्व विनाश होता है। यदि केतु का उदय न हुआ हो तब ताराग्रह या नक्षत्र अलग-अलग परिवेष युत हों तो राजा का नाश होता है।[2]

---

१. प्रतिदिनमर्कहिमांश्वोरहर्निशं रक्तयोर्नरेन्द्रवधः। परिविष्टयोरभीक्ष्णं लग्नास्तमयस्थोरत्तद्वत्।।
बृ०सं०- ३४/६

क. अनेक वृक्ष वर्णाश्च परिवेषा नृपान्तकृत्।। न० सं०- ४४/०४

ग. अहर्निशं प्रतिदिनं चन्द्रार्कावरुणो यदा। परिविष्टो नृपवधं कुरुतो लोहितौ यदा। तदेव-४४/५-६

२. द्विमण्डलश्चमूनाथं नृपघ्नोऽथ त्रिमण्डलम्। परिवेषगतः सौरिः क्षुद्रधान्यविनाशकृत्।। तदेव- -४४/७

क. परिवेषमण्डलगतो रवितनयः क्षुद्रधान्यनाशकरः। बृ०सं०- ३४/१२

ख. भौमे कुमारवलपतिसैन्यानां विद्रवोऽग्निशस्त्रभयम्। तदेव- ३४/१३

ग. "रणकृद्भूमि जो..................।" न० सं०- ४४/७

घ. मन्त्रिस्थावरलेखकपरिवृद्धिश्चन्द्रजे सुवृष्टिश्च। शुक्रे यायिक्षत्रियराज्ञीपीड़ा प्रियं चान्नम्।।
क्षुदनलमृत्युनराधिपशत्रेभ्यो जायते भयं केतौ। परिविष्टे गर्भभयं राहौ व्याधिर्नृपभयं च।।
जीवे परिवेषगते पुरोहितमात्यनृपपीड़ा। बृ०सं०-३४/१३-१५

च. रणकृद्भूमि. जो जीवः सर्वेषामभयप्रदः। ज्ञः सस्यहानिदः शुक्रो दुर्भिक्षकलप्रदः।।
परिवेषगतः केतुर्दुर्भिक्षकलहप्रदः। पीडां नृपवधं राहुर्गर्भच्छेदं करोति च।। तदेव- ३४/१५-१७

छ. द्वौ ग्रहौ परिवेषस्थौ क्षितीशकलहप्रदौ। कुर्वन्ति कलहानर्धं परिवेषगतास्त्रयः। न० सं०- ४४/७-६

ज. युद्धानि विजानीयात्परिवेषाभ्यन्तरे द्वयोर्ग्रहयोः। दिवसकृतः शशिनो वा क्षुदवृष्टिभयं त्रिषु प्रोक्तम्।।
याति चतुर्षु नरेन्द्रः सामात्यपुरोहितो वशं मृत्योः। प्रलयमिव विद्धि जगतः पंचादिषु मण्डलस्थेषु।।
बृ०सं०-३४/१६-१७

यदि अनेक वर्ण वाला परिवेष सूर्य मण्डल को अवरुद्ध कर ले अथवा खण्ड- खण्ड अनेक प्रकार का हो तथा सूर्य को ढक ले तो गायों का मरण सूचित होता है। यदि सूर्य का परिवेष सूर्य के चारों ओर हो तो नगर, राष्ट्र और देश के मनुष्य महामारी से पीड़ित होते हैं।

यदि परिवेष सहित अभ्रशक्ति दिखलाई पड़े तो आक्रमण करने वाले शत्रु द्वारा नगरवासियों का युद्ध विनाश होता है अतः यत्न पूर्वक रक्षा करनी चाहिए। यदि अनेक वर्ण वाला दण्ड परिवेष को मर्दन करता हुआ दिखलाई पड़े तो आक्रमणकारियों द्वारा नागरिकों का नाश होता है।

कदाचित् तीन कोने वाला परिवेष देखने में आवे तो युद्ध में तीन भाग सेना मारी जाती है, चार कोने वाला परिवेष दिखलाई दे तो क्षुधा और रोग से पीड़ित होकर विनाश को प्राप्त हो जाती है।

यदि परिवेष का भेदन उल्का या विद्युत द्वारा हो तो इस प्रकार के परिवेष द्वारा किसी नेता की मृत्यु होने की सूचना होती है। रक्तवर्ण का परिवेष और लगातार परिवेष दिखलाई पड़े तो भी किसी नेता की मृत्यु होती है।

परिवेषों का राष्ट्र सम्बन्धी फलादेश-

चन्द्रमा का परिवेष मंगल, शनि और रविवार को आश्लेषा, विशाखा, भरणी, ज्येष्ठा, मूल, और शतभिषा नक्षत्र में काले वर्ण का दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ सूचक होता है। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र के उपद्रव, घरेलू कलह, महामारी और नेताओं में मतभेद तथा प्रजा में झगड़ों के होने से राष्ट्र की क्षति होती है। रात्रि में शुक्ल पक्ष के दिनों में जब मेघाच्छन्न आकाश हो, उन दिनों पूर्व दिशा की ओर से बढ़ता हुआ चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े और इस परिवेष का दक्षिण का कोण अधिक बड़ा और उत्तर वाला कोण अधिक छोटा भी मालूम पड़े तो इस परिवेष का फल भी राष्ट्र के लिए घातक, अशान्ति, प्रशासकों में मतभेद आदि उपद्रव होते हैं।

चैत्र और वैशाख में बिना बादलों के आकाश में सूर्य परिवेष दिखलाई पड़े और यह कम से कम डेढ़ घण्टे तक बना रहे तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ की सूचना देता है। इस परिवेष का फल तीन वर्षों तक राष्ट्र में महान् उपद्रव का सूचक होता है ऐसा परिवेष तभी दिखलाई पड़ेगा जब देश के ऊपर महान् विपत्ति आयेगी।[1]

सिकन्दर का भारत के ऊपर आक्रमण के समय में इस प्रकार के परिवेष दिखाई देने का वर्णन मिलता है।[2]

---

१. ताराग्रहस्य कुर्यात् पृथगेव समुत्थितो नरेन्द्रवधम्। नक्षत्राणामथवा यदि केतोर्नोदयो भवति।। बृ०सं०-३४/१८
क. दिवाकरं बहुविधः परिवेषो रूणाद्धि हि। भिद्यते बहुधा वापि गवां मरणमादिशेत्।। भद्रबाहु सं०-४/२०
ख. अंशुमाली यदा तु स्यात् परिवेषः समन्ततः। तदा सपुरराष्ट्रस्य देशस्य रुजमादिशेत्।। भद्रबाहु सं०-४/२२
ग. यदाऽभ्रशक्तिर्दश्येत् परिवेषसमान्वता। नागरान् यायिनो हन्युस्तदा यत्नेन संयुगे।। भद्रबाहु सं०-४/२६
घ. नानारूपी यदा दण्डः परिवेषं प्रमर्दति। नागरास्तत्र बध्यन्ते यायिनो नात्र संशयः।। भद्रबाहु सं०-४/२७
२. द्रष्टव्य- भद्रबसहु सं०- प०- ४/५०, पृ०- ६०

श्री मद्भागवत महापुराण में भी सूर्य और चन्द्र के चारों ओर बार-बार मण्डल (परिवेष) होने का वर्णन आया है।[1] शिव पुराण में भी सूर्य मण्डल के चितकवरा देखने, उस पर हज़ारों घेरे पड़ने और भयङ्कर दिखने का वर्णन मिलता है।[2] सूर्य परिवेष का वर्णन रघुवंश महा काव्य के एकादश सर्ग के ५९ श्लोक में भी आया है। जो अशुभ सूचक था।[3] सुर्जनचरितमहाकाव्य में सूर्य के चारों ओर घेरा सा दिखाई देना अशुभ माने का उल्लेख मिलता है। परिधि का वर्णन भी इस काव्य में आया है।[4]

कुमार सम्भवम् में तारकासुर के विनाश की सूचना देने के लिए सूर्य के चारों ओर अत्यन्त भयंकर सर्पों की कुण्डली के समान भीषण कान्तिमण्डल प्रकट होने का वर्णन मिलता है।[5] इस प्रकार अन्य कई ग्रन्थों में सूर्य मण्डल, परिवेष, परिधि का वर्णन किया हुआ है जो कि होने वाले अनिष्ट को सूचित करने के लिस प्रकट होते हैं।

परिघ उत्पात के लक्षण एवं फल-

परिघ-(परि+हन्+अप्) मरिद्यातन एवं परिघातक शब्द इस के पर्याय हैं।

अर्थ- लौहमय लगुड़, लोहांगो, गड़ासा। भारतवर्ष में पूर्व समय युद्ध में इसी अस्त्र का व्यवहार होता था। धनुर्वेद में लिखा है कि अस्त्त सुगोल और लम्बाई में साढ़े तीन हाथ का होता है। अर्गल, अगड़ी, मुग्दर, शल, भाला, कलसा, प्रतिबन्ध, व्याघात, वज्र। वे बादल जो सूर्य के उदय व अस्त होने के संमय उस सामने आने वाला अशुभसूचक चिन्ह।[6] ज्योतिष शास्त्र में २७ योगों में से १९ वाँ योग है और इस को अशुभ माना गया है। शुभ कर्म में इसके अर्धांश का परित्याग करने का वर्णन मिलता है और इस में जन्म लेने वाले जातक को भी अशुभ माना है।[7] वाल्मीकि रामायण में (सिर कटा हुआ धड़) दिखायी देने का वर्णन मिलता है और साथ में परिध नामक घोर अस्त्र का वर्णन भी महाभारत में आया है।[8]

१. धूमा दिशः परिधयः कम्पते भूः सहाद्रिभिः।। श्री मद्भागवत म०पु०- प्र०स्क०-१४/६
२. द्रष्टव्य - संक्षिप्त शिव पुराणाङ्क - पृ० १५२ - १५३
३. लक्ष्यते स्म तदनन्तरं रविर्बद्धभीमपरिवेषमण्डलः।
वैनतेयशमितस्य भोगिनो भोगवेष्टित इव च्युतो मणिः।। रघुवंश- ११/५९
४. 'परिधिरिव गीरयान् मण्डलञ्चण्ड भानोर्नगरमरौत्सीच्चहुवाणान्वयस्य'। सुर्जन चरित महाकाव्य-११/७१
५. मिलन्महा भीम भुजङ्ग भीषणं प्रभुर्दिनानां परिवेषमादधौ।
महासुरस्य द्विषतो अतिमत्सरादिवान्तमासूचयितुं भयङ्करः।। कुमार सम्भव-१५/१७
६. द्रष्टव्य- हि०वि०कोश- १३-३७
परिघः पुं०- (परि हन्यतेऽनेनेति। परि+हन्+परौ घः।"- ३/३/८४ इति अप् धादेशश्च। लोहबद्धलगुड़ः लोहमयलगुड़ः, लोहमुखलगुड़ः। ततपर्य्यायः। परिघातनः। २१ इत्यमरः - ०२/०८/९१ परिघातकः इति। शब्दकल्पद्रुम- भाग-३, पृ०-५८
७. द्रष्टव्य- ज्योतिष शिक्षा एवं मुहूर्त चिन्तामणि.।
३. नेदुर्बलस्याभिमुखं ज्वालोद्गारिभिराननैः। कबन्ध परिघा भासो .श्यते भास्करान्तिके।। रा०- अरण्य काण्ड-२३/१२
क. द्रष्टव्य- महाभारत - ९-१५-३३, ६-६७-२७
ख. परिघञ्च वटञ्चैव भीमञ्च सुमहाबलम्। दहतिं दहनञ्चैव प्रचण्डौ वीर्यसम्मतौ।। म० भा०-१२/१३८/११४
ग. लम्बक[illegible] घोरदर्शनः। परिघो नाम चण्डालः शस्त्रपाणिरदृश्यत।। म० भा०-९/४५/३६

चतुर्थ अध्याय

भौम उत्पात

विभिन्न शास्त्रग्रन्थों के अनुसार भौम उत्पात के भेद, लक्षण एवं फल आदि का वर्णन-

लिंगवैकृत, अग्निवैकृत, वृक्षवैकृत, सस्यवैकृत जलवैकृत, प्रसववैकृत, चतुष्पदवैकृत, मृगपक्ष्यादिवैकृत और भूकम्पादि 'भौम' उत्पात के भेद हैं। भेदों के लक्षण एवं फल आगे प्रस्तुत किये जारहे हैं-

लिंगवैकृत

लक्षण- शिवलिंग, देवमूर्ति और देव स्थानों में जो विकार होते हैं उन्हें **'लिंगवैकृत'** उत्पात कहते हैं।

फल- १. शिवलिंग, देवमूर्ति और देव स्थानों का बिना कारण के फटजाना, कम्पन होना, उन में पसीना आना, उन का रोना, अचानक अपने स्थान से गिर जाना, उन में शब्द आदि विकारों का होना राजा और देश के लिये नाशकारी होते हैं।[1]

२- देव स्थानों में यात्रा के समय गाड़ी की धुरी से ही पहिया भंग होना, ध्वजा का टूटना, युग का टूटना, गाड़ी का गिरना, उल्टना, सादन या कहीं पर चिपट जाना, देश और राजा के लिए अशुभकारी होते हैं।[2]

३- विभिन्न लिंगों में उत्पन्न विकार, विभिन्न वर्गो में फलीभूत होते हैं यथा मुनि, धर्म, पिता और ब्रह्मा में उत्पन्न विकार ब्राह्मणों को अनिष्ट करता है। महादेव और लोकपालों अर्थात् इन्द्र आदि में उत्पन्न विकार पशुओं को अनिष्ट करता है। बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर में उत्पन्न विकार पुरोहितों को अनिष्ट करता है। विष्णु की प्रतिमा में उत्पन्न विकार मनुष्यों को अनिष्ट करता है। कार्तिक्य और विशाखदेव में उत्पन्नविकार मण्डलाधिपति राजाओं को अनिष्ट करता है। वेदव्यास की प्रतिमा में उत्पन्न विकार मन्त्री को अनिष्ट करता है। गणेश में उत्पन्न विकृति सेनापति को अनिष्ट करता है।

४- ब्रह्मा और विश्वकर्मा में उत्पन्न विकार मनुष्यों को अनिष्ट करता है। देवकुमारों में उत्पन्न विकार राज कुमारों का अनिष्ट करता है। देव कुमारी अर्थात् देवी की मूर्ति में उत्पन्न विकार राजकुमारियों को अनिष्ट करता है। देवांगनाओं में उत्पन्न विकार राजपत्नियों को अनिष्ट करता है। देवताओं के दास में उत्पन्न विकार राजाओं के सेवकों को अनिष्ट करता है। राक्षसों में उत्पन्न विकार राजकुमारों को अनिष्ट करता है।

१-क- अनिमित्तभंग चलनस्वेदा श्रुनिपातजल्पनाद्यानि। लिंगार्चायतनानां नाशाय नरेशदेशानाम्।।
बृ०सं०- ४६/८

ख- देवतार्चाः प्रनृत्यन्ति' वेपन्ते प्रज्वलन्ति वा। मुर्हूनृत्यन्ति रोदन्ति प्रस्विद्यन्ति हसन्ति वा।।
उतिष्ठन्ति निषीदन्ति प्रधावन्ति पतन्ति वा। [illegible]।।'गर्ग सं०'

२- देवयात्राशकटाक्षचक्रयुगकेतुभङ्गपतनानि। सम्पर्यासनसादनसङ्गश्च न देशनृपशु भयदाः।। बृ०सं०-४६/६

पिशाचों में उत्पन्न विकार राज कुमारियोंको अनिष्ट करता है। यज्ञों में उत्पन्न विकार राजपत्नियों को और नागों में उत्पन्न विकार राजसेवकों को अशुभ फल देने वाले होते हैं। इन उत्पातों का फल आठ महीने में होता है।[1]

५- जब देवताओं की मूर्तियाँ नाचने लगती हैं, अपने आप काँपने लगती हैं, जलने लगती हैं, अग्नि, धुआँ, तेल, रक्त, चर्वी आदि उगलने लगती हैं, अपने स्थान से उटने लगती हैं, बैठने लगती हैं, दौड़ने लगती हैं, मुँह बजाने अर्थात् मुँह खोलने, बन्ध करने लगें, खाने लगती हैं अथवा भय प्रदर्शन करने लगें, कोश हथियार, ध्वजा आदि को इधर-उधर करने लगें, नीचे मुख किये स्थित हो जाती हैं, एकस्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण करने लगें और आकस्मिक यदि शिवलिंग, देवमन्दिर तथा ब्राह्मणों के पुर में दिखाई पड़ें तो ऐसे उत्पातों के होने पर राजा पर कोई बड़ी विपत्ति आती है अथवा उस देश का विनाश होता है।[2]

६- देवमूर्तियाँ कभी काँपना, कभी हंसना, कभी मुखों से रुधिर का वमन करना, कभी स्वेदयुक्त होना और कभी गिरना यह सब उत्पात विनाश के सूचक चिहून हैं।[3]

महाभारत युद्ध से पुर्व एवं युद्ध समय में मूर्तियों में उत्पात के लक्षण इस प्रकार प्रकट हुए- देवताओं की मूर्तियों का नृत्य करने, गिरने, अकस्मात् जल उठने, रोने, कभी गाने, कभी हँसने, पसीना आने, मूर्तियों के मुख से अग्नि, धुआँ, स्नेह (तैलादिक) रक्त, दूध, जल ये निकलने, मुख नीचे को जाने, एक जगह से दूसरी जगह को मूर्ति चली जाने आदि जैसे विकार देवताओं की मूर्तियों में दीखने का वर्णन मिलता है।[4]

१- ऋषिधर्मपितृब्रह्मप्रोद्भूतं वैकृतं द्विजातीनाम् । यद्रुद्रलोकपालोद्भवं पशूनानिष्टं तत् ।।
गुरुसितशनैश्चरोत्थं पुरोधसां विष्णुजं च लोकानाम्। स्कन्दविशाखसमुत्थं माण्डलिकानां नरेन्द्राणाम् ।।
वेदव्यासे मन्त्रिणि विनायके वैकृतं चमूनाथे। धातरि सविश्वकर्मणि लोकाभावाय निर्दिष्टम्।।
देव कुमार कुमारीवनिताप्रेष्येषु वैकृतं यत्स्यात्। तन्नरपतेः कुमारक कुमारिकास्त्रीपरिजनानाम्।।
रक्षः पिशाचगुह्यकनागानामेवमेव निर्दिष्टम्। मासैश्चाप्यष्टाभिः सर्वेषामेव फलपाकः ।।
बृ० सं० ४६/१०-१४

२- देवतार्चाः प्रनृत्यन्ति वेपन्ते प्रज्वलन्ति च । वमन्त्यग्निं तथा धूमं स्नेहं रक्तं तथा वसाम्।।
आरतन्ति रुदन्त्येताः प्रस्विद्यन्ति हसन्ति च। उत्तिष्ठन्ति निषीदन्ति प्रधावन्ति धमन्ति च।।
भुंजते विक्षिपन्ते वा कोशप्रहाणध्वजान्। अवांमुखा वा तिष्ठन्ति स्थानात् स्थानं भ्रमन्ति च।।
एवमाद्या हि दृश्यन्ते विकाराः सहसोत्थिताः। लिंगायतनविप्रेषु तत्र वासं न रोचयेत् ।।
राज्ञो वा व्यसनं तत्र स च देशो विनश्यति। देवयात्रासु चोत्पातान् दृष्ट्वाव देशभयं वदेत्।। म०पु-२२६/१-५

३- देवताप्रतिमाश्चापि कम्पन्ति च हसन्ति च। वसन्ति रुधिरं चास्यैः स्विद्यन्ति प्रपतन्ति च।। तदेव-२२६/६

४. देवता यत्र नृत्यंति पतन्ति प्रस्वलन्ति च। मुँह रुदन्ति गायन्ति प्रास्वद्यन्ति हसन्ति च।।
वमंत्यग्निं तथा धूमं स्नेहें रक्तं पयो जलम्। अधोमुखाश्च तिष्ठन्ति स्थानात्स्थानं वव्रन्ति च।।
एवमाद्या हि दृश्यंते विकाराः प्रतिमासु च। न० सं० अ० - ३७/१-३,

क. 'द्रष्टव्य- म०भा० भी० पर्व'

अग्निवैकृत

लक्षण- अग्नि द्वारा उत्पन्न विकारों को 'अग्निवैकृत' उत्पात कहते हैं।

फल- १- जिस राजा के राज्य में बिना अग्नि की ज्वाला दिखाई दे और काष्ठयुत अग्नि का प्रज्वलित करने पर भी प्रजबल न होना। जल, मांस और गीली वस्तु में अकारण अर्थात् बिना किसी कारण के जलन पैदा हो जाये तो राजा की मृत्यु, खड्ग आदि अस्त्रों में जलन पैदा हो तो भंयकर युद्ध और सेनाओं या नगर में अग्नि नहीं मिले तो अग्नि से राज्य में भय होता है।[1]

२- प्रासाद अर्थात् शिवमन्दिर या देवमन्दिर, घर, तोरण या ध्वज अग्नि के बिना या बिजली से दग्ध हो जायें तो छै मास बाद निश्चय ही दूसरे राजा की सेनाओं का आगमन अर्थात् दूसरे राजा का शासन होता है।[2]

३- अग्नि के बिना धूम अथवा दिन में धूली या अन्धकार दिखाई दे तो अधिक भय होता है तथा रात्रि के समय मेघ रहित आकाश में नक्षत्रों का अदर्शन और दिन में नक्षत्रों का दर्शन हो तो अधिक भयकारी होता है अर्थात् कोई न कोई विपत्ति राज्य में आती है।[3]

४- नगर, पशु, पक्षी या मनुष्यों में अग्नि के बिना जलन पैदा हो उन के लिए अधिक भयकारी होता है। शय्रया, वस्त्र या केशों में धूम, अग्नि की ज्वाला या अग्नि की चिंगारियाँ दिखाई दें तो स्वामी की मृत्यु होती है अर्थात् राजा की या घर के प्रमुख व्यक्ति की मृत्यु होती है।[4]

५- खड्ग आदि अस्त्रों में जलन पैदा होना,उनका चलायमान होना, उन में शब्द होना, उनका म्यान से निकलना अथवा शस्त्र में किसी प्रकार के विकार का पैदा होना ये सब शीघ्र राज्य में भयंकर संग्राम कराते हैं अर्थात् राज्य में भयंकर युद्ध होता है।[5]

६- जिस देश में ईन्धन बिना ही अग्नि जल उठती है और ईंधन लगाने पर भी अग्नि प्रज्वलित नहीं होती वह देश दूसरे राजाओं से पीड़ित होता है अर्थात् दूसरे राजा उस पर आक्रमण करते हैं।[6]

१- राष्ट्रे यस्यानग्निः प्रदीप्यते दीप्यते च नेन्धनवान्। मनुजेश्वरस्य पीडा तस्य च राष्ट्रस्य विज्ञेया ।।
जलमांसार्द्रज्वलने नृपतिबधः प्रहरणे रणौ रौद्रः। सैन्यग्रामपुरेषु च नाशो वह्नेर्भयं कुरुते।।
बृ०सं०- ४६/१८-१९

२- प्रासादभवनतोरणकेत्वादिष्वननलेन दग्धेषु।
तडिता वा षण्मासात् परचक्रस्यागमो नियमात्।। तदेव-४६/२०

३- धूमोऽनग्निसमुत्थो रजस्तमश्चाह्निजं महाभयदम्।
व्यभ्रेनिश्युडुनाशो दर्शनमपि चाह्नि दोषकरम्।। तदेव- ४६/२१

४- नगरचतुष्पादण्डजमनुजानां भयकरं ज्वलनमाहुः।
धूमाग्निविस्फूलिंगैः शय्र्याम्बरकेशगैर्मृत्युः।। तदेव- ४६/२२

५- आयुधज्वलनसर्पणस्वनाः कोशनिर्गमनवेपनानि वा।
वैकृतानि यदि वायुधेऽपराण्याशु रौद्ररणसंकुलं वदेत्।। तदेव- ४६/२३

६- अनग्निर्दीप्यते यत्र राष्ट्रे यस्य निरिन्धनः।
न दीप्यते चेन्धनवांस्तद्राष्ट्रं पीड्यते नृपैः ।। म० पु०-२२९/०१

७- जहाँ जल में मांस जलने लगता है या उसका कोई भाग जल जाता है, किले की चारदीवारी, प्रवेशद्वार, तोरण, राजभवन और देवालय- ये अकस्मात् जल उठते हैं वहाँ राजा को भय प्राप्त होता है यदि यही वस्तुऐं बिजली गिरने से जल जाती हैं तब भी राजा को भय प्राप्त होता है।[1]

८- जहाँ रात्रि तथा धूलि एवं रजोवृष्टि के बिना ही अन्धकार छा जाय और अग्नि के विना धुआँ दिखायी पड़े वहाँ महाभय होता है। आकाश में बादल और नक्षत्रोंके बिना आकाश में बिजली चमकने लगे तो महाभय होता है इसी प्रकार दिन में आकाशमण्डल तारायुक्त हो अर्थात् दिन में तारे दिखाई दें तो महाभय होता है।[2]

९- जब ध्वजा, कवच, शस्त्र और जल की प्रभा आग के समान हो, तब समझ लेना चाहिए कि बहुत भारी ध्वंस होने वाला है अर्थात् कोई भयंकर युद्ध या नरसंहार होने वाला है।[3]

१०- प्रज्वलित होता हुआ तीव्र ग्रह कृत्तिका अपने तेज से जब अन्य ग्रहों के तेज को मन्द करता हुआ धूमकेतु के समान स्थित हो उस समय महाभय होता है अर्थात् कोई भंयकर अपत्ति आती है।[4]

११- जिस अग्नि से ब्राह्मण होम करते हैं, जब वह अग्नि नीली, लाल वा पीली होकर जले और कठोर शब्द करती हुई वाईं ओर ज्वाला फेंकती हुई जले तथा धुआँ अधिक निकालती है, स्पर्श, गन्ध, रस आदि गुण जब विपरीत हो जाते हैं तब नरसंहार होने के लक्षण होते हैं।[5]

१२- जहाँ अग्नि प्रदीप्त करने पर भी प्रदीप्त न हो, जल से भरे हुए घड़े अकारण ही चूने लगें तो इन उत्पातों के होने से नगर में मृत्यु, भय और महामारी होती है।[6]

१- प्रज्वलेदप्सु माँसं वा तदर्धं वापि किंचन। प्राकारं तोरणं द्वारं नृपवेश्म सुरालयम्।।
एतानि यत्र दीप्यन्ते तत्र राज्ञो भयं भवेत्। विद्युता वा प्रदह्यन्ते तदापि नृपतेर्भयम् ।।
म० पु०-२२९/२-३

२- अनैशानि तमांसि स्युर्विना पांसुरजांसि च। धूमश्चानग्निजो यत्र तत्र विन्द्यान्महाभयम्।। तदेव-२३२/४

क- तडित् त्वनभ्रे गगने भयं स्याद्वृक्षवर्जिते। दिवा सतारे गगने तथैव भयमादिशेत्।। तदेव-२३२/५

३- अग्निवर्णा यथा भासः शस्त्राणामुदस्य च। कवचानां ध्वजानां च भविष्यति महान्क्षय।।
म० भा० भी०- ३/२१

४- कृत्तिकासु ग्रस्तीव्रो नक्षत्रे प्रथमे ज्वलन्। वपूंष्यपहरन्भासा धूमकेतुरिवस्थितः।। तदेव- ३/२६

५- प्रज्वलन्नग्नयो राजन् पृथिवी समकम्पत। उदपानाश्च कुम्भाश्च प्रासिग्र्चञ्छतशी जलम्।।
पीतलोहितनीलश्च ज्वलत्यग्निर्हूतो द्विजैः। वामार्चिः शावगन्धी च धूमप्रायः खरस्वनः।।
स्पर्शा गन्धा रसाश्चैव विपरीता महीपते। म०भा०- उद्योग पर्व- ८४/७-८

६- अग्निर्यत्र नदीप्येत स्रवन्ते चोदकुम्भकाः। मृतिर्भयं शून्यतादिरुत्पातानां फलम्भवेत्।। अ० पु०-२६२/३

क. नीललोहितपीतश्च भवत्यग्निर्हुतो द्विजैः। वामार्चिर्दुष्टगन्धश्च मुञ्चन् वै दारुणं स्वनम्।
स्पर्शा गन्धा रसाश्चैव विपरीता महीपते। म०भा०- भीष्म पर्व- ३/४०-४१

अकस्मात् सब ओर आग जलने, धरती डोलने, सैंकड़ों जलाशय और कलश छलक-छलक कर जल गिराने वाले उत्पात महाभारत युद्ध के पूर्व हस्तिनापुर एवं आसपास के ग्रामों में होने का उल्लेख मिलता है।[१]

महाभारत युद्ध से पूर्व ब्राह्मण लोगों के हवन में आहुति देने पर प्रज्वलित हुई अग्नि काले, लाल और पीले रंग की दिखाई देने, उनकी लपटें वामावर्त होकर उठने, दुर्गन्ध निकलने और भयानक शब्द प्रकट करने, स्पर्श ग्रन्थ और रस इन सबकी स्थिति विपरीत होने का उल्लेख महाभारत के भीषम पर्व में वर्णित है।[२]

योद्धाओं के धनुष से आग की लपटें निकलने, खड्ग अत्यन्त प्रज्वलित हो उठने, सभी शस्त्र जलते से प्रतीत होने, सप्तर्षियों की प्रभा फीकी पड़ने, शस्त्रों की जलकी, कवचों की और ध्वजाओं की कान्तियाँ अग्नि के समान लाल हो जाने जैसे उत्पातों से यह प्रतीत होता है कि निश्चय ही महान् जन संहार होगा।[३] 'महाभारत'

ध्वजों का बारम्बार कम्पित होकर धुआँ छोड़ने, ढोल नगाड़ों का भयंकर ध्वनि निकालने जैसे उत्पात घटित होने का वर्णन महाभारत में आया है।[४]

---

१. नश्चेरूरचिर्षश्चापात् खड्गाश्च ज्वलिता भृशम्।
व्यक्तं पश्यन्ति शास्त्राणि संग्रामं रामुपस्थितम्।। म०भा०- भी०पर्व- ३/४३

२. अग्निवर्णा यथा भासः शस्त्राणामुदकस्य च।
कवचानां ध्वजानां च भविष्यति महाक्षयः।। तदेव- भीष्म पर्व, ३/२१-२३

३. शस्त्राणि चैव राजेन्द्र प्रज्वलन्तीव सम्प्रति।
सप्तर्षीणामुदाराणां समवच्छाद्यते प्रभा।। तदेव- भीष्म पर्व, ३/२६

४. धूमं ध्वजाः प्रमुञ्चन्ति कम्पामाना मुहुर्मुहुः।
मुञ्चन्त्यङ्गार वर्षं च भयेश्चं पटहास्तथा।। तदेव- भीष्म पर्व, ३/४३

वृक्षवैकृत

लक्षण- वृक्षों से सम्बन्धित उत्पातों को 'वृक्षवैकृत' उत्पात कहते हैं।

फल- १- अचानक वृक्ष की शाखा टूट जाने से युद्ध की तैयारियाँ होने के सूचक लक्षण होते हैं। वृक्षों के हँसने से देश का नाश और वृक्षों के रोने से व्याधि की अधिकता होती है अर्थात् देश में व्याधियाँ अधिक होती हैं।[1]

२- ऋतु वर्जित काल में अर्थात् जिस ऋतु में वृक्षों के ऊपर फल, पुष्प लगने का समय न हो उस काल में पुष्प और फलों की उत्पत्ति होने से राज्य में विभेद होता है। छोटे छोटे वृक्षों में मात्रा से अधिक पुष्प लगने लगें तो बालकों का नाश होता है और वृक्षों से दूध निकलने लगे तो उस देश में द्रव्यों का नाश होता है।[2]

३- वृक्षों से मद्य निकलने पर वाहनों (अश्वादिकों) का नाश होता है। रक्त निकलने पर युद्ध होता है, मधु निकलने पर रोग होता है, तेल निकलने पर दुर्भिक्ष का भय होता है और वृक्ष से जल निकलने पर देश में अधिक भय होता है।[3]

४- सूखे हुये वृक्षों में विरोह अर्थात् पुनः हरे होकर अंकुर निकलने से बल और अन्न का नाश होता है। गिरे हुए वृक्षों का अपने आप उठने से देव जनित भय होता है अर्थात् देवताओं द्वारा भय होता है।[4]

५- प्रधान वृक्ष अर्थात् जो वृक्ष जंगल आदि में सब से बड़ा हो उस पर पुष्प और फलों की उत्पत्ति का होना राजा के नाश होने का सूचक है और उस में से धूप या अग्नि की ज्वाला का निकलना राजा केलिए नाशकारी होता है।[5]

६- वृक्षों को चलने या उन से किसी प्रकार के शब्द निकलने पर मनुष्यों का नाश होता है।[6]

७- जब वृक्ष असमय में ही फल देने लगें अर्थात् जब वृक्षों पर फल लगने का समय न हो उस समय फलने लगें तथा दूध और रक्त बहावें तो वृक्ष जनित भौम उत्पात होता है। इस उत्पात की शान्ति के लिए शिव पूजन करना चाहिए।[7]

१- शाखाभंगेऽकस्माद्वृक्षाणां निदिशेद्रणोद्योगम्।
हसने देशभ्रंशं रुदिते च व्याधिबाहुल्यम्।। बृ०सं०- ४७/२५

२- राष्ट्रविभेदस्त्वनृतौ बालबधोऽतीव कुसुमिते बाले।
वृक्षात् क्षीरस्रावे सर्वद्रव्यक्षयो भवति।। तदेव- ४७/२६

३- मद्ये वाहननाशः सङ्ग्रामः शोणिते मधुनि रोगः।
स्नेहे दुर्भिक्षभयं महद्भयं निःसुते सलिले।। तदेव- ४७/२७

४- शुष्कविरोहे वीर्यान्नसंक्षयः शोषणे च विरुजानाम्।
पतितानामुत्थाने स्वयं भयं दैवजनितं च।। तदेव- ४७/२८

५- पूजितवृक्षे ह्यनृतौ कुसुमफलं नृपवधाय निर्दिष्टम्।
धूमस्तस्मिन् ज्वाजलाऽथवा भवेन्नृपबधायैव।। तदेव- ४७/२६

६- सर्पत्सु तरुषु जल्पत्सु वापि जनसंक्षयो विनिर्दिष्टः। तदेव- ४७/३०

७- अकाले फलिता वृक्षाःक्षीरं रक्तं स्रवन्ति च।
वृक्षोत्पात प्रशमनं शिवं पूज्य च कारयेत।। अ० पु०- २६२/१७

८- जिन ग्रामों में देव-प्रेरित अर्थात् देवताओं द्वारा प्रेरित वृक्ष अपने आप रोते, हँसते, प्रचुर मात्रा में रस बहाते हुए किसी रोग अथवा वायुके बिना डालियाँ गिराने लगती हैं,जब तीन ही वर्ष के वृक्ष असमय में फलने- फूलने लगते हैं, दूध, तैल, रक्त, मध, और जल बहाने लगते हैं,जब किसी रोग के बिना ही सूख जाते हैं अथवा सूखे हुए पुनः अंकुरित हो जाते है, गिरे हुए वृक्ष उठकर खड़े हो जाते है तथा खड़े हुए वृक्ष गिर पड़ते हैं तो एसे वृक्ष जनित विकारों को वृक्षवैकृत उत्पात कहते हैं।[1]

९- वृक्षों के रुदन करने पर व्यधियाँ फैलती हैं, वृक्षों के हँसने पर देश में संकट की वृद्धि होती है, शाखाओं के गिरने से संग्राम में योद्धाओं का विनाश होता है, असमय में वृक्षों के उपर फूल लगना बालकों की मृत्यु को सूचित करते हैं, वृक्ष समूहों में से किसी किसी के फलने फूलने पर अपने राष्ट्र में भेद उत्पन्न होता है, तैल का गिरना दुर्भिक्ष का लक्षण है अर्थात् वृक्षों से तैल गिरें तो उस देश में दुर्भिक्ष होता है,गाय के दूध गिरने से चारों ओर विनाश उपस्थित होता है, मदिरा के गिरने से वाहनों का विनाश होता है, रक्त के गिरने पर संग्राम होता है। मधु के चूने से व्याधियाँ फैलती है, जल के गिरने से वृष्टि नहीं होती। किसी रोग के बिना वृक्षों का सूख जाना दुर्भिक्ष का लक्षण जानना चाहिये। सूखे हुए वृक्षों से अंकुर फूटने पर वीर्य अर्थात् पराक्रम और अन्न की हानि होती है। गिरे हुए वृक्षों के उठने पर भेदकारी भय अर्थात् देश में आपसी भेद भाव होता है। वृक्षों का एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने से देशभंग होता है। वृक्षों के अकस्मात् जलने तथा रुदन करने पर सम्पत्ति का विनाश होता है। ये उपद्रव यदि पूजित वृक्षों में होते हैं तो अवश्य ही राजापर विपत्तियाँ आती हैं। वृक्षों के फलो तथा फूलों में विकार होने पर राजा की मृत्यु होती है।[2] इस प्रकार वृक्षवैकृत उत्पात का वर्णन विष्णुधर्मोत्तर पुराण के १३७ अध्याय में दिया हुआ है।

१-(क) पुरेषु येषु दृश्यन्ते पादपा देवचोदिताः। रुदन्तो वा हसन्तो वा स्रवन्तो वा रसान् बहून्।।
अरोगा वा विना वातं शाखां मुंचन्त्यध द्रुमाः। फलं पुष्पं तथाकाले दर्शयन्ति त्रिहायनाः।।
म० पु०- १३२/१-२

(ख) पूर्ववत् स्वं दर्शयन्ति फलं पुष्पं तथान्तरे । क्षीरं स्नेहं तथा रक्तं मधु तोयं स्रवन्ति च।।
शुष्यन्त्यरोगाः सहसा शुष्का रोहन्ति वा पुनः। उत्तिष्ठन्तीह पतिताः पतन्ति च तथोत्थिताः ।।
तदेव- १३२/३-४

२- रोदने व्याधिमभयेति हसने देशविभ्रमम्। शाखाप्रपतनं कुर्यात् संग्रामे योधपातनम्।।
बालानां मरणं कुर्युरकाले पुष्पिता द्रुमाः। स्वराष्ट्रभेदं कुरुते फलपुष्पमथान्तरे ।।
क्षयः सर्वत्र गोक्षीरे स्नेहे दुर्भिक्षलक्षणम्। वाहनापचयं मद्ये रक्ते संग्राममादिशेत्।।
मधुस्रावे भेवद् व्याधिर्जलस्रावे न वर्षति। अरोगशोष्णं ज्ञेयं ब्रह्मन् दुर्भिक्षलक्षणम्।।
शुष्केषु सम्प्ररोहस्तु वीर्यमन्नं च हीयते। उत्थाने पतितानां च भयं भेदकरं भवेत्।।
स्थानात् स्थानं तु गमने देशभंगस्तथा भेवत्। ज्वलत्स्वपि च वृक्षेषु रुदत्स्वपि धनक्षयम्।।
एतत्पूजितवृक्षेषु सर्वं राज्ञो विपद्यते। पुष्पे फले वा विकृते राज्ञो मृत्युं तथाऽऽदिशेत्।।
अन्येषु चैव वृक्षेषु वृक्षोत्पातेष्वतन्द्रितः। म०पु०- १३२/६-१२

६- कमल, उत्पल, कुमुद, कलहार आदि जल पुष्प पेड़ों पर उत्पन्न होने लगें और चारों ओर प्रचण्ड वायु के चलने से बहुत धूल उड़ने लगे और शान्त न होती हो तो भयंकर अपत्ति आने की यह वृक्षवैकृत उत्पात सूचना देते हैं।[१] वृक्षों के फूल और फल का झड़ जाना जैसे उत्पात वाल्मीकी रामायण के अरण्य काण्ड में वर्णित हैं।[२]

१०- महाभारत युद्ध से पूर्व वन के वृक्ष बिना ऋतु के फूल और फल प्रकट करने, पद्म, उत्पल और कुमुद आदि जलीय पुष्प वृक्षों पर पैदा होने जैसे उत्पात होने का उल्लेख मिलता है।[३] उपवनों के वृक्ष एक साथ असमय में फूल देने का वर्णन हर्ष चरित में भी आया है।[४]

सस्यवैकृत

कमल, जो, गेहूँ आदि में उत्पन्न विकारों को 'सस्यवैकृतम' उत्पात कहते हैं।

फल- १- कमल, जो, गेहूँ आदि के एक नाल में से दो या तीन बाल की उत्पत्ति हो तो क्षेत्र के अधिपति का मरण होता है तथा यमल, पुष्प या फलों की उत्पत्ति हो तो भी उस क्षेत्र के अधिपति का मरण होता है।[५]

२- यदि धान्यों की अधिक वृद्धि तथा एक वृक्ष में अनेक प्रकार के फल और पुष्पो की उत्पत्ति हो तो निश्चय परचक्र का आगम होता है अर्थात् शासन बदल जाता है।[६]

३- यदि तिल के परिमाण से आधे तेल का परिमाण हो या तिल से बिल्कुल तेल नहीं निकलता हो अन्न में विरसता मालूम हो अर्थात् अन्न में रस न हो तो अतिभय होता है।[७]

४- समयानुसार विशेष-२ फलों को उत्पन्न करने वाली भूमि फल उत्पन्न करने के समय से पहले ही उत्पन्न फलों वाली भूमि सब प्रकार के अन्नों से परिपूर्ण हो जाये तो या फिर जौ के एक-२ पौधे पर पाँच-२ बालियाँ और धान के एक एक पौधे पर सौ-२ बालियाँ लगें तो उस देश में विपत्ति आती है।[८]

पृथ्वी सब प्रकार के अनाज के पौधों से आच्छादित होने, शस्य की मालाओं से अलंकृत होने, जौ में पाँच-पाँच और जड़हन धान में सौ-सौ बालियाँ लगने जैसे उत्पातों का उल्लेख महाभारत में मिलता है जो कि प्राणियों के अनिष्ट की सूचना देने वाले होते हैं।[९]

१. तस्मिन् क्षणे बभुवुश्च विना पुष्पफलैर्द्रुमाः। वा० रा०-अरण्य काण्ड-२३/१५
२. 'अनार्तवं पुष्पफलं दर्शयन्ति वनद्रुमाः। म० भा० - भीष्म पर्व, ०२/०१
३. पद्मोत्पलानि वृक्षेषु जायन्ते कुमुदानि च।। म० भा० - भीष्म पर्व, ०३/४३
४. 'आमन्त्रयमाणा इव दधुरकालकुसुमानि सममुपवनतरवः।' हर्ष चरितम- षष्ठ उच्छवास्
५- नाले ऽब्जयवादीनामेकस्मिन् द्वित्रिसम्भवो मरणम्।
कथयति तदधिपतीनां यमलं जातं च कुसुमफलम्।। बृ० सं० ४६/३३
६- अतिवृद्धिः सस्यानां नानाफल कुसुमसम्भवो वृक्षे।
भवति हि यद्येकस्मिन् पर चक्रस्यागमो नियमात।। तदेव- ४६/३४
७- अर्धेन यदा तैलं भवति तिलानामतैलता वा स्यात्।
अन्नस्य च वैरस्यं तदा तु विन्द्याद्भयं सुमहत्।। तदेव- ४६/३५
८- सर्वसस्यप्रतिच्छन्ना पृथिवी फलमालिनी।
पंचशीर्षा यवाश्चैव शतशीषश्च शालयः।। म०भा०भी०- ४/१८
६ सर्वसस्यपरिच्छन्ना पृथिवी सस्यमालिनी। पञ्चशीर्षा यवाश्चापि शतशीर्षाश्च शालयः।। तदेव-३/१६

जलवैकृत

फल. १- यदि नगर के मध्य या पास में बहती हुई नदियाँ दूर चली जायें अर्थात् अपना रास्ता बदल दें या नहीं सूखने वाले ह्रद आदि सूख जायें तो शीघ्र ही उस नगर में प्राणियों का नाश हो जाता है। यदि नदियों में तेल, रुधिर या मांस बहने लगें या स्वल्प या मलिन जल हो जाय तो छ मास बाद पर चक्र अर्थात् दूसरे राजा का शासन होता है।[1]

२- कूप में अग्नि की ज्वाला, धुआँ जल का खौलना, रोने का शब्द, गीत या और किसी प्रकार के शब्द का होना लोगों के लिये यह उत्पात मृत्यु सूचक होते हैं।[2]

३- विना खोदी हुई भूमि में जल का निकलना, जल में गन्ध और रसों में विपर्यय होना तथा जलाशयों में विकार पैदा होने से नगर में अग्नि का भय होता है।[3]

४- यहाँ नदियाँ सरोवर या झरने नगर से दूर हट जाते हैं या दूर होने पर भी समीप चले आते हैं अथवा सूख जाते हैं, मलिन हो जाती हैं, कलुषित हो जाती हैं, जल जलने लगता है, उनके फेन के समान जंतुओं का आधिक्य हो जाता है, तेल दूध, मदिरा या रक्त उनमें बहाने लगते हैं अथवा उनका जल विक्षुब्ध हो उठता है, तब छः महीने के भीतर उस देश पर शत्रु पक्ष की सेना से भय होता है अर्थात् शत्रुओं की सेना अकस्मात् हानि पहुँचाती है।[4]

५- जब किसी प्रकार से जलाशय शब्द करने लगते हैं या जलने लगते हैं तथा लपटें, धुआँ एवं धूलि फेंकने लगतें हैं, विना खोदे ही जल निकलने लगता है, जलाशय में बड़े-बड़े जन्तुओं से भर जाते हैं और उन में से संगीत की ध्वनियाँ सुनाई पड़ने लगती हैं अर्थात् जलाशयों में विकार उत्पन्न होते हैं। उस समय प्रजा को इस उत्पात से मृत्यु का भय रहता है।[5]

६- जिस नगर में नदियाँ दूर हट जाती हैं या अत्यधिक समीप चली आती हैं अर्थात्

१- अपर्सर्पणं नदीनां नगरादचिरेण शून्यतां कुरुते। शोषश्चाशोष्याणामन्येषां वा ह्रदादीनाम्।।
क. स्नेहासृङ्मांसवहाः संकुलकलुषाः प्रतीपगाश्चापि। परचक्रस्यागमनं नद्यः कथयन्ति षण्मासात्।।
बृ०सं०- ४६/४७-४

२-ज्वालाधूमकक्वाथारूदितोत्क्रुष्टाानि चैव कूपानाम्। गीत प्रजल्पितानि च जनमरकायोपदिष्टानि।।
तदेव- ४६/४८

३- सलिलोत्पत्तिरखाते गन्धरसविपर्यये च तोयानाम्। सलिलाशयविकृतौ वा महद्भयं तत्र शान्तिमिमाम्।।
तदेव- ४६/५०

४- नगरादपसर्पन्तं समीपमुपयान्ति च । नद्यो ह्रदप्रस्रवाणि विरसश्च भवन्ति च।।
विवर्णं कलुषं तप्तं फेनवज्जन्तुसंकुलम्। स्नेहं क्षीरं सुरां रक्तं वहन्ते वाकुलोदकाः ।
षण्मासाभ्यन्तरे तत्र पर चक्रभयं भवेत्।। म० पु०-२३५/१-२

५- जलाशया नदन्ते वा प्रज्चलन्ति कथंचन । विमुम्चन्ति तथा ब्रह्मन् ज्वालाधूमरजांसि च ।।
अखाते वा जलोत्पतिः सुत्तवा वा जलाशयाः। संगीशब्दाः श्रुयन्ते जनमारभयं भवेत्।।
तदेव - २३५/३-५

अपना स्थान परिवर्तन कर देती हैं और जिस नगर के सरोवर एवं झरने सूख जाते हैं तो वहाँ जल सम्बन्धि विकार होता है इस से नगर के लोगों को मृत्यु का भय होता है।[1]

७- महा नदियों की धार जब एकदम उलटी चलने लगती है, सब नदियों का पानी लोहू के रंग का हो जाये, कुंए फेन से भर जाऐं, बैल के समान डकारते हों तो नगर में महाभय होता है।[2]

८- ग्रहों के निवास स्थान समुद्रों में ज्वार आने, समुद्र गामिनी नदियों के उल्टी धारा में बहकर अपने उद्गम की ओर जाने का वर्णन महाभारत के प्रतिज्ञा पर्व में मिलता है।[3]

९- पूर्व की ओर बहने वाली सिन्धु आदि बड़ी-बड़ी नदियों का प्रवाह उलटकर पश्चिम की ओर हो जाने और सारी दिशाएँ विपरीत प्रतीत होने का उल्लेख मिलता है।[4]

१०- कुओं के जल सब ओर से अपने आप बढ़ने, तालाबों और कूपों में रक्त का उफान आने और महान् वेग शालिनी नदियों का अपने उद्गम की ओर उल्टे बहने का वर्णन मिलता है।[5]

११ बड़ी-बड़ी नदियों जल रक्त के समान लाल होने और उनकी धारा उल्टे स्रोत की ओर बहने एवं कुँओं से फेन ऊपर को उठने जैसे उत्पातों का वर्णन मिलता है।[6]

१- वृष्टिवैकृत्यनाशः स्यातूपर्जन्येन्द्रर्कपूजनात्। नगरादपसर्पन्ते समीपमुयन्ति च।।
नद्यो ह्रदप्रश्रवणा विरसाश्च भवन्ति च। शलिलाशयवकृत्योजप्तव्यो वारुणो मनुः।।
अ० पु०-२६२/२०-२१

२- प्रतिस्रोतोऽवहन्ध सरितः शोणितोदकाः। फेनायमानाः कूपाश्च नर्दन्ति वृषभा इव।
पतन्त्युल्काः सनिर्घाताः शुष्काशनिविमिश्रिताः। म०भा०भी०- ३/३२-३३

३. चुक्षुभुश्च महाराज सागरा मकरालयाः। प्रतिस्रोतः प्रवृत्ताश्च तथा गन्तुं समुद्रगाः।।
म० भा० - द्रोण पर्व - ७७-०५

४. प्रत्यगूहुर्महानद्यः प्राङ्गमुखाः सिन्धुसप्तमाः। विपरीता दिशः सर्वा न प्राज्ञायत किंचन।।
म० भा० - उद्योग पर्व- ८४-०६

क. 'उदपानगताश्चापो व्यवर्धन्त समन्ततः। म० भा० - शाल्य पर्व - ८७-१४

५. ह्रद्यः कूपाश्च रुधिरमुद्वेमुर्नृपसत्तम्। नद्यश्च सुमहावेगाः प्रतिस्रोतोवहाभवन्।।
तदेव - - - - ६८/५६

६. प्रतिस्रोतो महा नद्यः सरितः शोणितोदकाः। फेनायमानाः कूपाश्च कूर्दयन्ति वृषभा इव।।
म० भा० - भीष्म पर्व - ०३-३४

प्रसववैकृत

लक्षण- बच्चे का मां के गर्भ से उत्पन्न होते समय जो विकार होते हैं उन्हें 'प्रसववैकृत' उत्पात कहते हैं।

फल- १- स्त्रियों को प्रसव के समय होने वाले किसी प्रकार के विकार घोड़ा, हाथी, बैल, सर्प आदि जन्तु की भान्ति जातक का उत्पन्न होने पर अथवा एक साथ दो, तीन, चार आदि बच्चे होने पर या प्रसवकाल से पहले या पीछे अर्थात् प्रसव का समय से पहले हो जाना या समय के बाद में होने पर देश और कुल का नाश होता है।[1]

२- घोड़ी, ऊँटनी, भैंस, गाय और हथिनी को एक साथ दो बच्चे हों तो उन घोड़ा आदि का नाश हो जाता है। छै मास बाद प्रसव विकार का फल होता है।[2]

३- कई स्त्रियों को चार-चार, पाँच-पाँच लड़कियों का पैदा होना और पैदा होते ही बातें करना, हंसने, नाचने, गाने और चलने लगें तो अनर्थ होने की सूचक होती हैं।[3]

४- जब बिना समय पूरा हुए ही स्त्रियों से सन्तान उत्पन्न होने लगे, समय पूरा होने पर भी उत्पन्न न हो अर्थात् विकार उत्पन्न हो, जुड़वे लड़के उत्पन्न होने लगें, स्त्रियों से बच्चों के स्थान पर राक्षसादि उत्पन्न हों, बिना कन्धे के बच्चे उत्पन्न हों, मरे हुए बच्चे उत्पन्न होने लगें, अंग हीन या अधिक अंग वाले बच्चे अधिक संख्या में उत्पन्न होने लगें, पशु में एवं सर्पादि में भी इसी प्रकार के बच्चे उत्पन्न होने लगें उस देश का विनाश सामने उपस्थित हो जाएगा अर्थात् विनाश होने के चिह्न सामने आते हैं।[4]

५- प्रसव का समय पूरा होने से पहले ही अथवा पूरा हो कर भी प्रसव नहीं होता हो, जहाँ विकृत एवं जुड़वी सन्तान उत्पन्न होती है, मानव से भिन्न, मुख हीन, जन्मते ही मर जानवाले, अंग हीन और अधिक अगंवाले बच्चों को जन्म देती हैं उसी प्रकार वहाँके पशु पक्षी और रेंगने वाले जन्तु भी बच्चे देने लगते हैं तब उस देश और कुल का विनाश हो जाता है।[5]

१- प्रसवविकारे स्त्रीणां द्वित्रिचतुः प्रभृतिसम्प्रसूतौ वा। होनातिरिक्तकाले च देशकुलसंक्षयो भवति ।।
बृ० सं०-४६/५२

२- वडवोष्ट्रमहिषगोहस्तिनीशु यमलोद्भवे मरणमषोम्। षण्मासात् सूतिफलं शान्तौ श्लोकौ च गर्गोक्तौ।।
तदेव - ४६/५३

३- स्त्रियः काश्चितप्रजायन्ते चतत्रः पंच कन्यकाः। ता जातमात्रा नृत्यन्ति गायन्ति च हसन्ति च ।।
म० भा० भी०- ३/७

४- कालप्रसवना नार्यः कालातीताः प्रजास्था। विकृतप्रसवाश्चैव युग्मप्रसविकास्थः ।।
अमानुषा अरुण्डाश्च संजातव्यसनास्तथा। हीनांगा अधिकांगाश्च जायन्ते यदि वा स्त्रियः।।
पशवः पक्षिणश्चैव तथा चैव सरीसृपाः। विनाशं तस्य देशस्य कुलस्यापि विनिर्दिशेत्।।
वि० ध० पु०-१४०/१-३

५- अकालप्रसवना नार्यः कालातीत प्रजास्तथा। विकृतप्रसवाश्चैव युग्मप्रसविकास्तथा ।।
अमानुषा ह्यतुण्डाश्च संजातव्यसनास्तथा। हीनङ्गा अधिकाङ्गाश्च जायन्ते यदि वा स्त्रियः।।
पशवः पक्षिणश्चैव तथैव च सरीसृपाः। विनाशं तस्य देशस्य कुलस्यापि विनिर्दिशेत् ।।
तदेव- - - १४०/४-६

६- राज्य में जब गर्भिणी स्त्रियाँ और राजपुत्रियाँ अत्यन्त भयकारक कच्चे मांस को खाने वाले पक्षियों, गीदड़ों और दूसरे भी हिंसक पशुओं को उत्पन्न करें तब देश का विनाश जानें अर्थात् अत्यन्त भयानक उत्पात से देश का नाश होता है।[1]

७- जहाँ घोड़ी, हथिनी या गौ एक साथ दो बच्चों को जन्म देती हैं या विकारयुत विजातीय सन्तान को जन्म देती हैं तो छः महीनों के भीतर उस राष्ट्र को शत्रु मण्डल से भय होता है और जन्म देने वाली माँ की मृत्यु हो जाती है।[2]

८- जहाँ स्त्रियाँ असमय में प्रसव करें, समय पर प्रसव न करें, विकृत गर्भ को जन्म दें या युग्म सन्तान आदि उत्पन्न करें तो नगर को भय होता है।[3]

९- विकृत प्रसव होने से राष्ट्र को परचक्र अर्थात् दूसरे राजा से भय होता है।[4]

१०- गौओं, गधे और नेवलों से चूहे पैदा होने का वर्णन श्री राम रावण युद्ध से पूर्व लका में प्रकट हुए उत्पातों के समय में आया है जो राक्षसों के विनाश सूचक उत्पात थे।[5].

महाभारत युद्ध से पूर्व गायों के गर्भ से गदहे पैदा होना, गर्भवती स्त्रियों के गर्भ से भयंकर जीवों का पैदा करना, वेद पाठी ब्राह्मणों की स्त्रियाँ गरुड़ और मोर पैदा करना, कुछ स्त्रियाँ एक ही साथ चार-चार या पाँच-पाँच कन्याएँ पैदा करना तथा उन कन्याओं का पैदा होते ही नाचने, गाने हँसने वाली, समस्त नीच जातियों के घरों में उत्पन्न हुए काने, कुबड़े आदि बालक भी महान् भय की सूचना देते हुए ज़ोर-ज़ोर से हँसने, गाने और नाचने वाले होना, घोड़ी गाय के बछड़े को, कुतिया, सियार के बच्चे को, हाथी कुंत्तों को जन्म देने और तोते भी अशुभ सूचक बोली बोलने का वर्णन आया है। यह सब भयंकर उत्पात घोर युद्ध, नरसंहार और भयंकर रक्तपात होने की सूचना देने वाले होते हैं।[6] तीन सींग, चार नेत्र, पाँच पैर दो मूत्रेन्द्रियाँ, दो मस्तक, दो पूँछ और अनेक दाढ़ों वाले अमंगल पशु जन्म देने और मुँह फैलाकर अमंगल सूचक वाणी बोलने जैसे उत्पातों का उल्लेख मिलता है।[7]

१- गर्भिण्यो राजपुत्र्यश्च जनयन्ति विभीषणान्।
क्रव्यादान्पक्षिणश्चैव गोमायूनपरान्मृगान्।। म० भा० भी०- ३/२

२- वड़बा हस्तिनो गोर्वा यदि युग्मं प्रसूयते।
विजात्यं विकृतं वापि पड्भिर्मासैर्म्रियेत वै।। अ० पु०- २६२/२५

३- अकालप्रसवा नार्य्यः कालतो वाप्रजास्तथा।
विकृतप्रसवाश्चैव युग्मप्रसवनादिकम्।। तदेव - २६२/२२

४- विकृतं वा प्रसूयन्ते परचक्रभयं भवेत्। तदेव - २६२/२४

५. खरा गोषु प्रजायन्ते मूषको नकुलेषु च। वा०रा०-युद्धकाण्ड - ३५/२८

६. खरा गोषु प्रजायन्ते रमन्ते मातृभिः सुताः। गर्भिण्योऽजातपुत्राश्च जनयन्ति विभीषण्धम्।
तथैवान्याश्च दृश्यन्ते स्त्रियो वै ब्रह्मवादिनाम्। वैनतेयान् मयूरांश्च जनयन्ति पुरे तव।।
स्त्रियः काश्चित्प्रजायन्ते चतस्तः पञ्च कन्यकाः। जातमात्राश्च नृत्यन्ति गायन्ति च हसन्ति च।।
पृथगत्रनस्य सर्वस्य क्षुद्रकाः प्रहसन्ति च। नृत्यन्ति परिगायन्ति वेदयन्तो महद् भयम्।।
गोवत्सं वड़वा सूते श्वा सृगालं महीपते। कुक्कुरान् करभाश्चैव शुकाश्चाशुभवादिनः।।
स्त्रियः काश्चित्प्रजायन्ते चतस्रः पञ्च कन्यकाः। जातमात्राश्च नृत्यन्ति गायन्ति च हसन्ति च।।
म०भा०भी०पर्व-०२/०४-१०

७. त्रिविषाणाश्चतुर्नेत्राः पञ्चपादा द्विमेहनाः। द्विशीर्नाश्च द्विपुच्छाश्चदंष्ट्रिणः पशवोऽशिवाः।।
जायन्ते विवृतास्याश्च व्याहरन्तोऽशिवा गिरः। म० भा०- भीष्म पर्व, ०२/०८

मृगपक्ष्यादिवैकृत

लक्षण- जंगली जानवरों और पक्षियों द्वारा उत्पन्न विकारों को **'मृगपक्ष्यादिवैकृत'** उत्पात कहते हैं।

फल- १- यदि नगर में रहने वाले पक्षी वन में और वन में रहने वाले पक्षी निर्भय होकर नगर में प्रवेश करें, दिन में चलने वाले पक्षी रात्रि में और रात्रि में चलने वाले पक्षी दिन में चलने लगें, सूर्य के उदय और अस्त के समय वन में रहने वाले पशु और पक्षी सूर्याभिमुख होकर मण्डल बाँध कर बैठें अर्थात् कतार में बैठें या सब इकट्ठे होकर अधिक शब्द करते हुये दिखाई दें तो नगर में भय होता है।[१]

२- यदि श्येन अर्थात् बाज अधिक रोतेहुये व्यक्तिकी भान्ति दिखाई दें,सूर्य की ओर मुख करके शृगांल पुरद्वार पर शब्द करें तथा राजभवन में कबूतर या उल्लू प्रवेश करें तो नगर में भय देने वाले यह विकार होते हैं।[२]

३- यदि प्रदोष में अर्थात् सांय काल में अथवा रात्रि में मुर्गा और हेमन्त ऋतु के आदि में कोयल बोलें तथा आकाशमें बाजादि मांस भक्षण करने वाले पक्षी वृत्ताकारमार्ग में प्रदक्षिण क्रमसें चलें तो भयदेने वाले होते हैं।[३]

४- घर में, प्रधान वृक्ष पर, तोरण, पुर, द्वार या गृहद्वार पर पक्षियों के समुदाय गिरें तथा इन्हीं उपर्युक्त स्थाऩों पर मधु(शहद) का छत्ता, वल्मीक ।अर्थात् वमई और क्रमलों की उत्पत्ति हो तो नगर का नाश होता है।[४]

५- यदि कुत्त हड्डी या शव के कोई अंग को घर में ले आवें तो उस घर में मरी पड़ती है अर्थात् बीमारी पड़ती है। पशु शस्त्रधारी मनुष्य की भान्ति बोलें तो राजा की मृत्यु होती है।[५]

६- महलों के शिखरों पर और नगर के दरवाजों पर गीध बाईं ओर से चक्कर काट कर बेठें तो घोर युद्ध और नरसंहार होता है।[६]

७- श्यने(बाज), गिद्ध, कैाए, कंक और बगुले अर्थात् मांस भक्षण करने वाले पक्षी जब पेड़ों पर मिलकर आबैठें तो राष्ट्र में नरसंहार होता है।[७]

१- पुरपक्षिणो वनचरा वन्या वा निभर्या विशन्ति पुरम्। नक्तं वा दिवसचराः क्षपाचरा वा चरन्त्यहनि।।
सन्ध्याद्वेऽपि मण्डलमाबध्नन्तो मृगा विहंगा वा। दीप्तायां दिश्यधवा क्रोशन्तः संहता भयदाः।।
बृ० सं०-४६/६६-६७

२- श्येनाः पुरुदन्त इव द्वारे क्रोशन्ति जम्बुका दीप्ताः। प्रविशेन्नरेन्द्रभवने कपोतकः कोशिको यदि वा।।
तदेय- - ४६/६८

३- कुक्कुटरुतं प्रदोषे हेमन्तादो च कोकिलालापाः। प्रतिलोममण्डलचाराः श्येनाद्यश्चामबरे भयदाः।।
तदेव- - ४६/६९

४-गृहचैत्यतोरणेषु द्वारेषु च पक्षिसंघसम्पातः। मधु वल्मीकाम्भोरुहसमुद्भवश्चापि नाशाय।। तदेव-४६/७०

५-श्वभिरस्थिशवावयवप्रवेशनं मन्दिरेषु मरकाय। पशुशस्त्रव्याहारे नृपमृत्युर्मुनिवचश्चेदम्।।
तदेव- - ४६/७१

३- प्रासादशिखराग्रेषु परद्वारेषु चैव हि। गृध्राः परिपतन्त्युग्रा वामं मण्डलमाश्रिताः।। म०भा० भी०-३/४०

४- श्येना गृध्राश्च काकाश्च कंकाश्च सहिता बलैः। सम्पतन्ति वनान्तेषु समवायाश्च कुर्वते।।
तदेव- - - ३/१८

८- जब वन्यपशु एवं पक्षी ग्राम में चले जाते है, ग्राम के पशु वन में चले जाते है, स्थलचर जीव जल में प्रवेश करें और जल चर जीव स्थल पर चले जायें, राजद्वार पर गीदड़ियाँ आ जायें, मुर्गे प्रदोष काल में शब्द करें, सुर्योदय के समय गीदड़ियाँ रुदन करें, कबूतर घर में घुस आवें, मांस भोजी पक्षी सिर पर मँडराने लगें, साधारण मक्खियाँ मधु बनाने लगें, कौए सब की आँखों के सामनें मैथुन करें, दृढ़ प्रासाद, तोरण(राजद्वार), उद्यानद्वार, परकोटा और भवन अकारण ही गिरने लगें, अनेक प्रकार के उपद्रव दिखाई देने लगें तो उस समय राजा की मृत्यु होती है।[1]

९- वन के पशु अपनी इच्छा से ग्राम में वास करें तो नगर को मनुष्यों से शून्य करें अर्थात् नगर के मनुष्यों का नाश होता है। उलूक घर में बसे तो घर खाली अर्थात् घर में रहने वालों का नाश हो जाता हैं। जिस घर में बांवी इन्द्रजाल हो या जंगली कबूतर हो उसी मकान के स्वामी का नाश हो जाता है। सूर्य और चंद्रमा के बिंव दो तीन या अधिक दिखाई दें तो रोग का भय और युद्ध में मृत्यु होती है। दो, तीन, चार या अधिक तारे गिरें तो अशुभ फल देते हैं। पृथ्वी में गड्ढा हो जाय तो राजा का नाश और शत्रु का भय होता है। तेरह दिन का पक्ष हो तो प्रजा का नाश, दुर्भिक्ष तथा क्षत्रियों का नाशहो जाता है।[2]

१०- जब विकटरूप वाले बगुले पक्षी दयारहित होकर खरखट शब्द कर के भय उत्पन्न करते हैं और दक्षिण दिशा में जाकर मध्य स्थल में एकत्र हों तो उस समय नगर में महान् हानि होने की सूचना देते हैं।[3]

११- प्रति दिन रात को जब लड़ने वाले शूकर और बिड़ाल दोनों के घोर शब्द आन्तरिक्ष में सुनाई दें तो नगर में हानि होने की सूचना होती है।[4]

१- प्रविशन्ति यदा ग्राममारण्या मृगपक्षिणः। अरण्यं यान्ति वा ग्राम्याः जलं यान्ति स्थालांभवाः।।
स्थलं वा जलजा यान्तिं राजद्वारादिके शिवाः। प्रदोशे कुक्कुटो वासं शिवा चार्कोदये भवेत्।।
गृहं कपोतः प्रविशेत क्रव्याद्वा मूर्द्धिन लीयते। मधुरां मक्षिकां कुयुर्यात् काको मैथुनगो दृशि।।
प्रासादतोरणोद्यानद्वारप्राकारवेश्मनां। अनिमित्तन्तु पतनं दृढानां राजमृत्यवे।।
अ० पु०- २६२/२६-३०

२- आरण्याः पशवो ग्रामं चद्वसंति निजेच्छया। कुरुते जनशून्यं तमुलूकोऽपि गृहं विशेत्।।
वल्मीकमिन्द्रजालं वा यस्य सद्मनि जायते। तदा गेहपतेर्नाशः कपोते वा ग्रहं गते।।
द्वयादि चन्द्रार्कविम्बे स्याद्रोगो भीती रणे मृतिः। ग्रहाभावे फलं नेष्टं द्वयादिजीवे तू शोभनम्।।
धरणीविवरे देशनृपनाशो रिपोर्भयम्। त्रयोदशदिनः पक्षो यस्मिन्वर्षे भवेत्तदा।।
प्रजानाशोऽथ दुर्भिक्षं तथाभूमि भुजां क्षयः। मु० मि०प्र०- १३०-१३४

३- खराखटेति वाशन्तो भैरवं भयवेदिनः। कह्वाः प्रयन्ति मध्येन दक्षिणामभितो दिशम्।।
म० भा० भी०- ३/१६

४- अन्तरिक्ष वराहस्य वृषदंशस्य चोभयोः। प्रणादं युध्यतो रात्रौ रौद्रं नित्यं प्रलक्षये।। तदेव-३/२५

१२- कोकिल, शतपत्र, चास, भास, शुक, सारस, मयूर आदि सब चिड़ियाएं अधिक घोर शब्द करें तो देश में हानि होती है।[1]

१३- जब कौवे 'पक्वा-पक्वा' का कठोर शब्द करते हुए ध्वजाओं के अग्रभाग पर आकर बैठें तो राजाओं के ध्वंस की सूचना देते हैं।[2]

१४- जब ग्राम, वन, जल, स्थल, दिन व रात्रि के चलनेवाले विपरीतता से बसे, अर्थात् ग्रामवासी जंगल में बसें और जंगलवासी ग्राम में बसें इत्यादि पक्षी एवं मृगादि में विपरीत भाव हो तो राज्य को पीड़ा होती है अर्थात् राज्य में रहने वाले मनुष्यों को पीड़ा होती है। सायंकाल पश्चिम दिशा के मार्ग में सियार आदि जीव बोलें और अपने समूह से निकलकर दूर जाकर बोलें और आकाश के पक्षी विपरीत भाव से चलें और रात्रि को बोलें, मुर्गा सूर्यास्त के समय बोले और गाय रात्रि को बोले, हेमन्त में कोयल बोले गदहे, कुत्ते परस्पर क्रीडा करें इत्यादि विकृति होने से उस देश में पीड़ा होती है अर्थात् जनता को कष्ट होता है।[3]

१५- जब अमंगलदायक शृंगाल राजद्वार या नगरद्वार पर निर्भय होकर बोलना आरम्भ कर दें, दिन में विचरन करने वाले पशु पक्षी रात्रि में और रात्रिमें विचरन करने वाले दिनमें घूमने लगें तथा ग्रामों में रहने वाले जीव ग्रामको छोड़ दें तो उस ग्राम के विनाश होने के लक्षण हैं।[4]

१६- जब ग्रामों में पशु आदि जीवगण क्रोधोन्मत्त हो मण्डल बनाकर क्रूर स्वर में चिल्लाने लगें अर्थात् गाँवों के पशुपक्षी क्रोधित होकर चिल्लाने लगें और इकट्ठे हो जायें तो भी उस ग्राम का विनाश होने के लक्ष्णों को प्रकट करते हैं।[5]

१७- सायंकाल में मुर्गा बाँग देने लगे, हेमन्त ऋतु में कोकिल बोले और सूर्योदय के समय सूर्याभिमुखी हो शृंगाली चिल्लायें तो नगर में भय होता है अर्थात् युद्ध आदि से नगर वासियों को हानि होती है।[6]

१- कोकिलाः शतपत्राश्च चाषा भासः शुकास्तथा। सारसाश्च मयूराश्च वाचो मुंचन्ति दारुणाः।।
म० भा० भी०-२/२८

२- पक्वापक्वेति सुभृशं वावाश्यन्ते वयांसि च। निलीयन्ते ध्वजाग्रेषु क्षयाय पृथिवीक्षिताम्।। तदेव -३/४१

३- ग्राम्यारण्यास्तथानीरस्थलजाद्युनिशाचराः। प्राणिनो व्यत्ययं पाताः स्वचक्रं पीडयंत्यमी।।
संध्याकाले हि दीप्तायां दिशां मार्गे पतस्त्रिणः। क्रोशंति जम्बुकादीनां संघाद् दूरे च तद्दिशि।।
विहगा वियति व्यस्तं चक्रायतं इतस्ततः। कुक्कुटोऽस्ते च गौर्नक्तं हेमंते रौति कोकिलः।।
खराः श्वानोऽथवा स्वैरम्प्रक्रीडन्ति परस्परम्। इत्यादिविकृतौ चक्रे पीड़ा भवति भूयसी।।
मु०मि०प्र०- श्लो०- ०१-०३

४. राजद्वारे पुरद्वारे शिवाश्चाप्यशिवप्रदाः। दिवा रात्रिंचरा वापि रात्रावपि दिवाचराः।।
ग्राम्यास्त्यजन्ति ग्रामं च शून्यतां तस्य निदिर्शत्। म० पु०- २३७/२-३

५- दीप्ता वाशन्ति सन्ध्यासु मण्डलानि च कुर्वते। वाशन्ति विस्वरं यत्र तदाप्येतत्फलं लभेत्।। म०पु०-२३७/४

६- प्रदोषे कुक्कुटो [illegible] कोकिलः। अर्कोदये र्काभिमुखी शिवा रौति भयं वदेत्।।
तदेव- २३७/५

१८- घर में कबूतर घुस आये, मस्तक पर मासभक्षी पक्षी बैठ जायें और घर के भीतर मधुमक्खियाँ छत्ते लगायें तो उस घर के स्वामी की मृत्यु होती है।[1]

१९- यदि दुर्गादि के परकोटे पर, प्रवेशद्वार पर, राजभवन, तोरण(सिंहद्वार), बाजार, गली, पताका ध्वज और अस्त्रशस्त्रादि पर मांस भक्षी पक्षी बैठ जाय अथवा घर में बिमषट हो जाय या छत्ते से मधु चूने लगे तो उस देश का विनाश हो जाता है तथा राजा की मृत्यु हो जाती है।[2]

२०- यदि कुत्ता हड्डी लेकर स्थान में डाले अर्थात् घर में डाले तथा सूर्यास्त दिशा के सामने(पश्चिम दिशा को मुख करके) मुख करके रोवे तो छः मास के भीतर घर का नाश हो जाता है।[3]

२१- सूर्योदय के समय कुत्ता सूर्य की ओर मुख कर के गाँम के अन्त में रोवे तो राजा का नाश हो जाता है। सूर्यास्त के समय कुत्ता रोवे तो खेती करने वाले मनुष्यों का नाश हो, खम्भा या दरवाजा गिर पड़े, विना अग्नि के धुवां उत्पन्न हो जाय, काष्ठ, लोष्ठ या मिट्टी के ढेलों से बालक परस्पर युद्ध करें तो राजा को बड़ा घोर भय होता है।[4]

२२- चूहे और शलभ अधिक परिमाण में दिखायी पड़ें तो नगर में दुर्भिक्ष पड़ता है। लकड़ी के लुआठे, हड्डियाँ, सींग वाले जानवर, कुत्ते और बन्दरों की अधिकता होनेपर देश में व्याधियाँ फैलने का भय रहता है।[5]

२३- यदि कौए चोंच में अन्न लेकर निर्भयतापूर्वक लोगोंपर टूट पड़ते हों तो दुर्भिक्ष और रण छिड़ने की सम्भावना होती है।[6]

१- गृहं कपोतः प्रविशेत् क्रव्यादो मूर्ध्नि लीयते। मधु वा मक्षिकाः कुर्युर्मृत्युगृहपतेर्भवेत्।।
म० पु०- २३७/६

२- प्रकारद्वारगेहेषु तोरणापणवीथिषु। केतुच्छत्रायुधाद्येषु क्रव्यादं प्रपतेदयदि।।
जायन्ते वाथ वल्मीका मधु वा स्यन्दते यदि। सदेशो नाशमायाति राजा वा म्रियते तथा।।
तदेव- २३७/७-८

३- अस्थि क्षिपति गेहे श्वा सम्मुखोऽस्ते च रोदिति। यस्य तद्गेहनाशः स्यात्षण्मासाभ्यंतरे तदा।।
मु०मि०- श्लो०- १५९

४- रौति सूर्योदये श्वा चेद् ग्रमांते सूर्यदिङ्मूखः। भूपनाशस्तदा चास्ते कृषीशो नाशमाप्नुयात्।।
स्तम्भद्वारनिपातश्चेद्धूमोत्पत्तिर्विनाऽग्निना। युध्यंते बालकाः स्वैरं काष्ठलोष्टैः परस्परम्।।
तदा भूपभयं घोरं विज्ञेयं दीर्घदर्शिभिः। मु०मि०- श्लो० १६०-१६१

५- मुषकान् शलभान् दृष्टवा प्रभूतं क्षुद्भयं भवेत्। काष्टोल्मुकास्थिशृंगाढ्याः श्वानो मर्कटवेदनाः।।
म० पु०- २३७/९

६- दुर्भिक्षं वेदना ज्ञेया काका धान्यमुखा यदि। जनानभिभवन्तीह निर्भया रणवेदिनः ।।
तदेव - २३७/१०

२४- यदि श्वेत कौआ मैथुन करते हुए दिखलायी पड़ें तो उस देश के राजा की मृत्यु होती है और देश विनष्ट हो जाता है।[1]

२५- बाघों के साथ बिलाव, कुत्तों के साथ सुअर तथा राक्षसों और मनुष्यों के साथ किन्नर समागम करने का उल्लेख वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड में आया है जो घोर युद्ध एवं जगत विनाश की सूचना देने वाले उत्पात कहे हैं।[2]

२६- बछड़ों का दूध न पीना, गौओं का दुहने न देना, गौशाला में गौओं का आँसू बहा-बहा कर रोना आदि इस प्रकार के उत्पात महाभारत युद्ध से पूर्व हुए थो जो घोर युद्ध एवं भयंकर नरसंहार की सूचना दे रहे थे।[3]

२७- महाभारत युद्ध से पूर्व गौएँ बछड़ों से दूध पिन्हा जाने के बाद अपने थनों में से खून बहाती थीं ऐसा वर्णन मिलता है।[4]

२८- जहाँ राजा के द्वार तथा घर पर उल्लू बोलता हो वहाँ उस घर के स्वामी की मृत्यु तथा सम्पत्तिका विनाश हो जाता है।[5]

२९- यदि युद्ध की इच्छा करने वाले जिस राजा की सेनाओं के पीछे होकर मांस खाने बाले पक्षी सूमह गमन करें तो उस राजा की सेनाओं को युद्ध से भागना पड़ेगा। यदि पक्षी गण सेनाओं के आगे होकर गमन करें तो विजय होती है।[6] इस प्रकार का वर्णन विष्णु धर्मोत्तर पुराण के वैकृत अध्यायों में भी द्रिया हुआ है।

३०- सेवकों द्वारा बार-वार उड़ाये जाने पर भी गिद्ध अत्यन्त व्याकुल होकर तारकासुर का शिर ग्रहण करने की इच्छा से उसी पर गिर-गिर कर आने एवं उसकी मृत्यु की सूचना देने का उल्लेख कुमार सम्भव में आया है।[7] युद्ध में तारकासुर का खून पीने की अत्यन्त उतावली हो मानो गीदड़ियाँ सूर्यमण्डल के चारों ओर इकट्ठी हो-हो कर बड़े भीषण स्वर में रुदन करने का उल्लेख मिलता है जो कि अशुभ एवं मृत्यु सूचक उत्पात थे।[8]

१- काको मैथुनसक्तश्च श्वेतस्तु यदि दृश्यते। राजा वा म्रियते तत्र स च देशो विनश्यति।।
म० पु०-२३७/११

२. मार्जारा द्वीपिभिः सार्धं सूकराः शनकैः सह। किंनरा राक्षसैश्चापि समेयुर्मानुषैः सह।।
वा० रा० युद्ध काण्ड- ३५/३

३. न पिबन्ति स्तनं वत्सा न दुह्यन्ति च मातरः। रुदन्त्य श्रुमुखा गावो न हृष्यन्त्यृषभा व्रजे।।
श्रीमद्भागवत म० पु०(परमसंहिता) - १४/१९

४. प्राधनाः सर्वलाकस्य यास्वायत्तमिदं जगत्। ता गावः प्रस्नुता वत्सैः शोणितं प्रक्षरन्त्युत।।
म० भा० - भीष्म पर्व, ०३/२०

५- उलूको वाशते यत्र नृपद्वारे तथा गृहे। ज्ञेयो गृहपतेर्मृत्युर्धननाशस्तथैव च।। तदेव-२३७/१२

६- वाहिनीं समुपयाति पृष्टतो मांस भुक् खगगणो युयुत्सतः।
यस्य तस्य बलविद्रवो महानग्रगेस्तु विजयौ विहंगमैः।। बृ०सं०-४७/२५

७- निर्वायमाणैरभितोऽनुयायिभिग्रहीतुकामैरिव तं मुहुर्मुहः।
अपाति गृध्रैरभि मौलिमाकुलैर्भविष्यदेतन्मरणोपदेशिभिः।।

८- त्विषामधीशस्य पुरोऽधिमण्डल शिवाः समेताः [illegible]
सुरारिराजस्य रणान्तशोणितं प्रसह्य पातुं द्रुतमुत्सुका इवं।। कु० सं०- १५/२६,१८

नाना प्रकार के उत्पात

नाना प्रकार के उत्पात जो ऐतिहासिक घटनाओं के समय एवं पूर्व में घटित हुए थे।

१.मनुष्य लिंगवैकृत- महाभारत युद्ध में दुर्योधन के धराशायी होने पर स्त्रियों के पुरुषत्व और पुरुषों में स्त्रीत्व के सूचक लक्षण प्रकट होने वाले अद्भुत उत्पात होने और जिसे देख कर पाण्डवों सहित समस्त पाञ्चाल अत्यन्त उद्विग्न होने का उल्लेख मिलता है।[1]

२. पुत्र माताओं के साथ रमण करने जैसे घोर पाप महाभारत युद्ध पूर्व होने का उल्लेख मिलता है जो सर्व विनाश करने वाले घोर उत्पात थे।[2]

३. आकाश में गन्धर्वनगर दीखना, दिन में तारे दिखना।[3] तारे टूटने, काष्ठ तृण रक्त इन्हीं की वर्षा होनी, आकाश में व दिशाओं में धुआँ दीखना इत्यादि उत्पात, दिन में तथा रात्रि में भूकम्प (भूँचाल) होना, ईंधन बिना अग्नि जल उठे, अग्नि में से तिनके उड़ने लगें, रात्रि में इन्द्रधनुष दिखे, मेंढक दिखे, शिखर दिखे, सफेद काग दिखे।[4] गौ, हस्ती, अश्व, ऊँट, इन्हीं के शरीर से अग्नि के कण निकलते दीखें, अथवा दो तीन शिरवाले बालक का जन्म होना, दूसरी योनि में दूसरा बालक जन्मना, सूर्य के सम्मुख दूसरा सूर्य दिखना, एक ही बार चारों दिशाओं में इन्द्रधनुष दिखने, ग्राम के समीप बहुत से गीदड़ इकट्ठे होना, पूँछवाले तारे दिखें ऐसे उत्पात दिखें।[5] रात्रि में कौओं का शब्द सुन पड़े, दिन में कपोतों का शब्द सुन पड़े, अकाल में वृक्षों के फूल तथा फल दिखें तब ऐसे वृक्षों का छेदन करना चाहिये और पंडित जनों को इन उत्पातों को दूर करने के वास्ते इनकी शान्ति करनी चाहिये, क्योंकि पूर्वोक्त बहुत से महान् उत्पात उस स्थान को नष्ट करने वाले कहे हैं। कितने ही उत्पात मृत्युदायक हैं, कितने उत्पात शत्रुओं से भय करते हैं तथा उदासीन पुरुष से भय, पशु की मृत्यु, क्षय, कीर्तिनाश और सुख में दुःख करते हैं।[6]

---

१. पुँल्लिङ्गा इव नार्यस्तु स्त्रीलिङ्ग पुरुषाभवन्। दुर्योधन तदा राजन् पतिते तनये तव।।
दृष्ट्वा तानद्भतोत्पातान् पञ्चालाः पाण्वैः सह। आविग्नमनसः सर्वे बभूवुर्भरतर्षभ।।
म० भा०- शाल्य पर्व, ६८/६०-६२

२. "खरा गोषु प्रजायन्ते रमन्ते मातृभि' सुताः।" म० भा० - भीष्म पर्व, ०२/०१

३. गंधर्वनगरं चैव दिवा नक्षत्रदर्शनम्।। न० सं० - अ० - ३७/३

४. महोल्कापतनं काष्ठतृणरक्तप्रवर्षणम्। गंधर्वगेहे दिग्धूमं भूमिकंपं दिवा निशि।।
अनग्नौ च स्फुलिंगाश्च ज्वलनं च विनेधनम्। निशीन्द्रचापमंडूकशिखरं श्वेतवायसः।।
न० सं० - अ०-३६/२-४

५. दृश्यन्ते विस्फलिंगाश्च गोगजाश्वोष्ट्रगात्रतः। जंतवो द्वित्रिशिरसो जायन्ते वा वियोनिषु।।
प्रतिसूर्याश्चतसृष्टुस्युदिक्षु युगपद्रवेः। जंबुकग्रामसंवासः केतूनां च प्रदर्शनम्।।
काकानामाकुलं रात्रौ कपोतालां दिवा यदि। अकाले पुष्पिता वृक्षा दृश्यन्ते फलिता यदि।।
कार्यं तच्छेदनं तत्र ततः शान्तिर्भनीषिभिः। एवमाद्या महोत्पाता बहुवः स्थाननाशदाः।। न सं०

६. केचिन्मृत्युप्रदाः केचिच्छत्रुभ्यश्च भयप्रदाः। मध्यान्द्भयं पशोमर्मृत्युः क्षयोऽकीर्तिः सुखासुखम्।।
नारद सं० - अ०-३६, ६-१०

४. माँस भक्षी पशु और पक्षियों का जनस्थान के पास विकृत स्वर में बोलने, सूर्य की ओर मुँह करके ज़ोर-ज़ोर से चीत्कार करने, भयंकर शब्द करते हुए गीदड़ों का अमंगल जनक भैरव नाद करने, कंक(सफेद चील), गीदड़ और गीध का मृत्यु होने वाले प्राणी के सामने चित चीत्कार मारने, गीदड़ियों का भय दिखाना एवं भयंकर शब्द करना आदि मृत्यु सूचक उत्पातों का वर्णन।[1] वाल्मीकि रामायण के अरण्य काण्ड के २३ सर्ग, युद्ध काण्ड के २३ सर्ग, १२६ सर्ग और ३५ सर्ग, में वर्णन आया है।[2]

५. रावण संहिता में भी भयंकर दिखाई देने वाली गीदड़ियों का दारुण स्वर में रोने, विशालकाय गिद्धों के झुण्ड द्वारा आग उगलते हुए राक्षसों के ऊपर काल की तरह मण्डराने का वर्णन मिलता है जो मृत्यु का सूचक उत्पात राक्षसों के समक्ष प्रकट हुए थे।[3]

६. भयानक ध्वनि करने वाली सैकड़ों दारुण सारिकाएँ आपस में घोर कलह करती हुई रावण के रथ पर गिरने का उल्लेख मिलता है जो कि मृत्यु सूचक उत्पात था।[4]

७. विभिन्न प्रकार के वनचारी पक्षियों के बोलने से भविष्य में एक पक्ष की अभय और दूसरे पक्ष के लिए प्राण संकट की प्राप्ति को सूचित करते हैं।[5]

---

१. जनस्थान समीपे च समाक्रम्य खरखनाः। विस्वरान् विधिन् नादान् मासादा मृगपक्षिणः।।
व्याजह्रुरभिदीप्तायां दिशि वे भैरस्वनम्। अशिवं यातुधानानां शिवा घोरा महास्वनाः।
खरं चाभिमुखं नेदुरतदा घोरा मृगाः खगाः। ....।।
कंक गोमायुगृधाश्च चुक्रुशुर्भयशंसिनः। नित्यशिवकरा युद्धे शिवा घोरनिदर्शनाः।।
वा० रा०-अरण्य काण्ड- २३/७-८

क- दीना दीनस्वराः क्रूराः सर्वतो मृगपक्षिणः। प्रत्यादित्यं विनर्दन्ति जनयन्तो महद्भयम्।।
वा० रा०-युद्ध काण्ड, २३/०७

२- काकाः श्येनास्तधा नीचा गृध्राः परिपतन्ति च।
शिवाश्चाटयशुभान् नादान् नदन्ति सुमहाभयान्।। वा० रा०-अरण्य काण्ड, २३/११

क. गृध्रैरनुगताश्चास्य वसन्त्यो ज्वलनं मुखेः।
प्रणेदुर्मुजमीक्षन्त्यः संरव्धमशिवं शिवा।। तदेव- - - काण्ड, १२६/२७

ग. महद्ग्रध्रकुलं चास्य भ्रममाणं नभस्थले।
येन येन रथो याति तेन तेन प्रधावति।। तदेव- - - काण्ड, १२६/२२

घ. व्याला गोमायवो गृध्रा वाश्यन्ति च सुभैरवम्।
प्रविश्य लङ्कामारामे समवायांश्च कुर्वते।। तदेव- - - काण्ड, ३५/२७

३. सम्पतन्त्यथ भूतानि दृश्यन्ते च यथा क्रमम्। गृध्रचक्रं महच्चात्र प्रज्वालोद्गारभिर्मुखैः।।
रक्षोगणस्योपरिष्टात् परिभ्रमति कालवत्। कपोता रवतपादाश्च सारिका विद्रुता ययुः।।
अट्टहासान् विमुञ्चन्तो घननादसमस्वनाः। वाश्यन्त्यश्च शिवास्तत्र दारुणं घोर दर्शनाः।।
रावण संहिता- २०४-२०६

४. या दृशा इह कूजन्ति पक्षिणां वन चारिणः। अग्रतो नोऽभयं प्राप्तं संशयो तीवितस्य चा।
वा० रा०-अरण्य काण्ड, २४/०५

५. गृध्रैरनुगताश्चास्य वसन्त्यो ज्वलनं मुखैः। प्रणेदुर्मुखमीक्षन्त्यः संख्धमशिवं शिवाः।।
तदेव- - - १२६/२७

८. श्री राम रावण युद्ध के समय रावण के आगे रोषावेश से पूर्ण मुख की ओर देखती और अपने मुखों से आग उगलती हुई गीदड़ियों का अमंगल सूचक बोलना और उनके पीछे झुण्ड के झुण्ड गीधों के मंडराते हुए चलने का वर्णन वाल्मीकि रामायण में आया है जो कि रावण को मृत्यु एवं अशुभसूचक उत्पात थे।[1]

९. सूर्य के उदय होते ही सियारिन का सूर्य की ओर मुँह करके रोना, कुत्ते का निर्भय होकर रोना, पशु का दाहिने ओर करना[2] मृत्यु सूचक होते हैं। पेडुखी, उल्लू और उसका प्रतिपक्षी दूत कौआ को मृत्यु का दूत बताया है। इन पक्षियों का रात को कठोर शब्द करना, विश्व संहार करने वाला होता है।[3] यह वर्णन श्री मद्भागवत महापुराण के १४वें अध्याय में भी आया है।

१०. महाभारत में कौरव सेना के आगे भयंकर शब्द करने वाले पशु और अशुभ दर्शन देने वाले सियारों का दाहिनी ओर आकर कोलाहल करने, माँस भक्षी प्राणियों के आनन्द के लिए रथ, हाथी, घोड़े और मनुष्यों के ऊपर नीचे के ओष्ठ फड़कने, घोड़े आदि वाहन मल-मूत्र त्याग करने एवं रोने[4] नाना आकृति वाले मृग का दशों दिशाओं में रोने अत्यन्त भयंकर घोर रूप धारण करने वाली सियारिनों का अमंगल सूचक बोली बोलना[5] और पक्षियों के पक्वा-पक्वा करके बारम्बार ज़ोर-ज़ोर उच्चारण कर ध्वजाओं के अग्र भाग में छिपने का वर्णन आया है। पक्षियों का इस प्रकार करना राजाओं के विनाश का सूचक का लक्षण है।[6]

११. पक्षी और मृग सभी सूर्य की ओर मुँह करके रोने का वर्णन और घरों में रहने वाली सारिकाएँ कलह की इच्छा वाले दूसरे पक्षियों से चें-चें करती हुई गुँथ जाने और उनसे पराजित हो पृथ्वी पर गिरने, सफेद पंखों एवं लाल पञ्जे वाले कबूतर पक्षी राक्षसों के यहाँ सब ओर विचरते हैं जो राक्षसों के भावी विनाश को सूचित करने वाले उत्पात हैं।[7]

१२. घरों में बलि कर्म का होना और बलि सामग्री को कुत्तों का खा जाना, अशुभ सूचक होता है।

१. कुर्वत्यः कलहं घोरं सारिकास्तद्रथं प्रति।
निपेतुः शतशस्तत्र दारुणा दारुणारुताः।। वा० रा०-युद्ध काण्ड, १२६/३१

२. शिवैषोद्यन्तमादित्यमसि रौत्यनलानना। मामंग सारमेयोऽयमभिरेभत्यभीरूवत्।।
शस्ताः कुर्वन्ति मां सव्यं दक्षिणं पशवोऽपरे। वाहांश्च पुरुषव्याघ्रं लक्षये रुदतो मम।।
मृत्युदूतः कपोतोऽयमुलूकः कम्पयन् मनः। प्रत्युलूकंश्च कुह्वानैरनिद्रौ शून्यमिच्छतः।।
श्री मद्भागवत म० पु०- १४/१२-१५

३. मृगाश्चघोरसंनादाः शिवाश्चाशिवदर्शनाः। दक्षिणने प्रयातानामस्माकं प्राणदंस्तथा।।
म०भा०- प्रतिज्ञा प०- ८०/५

४. रथाश्वनरनागानां प्रवृत्तमधरोत्तरम्। क्रव्यादानां प्रमोदार्थं यमराष्ट्रविवृद्धये।।
वाहनानि शकृन्मूत्रे मुमुचु रूरुदुश्च हे। म० भा०- द्रोण पर्व- ७/६-८

५. मृगाबहुविधाकाराः सम्पतन्ति दिशो दश।
दीप्ताः शिवाश्चाप्यनदन् घोर रूपाः सुदारुणाः। म० भा०- शाल्य पर्व- ६७/१६

६. पक्वापक्वेति सुभृशं वावाश्यन्ते वयांसि च।
निलीयन्ते ध्वजाग्रेषु क्षयाय पृथिवीक्षिताम्।। म० भा०- भीष्म पर्व- ३/३४

७. पक्षिणश्च मृगाः सर्वे प्रत्यादित्यं रुदन्ति ते। करालो विकटो मुण्डः पुरुषः कृष्णपिङ्गलः।।
चीचीकूचीति वाशन्त्यः शारिका वेश्मसु स्थितः। पतन्ति ग्राधिताश्चापि निर्जिताः [illegible]हौषिभिः।।
पाण्डुरा रक्तपादाश्च विहगाः कालचोदिताः। राक्षसानां [illegible] कपोता विचरन्ति च।
वा० रा०-युद्ध काण्ड-३५/३२-३३

१३. गरुड़ पक्षी के मस्तक पर शिखा और सींग होने, तीन पैर तथा चार दाढ़ें दिखायी देने वाले अशुभ सूचक उत्पातों का उल्लेख महाभारत के भीष्मपर्व में आया है।[१]

१४. फल फूल से सम्पन्न वृक्षों की शिखाओं पर बायीं ओर से घूम-घूम कर सब ओर कौओं का बैठना एवं भयंकर कोलाहल करना नरसंहार का सूचक होता है।[२]

१५. हाथियों के काँपने और भय के मारे मलमूत्र का त्याग करने, सम्पूर्ण गजराज का पसीने-पसीने होना और भय के साथ घोड़ों का अत्यन्त दीन हो जाना, भी अशुभ सूचक होता है।[३]

१६. कौओं के झुण्ड का सामने एवं बायीं ओर आकर कोलाहल करना, नीलकण्ठ, सारस और क्रौञ्च पक्षी का बायीं ओर चलना कङ्क, गृध्र, बक, बाज़ और कौए आदि भयानक पक्षियों का आगे आगे चलना, युद्ध में विजय और शुभ कारक होता है।[४]

१७. जहाँ शुभ एवं कल्याणमयी बोली बोलने वाले राजहंस, शुक, क्रौञ्च तथा शतपत्र (मोर) आदि पक्षी सैनिकों की प्रदक्षिणा करते हैं (दाहिने ओर जाते हैं) उस पक्ष की युद्ध में निश्चित रूप से विजय होती है।[५]

१८. जिन के प्रस्थित होने पर अथवा प्रस्थान लिये उदय होने पर कौवों की मीठी आवाज़ फैलती है, उनकी विजय सूचित होती है और शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं और जो सामने बोलते हैं वे मानो युद्ध में जाने से रोकते हैं।[६]

१६- रावण संहिता में माली और सुमाली नामक राक्षसों का देवताओं के साथ युद्ध करने से पूर्व युद्ध प्रस्थान से तोता, मैना, कबूतर आदि पक्षी नगर छोड़कर भागने का वर्णन मिलता है जिस से यह ज्ञात होता है कि विपत्ति, संकट या कोई व्याधि आने से पूर्व पशु पक्षियों को ज्ञान हो जाता है। वहाँ पर पशु आर्त्तनाद करने लगे और बिल्लियाँ गुर्राने लगीं। यह उत्पात भयंकर युद्ध एवं रक्तपात की सूचना देने वाले होते हैं।[७]

---

१. "त्रिपदाः शिखिनस्तार्क्ष्याश्चतुर्दंष्ट्रा विषाणिनः।" म० भा०- भीष्म पर्व- ०२/०४

२. शिखारणां समृद्धानामुपरिष्टात् समन्ततः। वायसाश्च रूवन्त्युग्रं वामं मण्डलमाश्रिताः।। तदेव-३/८३

३. ध्यायन्तः प्रकिरन्तश्च व्याला वेपथुसंयुताः। दीनास्तुरङ्गमाः सर्वे वारुणाः सलिलाश्रयाः।। तदेव-३/४५

४. बालानां वायसानां च पुरस्तात् सव्यसाचिनः। बहुलानि सहस्राणि प्राक्रीडंस्तत्र भारत।।
म० भा० प्रतिज्ञा पर्व- ८०/४५

५. चाषाश्च शतपत्राश्च क्रौञ्चाश्चैव जनेश्वर। प्रदक्षिणमकुर्वन्त तदा वै पाण्डुनन्दनम्।।
कङ्का गृध्रा बकाः श्यनो वायसाश्च विशाम्पते। अग्रस्तस्य गच्छन्ति मांसहेतोर्भयानकाः।।
निमित्तानि , धान्यानि पाण्वस्थ शंशसिरे। विनाशमरिसेन्यां कर्णस्य च वधं प्रति।।
म० भा०- कर्ण पर्व- ७२/१२-१४

६. कल्याणवाचः शकुना राजहंसाः शुकाः क्रौञ्चाः शतपत्राश्च यत्र।
प्रदक्षिणाश्चैव भवन्ति संख्ये ध्रुवं जयस्तत्र वदन्ति विप्राः।। म० भा० भीष्म पर्व--३/६७

७. कपोता रक्तपादाश्च सारिका विद्रुता ययुः। काका वाश्यन्तितत्रैव विडाला वै द्विपादयः।।
उत्पातां स्वाननाकृत्य राक्षसा बलदर्पिताः। यान्त्येव न निवर्तन्ते मृत्यु पाशावपाशिताः।।
रावण संहिता, प्र० ख० - २०७/२०२

१९- महाभारत युद्ध से पूर्व माँस भक्षी पशु भी पक्षियों के साथ परस्पर मिलकर एक ही जगह एक ही आहार ग्रहण करने जैसे उत्पात का भी वर्णन मिलता है।[1]

२०- सूर्य की ओर मुँह करके सियारिन का भयानक रूप से रोने का वर्णन रघुवंश महाकाव्य के एकादश सर्ग में मृत्यु सूचक उत्पात के लिये आया है।[2]

२१- कुमार सम्भवम् के २१वें सर्ग में सभी कुत्ते मुँह ऊपर उठाकर एवं सूर्य की ओर मुँह करके एक साथ ही अत्यन्त कारुणिक एवं भयानक ध्वनि से रोने और तारकासुर के सामने से निकलने का वर्णन आया जो तारकासुर की मृत्यु को सूचित कर रहे थे।[3]

२२- हर्ष चरित में मृगों का पुरुषों के बायीं ओर से और स्त्रियों के दायीं ओर से जाना दुर्निमित्त कहा जाता है यदि यह बिना भय के जायें तो राजसिंहासन का विनाश करने वाले होते हैं। ऐसा ही वर्णन कादम्बरी में भी आया है।[4]

२३- हर्षवर्धन के सामने अनादर के साथ उद्धततापूर्वक प्रदक्षिणोत्तर जाते हुए हरिण, सूर्यमण्डल की ओर मुँह किए हुए कौए का सूखे पेड़ पर दारुण स्वर से बोलना और प्रचुर मैल के ढेर शरीर मैला बनाए क्षपणक मोर पंख(हाथ में) लिये हुए सामने से व्यक्ति का जाना यह सब दुर्निमित्त प्रभाकर वर्धन के विनाश की सूचना देने वाले होते हैं।[5]

२४- अन्तःपुर के ऊपर उड़ते हुए कौओं की काँव-काँव का क्षर भर भी नहीं रुकना, कूजता हुआ चंचल चोच वाला बूढ़ा गींध श्वेत छत्र के घेरे के बीच में से खून-सने माँस खण्ड के समान लाल रत्न-खण्ड को उखाड़ बैठना, एसे उत्पात राज्य के प्राण को हरण करने वाले होते हैं।[6]

---

१. 'क्रव्यादाः पक्षिभिश्चापि सहाश्नन्ति परस्परम्'। म० भा०- भीष्म पर्व- २/२

२. भास्करश्च दिशामध्युवास यां तां श्रिताः प्रतिभयं ववासिरे।
क्षत्रशोणितपितृक्रियोचितं चोदयन्त्य इव भार्गवं शिवाः।। रघुवंश महाकाव्य ११/६१

३. ऊर्ध्वी कृतास्या रविदत्तदृष्टव्यः समेत्य सर्वे सुरविद्विषः पुरः।
श्वानः स्वरेण श्रवणान्तशातिना मिथो रुदन्तः करुणेन निर्ययुः।। कु० स०-१५/२४

४. दुर्निमित्तरैनभिनन्द्यमानगमनश्च्च नितराम शङ्कत हृदयेन पितृस्नेहा-हिम्रदिम्ना च।
हर्ष० ५ उच्छ्वास पृ०- २६४

क. "प्रस्थिताम् इव अनभीष्ट- दक्षिणवातमृगागमनाम्"। 'कादम्बरी'

५. प्रस्थितस्य चास्य प्रदक्षिणेतरं प्रयान्तो विनाशमुपस्थितं राजसिंहस्य हरिणाः प्रकटयां बभूवुः। अशिशिररश्मिमण्डलाभिमुखश्चहृदयवदारपन्निव दावशष्के दारुणि दारुणं रराण वायसः। कज्जलमय इव बहुदिवसमुपचितब्रहलमलपटलमनिनिततनुंरभिमुखमाजगाम शिखिपिच्छालाञ्छनो नग्नाटकः। दुर्निमिन्तैरनभिनन्द्यमानगमनश्च्च नितराम शङ्त हृदयेन पृितस्नेहारितहग्रदिम्ना च।
हर्ष च०- ०५ उच्छवास- पृ०- २६४

क- अटतामन्तः पुरस्योपरि क्षणमपि न शशाम व्याक्रापेशी वायसानाम्। श्वेतात्पत्रमण्डलमध्याज्जीवितमिव राज्यस्य सरसपिशितपिण्डलोहितंचञ्चच्च्यञ्चुरूच्चेरूच्चखान खण्डं माणिक्यस्य। कुजञ्जरद्गृध्रः।

हर्ष चरित- ५ उ०, पृ०- ३२०-३२१

५- महाभारत युद्ध से पूर्व चारों दिशाओं में पशु पक्षी प्राणान्तकारी अनर्थ का दर्शन कराते भयंकर बोली बोलने, उनके मुख प्रज्वलित दिखायी देने और वे अपने शब्दों से किसी ान् भय की सूचना देने, रात में एक आँख, एक पाँख और एक पैर का पक्षी आकाश में चरने, कुपित होकर भयंकर बोली बोलने, और उसकी बोली ऐसी भयंकर जान पड़ने वाली नो कोई रक्त-वमन कर रहा हो ऐसे भयंकर उत्पातों के होने का वर्णन मिलता है।[1]

६- रथ में जुते हुए घोड़ों का अकस्मात् गिर पड़ना, मृत्यु सूचक होने का वर्णन ल्मीकि रामायण के अरण्य काण्ड में आया है।[2] रावण रथ के घोड़े अपने जघनस्थल आग की चिन्गारियाँ और नेत्रों से आँसू बरसने का वर्णन मिलता है। इस प्रकार से ड़े एक साथ ही आग और पानी दोनों प्रकट कर रहे थे। जो कि रावण की पराजय वं मृत्यु को सूचित करते थे।[3] लङ्का में राक्षस सेना के हाथी आदि वाहनों के रोने ौर नेत्रों से अश्रुबिन्दु के झरने का वर्णन आया है जो कि सेना के विनाश एवं घोर द्ध के सूचक उत्पात थे।[4]

७- हाथियों का लड़खड़ाने, घोड़ों का अकस्मात् रणभूमि पर गिरने और सैनिकों का आपस एक दूसरे से लिपटने जैसे उत्पातों का वर्णन कुमार सम्भवम् के १५वें सर्ग में आया है जो तारकासुर की पराजय और घोर युद्ध, रक्तपात एवं संहार की सूचना दे रहे थे।[5]

८- अकस्मात् तारकासुर के महान् रथ की धुरी में भयंकर आग लगने और रथ के ड़ों के गर्दन के बालों, कानों और चँवरियों को जलाने तथा उस के बाण, धनुष और र्कस को भी भस्म करने का वर्णन आया है जो कि विनाश सूचक उत्पात थे।[6]

९- रणभूमि में रावण के आगे सूर्यदेव की किरणें धातुओं के समान लाल, पीली, सफेद और ले रंग की दिखायी देने का वर्णन आया है जो कि रावण के लिए विनाश सूचक थे।[7]

दिक्षु प्रज्वलितास्याश्च व्याहरन्ति मृगद्विजाः। अत्याहितं दर्शयन्तो वेदयन्ति महद् भयम्।।
एकपक्षाक्षिचरणः शकुनिः खचरो निशि। रौद्रं वदति संरब्धः शोणितं छर्दयन्निव।।
म० भा०- भीष्म पर्व- ३/२५

निपेतुस्तुरगास्तस्य रथ युक्ता महाजवाः। समे पुष्पचिते देशे राजमार्गे य.च्छाया।।
वा० रा०- अरण्यकाण्ड- २३/२

जघनेभयः स्फुलिङ्गश्च नेत्रेभ्योऽश्रुणि संततम्। मुमुचुस्तस्य तुरगास्तुल्यमग्निं च वारि च।।
वा०रा० - युद्ध काण्ड- १२६/३२

रुदतां वाहनानां च प्रपतन्त्यश्रुबिन्दवः। रजोध्वस्ता विवर्णाश्च न प्रभन्ति यथापुरम्।।
वा० रा०- युद्ध काण्ड- ३५/२६

स्खलन्महेभ प्रपतत्तुरङ्गमं परस्पाश्लिष्टजनं समन्ततः।
प्रक्षुभ्यदम्भोधिविभिन्नभूधराद्बलं द्विषोऽभूदवनिप्रकम्पात्।। कु० स० - १५/२३
रथाश्वकेशबलिकर्णचामरं ददाह बाणासनबाणवाणधीन्।
अकाण्डतश्चण्डतरो हुताशनस्तस्यातनुस्यन्दन धुयगोचरः।। कु० स० - १५/३१
ताम्रा, पीताः, सिताः, श्वेताः पतिताः सूर्यरश्मयः। दृश्यन्ते रावणस्याग्रे पर्वतस्येव धातवः।।
वा० रा० - युद्धकाण्ड - १२६/२६

३०- सपने में काले रंग की स्त्रियाँ अपने पीले दाँत दिखाती हुईं सामने आकर खड़ी हो जाना और प्रतिकूल बातें कहकर घर के सामान चुराती हुईं ज़ोर-ज़ोर से हँसना और विकराल, विकट, काले और भूरे रंग के मूंड मुंडाये हुए पुरुष का रूप धारण करके काल का समय-समय पर सब के घर में दिखने का वर्णन मिलता है। यह उत्पात श्री राम रावण युद्ध से पूर्व लङ्का में प्रकट हुए थे जो श्री की विजय और राक्षसों के विनाश की सूचना दे रहे थे।[1]

३१- पृथ्वी आदि के भूत उठते-गिरते और विलीन होते हुए नज़र आने का वर्णन माली और सुमाली नामक राक्षसों का देवताओं के साथ युद्ध करने से पूर्व समय में हुए अशुभ सूचक उत्पातों का उल्लेख मिलता है जो रक्तपात एवं संहार का सूचक थे।[2]

३२- महाभारत युद्ध से पूर्व भूतों की घनी भीड़ में पृथ्वी और अन्तरिक्ष में अकस्मात् आग-सी लगने का और घी से आग न जलने, नदी, नद, तालाब और लोगों के मन क्षुब्ध होने का उल्लेख मिलता है जो कि भयंकर अनिष्ट होने की सूचना देने वाले अशुभ सूचक उत्पात थे।[3]

इस प्रकार अनेक उत्पात का वर्णन संस्कृत साहित्य के ग्रन्थों में मिलता है जो कि होने वाली घटना अप्रियघटना के सूचक एवं मनुष्य को सचेत करने वाले होते हैं।

---

१. कालिकाः पाण्डुरैर्दन्तैः प्रहसन्त्यग्रतः स्थिताः। स्त्रियः स्वप्नेषु मुष्णन्त्यो गृहाणि प्रतिभाष्य च।।
करालो विकटो मुण्डः पुरुषः कृष्णपिङ्गलः। कालो गृहाणि सर्वेषां काले कालेऽन्ववेक्षते।।
वा० रा० - युद्ध काण्ड -३५/३१-३४

२. सम्पतन्त्यय भूतानि दृश्यन्ते च यथा क्रमम्।। रावण संहिता- २०५

३. ससंकुलैर्भूतगणैर्ज्वलित इव रोदसी। न ज्वलत्यग्नियेन कालोऽयंकिं विधास्यति।।
नद्यो नदाश्च क्षुभिताः सरांसि च मनांसि च। श्री मद्भागवत म० पु०- १४/१७-१८

भूकम्प

लक्षण- भूमि का अकस्मात् हिलना, काँपना, डगमगाना, स्थिर से अस्थिर हो जानेको 'भूकम्प' कहते हैं।

कारण- भूकम्प होने के विभिन्न कारण आचार्यों ने बताये हैं-

१- इन्द्र के पराक्रम से पर्वतों के पंख कटकर गिरने पर भूमिकम्पन होने जैसा वर्णन मिलता है।[१] 'ऋग्वेद'

२- जल में रहने वाले प्राणियों के धक्के के कारण भूमिकम्पन होता है। काश्यप ऋषि, पृथ्वी के भार से थके हुए दिग्गजों के विश्राम से भूमि कम्पन होता है।[२] 'गर्गादि महर्षि'

३- वायु का परस्पर वायु के साथ टकराने से भूमिकम्पन होता है।[३] वशिष्ट जी प्रजाओं के अत्याचार के कारण भूमि कम्पन होता है।[४] 'वृद्ध गर्ग'

४- ब्रह्माजी ने चार नागों को पृथ्वी की चारों दिशाओं में नियुक्त करके पृथ्वी को धारण कराया है।

५- १-पूर्व दिशा में वर्धमान नामक नाग को, २-दक्षिण दिशा में सुवृक्ष नमक नाग को, ३-वृद्ध नामक पश्चिम दिशा में और ४-पृथुश्रवा नामक नाग को उत्तर दिशा में नियुक्त किया हुआ है, जब यह दिग्गज पृथ्वी के भार से थक कर विश्राम करते हुए करवट लेते हैं तो भूकम्प होता है और जब यह थके हुये दिग्गज श्वास लेते हैं उस श्वास का अतिवेग होने के कारण वायु जब भूमिके जिस भाग में टक्कराती है उस भाग में भूकम्प होता है।[५]

६- पृथिवी के भार से खिन्न हुए शेष नाग के श्वास लेने से भूक़म्प होता है वह संसार को अशुभफलदायी होता है।[६]

७- कुछ आचार्य भूकम्प का कारण सामुद्रिक विशालकाय जीवों की गतिविधियों या समुद्री जलमें हल चल होने से पृथ्वी के जिस भाग में धक्का लगता है उस में भूकम्प आता है।[७]

१- जब वायु पृथ्वी पर वेग से टकराकर आती है तब उस के वेग से उत्पन्न शब्द के कारण पृथ्वी में भूकम्प आता है।[८] 'वशिष्टाचार्य'

---

१. "यस्य सुषमात्रोदसी अभ्यस्येताम् ब्राह्मणास्समन्नाः सजनास इन्द्रः।" ऋग्वेद

२. "क्षितिकम्पमाहुरेके बृहदन्तर्जलनिवासिसत्त्वकृतम्।" काश्यप ऋषि

३. "भूभारखिन्नादिग्गजविश्रामसमुद्भवं चान्ये।" गर्गादि महर्षि

क. "अनिलोऽनिलेन निहतः क्षितौ पतन् स स्वनं करोत्यन्ते।" वशिष्ठ जी

४. "केचित्त्वदृष्टकारितमिदमन्ये प्राहुराचार्याः।।" शब्दकल्पद्रुम -

५- क्षितिकम्पमाहुरेके बृहदन्तर्जलनिवासिसत्वकृतम्। भूभारखिन्न दिग्गज विश्रामसमुद्भवं चान्ये।। बृ०सं०-३२/१

६. भूभारखिन्ननागेन्द्रदीर्घनिः श्वाससंभवः। भूकम्पः सोऽपि जगतामशुभाय भेवत्तदा।। न० सं०-५१/१

७- द्रष्टव्य-- बृ० सं०- ३२/३-६

८- अनिलोऽनिलेननिहतः क्षितौ पतन् सस्वनं करोत्यन्ये । केचित्वहष्टकारितमिढमन्ये प्राहुराचार्याः।। बृ०सं०- ३२/२

उल्का, गन्धर्व, रज, निर्घात, दिग्दाह, प्रचण्डवायु और सूर्य चन्द्र ग्रहण नक्षत्र तथा ताराओं की विकृति के कारण भूमिकम्पन होता है।[1]

६- प्राचीन काल में पंखयुत पर्वत जब उड़ा करते थे तब पृथ्वी कांप जाया करती थी और उस से पृथ्वी को गहन पीड़ा होती थी। इस कारण पृथ्वी ने ब्रह्मा जी से अपनी वेदना को प्रकट किया जिस पर ब्रह्मा जी ने पृथ्वी देवी को भय हीन करते हुए कहा- हे देवी! भविष्य में पृथ्वीमंडल के लोगों के शकुन अपशकुन की दृष्टि से दिन व रात में नियमानुसार ही भूकम्प आया करेंगे और भूकम्प का दायित्व भी भिन्न-भिन्न देवताओं पर होगा। यथा वायुदेव के द्वारा दिन के प्रथम भागमें वायव्य भूकम्प होगा, अन्तिम भाग में अग्नि देव द्वारा आग्नेय भूकम्प होगा। इस प्रकार रात्रि के प्रथम भाग में इन्द्र के द्वारा ऐन्द्र भूकम्प होगा और रात्रि के अन्तिम भाग में वरुणदेव के द्वारा वारुण भूकम्प होगा।[2]

ग्रहों के कारण भूकम्प योग-

ग्रहों का आपस में युद्ध होने से, एक से अधिक ग्रहों का एक राशि, या एक नक्षत्र में स्थित होने से, ग्रहों का परस्पर द्वेष होने से और ग्रहों का परस्पर वेग होने से भी भूकम्प होने के योग बनते हैं और नक्षत्र व्यूह एवं कूर्मचक्र के अनुसार जो देश या स्थान आते हैं, उन-उन स्थानों पर भूकम्प होता है।

१- जब राहु से सप्तम स्थान में मंगल हो, मंगल से पंचम स्थान में बुध हो, बुध से केन्द्र में चन्द्रमा हो तो भूकम्प योग होता है।[3]

२- यदि बुध बृहस्पति से पराजित हो त्रिगर्त देश में और बुध सम्बन्धित क्षेत्रों में भूकम्प होने के योग होते हैं।[4]

४- बार-बार भूकम्प का आना, राहु का सूर्य को सदा ग्रस्त करना ओर केतु का चित्रा नक्षत्र में विराजमान होना यह सब देशों में घोर युद्ध एवं भूकम्प होने के लक्षण होते है।[5]

३- यदि भूमि में कम्पन हो तो प्रजा को भय होता है अर्थात् प्रजा को हानि होती है।[6]

---

१. उल्का हरिश्चन्द्रपुरं रजश्च निर्घात भूकम्प कुप् प्रदाहाः।
वातोऽतिचण्डो ग्रहणं रवीन्द्वोर्नक्षत्रतारागम वैकृतानि।। बृ० सं० - ३२/२८

२- यदातुबलवान् वायुरुतरिक्षनिलाहतः। पतत्याशु स निर्घातो भवेदनिल सम्भवः।।
तस्य योगान्निपततश्चलात्यन्याहता क्षितिः। सोऽभिघातसमुत्थःस्यात् सनिर्घात महीचलः।। वसिष्ट संहिता

३- उपप्लवात्सप्तमगो महीजो मह[illegible]सुतात्पंचमगो यदा [illegible]धः।
बुधाद्विधुः स्याच्च चतुष्टयस्थितः स चहे भूकम्पनयोग उक्तः।। ज्यो०-१०/१५५

४- अभीक्ष्णं कम्पते भूमिरर्क राहुस्तथाग्रसत्। श्वेतो ग्रहस्तथा चित्रां समतिक्तम्य तिष्ठति।।
म० भा० भी०-३/११

५- पक्षैश्चतुर्भिर्बलिनरित्रभिरग्निर्द्वैवराट्चसप्ताहात्।
सद्यः फलति च वरुणो येषु न पाकोऽद्भुतेषूक्तः।। शु० दी०- ८/८

६- प्रजाभीतिर्भुवः कम्पे निर्घाते भूपतेर्मृतिः। मु० ग० मि०- १०

क. द्रष्टव्य- बृ० सं०-१७/१५-१७

भूकम्प होने के कारणों में वैज्ञानिक मत-

१- ज्वालामुखी के फटने से आगे पीछे के क्षेत्र में भूकम्प होता है। इस भूकम्प के दो प्रकार हैं- Non-tectonic and tectonic ,oa Non-tectonic भूकम्प होता है। उस में भूकम्प का कम्पन, भूमि के अन्दर जो ज्वालामुखी लहरें हैं उन का फटना और धमाकों से भूमि के अन्दर के हिस्से का खिसक जाने से,पानी में भूमि की परत घूमते घूमते आपस में टकरा जाने से, भारी चट्टानों का गिरने से भूमि पर भूकम्प होता है। वैज्ञानिकों का मत है कि उपर्युक्त कारण भूमि के जिस क्षेत्र में घटित होते हैं उस क्षेत्र में भूकम्प होता है। वैज्ञानिकों का यह भी मानना है कि यह भूकम्प प्राकृतिक स्वभाव से होता है।[1]

२- भूमि के अन्दर आग एवं ज्वालामुखी पर्वत जब कुछ विशेष कारणों से प्रज्वलित होते हैं तब भूगर्भ में अनेक प्रकार के परिवर्तन होते हैं जिनके कारण पृथ्वी का ऊपरी भाग भी काम्पने लगता है। कई बार यह सूक्ष्म रूप से होता है और कई बार भयंकर रूप धारण कर लेता है।

अरस्तु (३८४ ई० पूर्व) का विचार कि अधः स्थल की वायु जब बाहर निकलने का प्रयास करती है तब भूकम्प आता है। १६वीं और १७वीं शताब्दी में वैज्ञानिकों का अनुमान था कि पृथ्वी के अन्दर रासायनिक कारणों से तथा गैसों के विस्फोटन से भूकम्प होता है।

१८०४ ई० में वैज्ञानिक एडवर्ड जुस (Edward Juss) ने अपनी खोजों के आधार पर कहा कि भूकम्प भ्रंश की सीध में भूपर्पटी के खंडन या फिसलने से होता है। ऐसे भूकम्पों को विवर्तनिक भूकम्प कहते हैं।

कभी-कभी एक सेकेण्ड में चार बार पृथ्वी हिलने के बाद भूकम्प रुक जाता है और कभी लगातार मिनटों तक रहता है। कुछ भूकम्पों का विस्तार तो दस बीस मील तक ही होता है कुछ का सैंकड़ों हज़ारों मीलों तक। जिन देशों में ज्वालामुखी पर्वत अधिक होते है। उन्हीं में भूकम्प भी अधिक होते हैं।

1- The causes that lead to origin and propagation of shok waves through the ground during an earthquake be non tectonic or tectonic in character causes vibration induced due to volcanic eruptions, atomic explosions, collapse of ground, forceful eruption of lava from the volcanoes itself may be of an explosive, blasting nature, huge quantities of lava are thrown oil suddenly under great pressure and with a big bang,local nature, suddenly collapses, natural or artifical processes of rock wastage,huge lanslides or rock bursts, shallow earthquakes form belts along boundries of plates moving apart each other,the deep focus and intermediate earthquakes have a tendancy to occur infew boundaries which are stressed and where stress is released by way of thrust faulting, block faulting or transcurrent faulting. The inner regions of plates are by and large free from tectonic earthquakes. engineering and General Geology - 543to 545 pages

स्थल के अतिरिक्त समुद्र में भी भूकम्प होता है जिसका रूप कभी-कभी अति भीषण होता है। समुद्र में जो भूकम्प से शुनामिस (Tsunamis) नामक तरंगे पैदा होती हैं। ये समुद्र में छोटे-छोटे ज्वालामुखी के फूटने से, तूफान से, दाब से एकाएक परिवर्तन के होने से होते हैं। यह भयंकर एवं विनाशकारी भूकम्प होते हैं। प्रति वर्ष १०/१२ बार पृथिवी के नाना स्थान में भूकम्प के आने के समाचार सुने जाते हैं।

बड़े-बड़े भूकम्प होने से पहले भूमि में से ध्वनि आना आरम्भ हो जाती है। आकाश में एक विशेष भाव आ जाता है। प्रचण्ड वायु चलने और बवंडर हवा बड़े ज़ोर से चलने लगती है। इस प्रकार भूकम्प होने के अनेक कारण बताये गये हैं वैज्ञानिक पक्ष की तुलना में सिद्धान्तिक पक्ष अर्थात् ज्योतिष के अनुसार जो ग्रहों के योगसे उत्पन्न भूकम्प आदि उपद्रव देखे जाते हैं वह प्रमाणिक सिद्ध होते हैं यथा-

भूकम्प से १६६० बि० सम्वत्- माघ अमावस्या को प्रान्तबिहार व कवेटा व शान्ती (चीन) में आया जिस में लाख से ऊपर जाने गईं थी। उस समय ग्रह योग इस प्रकार था। इस कुण्डली में ग्रहों का परस्पर युद्ध होने से भूकम्प योग बना जिस के कारण इतनी तवाही हुई। इस प्रकार के अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं।

१८४१ ई० में जब अँग्रेज़ों ने जलालाबाद पर आक्रमण किया था उस समय वहाँ पर भीषण भूकम्प आया था जिस की भयंकर स्थिति आज तक वहाँ के निवासियों को याद है। इस प्रकार के अनेक उदाहरण हैं जो भूकम्प होने से पहले एवं भूकम्प होने के समय पर भूमि की स्थिति के विषय में ज्ञान प्राप्त कराते हैं।[1]

भूकम्प का नक्षत्र के अनुसार मण्डल एवं फल -

१. वायव्यमण्डल- वायव्यमण्डल के नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, मृगशिरा, अश्विनी, स्वाति और पुनर्वसु हैं।

लक्षण- वायव्य मण्डल में भूकम्प आये तो सात दिन पूर्व ही नभोमंडल में धुंध दिखाई पड़ने लगती है, वायु वेग इतना तीव्र होता है कि धूल उड़ती है, वृक्ष धराशायी हो जाते हैं और सूर्य रश्मियाँ भी तेज हीन हो जाती हैं।

फल- वायव्यमण्डल भूकम्प के कारण शस्यादि,जल, वनौषधियों की क्षति होती है, मनुष्यों में विभिन्न रोग फैलते हैं। यथा-दमा, शोध, ज्वर विश्रिप्ता, खांसी आदि। इस के अतिरिक्त गणि- काओं, सेनिकों, चिकित्सकों, स्त्री वर्गों, गंधर्वों, वैश्यों, शिल्पियों, सौराष्ट्र, कुरु, मगध, दशार्ष व मत्स्य देशों के लोगों को भीष्ण कष्ट होता है।[2]

१.क, हिन्दी शब्द सागर - भ भाग - ३७-३८
ख, Disaster Management - 329
ग, हिन्दी विश्वकोश- पृ०- २४७, घ. द्रष्टव्य- हिन्दी विश्व कोश- २७८
च, Earthquakes -148 छ. Disaster Management - II, P-162
२-द्रष्टव्य- बृ०सं०- ३२/८-११

२- अग्नेय मण्डल- अग्नेय मण्डल के नक्षत्र पुष्य, कृत्तिका, विशाखा, भरणी, मघा, पूर्वाभाद्रपद और पूर्वाफाल्गुनी हैं।

लक्षण- यदि अग्नेय मण्डल में भूकम्प आये तो सात दिन पूर्व ही नभोमण्डल में उल्का व तारों का गिरना, दिशाओं में दाहकता, वायुवेग की तीव्रता होना, दावानल भड़कना, अग्नि की विभीषिकाएं होना आदि लक्षण दृष्टि गोचर होते है।

फल- अग्नेयमण्डल में भूकम्प के कारण मेघक्षय होने से वर्षा की क्षति होती है । सरिताओं, जलाशयों, बावड़ियों का जल न्यून हो जाता है, राजाओं में अमैत्री, चर्मरोगों की वृद्धि, ज्वर, पांडु व विचर्चिका खुजली विसर्पिका (शुष्क खुजली) जैसे रोग होते हैं। तेजवान, क्रोधी, अश्मक प्रदेश (पर्वत क्षेत्र के लोगों) वासी व अंग बाह्लीक, तंगण, कलिंग (उड़ीसा), बंगू (बंगाल), द्रविड़, शबर देशों के लोग को अनेक प्रकार के कष्ट भोगने पड़ते हैं।

३-ऐन्द्रमण्डल- अभिजित, श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़ा और अनुराधा ये नक्षत्र ऐन्द्र मण्डल के अन्तर्गत हैं।

लक्षण- इस में यदि भूकम्प आये तो सात दिन पूर्व ही नभोमण्डल में भ्रमर जैसे वर्ण के वा महिष श्रृंग जैसे सघन मेघ मंडराने लगते हैं तथा दामिनी का दमकना, मेघों की अभया वा गरजाने के साथ ही वर्षा का होना आदि घटित होते हैं।

फल- ऐन्द्रमण्डल में भूकम्प होने से कुलीन, प्रख्यात, राजा, संघ प्रमुखों के लिए विनाशकारी होता है। इस के अतिरिक्त अतिसार, कंठ, मुख व कफजनित रोगों के कारण मनुष्य पीड़ित रहते हैं। क्षेत्र दृष्टि से काशी, युगंधर, पौरव, किरात, कीर, अभिसार, हल, मद्र, अर्बुद, सौराष्ट्र व मालव के निवासियों को कष्टमय स्थिति भोगनी पड़ती है परन्तु इन देशों में वर्षा उत्तम होती है।

४-वरुणमण्डल- रेवती, पू०आ०, आर्द्रा, आश्लेषा, मूला, उ०भाद्रपद ओर शतभिषा नक्षत्र वरुणमण्डल के अन्तर्गत आते हैं।

लक्षण- यदि इस मण्डल के अन्तर्गत नक्षत्रों में भूकम्प आए तो नभोमण्डल में सात दिन पूर्व ही भ्रमरवत् दमकना व मेघ का गरजना भी सामान्य ही रहता है। इस के अतिरिक्त समुद्र व सरिताओं के निकटवर्ती प्रदेशों में रहने वाले लोगों व गोनर्द, चेदी, कुकुर, किरात् वैदेह देश के लोगों को भी अनिष्ट भोगना पड़ता है और वर्षा अधिक होता है।[1]

भूकम्प का क्षेत्र फल- यदि वायव्यमण्डल में भूकम्प होतो दो सौ योजन तक पृथ्वी थरथराती है। अग्नेयमण्डले में भूकम्प होने से एक सौ योजन तक पृथ्वी थरथराती है। वरुणमण्डल में भूकम्प होतो एक सौ अस्सी योजन तक पृथ्वी थरथराती है। ऐन्द्रमण्डल में भूकम्प हो तो एक सौ साठ योजन तक पृथ्वी थरथराती है।[2]

१- द्रष्टव्य- बृ० सं०- १६/१२-१७

२- भूकम्पो यामतो वर्णक्रमाद्धन्याद्दिवानिशम्। वायुमण्डलजो भूपशस्याम्बुमगधं तथा।।
ग्रामान्नमुदकं वह्निमण्डलोत्था निहन्ति हि। इन्द्रमण्डलजो भूपांस्तथा गुर्जरदेशकान्।
भूपालांश्चीन[illegible]

समय अनुसार भूकम्प क़े मण्डल एवं फल-

मण्डलों का समय के अनुसार (क्रम) होने वाले उत्पातों का क्रम- दिन या रात्रि के प्रथम पहर में त्रिविध उत्पात होने से वायुमण्डल, द्वितीय पहर में उत्पात होने से अग्नि मण्डल, तीसरे पहर में उत्पात होने से इन्द्र मण्डल और चौथे पहर में उत्पात उपस्थित होने पर वरुण मण्डल अधिपति होते हैं यह उत्पात मण्डलों के अनुसार फल देते हैं।[1]

यदि दिन के प्रथम पहर में या रात्रि के प्रथम पहर में भूकंप हो तो ब्राह्मणों को पीड़ा होती है। दूसरे पहर में भूकम्प होतो क्षत्रिय वर्ण के लोगों को, तीसरे पहर में भूकम्प हो तो वैश्य वर्ण के लोगों को और चौथे पहर में शूद्रों को पीड़ा देता है और यदि वायुमण्डल में भूकम्प हो तो राजा, खेती, जल और मगध देश का नाश होता है। वह्नि मण्डल में उत्पन्न हुआ भूकम्प ग्राम, अन्न और जल का नाश करता है, और इन्द्रमण्डल में उत्पन्न हुआ भूकम्प चीन्न देश और राजाओं का नाश करता है अर्थात् इन उपर्युक्त कथित मण्डलों के अनुसार भूकम्प घटित होता है।[2]

मण्डलाधिपति गर्णों के अनुसार उत्पात लक्षर्णों के फल का समय-

१. वायुमण्डल- वायुमण्डल में उत्पन्न उत्पात चार पक्ष में अर्थात् दो महीने में फल देता है।
२- अग्निमण्डल- अग्निमण्डलमें उत्पन्न उत्पात तीन पक्ष में अर्थात् डेढमहीने में फल देताहै।
३- इन्द्रमण्डल- इन्द्रमण्डल में उत्पन्न उत्पात सप्ताह में फल देता है।
४- वारुणमण्डल- वरुणमण्डल में उत्पन्न उत्पात शीघ्र ही फलदायी होता है। मिश्रफल दायक मण्डलोत्पन्न उत्पात उसी-उसी मण्डल के समय अनुसार फल दायी होते हैं।[3]

भूकम्प की पुर्नावृत्ति-

यदि एक बार भूकम्प के पश्चात् यदि तीसरे चौथे, सातवें, पंद्रहवें, तीसवें, अथवा पैंतालीसवें दिन पुनः भूकम्प आए तब प्रमुख व्यक्ति या राजादि का मरण होता है।[4] गर्ग आचार्य ने भी ऐसा कहा है।[5] वायव्यमण्डल भूकम्प का फल ६० दिनों में, आग्नेय मण्डल में हो तो ४५ दिन में, ऐन्द्रमण्डल में सात दिनों में और वरुणमण्डल में भूकम्प का फल उसी दिन घटित होता है अर्थात् प्राप्त होता है।[6]

१- प्राग द्वित्रिचतुभागेषु द्युनिशोरद्भुतेषु सर्वेषु।
अग्निलग्निशक्तवरुणा मण्डलपतयः शुभाशुभंकुर्यः।। शु०दी०-८/५

२- द्रष्टव्य- बृ०सं०-१६- १६, ३- तदेव-- २०- २२

४- चलयति पवनः शतद्वयं शतमनलो दशयोजनान्वितम्।
सलिलपतिरशीतिसंयुतं कुलिशधरोऽभ्यधिकं च षष्टितः ।। बृ० सं०-१७/३१

५- त्रिचतुर्थसप्तमदिने मासे पक्षे तथा त्रिपक्षे च।
यदि भवति भूमिकम्पः प्रधाननृप नाशनो भवति।। तदेव- १७/३२

क- अर्द्धमासे चतुर्थेऽह्नि तृतीये वाध सप्तमे।
कस्मात्पुनर्मदा कंपो मासे सार्द्धे यदापि वा।। 'गर्ग सिंहता'

६- पक्षैश्चतुभिर्रनिलस्त्रिभिरग्निर्देवराट् च सप्ताहात्।
सद्यः फलति च वरुणो येषु न कालोऽदभुतेषूक्तः।। बृ० सं०-१७-३०

प्राचीन काल में भूकम्प को दैवीप्रकोप, घार अनर्थ एवं अरिष्ट होने के लक्षण को सूचित करने वाला समझा जाता था। जिस के कुछ ऐतिहासिक उदाहरण निम्नलिखित हैं:-

पर्वत, वन और काननों सहित धरती का डोलना जैसे भंयकर उत्पातों का वाल्मीकि रामायण के अरण्य काण्ड में उल्लेख मिलता है।[1] श्री राम का लङ्का पर आक्रमण करने से पूर्व लङ्का में धूल से भरी हुई प्रचण्ड वायु का चलने, धरती का काँपने, पर्वतों के शिखरों का हिलने और पेड़ों के गिरने का वर्णन मिलता है जो रीछों, वानरों और राक्षसों के विनाश की सूचना देने वाले उत्पात थे।[2]

रणभूमि में रावण जहाँ-जहाँ जाता, वहाँ-वहाँ की भूमि डोलने का वर्णन मिलता है। यह भूमि कम्प उत्पात रावण की मृत्यु को सूचित करने वाला था।[3] रावण के जन्म समय पर भी भूमि हिलने तथा क्षुब्ध होने, भयंकर आँधी चलने जैसे उत्पातों का वर्णन मिलता है।[4]

कार्तिके के साथ तारकासुर युद्ध समय भूमि कम्पन होना, समुद्र की ऊँची-ऊँची लहरों के उमड़ने, पहाड़ों में दरारें पड़ने का वर्णन आया है जो तारकासुर के वध को सूचित करते थे।[5] महाभारत युद्ध से पूर्व पहाड़ों सहित पृथ्वी के बारंबार काँपने का वर्णन मिलता है।[6]

वीरभद्र और महाकाली द्वारा दक्षयज्ञ विध्वंस से पूर्व दक्ष की यज्ञशाला की भूमि डोलने का उल्लेख रुद्र संहिता के ३३वें अध्याय में आया है।[7]

महाभारत युद्ध में दुर्योधन के धराशायी होने पर वृक्षों, वनों एवं पर्वतों सहित सारी पृथ्वी काँपने[8] और महाभारत युद्ध से पूर्व भूकम्प होने के कारण पृथक्- २ चारों सागर वृद्धि को प्राप्त होकर वसुधा में क्षोभ उत्पन्न करने अपनी सीमा को लाँघते हुये

---

१. प्रचचाल मही चापि सशैलवनकानना।
खरस्य च रथस्थस्य नर्दमानस्य धीमतः।। वा० रा० - अरण्य काण्ड - २३/१८

२. वाताश्च कलुषा वान्ति कम्पते च वसुंधरा।
पर्वताग्राणि वेपन्ते पतन्ति च महीरुहाः।। वा० रा० - युद्ध काण्ड - २३/०४

३. रावणश्च यतस्तत्र प्रचचाल वसुन्धरा।
राक्षसां च प्रहरतां गृहीता इव बाहवः।। वा० रा० - युद्ध काण्ड - १२६/२५

४. चकम्पे जगती चैव ववुर्वाताः सुदारुणाः।
अक्षोभ्यः क्षुभितश्चैव समुद्रः सरितां पतिः।। रावण संहिता - प्रथम काण्ड - ३३५

५. स्खलन्महेभं प्रपतत्तुरङ्गमं परस्परश्लिष्टजनं समन्ततः।
प्रक्षुभ्यदम्भोधिविभिन्न भूधराद्बलं द्विषोऽभूदवनिप्रकम्पात्।। कु० सं०- १५/२३

६. धूमा दिशः परिधयः काम्पते भूः सहाद्रिभिः।। श्री मद्भागवत म० पु०- १४/१६-१७
"अभीक्ष्णं कम्पते भूमिरर्कं राहुरुपैति च।" म० भा० भीष्म पर्व- २/११

७. द्रष्टव्य - संक्षिप्त शिवपुराणाङ्क - रुद्रसंहिता - ३३-३४ अध्याय

८. 'चंचाल पृथ्वी [illegible] ४६

से जान पड़ने, बालू और कंकड़ खींचकर बरसाने वाले भयंकर बादल उठकर वृक्षों को उखाड़ने, गाँवों तथा नगरों में वृक्ष और चैत्य वृक्ष प्रचण्ड आँधियों तथा बिजली के आघातों से टूटकर गिरने जैसे महान् भयंकर उत्पातों का वर्णन महाभारत में मिलता है।[1]

सुर्जन चरितमहाकाव्य में सूर्यमण्डल होना, भूकम्प होना और भीषण शब्द करते हुए तारों के टूटने जैसे अशुभ उत्पातों का वर्णन मिलता है।[2]

जिस प्रकार दूसरे नवीन पति को चाहने वाली स्त्री में कम्परूप भाव होता है उसी प्रकार दूसरे राजा का भूमि अधिपति होने पर पूर्व भूमिकम्पन जैसा उत्पात होता है।[3]

छिद्राभाव वाली भूमि का फट जाना अर्थात् अकस्मात् बिना छिद्र वाली का फट् जाना या भूमि का कम्पन होना देश के लिए भयकारी होता है।[4]

---

१. महाभूता भूमिकम्पे चत्वारः सागराः पृथक्।
वेलामुद्वर्तयन्तीव क्षोभयन्तो वसुधराम्।।
वृक्षानुन्मथ्य वान्त्युग्रा वाताः शर्करकर्षिणाः।
आभाग्नाः सुमहावतैरशनीभिः समाहताः।
वृक्षाः पतन्ति चैत्याश्च ग्रामेषु नगरेषु च।। म० भा०- भीष्म पर्व- ३/३८-४०

२. परिधिरिव गरीयान् मण्डलञ्चण्डभानोर्नगरमरमरौत्सीच्चापहुवाणान्वयस्य।।
अवनिः स्वयमीयुषी प्रकम्पं निजभर्तुर्व्यसनागमं समीक्ष्य।
निर्घातोग्रस्वानमिश्रः समन्तुल्कांदण्डः प्रादुरासीत् प्रचण्ड।। सुर्जन चरित- ११/७१-७३

३. अस्मिन् दिग्विजयोद्यते पतिरयं मे स्तादिति ध्यायति।
कम्पं सात्त्विक भावमञ्चति रिपुक्षोणीन्द्रदारा धरा।। नैषध महाकाव्य - १२/२६

४- छिद्राभावे भूमेर्दरणं कम्पश्च भयकारी।। बृ० सं० ४६/७५

पंचम अध्याय

शुभदायक उत्पात

१. ऋतु अनुसार-

१. वज्र एवं बिजली का गिरना, पृथ्वी का कम्पन, सन्ध्या के समय वज्र का शब्द, सूर्य तथा चन्द्रमा में मण्डलों का होना, धूलि और धूएँ का उद्‌भव उदय एवं अस्त के सूर्य की अति लालिमा, वृक्षों के टूट जाने पर उस से रस का गिरना, फलवाले वृक्षों की अधिकता, गौ, पक्षी और मधु की वृद्धि यह उत्पात चैत्र और वैशाख मास में शुभ प्रद होते हैं।[1]

२- ग्रीष्म ऋतु में कलुषित नक्षत्रों और ग्रहों का पतन, सूर्य और चन्द्र के मण्डलों का कपिल वर्ण होना, सांयकालीन नभ के काले और सफेद मिश्रित, पीले, धुसरित, श्यामल, लाल, लाल पुष्प के समान अरुण और क्षुब्ध सागर की तरह संक्षुब्ध होना तथा नदियों का जल सूख जाना इन उत्पातों को देख कर इन्हें शुभ कहना चाहिये।[2]

३- इन्द्रधनुष का मण्डलाकार उदय, विद्युत् और उल्का का पतन, पृथ्वी का अकस्मात् कम्पन, उलट-पलट, विकृति, ह्रास, फटना, नदियों एवं तालाबों में जलकी न्यूनता नाव, जहाज और पुलका काँपना, सींगवाले जानवरों तथा शूकरों की वृद्धि ये उत्पात वर्षा ऋतु में शुभ फलदायी होते हैं।[3]

४- शीतल वायु, तुषार, पशु एवं पक्षियों का चीत्कार, राक्षस, भूत, और पिशाचों का दर्शन, देवी वाणी, सूर्य के उदय अस्त के समय आकाश, वन और पर्वतों सहित दिशाओं का गाढ़रूप में धूएँ से अन्धकारित हो जाना ये उत्पात हेमन्त ऋतुमें शुभ फलदायी होते हैं।[4]

५- दिव्य स्त्री का रूप, गन्धर्व विमान, ग्रह, नक्षत्र और ताराओं का दर्शन, देवी वाणी, वनों में और पर्वतों की चोटियों पर गाने-बजाने का शब्द सुनायी पड़ना, अन्नों की वृद्धि, रस की विशेष उत्पत्ति ये उत्पात शरद काल में मांगलिक होते हैं।[5]

१- शुभावहास्ते विज्ञेयाः तांश्च मे गदतः शृणु। वज्राशनि-महीकम्प-सस्यानि-र्ध्यातनिः स्वना।।
परिवेषरजो-धूम-रक्तार्काः तमयोदयाः। द्रुमोद्भेदकर-स्नेहो बहुशः सफलद्रुमः।।
गो-पक्षि-मधु-वृद्धिश्च शुभानि मधु माधवे। म० पु०-२२६/१४-१५

२. ऋक्षोल्का-पातकलुषे कपिलार्केन्दु-मण्डलम्। कृष्णश्वेतं तथापीतं धूसर-ध्वान्त-लोहितम्।
रक्तपुष्पारुणं साध्वं नभः क्षुब्धार्णवापमम्। सरिताञ्चाम्बु-संशोषं दृष्ट्वा ग्रीष्मे शुभं वदेत्।।
तदेव-२२६/१६-१७

३. शुक्रायुध-परीवेषं विद्युदुल्काधिरोहणम्। कम्पोद्वर्तन-वैकृत्यं ह्रसनं दारणं क्षितेः।।
नद्योदपानं सरसां विधून-तरणप्लवाः। शृङ्गिणाञ्च वराहाणां वर्षासु शुभमिष्यते।।
तदेव-२२६/१८-१६

४. शीता-निलतुवारत्वं नर्दनं मृगपक्षिणाम्। रक्षोभूत-पिशाचानां दर्शनं वागमानुषी।।
दिशो धूमान्धकाराश्च स नभोवन-पर्वताः। उच्चैः सूर्यादयास्तौ च हेमन्ते शोभनाः स्मृताः।।
तदेव-२२६/२०-२२

५. दिव्यस्त्री-रूप-गन्धर्व-विमानाद्भुत्दर्शनम्। ग्रहनसत्र-ताराणां दर्शनं वागमानुषी।।
गीतवादित्र-निर्घोषो वनपर्वत-सानुषु। सस्यवृक्षी रसोत्पतिः शरत्काले शुभाः स्मृताः।।
तदेव-२२६/२२-२४

६- हिमपात्, विरूप एवं अद्‌भुत उत्पातों का दर्शन, आकाश का काले काजल के समान दिखाई पड़ना तथा ताराओं एवं उल्काओं के गिरने से पीले रंगका दीख पड़ना, स्त्री, गाय, बकरी, घोड़ी मृगी और पक्षियों से विचित्र प्रकार के बच्चों का उत्पन्न होना, पत्तों, अङ्कुरों और लताओं में अनेकों प्रकार के विकारों का हो जाना-ये उत्पात शिशिर ऋतुमें शुभदायी होते हैं। इस प्रकार यह उत्पात ऋतु अनुसार शुभ होते हैं और इन के अतिरिक्त अशुभ फल देते हैं।[1]

७. जहाँ अग्नि की प्रभा निर्मल हो, उसकी लपटें ऊपर की ओर दक्षिणावर्त होकर उठें और धुआँ विल्कुल न रहे,साथ ही अग्नि में जो आहुतियाँ डाली जायें, उनकी पवित्र सुगन्ध वायु में मिलकर व्याप्त होती रहे, यह भावी विजय सूचक का लक्षण होता है।[2]

जिस पक्ष में शङ्खों और मृदङ्गों की गम्भीर आवाज़ बड़े ज़ोर-ज़ोर से हो रही हो तथा जिन्हें सूर्य और चन्द्रमा की किरणें विशुद्ध प्रतीत होती हैं, उनके लिये यह भावी विजय का शुभ लक्षण होता है।[3]

जिन के शव्द रूप, रस, गन्ध और स्पर्श आदि निर्विकार एवं शुभ होते हैं तथा जिन योद्धाओं के हृदय में सदा हर्ष और उत्साह वना रहता है, उनके विजयी होने के लक्षण होते हैं। जिन के वायु अनुकूल वहती है, वादल और पक्षी भी जिन के अनुकूल होते हैं, मेघ जिनके पीछे-पीछे छत्र-छाया किये चलते हैं इन्द्र-धनुष भी जिन्हें अनुकूल दिशा में ही दृष्टिगोचर हों तो यह शुभसूचक उत्पात होते हैं और वहाँ पर विजय होती है।[4]

वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण की युद्ध यात्रा के समय मंगल सूचक मृग और पक्षी उनके दाहिने तथा अनुकूल दिशा में जाते हुए उनका अनुसरण करने, वहाँ-वहाँ सुखदायिनी वायु चलने और सभी शुभशकुन उनके दाहिने भाग में प्रकट होने का वर्णन मिलता है जो शुभ सूचक उत्पात एवं विजय प्राप्ति के लक्षण थे।[5]

---

१. हिमपाता-निलोत्पात-पविरूपाद्-भुगदर्शनम्। कृष्णाञ्जनाभमाकाशं तारोल्कापात्-पिञ्जरम्।।
चित्रगर्भोद्भवः स्त्रीषु गोऽजाश्वमृगपक्षिषु। पत्राङ्कुर-लतानाञ्च विकारा शिशिरे शुभाः।।
म० पु०-२२६/२४-२५

२. प्रसन्नभाः पावक ऊर्ध्वरश्मिः प्रदक्षिणावर्तशिखो विधूमः।
पुण्या गन्धाश्चाहुतीनां प्रवान्ति जयस्येतद् भाविनो रूपोमाहुः।। म० भा०- भीषम पर्व-३/६१

३. गम्भीरघोषाश्च महास्वनाश्च शंखा मृदङ्गाश्च नदन्ति यत्र।
विशुद्धरश्मिस्तपनः शशी च जयस्यैतद् भाविनो रूपमाहु।। तदेव- भीषम पर्व- ३/६६

४. शब्दरूपरसस्पर्शगन्धाश्चाविकृतः शुभाः। सदा हर्षश्च योधानां जयतामिह लक्षणम्।।
अनुगा वायवो वान्ति तथा भ्राणि वयांसि च। अनुप्लवन्ति मेघाश्च तथैवेन्द्र धनूपि च।।
एतानि जयमानानां लक्षणानि विशाम्पते। भवन्ति विपरीतानि मुमूर्षूणां जनाधिय।।
तदेव- भीषम पर्व-३/७३-७४

५. यत्र यत्र चवार्ष्णो पथि भारत। तत्र तत्र सुखो वायुः सर्वं चासीत् प्रदक्षिणम्।।
प्रदक्षिनुलेमाश्च मङ्गल्य मृगपक्षिणाः। प्रयाणे वासुदेवस्य बभूवुरनुयायिनः।।

तदेव - उद्योग पर्व ८४/११-२४

श्री कृष्ण की रण यात्रा के समय क्षण भर में ही आकाश में घिरे हुए बादल छिन्न-भिन्न हो अदृश्य हो गए। शीतल, सुखद एवं अनुकूल वायु चलने लगी तथा धूल का उड़ना बंद हो गया।[1]

६- शुभ सूचक उत्पात-

१- यदि शिशिर ऋतु में सूर्य ताम्रवर्ण का दिखाई दे तो उसे शुभ कहा गया है। इसी प्रकार यदि वसन्त ऋतु में पीला सूर्यमण्डल दिखाई दे तो शुभ होता है। वर्षाऋतु में मिले जुले अनेक रंगों का सूर्य दिखाई पड़े तो वह शुभ होता है, शरद् ऋतु में पद्म के रंग का सूर्य दिखाई दे तो शुभ होता है और हेमन्त ऋतु में लोहितवर्ण का सूर्य दिखाई दे तो वह देश की प्रजा के लिय शुभफलदायक होता है।[2]

२- स्वच्छ , अखण्डित, स्पष्ट, अतिशय स्वच्छ, दीर्घ किरण वाला, निर्विकार शरीर, वर्ण और चिह्न वाला सूर्यमण्डल अर्थात् सूर्यमण्डल स्वच्छ, खण्डित न हो, लम्बी किरण वाला, विकार रहित, शरीर,वर्ण और चिह्न रहित सूर्यमण्डल संसारका मंगल करने वाला होता है।[3]

---

१. मङ्गल्यार्थप्रदैः शब्दैरन्ववर्तन्त सर्वशः।
सारसाः शतपत्राश्च हंसाश्च मधुसूदनम्।। म० भा० - उद्योग पर्व - २

२- शुभेऽर्कः शिशिरे ताम्रः कंकुमाभा वसंतिके ।
ग्रीष्मश्चापांडुरश्चैव विचित्रो जलदागमे।।
पद्मोदिराभः शरदि हेमंते लोहितभारविः।। न०पु० त्रि०-८/६

३- अमलवपुरवक्रमण्डलः स्फुटविपुलामलदीर्घदीधितिः।
अविकृततनुवर्णचिह्नभृज्जगति करोति शिवं दिवाकरः।। बृ० सं०-३/४०

उत्पातों का निष्फली होना एवं फलमान

१- त्रिविध उत्पातों के दीखने के बाद एक सप्ताह के भीतर यदि वर्षा हो जाए तो वहाँ अद्भुत निष्फल हो जाता हैं।[1]

२- भौम उत्पात थोड़े फलों को देता है और बहुत देर में शान्त होता है। आन्तरिक्ष उत्पात मध्यम फल देने वाला होता है और मध्य काल में अर्थात् न बहुत शीघ्र न बहुत देर में फलदायी होता है। दिव्य उत्पात अतिशीघ्र काल में शीघ्र फली होता है।[2]

३- यह भौम उत्पात शान्ति से आहत हो कर नष्ट हो जाता है, आन्तरिक्ष उत्पात शान्ति से कम हो जाता है। और दिव्य उत्पात शान्ति से भी नष्ट नहीं होता।[3]

४- भौम उत्पात अनिष्ट शान्ति द्वारा नष्ट होता है। नाभस और दिव्य उत्पात शान्ति करने पर भी कुछ विलम्ब से प्रशमित होते हैं।[4]

५- इस महान् दिव्य उत्पात का अवसान बिना शान्ति कराये कभी नहीं होता यदि वृष्टि हो जाय तब भी इस का भय तीनवर्षों के भीतर महान् भयदायक मानना चाहिये।[5]

६- तीन वर्ष तक उत्पात की शान्ति न हो तो वह लोक के लिये भयकारक सिद्ध होता है।[6]

७- इन तीन उत्पातों का फल क्रम से उग्र, मध्य और अल्प होता है अर्थात् दिव्य उत्पात का फल उग्र, आन्तरिक्ष का फल मध्यम और भौम का फल अल्प होता है।[7]

८- अधिक सुवर्ण, अन्न, गाय और पृथ्वी दान करने से दिव्य उत्पात भी शान्त हो जाता है। आन्तरिक्ष और भौम उत्पात होमादि करने से निष्फली होते हैं अर्थात् दोनों ही शान्त होते हैं। शिवालय में, भूमि पर गौदान और कोटि संख्यक हवन से दिव्य उत्पात भी शान्त हो जाता है।[8]

१-(क) सप्ताहाभ्यन्तरे वृष्टाङ्भुतं निष्फलं भवेत्। अ० पु०- २६२/१४

(ख) अद्भुते तु समुत्पन्ने यदि वृष्टिः शिवा भेवत्।
सप्ताहाभ्यन्तरे ज्ञेयमद्भुतं निष्फलं हि तत्। वि० ध० पु०-१३८/११

२- भौमं याम्यफलं ज्ञेयं चिरेण भूवि पश्यते। नाभसं मध्यफलदं मध्य कालफल प्रदम्।
दिव्यं तीव्रफलं ज्ञेयं शीघ्रकारि तथैव च।। तदेव- १३४/६-१०

३- भौमं चरस्थिरभवं तच्छन्तिभिराहतं शममुपैति।
नाम समुपैति मृदुतां शाम्यति नो दिव्यमित्येके ।। बृ० सं०- ४६/५

(क) भौमं शान्तिहतं नाशमुपगच्छति मार्दवम्।
नाभसं च शमं याति दिव्यमुत्पातदर्शनम्।। 'समास संहिता'

४-भौममनिष्टं शान्त्या नश्याते दिव्यंनाभसंच याप्यम्।। शु० दी०- - ८-३

५-अदभुतस्य विपाकश्चेद्विना शान्तेर्न दृश्यते। त्रिभिर्वर्षैस्तया ज्ञेयं सुमहद्भयकारकम्।। वि० ध०- १३४/१२

६-सप्ताहाभ्यन्तरे वृष्टावङ्.भुतं निष्फलं भवेत्। शान्तिं विना त्रिभिर्वर्षैरऽद्भुतं भयकृङ्.भवेत्।। अ०पु०-२६२/१४

७-भूमौ भौमाः क्रमादुग्रगध्यमाल्पफलप्रदाः।। मु० ग० मि०- ६/२

८-दिव्यमपि [illegible] बृ० सं०-४६/५६

उत्पात शान्ति विधान

शान्ति शब्द की व्युत्पत्ति एवं अर्थ-

शान्ति शब्द 'शम्' धातु 'क्तिन्' प्रत्यय से निष्पन्न, अर्थ स्थिरता, सौम्यता, धीरजता, वेग, क्षोभ, या क्रिया का अभाव, किसी प्रकार की गति, हलचल या उपद्रव का न होना, आराम, सुख, रोगादि की निवृत्ति, चंचलता का अभाव, वासनाओं से छुटकारा, अशुभ या अनिष्ट का निवारण एवं अमंगल दूर करने का उपचार आदि अर्थ अमर आदि कोशकारों ने किये हैं। ग्रहादि के विघ्न होने पर जहाँ अनिष्ट होता है, वहाँ किसी देव कर्म के अनुष्ठान द्वारा उस अनिष्ट की निवृत्ति होने से उस को शान्ति कहते है।[1]

पर्याय शब्द - शमथ, शम, प्रशम, उपशम और प्रशान्ति हैं। वैदिक साहित्य में शान्ति के अर्थ में 'शम', 'शन्तम्' और 'शमयति' शब्दों का वर्णन मिलता है। तैत्तरीय ब्राह्मण के अनुसार शान्ति वह कर्म या कृत्य है जो देव के क्रूर स्वरूप हो प्रसन्न करता है और शुभकर बनाता है।[2] यहाँ पर शान्ति शब्द अनिष्ठ के निवारण एवं अमंगल को दूर करने तथा सुख प्रदान वाले कर्म के अर्थ में लिया है।

वेदो, वेदाङ्गों, पुराणों, धर्मशास्त्रादि के ग्रन्थों में अनेक प्रकार की शान्तियों का वर्णन मिलता है। उनमें से त्रिविध उत्पातों के शमन करने वाली शान्तियों का वर्णन यहाँ किया जा रहा है।[3] अर्थव वेद में उत्पातों एवं उपसर्गों को शान्त रूप से घटित होने के विधान एवं शान्ति मन्त्र वर्णित हैं नाकि उत्पातों को घटित होने से रोकने या नष्ट करने के। क्योंकि प्रकृति के अवयवों में विकारों का आना अथवा उत्पातों का घटित होना स्वाभाविक है।[4] यदि उत्पातों को घटित होने से रोक दिया जाये तो प्रकृति में अवरुद्धता आ जायेगी जिसके कारण प्रकृति के सारे अवयव अस्त व्यस्त हो जायेंगे।

दिव्य, अन्तरिक्ष तथा पृथ्वी में होने वाले उत्पातों को उन-उन स्थानों के प्रतिनिधि देवताओं के मन्त्रों से जाप एवं हवन करने से उत्पात शान्त किये जा सकते हैं।[5]

---

१. शान्ति : स्त्री, (शम्+क्तिन) कामक्रोधादि प्रशमः चित्तोशपमः। इतिभरतः विषयेभ्य इन्द्रियोपरोमः। इति चण्डिटीकायां नागोजोभट्टः। तत्पर्य्यायः शमथः, शमः, इत्यमरः। प्रशमः उपशमः, प्रशान्ति इति शब्द। हि० वि० को० -पृ०-७१८, रत्नावली। तृष्णाक्षयः इति हेम चन्द्र।। शब्दकल्पद्रुमः

२. प्रजापतिरग्निमसृजत। सोऽबिभेत्प्र मा भदयतीति। तं शम्याऽशमयत्।
त्च्छम्यै शमित्वम्। यच्छमीमयः सम्भारो भवति शान्तया अप्रदाहाय। तै० ब्रा० - १/१/३/२

३.'नानाविधदिव्यभौमन्तरक्षोत्पातेषु शान्तिः'..। धर्म सिन्धु - तृतीय परिच्छेद, पृ०- ३००

४. शं नो मित्रः शंवरुणः शं विवस्वाञ्छमन्तकः। उत्पाताः पार्थिवान्तरिक्षाः शं नो दिविचरा ग्रहाः।।
शं नो निखाता वब्गाः शमुल्का देशोपसर्गाः शमुनो भवन्तु। अथर्ववेद- १९/१०/७, ९

५. दिव्यान्तरिक्षभौमानि [illegible]
दिव्यान्तरिक्षभौमं तु अद्भुतं त्रिविधं शृणु।। अ० पु० -२६३/११

भूमि सम्बन्धी उत्पात तो शान्ति से शान्त हो जाते हैं, अन्तरिक्ष उत्पात शान्ति से मन्द पड़ जाते हैं। दिव्य उत्पात के मन्त्र जाप, हवन, अन्न एवं भूमि के दान से तथा करोड़ों आहुति देने से, भगवान रूद्र के अभिषेक एवं अनेक प्रकार के पूजन से तथा भगवान शिव के समक्ष गोदोहन से पृथ्वी का अलंकार तब करें जब तक दूध स्वतः बहने न लगे। ऐसा करने पर दिव्य उत्पात शान्त होते हैं।[1] इसी प्रकार का वर्णन भविष्य फल भास्कर में त्रिविध उत्पातों के शमन होने के विषय में मिलता है। जैसे कि लोहे का कवच पहनने से बणों के प्रहार शान्त हो जाते हैं। उसी प्रकार दिव्य उत्पातों को शान्ति निवारण करती है।[2]

त्रिविध उत्पात की शान्ति–

दिव्य उत्पात अधिक स्वर्ण, अन्न, गो और भूमि दान से शान्त होता है और रुद्रायतन, भूमि में गोदान और करोड़ होम करने से शमन होता है। नाभसादि उत्पात भी बहुत प्रतिकार करने से नष्ट होते हैं।[3]

उत्पात की शान्ति मण्डल के देवता अनुसार करवाने से होती है। जिस मण्डल में उत्पात उत्पन्न हो उस मण्डल के अधिपति देवता की पूजा एवं होमादि करने से ही शान्ति होती है। यदि दो मण्डलों में उत्पात हो तो दोनों मण्डल के दोनों अधिपतियों की पूजा वा होमादि करने से शान्ति होती है।[4]

अग्नि पुराण के अनुसार महा उत्पातों की शान्ति के लिए अठारह प्रकार की शान्तियों का वर्णन किया है उन में से प्रमुख त्रिविध उत्पातों की शान्ति के लिए तीन अमृता, अभया और सौम्या शान्तियाँ बताई गई हैं। भौम सम्बन्धि उत्पातों के लिए (अमृता) नामक शान्ति करानी चाहिए। आन्तरिक्ष सम्बन्धि उत्पातों के लिए (अभया नामक) शान्ति करानी चाहिए । दिव्य सम्बन्धी उत्पातों के लिए (सौम्य नामक) शान्ति करानी चाहिए। इन शान्तियों के देवताओं से सम्बन्धित मन्त्रों का जाप एवं हवन कर के 'अभया और अमृता' शान्ति के लिए दूर्वादल की मणि एवं सौम्य शान्ति के लिए (शंखमणि) धारण करनी चाहिये।[5]

---

१. भौमं शान्त्या शमं याति मार्दवं त्वन्तरिक्षजम्। दिव्यं होमान्नगो भूमिदानैस्तत्कोटिहोमतः।।
महोपहाराद् रूद्रस्य गोदोहात्तत्पुरःसरम्। अलंकृते क्षितितले यावत्क्षीरप्लवं भवेत्।।
अपि दिव्यं यान्तिं किं पुस्त्वितरद्वयम्। वशिष्ट सं०- ४५/१-१०

२. बानप्रहारा न भवन्ति यद्वद्राजन् नृणां सन्नहनैर्युतानाम्।
दैवीपघाता न भवन्ति तद्वव धर्मात्नां शान्ति-परायणाम्।। म० पु०- २२८/२६

३- दिव्यमपि शममुपैति प्रभूतकनकान्नगोमहीदानैः।
रुद्रायतने भूमौ गोदोहात्कोटिहोमाच्च।। शु० दी० ८-४

४- यनुमण्डलेऽदभुतं जातं शान्तिरस्तद्दैवतोद्भवा।
तथा शान्तिद्वयं कार्यं मण्डलद्वयाद्भुते।। शु० दी० ८/१०

५- अष्टादशभयः शान्तिभयस्तिस्रोऽन्याः शान्तयो नराः।
अमृता चाभया सौम्या सर्वोतपातविमर्द्दनाः। अमृता सर्वदैवत्या अभया ब्रह्मदेवता।।
सौम्या च सर्वदैत्या एका स्यात्र्व्वकामदा। अभयाया मणिः कार्यो वरूणस्य भृगूत्तम्।।
शतकाण्डोऽमृतायाश्च सौम्यायाः शंखजो मणिः। तद्देवत्यास्था मन्त्राः सिंघो स्यान्मणिबन्धनम्।।
अ० पु०-२६२/८-११

देव पूजा द्वारा उत्पातों की शान्ति-

विष्णु, देव, प्रभु , अव्यय अग्नि, सोम, मित्र, वरुण, इन्द्राग्नि, विश्वेदेव प्रजापति, अनुमति, धनवन्तारि, वास्तोष्पति, देवी, स्विष्टकृत, अग्नि इन देवताओं के मन्त्रों से इन का पूजन एवं हवन करने और बली देने से भी उत्पातों का शमन हो जाता है।[1]

वेद मन्त्रों द्वारा उत्पातों का शान्ति विधानः-

सर्व विघ्न-बाधकों का विनाश, राक्षसों का संहार एवं यश प्रदान करने तथा विजय दिलाने वाले- **'विष्णोरराटमसि...'** इत्यादि(यजु०- ०५/२१) एवं **'स्वस्ति न इन्द्रो०'** (यजु०- २५/१६) इन मन्त्रों का पाठ एवं हवन करने से सर्व विघ्न- बाधाओं एवं उत्पातों का निवारण होता है।[2] **'या औषधय०** इत्यादि मन्त्र मंगलकारी और सभी व्याधियों को नष्ट करने वाले हैं। **'देवस्य त्वा--'** इस मन्त्र से स्रुवा पर अपामार्ग और तण्डुल चढ़ाकर आहुति देने से शीघ्र ही वि.त अभिचारों एवं उपद्रवों का नाश होता है।[3] **'काण्डात्काण्ड---'** इत्यादि मन्त्र को पढ़कर दस हज़ार दुर्वाओं के पोरों से आहुतियाँ डालने से ग्राम तथा जनपद (देश) में महामारी का उपद्रव नहीं होता। इस से रोगियों के रोग तथा दुखियों के दुःख का भी नाश होता है।[4] **'इमा रुद्राय ----'** इत्यादि मन्त्र को पढ़कर घी और दूर्वा से आहुति देने पर सभी व्याधियों का नाश हो जाता है। **'नमस्ते रुद्र --'** यह मन्त्र सभी उपद्रवों तथा महापातकों का नाशक और सर्व शान्ति कारक है।[5] **'शं नो मित्र'** इत्यादि सदा सर्वत्र शान्ति देने वाला है।[6]

१- द्रष्टव्य---- अ० पु०- १४१/१-११

मन्त्र.'विष्णोरराट्मसिविष्णोश्नप्त्रेस्थोविष्णोः स्यूरसिविष्णोर्ध्रुववासि। वैष्णवमसि विष्णवे त्वा'।। यजु०-५/२१

'विष्णो रराटमित्येतत्सर्वबाधाविनाशनम्।' अ० पु०- २५६/८५

क. 'स्वति न इन्द्र इत्येतत्सर्वबाधाविनाशनम्।' तदेव- २६०/३२

२.'या औषधयः' स्वस्त्ययनं सर्वव्याधिविनाशनम्। तदेव- २५६/८५

स्रुवेण देवस्य त्वेति हुत्वाऽपामार्गतण्डुलम्। मुच्यते विकृताच्छीघ्रमभिचारान्न संशयं।। तदेव- २६०/३३-३४

मन्त्र. देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। आ ददे नार्यसी दमह थं रक्षसां ग्रीवा अपिकृन्तामि। बृहन्नसि बृहद्रवावृहतीमिन्द्राय वाचं वद।। यजु०- ५/२२

३. दूर्वाकाण्डायतं हुत्वा काण्डात्काण्डेति मानवः। ग्रामे जनपदे वाऽपि मरकं तु शमं नेयत्।।

रोगार्त्तो मुच्यते रोगात्तथा दुःखत्तुदुःखितः।। अ० पु०- २६०/४७-४८

मन्त्र.'काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः मरुषस्परि। एवा नो दूर्वे प्र तनु सहस्रेण शतेन च'।। यजु०-१३/२०

४. इमा रुद्रायेति तिलैर्होमाच्च धनमाप्यते। दूर्वा होमेन चाऽऽज्येन सर्वव्याधिविवर्जितः।। अ० पु०-२६०/५६

मन्त्र. इमा रुद्रा तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरामहेमतीः। यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामेऽअस्मिन्नातुरम्।। यातेरुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी। शिवा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे।। यजु०- १६/४८-४६

५. नमस्ते रुद्र इत्येतत्सर्वोपद्रवनाशनम्। सर्वशान्तिकरं प्रोक्तं महापातकनाशनम्।। अ० पु०- २६०/५१-५२

६. शं नो मित्र इतीत्येतत्सदासर्वत्रशान्तिदम्। तदेव- २६०/६६

आशुः शिशानो-(ऋ०- १०/१०/१-१३) इस सूक्त में विद्युत की स्तुति की गयी है और इस सूक्त के पाठ एवं होम करने से वज्रपात, विद्युत्पात, अशनिपात और धिष्ण्यपात की शान्ति होती है। 'मुञ्चामि त्वा- (ऋ० १०/१६१/१-५) इस सूक्त के पाठ करने से रोगों का नाश, दीर्घायु होती है एवं महामारी आदि व्याधियों का नाश होता है। यत इन्द्र भयामहे- (ऋ० - ८/६१/१३-१८) इन ऋचाओं के पाठ करने से दुष्ट, पापी एवं हिंसक पुरुषों आदि का भय दूर होता है तथा सर्व विघ्नकारी शत्रुओं का नाश एवं अपनी रक्षा होती है।[1]

'इन्द्रेण दण्डम' इत्यादि मन्त्र सभी बाधाओं का नाशक, 'इमा देवी'--' इत्यादि मन्त्र सभी प्रकार की शान्ति करने वाला और 'यमस्य लोकात्--' इत्यादि मन्त्र दुःस्वप्न को शान्त करने वाले हैं। इन मन्त्रों का पाठ एवं हवन करने से उपर्योक्त वर्णित कार्य सिद्ध होते हैं।[2]

१. समस्त दुखों की निवृत्ति, समस्त विद्याओं का प्रकाश होने, व्रिद्या आदि धनों की वृद्धि होने, समस्त सुखों की प्राप्ति, दीर्घायु एवं शान्ति प्राप्ति के लिए और समस्त उत्पातों के शमन के लिए 'आ नो भद्राः' (ऋ० १/८६/१-१०), 'स्वस्ति न इन्द्रो' - (ऋ० - ०१/८६/६-१०) और द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ळं शान्ति --' (यजु० - ३६/१७) इन शान्ति दायक मन्त्रों का पाठ करने से दीर्घायु एवं समस्त उत्पातों की शान्ति होती है।[3]

१. शान्ति सूक्त

आनोभद्राःक्रतवोयन्तुविश्वतोदब्धासो ऽपरीतास ऽउद्भिदः। देवानोयथासदमिद्वृधे ऽअसन्नप्रायुवोरक्षितारोदिवेदिवे।। देवानाम्भद्रासुमतिर्ऋजूयतान्देवानाथं राति रभिनोनिवर्तताम्। देवाना ७ संख्यमुपसेदिमाव्वयन्देवान ऽआयुःप्रतिरन्तुजीवसे।। तान्पूर्वयानिविदाहूमहेव्वंभगम्मित्रम दितिन्दक्षमस्त्रिधम्। अर्य्यमणंव्वरुण ७ सोममश्विनासरस्वतीनःसुभगामयस्करत्।। तन्नोव्वातोमयो भूव्वातु भेषजन्तन्नमातापृथिवीतत्पिताद्यौः। तद्ग्रवाणः सोमसुतोमयो भवस्तदश्विनाशृण तन्धिष्ण्यायुवम्।। तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसेहूमहेव्वयम्। पूषानोयथाव्वेदसाम सद्वृधेरक्षितापायुरदब्धः स्वस्तये।। स्वस्तिन ऽइन्द्रोवृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषाव्विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो ऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।। पृषदश्वामरुतः पृश्निमातरः शुभंय्यावानोविदथेजग्गमयः। अग्निजिह्मनवः सूरचक्षसोविश्वेनोदेवा ऽअवसाजमन्निह।। भद्रकर्ड्कर्णेभिः शृणुयामदेवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्य्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा ७ सरस्तनूभिव्वर्यशेमहि देवहितंय्यदायुः।। शतमिन्नु शरदो ऽअन्दिवायत्रा नश्चक्राजरसन्तनूनाम्। पूजासोयत्र पितरो भवन्तिमानोमद्धचारीरिषुतार्युगन्तोः।। अदितिद्यौरदितिरन्तरिक्षम दितिर्म्मातासपितांसपुत्रः। विश्वेदेवा ऽअदितिः पञ्चजना ऽअदितिजर्जातम दितिर्ज्जनित्वम्।। द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ७ शान्तिः पृथिवी शान्रिापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्व्व ७ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः समाशान्तिरेधि।। यतो यतः समीहसेततोनी ऽअभयङ्कुरु। शन्नः कुरुप्रजाभ्योभयन्नः पशुभ्यः।। ऋ०- १/८६/१-१०, यजु०- ३६/१७

---

१. द्रष्टव्य - धर्मशास्त्र का इतिहास - पृ० - ३७६

२. इन्द्रेण दण्डमित्येतत्सर्वबाधाविनाशनम्। इमा देवीति मन्त्रश्च सर्व शान्ति करः परः। यमस्य लोकादित्येतददुःस्वप्नशमनं परम्। अ० पु० - २६२/११-१२

३. 'आ नो भद्रा' इत्यनेन दीर्घमायुरवाप्नुयात्। तदेव - २५६/२२

२. विद्युत, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, अन्तरिक्ष, औषधि, सूर्य, चन्द्रमा, दिशायें, पर्वत, समुद्र, मरुत, मेघ, दूध देने वाली गौयें, पितर, बहुमूल्य पदार्थ, नौका और सरस्वती अर्थात् विद्या आदि में उत्पन्न विकारों को शमन करने वाला यह शान्ति सूक्त है। **'शं न इन्द्राग्नि---'** (ऋ० ७/३५/१-१५) इस सूक्त का पाठ एवं इसकी ऋचाओं द्वारा होम करने से समस्त प्रकार के विकारों का शमन होता है।

२. शान्ति सूक्त-

शन्न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्न इन्द्रावरुणा रातहव्या।
शमिन्द्रसोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ।।१।।
शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु।।२।।
शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु।।३।।
शं नो अग्नि ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्।
शं नः सु.तां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः।।४।।
शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु।
शं न औषधीर्वनिनो भवन्तु शन्नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः।।५।।
शं न इन्द्रो वसुभिर्देवा अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु।।६।।
शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः।।७।।
शं नः सूर्य उरूचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः।।८।।
शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः।।९।।
शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः।।१०।।
शं नो देवा विश्व देवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः।।११।।
शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः।
शं नः ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु।। १२।।
शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शं नो अपांनपात्पेरूरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः।।१३।।
आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्तेदं ब्रह्म क्रियामाणं नवीयः।
शृण्वन्तु नो दिव्याः पार्थिवासो गोजात उत ये यज्ञियासः।।१४।।
ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।१५।। ऋग्वेद- ७/३५/१-१५

३. यजुर्वेद के अनुसार-

बकरे, भेड़ें, घोड़े, हाथी, बैल, मनुष्य, राजा, बालक, स्त्री, गाँव, नगर तथा देश के ऊपर विपत्ति आने पर अथवा महामारी तथा शत्रु का भय उत्पन्न होने पर 'रूद्र मन्त्रों ('नमस्ते रुद्र---------') से घी तथा करवीर की आहुतियाँ देने एवं रुद्राभिषेक करने से पूर्णतः शान्ति प्राप्त होती है। यह रूद्र मन्त्र सर्वत्र शान्ति प्रदान करने वाले हैं।'[1]

३. उत्पात शमन रुद्रसूक्त

नमस्तेरुद्रमन्न्यव ऽतोत ऽइषवेनमः बाहुग्भ्यामुततेनमः। यातेरुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी।।
तयानरतन्नवा शान्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि। यामिषुङ्गिरिशन्तहस्तेविभर्ष्यर्यस्तवे।।
शिवाङ्गिरित्रुतङ्कुरुमाहि ४ सीः पुरुषञ्जगत्। शिवेनव्वचसात्त्वा गिरिशाच्छाव्वदामसि।।
यथानः सर्वमिज्जगदयक्षाम ४ सुमना ऽअसत्। अद्ध्यवोचदधिवक्ताप्रथमोदैव्योभिषक्।।
अहींश्च्चसर्वाञ्जवाञ्जम्भयन्त्सर्व्वांश्चयातुधान्योधराचीःपरासुव।
असौयस्ताम्म्रो ऽअरुण ऽउतबब्भ्रुः सुमङ्गलः।
येचैन ४ रुद्रा ऽअभितोदिक्षुश्रिताः सहस्रशोवैषाछं हेड ऽईमहे।। असौयोवसर्प्पतिनीलग्ग्रीवोविलोहितः।
उतैनङ्गोपा ऽअदृश्चन्नदृश्रन्नुदहार्य्यः सदृष्टोमृडयातिनः।।
नमोस्तुनीलग्ग्रीवासहस्रहस्ताक्षायसहस्राक्षायमीढुषे।
अथोये ऽअस्यसत्त्वानो ऽहन्तेब्भ्योकरन्नमः। प्रमुञ्चतेहस्त ऽइषवः पराताभगवोवप।।
विज्यन्धनुः कपर्द्दिनो विशल्योबाणवाँ ऽउत। अनेशन्नस्ययाऽइषव ऽआभुरस्यनिषङ्गधिः।।
यातेहेतिर्म्मीढुष्टमहस्तेबुभूवतेधनुः तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मयापरिब्भुज।।
परितेधन्वनोहेतिरस्मान्वृणक्तुविश्वतः। अथोय ऽइषुधिस्तवारे ऽअस्मन्निधेहितम्।।
अवतत्त्यधनुष्ट्व ळं सहस्राक्षशतेषुधे। निशीर्य्यशल्यानामुखाशिवोनः सुमना भव।।
नमस्त ऽआयुधायानातताय धृष्णवे। उभाब्भ्यामुततेनमोवाहुब्भ्यान्तवधन्वने।।
मानोमहान्तसुतमानो ऽअर्ब्भकम्मान ऽउक्षन्तमुतमान ऽउक्षितम्।
मानोवधीः पितरम्मोतमातरम्मानः प्रियास्तन्वोरुद्द्ररीरिषः।।
मानस्तोकेतनयेमान ऽआयुषिमानोगोषुमोनो ऽअश्वेषुरीरिषः
मानोव्वीरान्नूरुद्रभामिनोवधीर्हविष्मन्तः सदामित्त्वाहवामहे।। यजु० १६/१-१६

---

१. रुद्राणां च तथा जप्यं सर्वाबाधाविनिषूदनम्। सर्वकर्मकरो होमस्तथा सर्वत्र शान्तिदः।।
अजाविकानामश्वानां कुञ्जराणां तथा गवाम्। मनुष्याणां नरेन्द्राणां बालानां योषितामपि।।
ग्रामाणां नगराणां च देशानामपि भार्गव। उपद्रुतानां धर्मज्ञ व्याधितानां तैथव च।।
मरके समनुप्राप्ते रिपुजे च तथा भये। रुद्रहोमः परा शान्तिः पायसेन घृतेन च।।
अ० पु०- २६०/२४-२८

४. उत्पात शमन श्री सूक्त- श्री सूक्त के मन्त्रों का पाठ एवं कमल, बेल, घी, अथवा तिल से होम करने से दरिद्रता का नाश, लक्ष्मी की प्राप्ति एवं त्रिविध उत्पातों का शमन होता है।

१. हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्। जन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह।।
तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्।।
अश्वपूर्वांरथमध्यां हस्तिनाद प्रबोधिनीम्। श्रियं देवीमुपहये श्रीर्मा देवीर्जुषताम्।।
कां सोस्मितां हिरण्यप्रकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तपयन्तीम्। पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्ये श्रियम्।।
चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्ठामुदाराम्।
तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपद्येऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे।।
आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः।।
उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह। प्रादुर्भुतोऽस्मिराष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे।।
क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद में गृहात्।।
गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीगं सर्वभूतानां तामिहोपहये श्रियम्।।
मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि। पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः।।
कर्दमेन प्रजाभूता मयि संभव कर्दम्। श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्।।
आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे। नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले।
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम्।। चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह।
आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्।। सूर्यां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह।
तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।। यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान विन्देयं पुरुषानूहम।
यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्य मन्वहवम्।। श्रियः पञ्चदशर्चं च श्री कामः सततं जपेत्।।'

२. रथे तिष्ठन् नयति वाजिनः पुरो यत्र-यत्र कामयते सुषारथिः।
अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः।।[२]

३. अक्षराजाय कितवं कृतायादिनवदर्शं त्रेतायै कल्पिनं द्वापरायाधिकल्पिन मास्कन्दाय सभास्थाणुं मृत्युवे गोठयच्छमन्तकाय गोघातं क्षुधे यो गां विकृन्तन्तं भिक्षमानऽउपतिष्ठति दुष्कृताय चरकाचार्यं पाप्मने सैलगम्।। [३]

४. वाजः पुरस्तादुत मध्यतो नो वाजो देवान् हविषा वर्धयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं चकार सर्वाऽअशा वाजपतिर्भवेयम।। [४]

५. चतस्रश्च मेष्टौ च मेष्टौ च मे द्वादश में द्वादश च मे षोडश च मे षोडश च में विंशं शतिश्च मे विंशं शतिश्च मे चतुर्विंशं शतिश्च मे चतुर्विंशं शतिश्च मेष्टाविंशं शतिश्मेष्टाविंशं शतिश्च मे द्वात्रिंशं शच्च मे द्वात्रिंशं शच्च मे चत्वारिंशं शच्च मे चतुश्चत्वारिंशं शच्च मे चतुश्चत्वारिंशं शच्च मेष्टाचत्वारिंशं शच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।। [५]

'श्रावन्तीय-साम०' यह सामवेदीय श्री सूक्त, **'श्रियं धातर्मयि धेहि०'** यह अथर्ववेद का श्री सूक्त है।

---

१. श्री सूक्तं यो जपेद्रवत्या हुत्वा श्रीस्तस्य वै भवेत्। पद्मानि चाथ बिल्वानि हुत्वाऽज्यं वा तिलान् श्रियः।। शमयन्ति सर्व उत्पातानि नान्यश्चति संशय। अ० पु०- २६३/१-४ क. 'ऋग्वेद',
२. यजु० २९/४३, ३. यजु-३०/१८, ४. यजु-१८/३४, ५. यजु० १८/२५

५. उत्पात शमन अथर्ववेद शान्ति सूक्त-

पृथ्वी, द्युलोक एवं स्वर्ग में होने वाले विघ्नों के नाश एवं समस्त सुखों की प्राप्ति कराने वाला यह शान्ति सूक्त है। इस सूक्त के पाठ करने से देवों द्वारा उत्पन्न उत्पातों का शमन होता है।

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः।
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु।।
शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वतीसह धीतिरस्तु।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः।।
शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शमहिर्बुध्न्या शं समुद्रः।
शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा।।
आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्तामिदं ब्रह्म क्रियमाणं नवीयः।
शृण्वन्तु नो दिव्याः पार्थिर्ववासो गोजाता उत ये यज्ञियासः।।
ये देवानामृत्विजो यज्ञियासो मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः।
ते नो रासन्तामुरूगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।
तदस्तु मित्रावरुणा तदग्ने शं योरस्मभ्यमिदमस्तु शस्तम्।
अशीमहि गाधमुत प्रतिष्ठां नमो दिवे बृहते सादनाय।। अथर्ववेद- १६/१४/१-६

६. उत्पात शमन अथर्ववेद शान्ति सूक्त-

समस्त इन्द्रादि देवों, देवियों मरुतगण, लोकपालों, वसु आदि गणों, पर्वत, समुद्र क्षेत्रों के अधिपतियों, सूर्यादि ग्रहों से उत्पन्न विकारों को शान्त करने वाला एवं सभी प्रकार के विघ्नों को शान्त करने वाला यह शान्ति सूक्त है इसके पाठ एवं हवन करने से समस्त दोष दूर होते हैं और विघ्न-बाधाओं का शमन होता है।

ये अग्नयो अप्स्वऽन्तर्ये वृत्रे ये पुरुषे ये अश्मसु।
य आविवेशौषधीर्यो वनस्पतींस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्।।
यः सोमे अन्तर्यो गोष्वन्तर्य आविष्टो वयः सु यो मृगेषु।
य आविवेश द्विपदो यश्चतुष्पदस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्।।
य इन्द्रेण सरथं याति देवो वैश्वानर उत विश्वदाव्यः।
यं जोहवीमि पृतनासु सासहिं तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्।।
यो देवो विश्वाद् यमु काममाहुर्यं दातारं प्रतिगृह्णन्तमाहुः।
यो धीरः शक्रः परिभूरदाभ्यस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्।।
ये त्वा होतारं मनसाभि संविदुस्त्रयोदश भौवनाः पंच मानवाः।
वर्चोधसे यशसे सूनृतावते तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्।।

उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय वेधसे।
वैश्वानर ज्येष्ठेभ्यस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्।।
दिवं पृथिवीमन्वन्तरिक्षं ये विद्युतमनुसंचरन्ति।
ये दिक्ष्वोन्तर्ये वाते अन्तरस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्।।
हिरण्यपाणिं सवितारमिन्द्रं बृहस्पतिं वरुणं मित्रमग्निम्।
विश्वान् देवानङ्गिरसो हवामह इमं क्रव्यादं शमयन्त्वग्निम्।।
शान्तो अग्निः क्रव्याच्छान्तः पुरुषरेषणः।
अथो यो विश्वदाव्यस्तं क्रव्यादमशीशमम्।।
ये पर्वताः सोमपृष्ठा आप उत्तानशीवरीः।
वातः पर्जन्य आदग्निस्ते क्रव्यादमशीशमन।। अथर्ववेद-०३/२२/१-१०

७. उत्पात शमन अथर्ववेद शान्ति सूक्त-

सभी प्रकार के अनिष्टों, प्रा.तिक उत्पातों, देवताओं के कुपित होने पर उत्पन्न विकारों, सर्व विघ्न--बाधाओं, भयंकर विपत्तियों, भूकम्प, महामारी जैसी महाव्याधियों, भगवान् रूद्र के क्रुद्ध होने से उत्पन्न उत्पातों का शमन करने एवं सर्वत्र शान्ति प्रदान करने वाला यह शान्ति सूक्त है इसके पाठ करने से समस्त दोषों का निवारण एवं सर्वत्र शान्ति प्राप्त होती है।

शान्ता द्यौः शान्ता पृथिवी शान्तमिदमुर्व१न्तरिक्षम्।
शान्ता उदन्वतीरापः शान्ता नः सन्त्वोषधीः।।१।।
शान्तानि पूर्वरूपाणि शान्तं नो अस्तु कृताकृतम्।
शान्तं भूतं च भव्यं च सर्वमेव शमस्तु नः।।२।।
इयं या परमेष्ठिनी वाग् देवी ब्रह्मसंशिता।
ययैव ससृजे घोरं तयैव शान्तिरस्तु न।।३।।
इदं यत् परमेष्ठिनं मनो वां ब्रह्मसंशितम्।
येनैव ससृजे घोरं तेनैव शान्तिरस्तु नः।।४।।
इमानि यानि पंचेन्द्रियाणि मनः षष्ठानि मे हृदि ब्राह्मणा संशितानि।
यैरेव ससृजे घोरं तैरेव शान्तिरस्तु नः।।५।।
शं नो मित्रः शं वरुणः शं विष्णु शं प्रजापतिः।
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो भवत्वर्यमा।।६।।
शं नो मित्रः शं वरुणः शं विवस्वापंछमन्तकः।
उत्पाताः पार्थिवान्तरिक्षा शं नो दिविचारा ग्रहाः।
शे नो भूमिपेप्यमाना शमुल्का निर्हतं च यत्।

शं गवो लोहितक्षीराः शं भूमिरव तीर्यतीः।।८।।
नक्षत्रमुल्काभिहतं शमस्तु नः शंनोऽभिचाराः शमु सन्तु कृत्याः।
शंनो निखाता वल्गाः शमुल्कादेशोपसर्गाः शमुनो भवन्तु।।६।।
शं नो ग्रहाश्चान्द्रभसाः शमादित्यश्च राहुणा।
शं नो मृत्युर्धूमकेतुः शं रूद्रास्तिग्मतेजसः।। १०।।
शं रुद्राः शं वसवः शमादित्याः शमग्नयः।
शं नो महर्षयो देवाः शं देवा शं बृहस्पतिः।।११।।
ब्रह्म प्रजापतिर्धाता लोका वेदाः सप्तऋषयोऽग्नयः।
तैर्मे कृतं स्वस्त्ययनमिन्द्रो मे शर्म यच्छतु ब्रह्मा मे शर्म यच्छ तु।।
विश्वे मे देवाः शर्म यच्छन्तु सर्वे मे देवाः शर्म यच्छन्तु।।१२।।
यानि कानि चिच्छान्तानि लोके सप्तऋषयो विदुः।
सर्वाणि शं भवन्तु मे शं मे अस्त्वभयं मे अस्तु।।१३।।
पृथिवी शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिर्द्यौः शान्तिरापः शान्रिोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः
शान्तिर्विश्वे मे देवाः शान्ति सर्वे मे देवाः शान्तिः शान्तिः शान्तिभिः।
ताभिः शान्तिभिः सर्वशान्तिभिः शमयामोऽहं यदिह घोरं यदिह क्रूरं
यदिह पापं तच्छान्तं तच्छिवं सर्वमेव शमस्तु नः।।१४।। अथर्ववेद- १६/१०/१- १४

८. पाशुपत शान्ति विधान-

इस 'पाशुपत मन्त्र' की एक बार आवृत्ति करने से ही मनुष्य के विघ्नों का नाश कर सकता है। इस मन्त्र की सौ आवृत्ति और सौ बार पाठ करने पर सभी उत्पातों का शमन होता है। घृत और गुग्गुल के हवन से असाध्य कार्य भी सिद्ध हो जाता है।

नमो भगवते महापाशुपतायातुलबलवीर्यपराक्रमाय त्रिपञ्चनयनाय नानारूपाय नाना प्रहरणेद्यताय सर्वाङ्गरक्ताय भिन्नाञ्जनचयप्रख्यायश्मशानवेतालत्रियाय सर्वविघ्ननिकृन्तनरताय सर्वसिद्धिप्रदाय भक्तानुकम्पिनेऽसंख्यवकत्रभुजपादाय तस्मिन्सिद्धाय वेतालवित्रासिने शाकिनीक्षोभजनकाय व्याधिनिग्रहकारिणे (पापभञ्जनाय सूर्यसोमाग्निनेत्राय विष्णु कवचाय खड्गवज्रहस्ताय यमदण्डवरुणपाशायरुद्रशूलाय ज्वलज्जिहाय सर्वरागद्रावणाय ग्रहनिग्रहकारिणे) दुष्टनागक्षयकारिणे, कृष्णपिङ्गलाय फट्, क्रूराय फट् वज्रहस्तोय फट्, शक्तये फट्, दण्डाय फट्, (यमाय फट्, खड्गाय फट्, नैर्ऋताय फट्, वरुणाय फट्, वज्राय फट्, पाशाय फट्, ध्वजाय फट्, अङ्गकुशाय फट्, गदायै फट्, कुबेराय फट्, त्रिशूलाय फट्) मुद्गराय फट्, चक्राय फट्, पद्मा फट्, नागास्त्राय फट्, ईशानाय फट्, खेटकास्त्राय फट्, मुण्डाय फट्, मुण्डास्त्राय फट्, कङ्कालास्त्राय फट्, पिच्छिकस्त्राय फट्, क्षुरिकास्त्राय फट्, ब्रह्मास्त्राय फट्, शक्त्यस्त्राय फट्, गणास्त्राय फट्, सिद्धास्त्राय फट्, पिलिपिच्छास्त्राय फट्, गन्धर्वास्त्राय फट्, पूर्वास्त्राय फट्, दक्षिणास्त्राय फट्, वामास्त्राय फट्, पश्चिमास्त्राय

फट्, मन्त्रास्त्राय फट्, शाकिन्यस्त्राय फट्, योगिन्यस्त्राय फट्, दण्डास्त्राय फट्, नागास्त्राय फट्, पुरुषास्त्राय फट्, अघोरास्त्राय फट्, वामदेवास्त्राय फट्, सद्योजातास्त्राय फट्, हृदयास्त्राय फट्, (महास्त्राय फट्, गरुड़ास्त्राय फट्, राक्षसास्त्राय फट्, दानवास्त्राय फट्, क्षौ नरसिंहास्त्राय फट्, त्वष्ट्रस्त्राय फट्, सर्वास्त्राय फट्) लः फट्, नः फट्, (भः फट्, पः फट्, मः फट्, स्त्रा फट्, है फट्, भूः फट्, भुवः फट्, स्वः फट्, महः फट्, जनः फट्, तपः फट्, सत्यं फट्, सर्वलोक फट्, सर्वपाताल फट्, सर्वसत्त्व फट्, सर्वप्राणं फट्, सर्व नाड़ी फट्, सर्व कारण फट्, सर्वदेव फट्, ह्रीं फट्, श्रीं फट्, हूं फट्, स्तूं फट्, आं फट्, लां फट्, वैराग्याय फट्, मायास्त्राय फट्, कामास्त्राय फट्, क्षेत्रपालास्त्राय फट्, हूंकारास्त्राय फट्, भास्करास्त्राय फट्, चन्द्रास्त्राय फट्, विघ्नेश्वरास्त्राय फट्, गौः, गां फट्, ख्रौं ख्रौं फट्, ह्रौं ह्रौं भ्रामय भ्रामय फट्, संतापय संतापय फट्, छादयच्छादय फट्, उन्मूलयोन्मूलय फट्, त्रासय त्रासय फट्, संजीवय संजीवय फट्, विद्रावय विद्रावय फट्, सर्वदुरितं नाशय नाशय फट्।।[1]

अथर्ववेद के अनुसार महाशान्तियाँ -

अद्भुत महाशान्ति अमृता से लेकर अभय पर्य्यन्त महाशान्ति के निमित्त भेद से तीस प्रकार के कर्म हैं। जो विभिन्न कार्यों की सिद्धि करने के लिए यह महा शान्तियाँ कही जाती हैं। तीस प्रकार की महाशान्तियाँ निम्नलिखित हैं -

१. **अमृत शान्ति**- दिव्य, आन्तरिक्ष और भौम उत्पातों की शान्ति के लिए **अमृत महाशान्ति,**

२. गतायु के पुनर्जीवन प्राप्ति के लिए **वैश्वदेवी शान्ति,**

३. **अग्निभय**- निवृत्ति हेतु और सब प्रकार की कामना प्राप्ति के लिए **आग्नेयी महाशान्ति,**

४. नक्षत्र और ग्रह से भयार्त्त रोगी के रोगमुक्त हेतु **भार्गवी महाशान्ति,**

५. ब्रह्मवर्चस चाहने वाले के वस्त्र शयन और अग्नि ज्वलन के लिए **ब्राह्मी महाशान्ति,**

६. राज्य श्री ब्रह्मवर्चस चाहने वाले के लिए **बार्हस्पत्य महाशान्ति,**

७. प्रजा पशु और अन्नलाभ और प्रजाक्षय निवारण के लिए **प्राजापत्य महाशान्ति,**

८. शुद्धि चाहने वाले के लिए **सावित्री महाशान्ति,**

९. छन्द और ब्रह्मवर्चस चाहनेवाले के लिए **गायत्री महाशान्ति,**

१०. सम्पत्ति चाहले वाले और अभिचारक से अभिचर्य्यमाण व्यक्ति के **आंगिरसी महाशान्ति,**

---

१. सकृतावर्तनादेव सर्वविघ्नान्विनाशयेत्। शतावर्तेन चोत्पातान्रणादौ विजयो भवेत्।
घृतगुग्गुलुहोमाच्च असाध्यानपि साधयेत्। पठनात्सर्वशान्तिः स्याद्वाश पाशुपतस्य च ।।
अ० पु०- ३२२ अध्याय, २,३

११. विजय, बल, पुष्टि कामी और परचक्रोच्छेदन कामी के लिए ऐन्द्रि महाशान्ति,
१२. अद्भुत विकार निवारण करने वाले और राज्य कामना वाले के लिए माहेन्द्रि महाशान्ति,
१३. धन कामी और धन क्षय निवारण की कामना वाले को कौवेरी महाशान्ति,
१४. विद्या, तेज और धनायुष कमी के लिए आदित्या महाशान्ति
१५. अन्न कामी के लिए वैष्णवी महाशान्ति,
१६. भूतिकाम और वास्तुसंस्कार कर्म के लिए वास्तोष्पत्या महाशान्ति।
१७. रोगार्त्त और आपद् ग्रस्त के लिए रौद्री महाशान्ति,
१८. विजय कामना वाले के लिए अपराजिता महाशान्ति,
१९. यम भय के लिए याम्या महाशान्ति,
२०. प्रसभव के लिए वारुणी महाशान्ति,
२१. वातभय के लिए वायवी महाशान्ति,
२२. कुल-क्षय निवारण के लिए सन्तति महाशान्ति,
२३. वस्त्रक्षय निवारण के लिए त्वाष्ट्री महाशान्ति,
२४. बालक की व्याधि निवारण के लिए कौमारी महाशान्ति,
२५. निर्ऋति ग्रस्त के लिए नैर्ऋति महाशान्ति,
२६. बल चाहने वाले के लिए मारुद्गणी महाशान्ति,
२७. अश्व, क्षय, निवारण के लिए नैर्ऋति महाशान्ति,
२८. बल चाहने के लिए मारुद्गणी महा शान्ति,
२९. अश्व क्षय, निवारण के लिए गान्धर्वी महाशान्ति,
३०. गजक्षय निवारण के लिए ऐरावती महाशान्ति,
३१. भूमि चाहने वाले के लिए पार्थिवी महाशान्ति और भयार्त्त के लिए भया नामक महाशान्ति करनी चाहिए। उपर्युक्त वर्णित महाशान्तियों का विस्तार पूर्वक वर्णन अथर्ववेद में आया है।[1]

अभयाशान्ति- विजयाभिलाषी तथा ऐश्वर्यकामी महान् भय उपस्थित होने पर अभया शान्ति करानी चाहिए।[2]

सौम्या शान्ति- राजयक्षमा रोग से ग्रस्त, घाव से दुर्बल तथा यज्ञकी कामनाओं के लिऐ सौम्यशान्ति का विधान कहा है।[3]

---

१. द्रष्टव्य- अर्थववेद संहिता - हिन्दुत्व - पृ० ५५

२- विजिगीषुः परानेवमभियुक्तस्था पैरः। तथाभिचारशंकायां शत्रणामभिनाशने।।
भये महति सम्प्राप्ते अभया शान्तिरिष्यते। म० पु०- २२८/४-५

३- राजयक्ष्माभिभूतस्य क्षतक्षीणेस्य चाप्यथ।
सौम्य प्रशस्यते शान्तिर्यज्ञकामस्य।। तदैव---- २२८/५-६

२- शत्रुओंद्वारा आक्रान्त, अभिचारिक कर्मों की, शंक से युक्त, महान् भय उपस्थित होन पर (अभया शान्ति) करानी चाहिये। रोगों की निवृत्ति के लिए, घाव से दुर्वल तथा यज्ञकी कामनाओं वाले के लिए सौम्या शान्ति का विधान है।

३- भूमि सम्बन्धि उत्पातों के शमन के लिए राजा को वैष्णवी शान्ति करानी चाहिये। पशुओं और मनुष्यों का भीषण संहार उपस्थित होने पर तथा भूत-पिशाचादि के दिखायी देने पर रौद्री शान्ति करानी चाहिये।[1]

४- वेदों का विनाश उपस्थित होने पर, लोगों के नास्तिक हो जानेपर तथा अपूज्य लोगों की पूजा होने पर ब्रह्मी शान्ति करानी चाहिये। शुत्रसेना से उत्पन्न भय,राष्ट्र में भेद तथा शत्रु वध के समय रौद्रीशान्ति करानी चाहिये। वायु विकार होने से वायवी शान्ति करानी चाहिये। जल के विकार के समय वारुणी शान्ति करानी चाहिये। अभिशाप का भय उपस्थ्ति होने पर (भार्गवी) शान्ति करानी चाहिये। स्त्री प्रसव विकार के समय प्रजापत्या नामक शान्ति करानी चाहिए। गृह सामग्रियों में विकार होने पर त्वाष्ट्री (विश्वकर्मासम्बन्धि) शान्ति करानी चाहिए।[2]

५- बालकों की बाधा दूर करने के लिये (कौमारी) शान्ति करानी चाहिए । अग्नि विकार उपस्थित होने पर, आज्ञा भंग होने पर तथा सेवकादि के विनाश होने पर(आग्नेयी शान्ति) करानी चाहिये, अश्व विकार, रोग आदि होने पर गन्धर्वी शान्ति करानी चाहिये।[3]

१- भूकम्पे च समुत्पन्ने प्राप्ते वान्नक्षये तथा। प्रमत्तेषुच चौरेषु वैष्णवी शान्तिरिष्यते।
अतिवृष्टयामनावृष्टयां शलभानां भयेषु च। प्रमत्तेषु च चौरेषु वैष्णवी शान्तिरत्तथेष्यते।।
म० पु०- -२२८/६-७

२- पशूनां मारणे प्राप्ते नराणामपि दारुणे। भूतेषु दृश्यमानेषु रौद्री शान्ति तथेष्यते।।
वेदनाशे समुत्पन्ने जने जाते नास्तिके। अपूज्य-पूजनं जाते ब्राह्मी शान्ति स्तथेष्यते।।
भविष्यभिषेके च परचक्रभयेऽपि च। स्वराष्ट्रभेदेऽरिवधे रौद्री शान्तिः प्रशस्यते।।
ष्यहातिरिक्तते पवने भक्ष्ये सर्व-विगर्हिते। वैकृते वातजे व्याधौ वायवी शान्तिरिष्यते।।
अनावृष्टिभये जाते प्राप्ते विकृति-वषणे। जलाशय विकारेषु वारुणी शान्तिरिष्यते।।
तदेव ---२२८/०८-१२

३. अभिशाप-भये प्राप्ते भार्गवी च तथैव च। जाते प्रसव-वैकृत्ये प्राजापत्या महाभुज।।
उपस्कराणां वैकृत्ये त्वाष्ट्री-पार्थिवनन्दन। बालानां शान्तिकामस्य कौमारीच तथानृप।।
कुर्यात् छान्तिमधाग्निर्यी सम्प्राप्तं वह्निवैकृते। आज्ञाभङ्गेतु सञ्जाते तथा भृत्यादिसङ्क्षये।।
अश्वानां शान्ति कामस्यत द्विकारे समुत्थिते। अश्वानां कमयानस्य गान्धर्वी शान्तिरिष्यते।।
तदेव २२८/१३-१६

६- गज विकार के लिए अंगिरसी शान्ति करानी चाहिये। पिशाचादि का तथा अकालमृत्यु का भय उपस्थित होनेपर और दुःस्वप्न देखने पर नैऋती शान्ति करानी चाहिये।
७- मृत्यु भय होने पर याम्या शान्ति करानी चाहिये। धन का नाश होने पर (कौवेरी) शान्ति करानी, चाहिये। ऐश्वर्यकामी मनुष्य को वृक्षों तथा सम्पत्तियों का विनाश उपस्थित होने पर पार्थिवी शान्ति करानी चाहिये।[1]

सूर्य और नक्षत्र के योग में उत्पन्न विकारों की शान्ति-

१- दिन या रात्रि के पहले पहर में यदि सूर्य के हस्त, स्वाती, चित्रा, पुनर्वसु या अश्विनी नक्षत्र में होने पर वायव्य कोण में यदि अद्भुत उपद्रव दिखायी पड़े तो आग्नेयी शान्ति करानी चाहिये।
२- दिन या रात्री के दूसर पहर में सूर्य के पुष्य, भरणी, कृत्तिका, मघा और विशाखा नक्षत्र में जाने पर आग्नेय कोण या दक्षिण दिशा में यदि कोई उत्पात दिखायी दे तो आग्नेयी शान्ति करानी चाहिये।
३- दिन या रात्रि के तीसरे पहर में सूर्य के रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़, अनुराधा, और ज्येष्ठा नक्षत्र में सूर्य के जाने पर यदि ईशान, पूर्व या अग्निकोण में कोई उत्पात दिखायी दे तो ऐन्द्री शान्ति करानी चाहिये।
४- दिन या रात्री के चतुर्थ पहर में आश्लेषा, रेवती, आर्द्रा, उत्तराभाद्रपद, शतभिषा या मूल नक्षत्र में सूर्यके जाने पर पश्चिम दिशा में उत्पात दिखायी देनें पर राजा को वारुणी शान्ति करानी चाहिये।
५- यदि मध्याह्न में अर्थात् दो दिशाओं की सन्धि में उत्पात हो तो दोनों प्रकार की शान्ति करानी चाहिये। जैसे कवच शरीर की रक्षा करता है उसी प्रकार उत्पात के उपस्थित होने पर शान्ति कराने से, शान्ति उत्पातों से रक्षा करती है।[2]

---

१. गजानां शान्तिकामस्य तद्विकारे समुत्थिते। गजानां कामयानस्य शान्तिरङ्गिरसी भवेत।
पिशाचादि-भये जाते शान्तिर्वै नैर्ऋती स्मृता। अपमृत्यु-भये जाते दुःस्वप्नेच तथा स्थिते।।
याम्यान्तु कारये छान्तिं प्राप्ते तु नरके तथा। धननाशे समुत्पन्ने कौवेरी शान्तिरिष्यके।
वृक्षाणाञ्च तथार्थानां वैकृते समुपस्थिते। भूतिकामः तथा शान्तिं पार्थिवीं प्रतियोजयेत्।।
म० पु०- २२८/१७-२०

२. प्रथमे दिनयामे च रात्रौ वा मनुजोतम्। हस्ते स्वांतौ चचित्रायां मादित्ये चाश्विने तथा।।
अर्यम्णि सौम्य जातेषु वायव्यां त्वट्र भूतेषु च। द्वितीये दिनयामे तु रात्रौ च रविनन्दन।।
पुष्पाग्रे ये विशाखासु पिष्यासु भरणीषु च। उत्पातेषु तथा भाग्ये आग्नेयी तेषु कारयेत्।।
तृतीये दिनयामे च रात्रौ च रविनन्दन। रोहिण्यां वैष्णवे ब्राह्मे वासवे वैश्वेदेवते।।
ज्येष्ठायाञ्च तथा मैत्रे ये भवन्त्यद्भुताः क्वचित्। ऐन्द्री तेषु प्रयोक्तव्या शान्ति रविकुलोद्भवा।।
चतुर्थे दिनयामे रात्रौ वा रविनन्दन। सार्पे पौष्णे तथार्द्रायामहिर्बुध्न्ये च दारुणे।।
मूले वरुणदैत्ये ये भवन्ति अद्भुतास्तथा। वारुणां तेषु कर्तव्या महा शान्तिर्महीक्षिता।।
मित्रमण्डल-वेलासु ये भवन्त्यद्भुताः क्वचित्। तत्र शान्तिद्वयं कार्यं निमित्तेषुच नान्यथा।।
निर्भिमित्तकृता शान्ति निर्मित्तेनोपयुज्यते।। म० पु०- २२८/२४-२८

उत्पात शान्ति होम विधान-

उत्पात के लक्षणानुसार समिधा, घृत, चरू, चावल, तिल आदि सामग्री सहित देवालय या घर के ईशान या पूर्व में अग्नि कुण्ड का निर्माण एवं अग्नि स्थापन विधिपूर्वक करके घृत से आज्य भाग संज्ञक तक के मन्त्रों से- १०८ आहुति, फिर **'यतइन्द्रमयामहे स्वस्तिदा'** और **'अघोर'** इन मन्त्र से, व्याहृतियों के मन्त्र से कोटि, लस वा सहस्र होम २१, १५, ७, ५ अथवा ३ दिन एवं रात्रि तक होम, गणेश, क्षेत्रपाल, सूर्य, दुर्गा, चौंसठ योगिनी, अंगदेवता के मन्त्रों का जाप एवं होम करने के उपरान्त ब्राह्मण भोजन दान आदि करने से उत्पात की शान्ति होती है।[1]

संग्राम में, संकट या कठिनाइयाँ आ पड़ने पर, चोर, व्याघ्र आदि से कष्ट पाने के समय, जंगल में प्राण संकट उपस्थित होने पर, विष, अग्नि, जल से भय होने पर, राजा, समुद्र, ग्रह, रोगादि से पीड़ित होने पर, या उपद्रव उत्पन्न होने पर नृसिंह भगवान् का पूजन, स्मरण, स्तुति आदि करने से सब प्रकार के उपद्रव भी नष्ट हो जाते हैं।[2]

धनुर्मुख नाम यज्ञ-

यह यज्ञ सभी अमंगलों का नाशक धनुर्मुख नामक शिव का यज्ञ बहुत अन्न और बहुत दक्षिणा वाला होता है। यह दुःस्वप्नों का नाशक और शत्रुभय को मिटाने वाला, आध्यात्मिक, आधिदैविक तथा उत्कर, आधि भौतिक इन तीन प्रकार के उत्पातों का विनाश करने वाला और ऐश्वर्य की वृद्धि करने वाला होता है।[3]

---

१. अनैश्वयं चान्नहानिरूत्पातभयमादिशेत्। देवालये स्वगेहे वा ईशान्यां पूर्वतोऽपि वा।।
कुंडं लक्षणसयुक्तं कल्पयेन्मेबलायुतम्। गुह्योक्तविधिना तत्र स्थापयित्वा हुताशनम्।।
जुहुयादाज्यभागांतं पृथगष्टोत्तरं शतम्। यत इंद्रं भयामहे स्वस्दिाद्योरमंत्रकेः।।
सामिदाज्यं चरूव्रीहिर्तिलैर्व्याहृतिभिस्तथा। कोटिहोमं तदर्थं च लक्षहोममथाऽपि वा।।
एक विंशतिरात्रं वा पक्षं पक्षार्द्धमेव वा। पंच रात्रं त्रिरात्रं वा होम कर्म समाचरेत्।।
..............................। दक्षिणां च ततो दद्यादाचार्याय कुंडबिने।।
गणेशक्षेत्रपालार्कदुर्गाक्षोण्यंगदेवताः। तासां प्रीत्यै जपः कार्यः शेषु पूर्वदाचरेत्।।
नं० सं०- ३७/११-१७

२. मुच्यते चाशुभैर्दुःखैर्जन्मकोटिसमुद्रवेः। संग्रामे संकटे दुर्गे चोरव्याघ्रादि पीड़िते।।
कान्तारे प्राणसंदेहे विषवह्निजलेषु च। राजादिभ्यः समुद्रेभ्यो ग्रहरोगादिपीड़िते।।
स्मृत्वा तं पुरुषः सर्वे राजग्रामैविमुच्यते। सूर्योदये यथा नाशं तमोऽभ्येति महत्तरम्।।
तथा संदर्शने तस्य विनाशं यान्त्युपद्रवाः। गुटिकाञ्जनपातालापादुके च रसायनम्।।
ब्रह्मपुराणम्- अ०- ५०८/६५-६८

३. भयं त्यज महाभाग भयं किं ते मयि स्थिते। कुरु यागं महेशस्य सर्वारिष्टविनाशनम्।।
यागो धनुमखो नाम बहूवन्नो बहुदक्षिणः। दुःस्वप्नानां नाशकरः शत्रुभीतिविनाशकः।।
अध्यत्मिकमाधिदैवमाधिभौतिकमुत्कटम्। एषां त्रिविधोत्पातानां खण्डनो भूतिवर्धनः।।

ब्रह्मवैवर्त पुराण - ६४/२-४

लक्षकोटि होम- इस होम से सर्व प्रकार के उत्पातों का शमन होता है। त्रिविध उत्पातों की शान्ति, युद्ध में विजय प्राप्ति के लिए, सभी प्रकार के संकटों की शान्ति के लिए (लक्षकोटिहोम) का विधान बताया गया है। दस सहस्र होम करने से अल्प सिद्धि, लक्ष होम करने सभी विपत्तियों का नाश और कोटि होम करने से सभी पीड़ाओं, सभी व्याधियों का नाश और सभी उत्पातों का शमन होता है। संसार में कोई भी ऐसा उत्पात नहीं है जो इस होम से शान्त न हो और न ही ऐसा कोई कार्य है जो इस से सिद्ध न हो। कोटि होम में यथा शक्ति ब्राह्मणों का वरण करना चाहिए।[1]

इस में गायत्री, ग्रह, कूष्माण्ड, जातवेदस, ऐन्द्र, वारुण, वायव्य, याम्य, आग्नेय, वैष्णव, शाक्त और सौर मन्त्रों से पूजन एवं दश सहस्र होम करने से अल्प सिद्धि अर्थात् कुछ लाभ होता है और लक्ष होम करने से पूर्ण लाभ होता है अर्थात् हर प्रकार के संकट व्याधि एवं उत्पात का शमन होता है। होम में प्रयुक्त होने वाली सामग्री, तिल, जो, धान, दूध, घी, कुश, चावल, कमल, खस, बिल्व, आम्रपत्र और शुष्क फल आदि हवन में प्रयुक्त होने वाली जड़ी बुटियाँ होती हैं। इस प्रकार होम करने और ब्राह्मणों को जौ, फल, दूध दक्षिणा एवं भोजन करवाने से शान्ति प्राप्त होती है।[2]

लक्षकोटि होम विधान-

१- राजा को ग्रहयज्ञ सर्वदा लक्ष होम के साथ करना चाहिये सर्वप्रथम गुरू तथा पुरोहितों को साथ ले भूमि की परीक्षा करें। तदन्तर वहाँ एक हाथ गहरा चारों ओर से समान सुन्दर कुण्ड खने, लक्षहोम के लिए इस से द्विगुणित तथा कोटिहोम के लिए इस से चतुर्गुणित परिणाम में कुण्ड खने। इस गृह यज्ञ के लिए दो पुरोहित होने चाहिये अथवा वेदपारगामी आठ पुरोहित होने चाहिये। सब को यज्ञ की समाप्ति तक फलाहारी रहना चाहिये। यजमान, राजा, प्रजा आदि वेदी को विविध प्रकार से सजा कर वेदी में मण्डल निर्माण करें। फिर अग्नि प्रज्चलित करें।[3]

---

१. अयुतेनाल्पसिद्धिः स्याल्लक्षहोमोऽखिलातिर्नुत्। सर्वपीड़ादिवि नाशाय कोटि होमोऽखिलार्थदः।।
अ० पु०- १४६/१२

२. सर्वोत्पातसमुत्पत्तौ पञ्चभिर्दशभिर्द्विजैः। नास्ति लोके स उत्पातो यो ह्यनेन न शाम्यति।।
मङ्गल्यं परमं नास्ति यदस्मादतिरिच्यते। कोटिहोमं तु यो राजा कारयेत् पूर्ववद्द्विजैः।।
तदेव- १४६/५-६

क. कोटिहोमं तु वारयेद्ब्राह्मणान्विंशतिस्तथा। शतं चाथ सहस्रं वा यथेष्टां भूतिमाप्नुयात्।। तदेव- १४६/८-६

ख. एन्द्रवारुणवायव्ययाम्याग्नेयैश्चवैष्णवैः। शाक्तेथैः शाम्भवैः सौरैमन्त्रैर्होमार्चनात्ततः।।
दक्षिणा लक्षहोमान्ते गावो वस्त्रो काञ्चनम्। ब्राह्मणो भोजन दत्तिम् यज्ञपूर्णं स्मृतः।।
तदेव- १४६/११-०४

३. ग्रहयज्ञः सदा कार्यो लक्षहोमसमन्वितः। नदीनां सङ्गमे चैव सुराणामग्रतः तथा।।
सुसमे भूमिभागे च देवज्ञाधिष्ठितो नृपः। गुरुणा चैव ऋत्विग्भिः सार्द्धं भूमिं परिक्षयेत्।।
खनेत् कुण्डञ्च तत्रैव सुसमं हस्तमात्रकम्। द्विगुणं लक्ष होमे तु कोटि होमे-चतुर्गुणम्।।
युग्मायु ऋत्विजः प्रोक्ता अष्टौ वै वेदपारगाः। कन्दमूलफलाहारा दधिक्षीराशिनोऽपि वा।।
मत्स्य पु०- २३६/४-७

२- फिर गायत्री मन्त्र द्वारा दस सहस्र, "मानस्तोकेन०" इस मन्त्र द्वारा छः सहस्र, नवग्रहों के मन्त्रों से तीस सहस्र, विष्णु देवता के मन्त्रों से चार सहस्र, कुष्माण्ड द्वारा पांच सहस्र, पुष्प आदि सोलह तथा बेर के फलों द्वारा दस सहस्र आहुति अग्नि में देनी चाहिये। इस प्रकार लक्ष्मीके मन्त्रों से चौदह सहस्र आहुतियाँ करनी चाहिये और शेष पाँच सहस्र आहुतियाँ इन्द्र देवताके मन्त्रों से देनी चाहिये इस प्रकार एक लाख आहुतियाँ देने के उपरान्त सोलह कलशों के जल द्वारा पुण्य स्नान कर के सुवर्ण आदि महादान करने से एवं वेदी की प्रदक्षिणा करने से उत्पातों की शान्ति होती है। इस प्रकारके अनुष्ठान करने से सभी प्रकारकी व्याधियाँ उपद्रव, उत्पात, मृत्यु एवं रोगादि का शमन हो जाता है।[1]

अघोरास्त्र मन्त्र- " ह्रीं स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर घोर घोरतरतनुरूप चट चट प्रचट प्रचट कह कह वम वम बन्ध बन्ध घातय घातय हुं फट्।"(५२ अक्षर मन्त्र)

अघोरास्त्र मन्त्र शान्ति विधान-

इस मन्त्र का एक लाख जप करके हवन करने एवं दशमाँश होम करने से त्रिविध उत्पातों का शमन हो जाता है। एक लाख जप-होम से दिव्य उत्पात का तथा पचास हज़ार का जाप होम करने से आकाशज उत्पात का विनाश होता है। घी की एक लाख इस मन्त्र की आहुति देने पर भूमिज उत्पात का निवारण होता है।

घृतमिश्रित गुग्गुल के होम से सम्पूर्ण उत्पात आदि का शमन होता है। दूर्वा, अक्षत तथा घी की आहुति दश सहस्र देने से ग्रह दोष का शमन होता है। दूर्वा घी और अक्षत के होम से विघ्न की शान्ति होती है। उल्कापात या भूकम्प हो तो तिल और घी से होम करने से शमन होता है। वृक्ष विकार, मनुष्य-पशु आदि पर महामारी आ जाने पर इस मन्त्र से तिलमिश्रित घी से अर्द्धलक्ष आहुति देने से उत्पात का शमन होता है। हाथी विकार के लिए दस हज़ार आहुतियाँ देने से उत्पात शान्त होता है। सब प्रकार के लघु विकारों के लिए दश सहस्र आहुतियाँ देने से विकार शान्त हो जाते हैं।[2]

---

१. गायत्र्यादशसाहस्रं मानस्तोकेन षड्गुणः। त्रिंशद्ग्रहादिमन्त्रैश्च चत्वारो विष्णुदैवतैः।।
कुष्माण्डैर्जुहुयातपञ्च कुसुमाद्यैस्तु षोडश। होतव्या दशसाहस्रं बादरै र्जातवेदसि।।
श्रियो मन्त्रेण होतव्याः सहस्राणि चतुर्दश। शेषाः पञ्चसहस्रास्तु होतव्याः इत्वन्द्रदेवतैः।।
हुत्वा शतसहस्रास्तु पुण्यस्तानं समाचरेत्। कुम्भैः षोडशसङ्ख्यैश्च सहिरण्यैः सुमङ्गलैः।।
स्नापयेद् यजमानन्तु ततः शान्तिर्भिविष्यति। एवं कृते ते यत्किञ्चिद् ग्रहपीड़ा समुद्रभवम्।।
तत्सर्वं नाशमायाति दत्त्वा वै दक्षिणां नृप। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन प्रधाना दक्षिणा स्मृता।।
हस्त्यश्व रथयानानि भूमिवस्त्रयुगानि च। अनडुद्गोशतं दद्याकृत्त्विजां चैव दक्षिणाम्।।
मत्स्य पु०- २३६/६-१५

२. अस्त्रशान्तिं प्रवक्ष्यामि सर्वोत्पातविनाशिनीम्। ग्रहरोगादिशमनी मारीशत्रुविमर्दनीम्।
.................................। विनायकोपताघ्नीमघोरास्त्रं जपेन्नः।।
लक्षं ग्रहादिनाशः स्यादुत्पातं तिलहोमतः। दिव्ये लक्षं तदर्धेन व्योमजोत्पातना शनम्।।
घृतेन लक्षपाते उत्पाते भूमिजे हितम्। घृत गुग्गुलहोमे च सर्वोत्पातदिमर्दनम्।।
दूर्वाक्षताज्यहोमेन व्याधयोऽथ घृतेन च। सहस्रेण तु दुःस्वप्ना विनश्यन्ति न संशयः।। अ० पु०-३२१/३-८

अघोर मन्त्र शान्ति विधान-

अघोरेभ्योघघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशशर्वेभ्योनमस्तेऽअस्तुरुद्ररूपेभ्यः।।

अघोरास्त्र तथा अघोर मन्त्र मन्त्रराज हैं। इन मन्त्रों के जप एवं शिव पूजन और होम करने से भौम, अन्तरिक्ष तथा दिव्य सभी उत्पातों का शमन होता है और शत्रु सेना का विमर्दन होता है।[1]

संकल्प करके कुम्भ में इन्द्र, रुद्रो देवता की पूजा करके, इन्द्र स्वस्विाचन कर के **"अघोरेभ्यो०"** इस मन्त्र से समिधा चरू चावल तिल आदि द्रव्य से १०८ आहुति देकर, व्याहृति सहित इस मन्त्र का लक्ष, सहस्र होम निमित्त के अनुसारेण सात रात्रि, पाँच रात्रि अथवा तीन रात्रि करके, सूर्य, गणेश, क्षेत्रपाल, दुर्गामन्त्र का जाप करके, पयासादि सहित बलि देने, ब्राह्मण भोजन करने से अथवा दुर्गासप्तशती का पाठ, रुद्र का जाप वा अभिषेक, पिपल की प्रदक्षिणा, शिव पूजा, गो ब्राह्मण की पूजा करने से दिव्यादि उत्पात शान्त होते हैं।[2]

मार्कण्डेय पुराण एवं दुर्गा सप्तशति के १२ अध्यायं में दुर्गा सप्तशति के पाठ करने एवं श्रवण करने से उपद्रव और दारुण ग्रहपीड़ा शान्त होने का उल्लेख मिलता है।[3] इससे स्पष्ट होता है कि दुर्गा माता के चण्डी जप एवं पाठ से शत्रुनाश, उपद्रवों का शमन, ग्रहों की दारुण पीड़ा का शमन और रोगों का निवारण होता है।

महामृत्युञ्जयमंत्र शान्ति विधान-

काक मैथुन के दर्शन पर, छिपकली के शरीर के ऊपर पड़ने पर, घर में कपोत (बाज़ पक्षी) प्रविष्ट करने पर, पिंगला (कोतरी) के बोलने में, मधु और वाल्मीकि पक्षी के घर में आने पर शान्ति इस प्रकार करवायें। देवालय या घर के ईशान कोण में या पूर्व में अग्निकुण्ड स्थापन कर के समिधा, घृत, तिलादिक अन्न से **"त्र्यंबकं यजामहे"** या महामृत्युंजयमंत्र से जाप एवं होम करें और काली गाय का दान करें, ब्रह्म भोजन करवायें। स्वस्तिक वाचन पूर्वक ब्राह्मण भोजन करने से उत्पात दोष शान्त होता है।[4] गणेश, क्षेत्रपाल, सूर्य, दुर्गा, चौसठयोगिनी, अंगदेवता के प्रति पूजा होम इनके मन्त्रों द्वारा करने से शान्ति प्राप्त होती है।[5]

---

१. अघोरास्त्रमघोरस्तु द्वाविषौ मन्त्रराजकौ। जपहोमार्चनाद्युद्धे शत्रुसैन्यं विमर्दयेत्।।
उत्तमाधमसिद्धीनामालयोऽखिलरोगनुत्। दिव्यान्तिरिक्ष भौमानामुत्पातानां विमर्दनः।। अ० पु०- ३२४/८,२

२. उपसर्गाः शमंयांतिग्रहपीड़ाश्चदारुणाः। दुःस्वप्नंचनृभिदृष्टसुस्वप्नमुपजायते।। मार्कण्डेय पु०- ८६/१६

३. संकल्पादि कृत्वा कुम्भेइन्द्ररूद्रोसंपूज्ययतइन्द्रस्वस्तिदाविशस्पतिः अघोरेभ्योथेतिमन्त्रैः समिदाज्य चरू ब्रीहितिलान्प्रति द्रव्यमष्टोत्तर शतंहुत्वा व्याहृतिभिः कोटि होमंलक्षहोममयुतहोमं तत्पादहोमंवातिलैर्वित्तानुसारेण निमित्तानुसारेण च सप्तरात्रंत्रिरात्रमेकरात्रं कृत्वासूर्यगणेशक्षेत्रपाल दुर्गामन्त्राणांजपांत्वापायसादिनाब्राह्मण भोजनं कार्यम् यद्वाचण्डीसप्तशतीजपः अथवा रुद्रैर्जयोऽभिषेको वा अश्वत्थ प्रदक्षिणाशिवपूजा गोविप्र-पूजादिवेतिनानोत्पातसमसन्यशान्तयः। धर्म सिन्धु-तृतीय परिच्छेद- पृ०- ३००

४. मुखांते सतिदाज्यान्नैर्होमश्चाष्टोत्तरं शतम्। प्रतिमंत्रं त्र्यंबकेन चाथ मृत्युंजयेन वा।।
व्याहृतिभिर्व्रीहितिलैर्जपाद्यंतं प्रकल्पयेत्। पूर्णाहुतिं च जुहुयात्कर्ता शुचिरलंकृतः।। न०सं०-३८/६-७

५. गणेश क्षे[illegible] जपं कार्यः शेषं पूर्ववदा चरेत्।। तदेव- ३६/१२

उत्पात शमन विधान

सोलह हाथ चौकोर, चार द्वारों से युक्त तोरण मध्य में चार हाथ प्रमाण का कुण्ड योनि एवं मखेला निर्माण करे। ईशान कोण में वेदी का निर्माण करें। कलशादि स्थापन एवं गणेशादि की वेदी स्थापन करके सर्वदेवमयी वेदिका में भगवान शंकर की पूजा सहित ग्रहों का पूजन करना चाहिए। अग्नि स्थापना उपरान्त पलाश की समिधा, घी, अन्न के द्वारा हवन करें अन्त में आठ सौ अलग-अलग अघोर मन्त्र के द्वारा पुनः ग्रह हवन को करना चाहिए। पुनः व्याह्यतियों के द्वारा तिल का हवन तथा पुनः घी का हवन करना चाहिए।

प्रत्येक द्वार पर जप करने वालों के द्वारा जो वेद में पारङ्गत हो उसके द्वारा चमक नमक द्वारा तथा पुरुष सूक्त द्वारा अङ्ग जापकों के साथ नौ आचार्यों द्वारा तथा ब्रह्मा के सहित हवन करना चाहिए। इस प्रकार कोटि, लक्ष, आदि उत्पात अनुसार होम करने एवं ब्राह्मण भोजन गौदान एवं आचार्यों को दक्षिणा देने से उत्पातों का शमन हो जाता है।[1]

विभिन्न उत्पातों की शान्ति-

देव मूर्तियों में विकार, ऋषि, पितर, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ग्रह, स्कन्द गणेश आदि से उत्पन्न विकारों को देख कर इस प्रकार शान्ति करनी चाहिए।

तीन दिन उपवारा करके शुद्धमन से चौथे दिन शिवालय में दीपक सहित सहस्र कलशों की मात्रा से शंकर जी का अभिषेक करना चाहिए एवं विधि पूर्वक पूजन करना चाहिए। उपरान्त ग्रह पूजन सहित कुण्ड में अग्नि स्थापन करके पलाश समिधा, घी, अन्न सहित शिवलिंग वेद मन्त्रों द्वारा एक सहस्र आठ अथवा एक सौ आठ तिल से हवन कर के ब्राह्मण भोजन दक्षिणादि दे कर शान्ति मन्त्रों द्वारा जल सिञ्चन करने से उत्पात जनित दोष शान्त होता है।[2]

---

१. हस्तैः षोडशभिः कार्य्यं चतुस्रं समन्ततः। मण्डपं याज्ञिकैर्वृक्षैरथवा वनदारुभिः।।
ईशान्यां वेदिका कार्या सार्द्धहस्तप्रमाणतः। उन्नता विस्तृता कार्या प्रागुदक्प्रवणा शुभा।।
सर्वदेवमयी त्वाद्या शिव पूजा पुरः सरम्। ग्रहास्तानर्चयेत्तत्र पूर्वोक्त विधिना ततः।।
पलाशसमिदाज्यान्नैर्मुखान्तेऽष्टशतं पृथक्। अघोरमन्त्रेण ततो ग्रहहोमं च कारयेत्।।
तिलहोमं व्याहृतिभिर्धृतोक्तं जुहुयात्ततः। चमकं नमकं सूक्त पुरुषोक्ताङ्गजापकैः।।
होमं नवभिराचार्यैः कार्यं तद् ब्राह्मणा सह। शिवविष्णोः कथालापैर्दिनशेषं नयेत्ततः।।
एवं यावत्कोरिमस्तावत्कार्यमतन्द्रिभिः। वशिष्ट सं० - ४५/१२-२८

२. दृष्टवा दैवविकारं तद्दिनत्रयमुपोषितः। पुरोहितः शुद्धमनाः शुद्धभावो जितेन्द्रियः।।
चतुर्थदिवसे गत्वा दीपैः सार्द्धं शिवालयम्। सहस्रकलशस्नानं कुर्यात्संकल्प पूर्वकम्।।
ग्रहशान्त्यामुक्तकुण्डे स्थापयेश्च हुताशनम्। पलाशसमिद्याज्यान्नैस्तल्लिंगैर्वेदमन्त्रकैः।।
अष्टोत्तरसहस्रं वा पृथगष्टोतरं शतम्। तिलहोमदिकं सर्वं शेषं पूर्ववदाचरेत्।।
वशिष्ठ ४५/३७-४१

अग्नि विकार, जल विकार, अस्त्र-शस्त्र विकार होने पर शंकर जी का रुद्राभिषेक करके अग्निकुण्ड में आठ सहस्र आहुति रुद्र मन्त्रों से अर्थात् रुद्राष्टाध्यायी में वर्णित मन्त्रों से आहुति दूध वाले वृक्षों की समिधा तथा पृथक्-२ सरसों से या तिल से व्याहृतियों के द्वारा होम करके ब्राह्मण भोजन करने पर उत्पात शान्त होता है।[1]

वृक्ष विकार, पुष्प विकार, अन्न विकार होने पर रुद्राभिषेक करके दूध वृक्ष की समिधाओं में रुद्रायस्वाहा आदि मन्त्रों द्वारा होम एवं आठ सौ घी, तिल की आहुति देने से और ब्राह्मण भोजन आदि कराने सभी दोषों से मुक्त हो जाता है।[2] लता, पुष्प, फल, तैलीय वृक्षों में विकार युक्त होने पर सोम देव तथा वरुण आदि के लिए सोम के मन्त्र से हवन करना चाहिए।[3] वृष्टि विकार, सूर्य, चन्द्रमा, वायु, पर्जन्य (मेघ) के विकारजन्य उत्पात के समय यज्ञ करके स्वर्णदान, गोदान, रत्न दान एवं ब्राह्मण भोजन से दोषों की शान्ति होती है।[4] जल विकारों के होने पर वरुण के मन्त्रों से पूजा हवन करने से वरुण से उत्पन्न विकारों का शमन हो जाता है।[5] विकार युक्त प्रसव होने पर, ग्रह शान्ति एवं हवन करने से शान्त होता है।[6] वाहन विकार, ध्वनि विकार होने पर सत्तू (सतूआ) से वायु देवता की पूजा एवं इस देवता के मन्त्र से हवनादि कार्य करने पर उत्पात की शान्ति होती है।[7]

---

१. उत्पातानामथोक्तानां शान्तिं वक्ष्ये विधानतः। रुद्राभिषेकं रुद्रेण नैवेद्यान्तं प्रपूजयेत्।।
पूर्वोक्तलक्षणे कुण्डे स्थापयेच्च हुताशनम्। मुखान्ते जुहुयादग्निं मन्त्रैसहस्रकम्।।
क्षीर वृक्षसमिद्भिश्च सर्पपैश्च पृथक्-पृथक्। तिल होमं व्याहृतिभिर्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।।
वशिष्ट सं०- ४५/५०-५२

२. कृत्वाथ कुण्डं तन्मध्ये सम्यक्तत्पूर्ववत्ततः। द्वादशकृत्वो नमकं चमकं च भवेदितः।।
अग्निसंस्थापनं .त्वा मुखान्ते जुहुयाच्चरुम्। रुद्राय स्वाहेत्यनेन मन्त्रेण च सदृडब्धुतम्।।
पृथगष्टशतं भक्त्या तिलव्याहृतिभिस्ततः। ऋतिर्वग्भ्यो दक्षिणां दद्याच्छेषं पूर्ववदाचरेत्।।
विप्रान्सन्तोषयेद्भक्त्या घृतपायसभोजनैः। उत्पातानां वृक्षजानां शान्तिमेषां प्रकल्पयेत्।।
एवं यः कुरुते शान्तिं तस्माद्दोषात्प्रमुच्यते। नालेऽस्मिन्सर्वसस्यानामेकस्मिन्द्वित्रिसम्भवे।।
तैलं तदान्नतो भीतिरैरंडाद्यमधापि वा। वकारैः फलपुष्पाद्यैः सौम्येन वरुणादिभिः।।
तदेव - ४५/६२-६३

३. जुहुयात्सौम्यमन्त्रेण पशुनिर्वापणाच्छुचिः। सस्ये विकारे तत्क्षेत्रं दत्त्वा विप्राय तत्र वै।।
मन्त्रेण च चरुं हुत्वा तस्माद्दोषात्प्रमुच्यते। तदेव - ४५/७०-७२

४. दृश्यते वा प्रतीपा सा तदा क्षुद्भयमादिशेत्। रवीन्दुवायुपर्जन्ययोगः कार्यस्त्ववग्रहे।।
पूर्ववत्स्वर्णगोदानै रत्नैर्दोषात्प्रमुच्यते।। तदेव - ४५/७६-८०

५. विकारे च तथा कुर्य्यात्तन्मन्त्रैर्वरुणस्य च। पूजाहोमं यथा पूर्वमरिष्टं याति तच्छमम्।।
तदेव - ४५/८४-८५

६. हुत्वा च तर्प्पयेद्विप्रान्बहुस्वर्णसुभोजनैः। एवं यः कुरुते सम्यक् तस्माद्दोषात्प्रमुच्यते।।
तदेव - ४५/८७

७. उत्पातेष्वेषु वायव्येषूत्तम् सक्तुभिर्यजेत्। वायुं पूज्य शमीष्वत्र होमं कुर्य्याच्च पूर्ववत्
आवायो [illegible] पंचभिरेव च। तदेव- [illegible]

मृग, पक्षी आदि में विकार होने पर 'देवाः कपोत०' इस मन्त्र का पाँच ब्राह्मणों के द्वारा जप करवा कर हवन करें। सुदेव० इत्यादि मन्त्र का जप तथा शाकुनिक सूक्त द्वारा अथवा आथर्वण शिरा(वेद शिरांसि) मन्त्रों का जप करने से उत्पात शान्त हो जाते हैं। गाय, पृथ्वी, स्वर्ण तथा अन्न दान से सभी प्रकार के उत्पात(पाप) नष्ट हो जाते हैं।[1]

भूमि विकार, काक मैथुन विकार, ग्रह विकार, भूत-प्रेतादि विकार, केतु विकार के होने पर शास्त्रानुसार मण्डप वेदी बनाकर कलशादि की स्थापना करके इन्द्र की पूजा जप हवन वा महामृत्युञ्जय मन्त्र का जाप एवं पलाश की समिधा, घी, अन्न सहित १०८ अलग-अलग मन्त्रों से जो सम्यक् रीति से हवन करने पर सभी दोषों की शान्ति हाती है।[2]

अग्नि भय, शत्रु भय, आदि-व्याधि, अपमृत्यु के शमन के लिए सोने की मृत्यु रूपी प्रतिमा बनाकर 'अपमृत्य् तथा अपक्षुधाम्' इन दो मन्त्रों के द्वारा सम्पूर्ण सामग्री के साथ पंचामृत के सहित स्नान कराकर ईशानकोन में पूर्ण कलश को पंच, त्वचा एवं पंच पल्लवों से संयुक्त करके, पलाश की समिधा से ८०० अथवा २१ बार होम करने से एवं वरुण सूक्त का पाठ और ग्रह के मन्त्रों से १५ कलश के जल से आचार्य के द्वारा स्नान कराने पर उत्पात की शान्ति होती है।[3]

शिथिली जनने दोष अर्थात् अचानक कोई वस्तु ढीली हो जाये तो उस दोष के शमन के लिए अघोर मन्त्र का १०८ आहुति होम करें।[4] शिथिली दोष की शान्ति के लिए पलाश, गूलर, अपामार्ग की समिधा से घी अन्न चरु आदि द्वारा ब्रह्मा, इन्द्र, वरुण, वायु देव, कुबेर, रुद्र, यम आदि देवताओं के मन्त्र का जाप एवं हवन करने से शान्ति प्राप्त होती है।[5]

छिपकली आदि का शरीर पर गिरने से पंचगव्य सहित तेल मालिश करके स्नान करना चाहिए। इसके पश्चात घट स्थान करके उसमें पंचत्वक्, पंचपल्लव,

---

१. मृगपक्षिविकारेषु कुर्य्याद्धोमं जपादिकम्। देवाः कपोत इत्यादि जप्तव्याः पञ्चभिर्द्विजैः।।
सुदेव इतिमन्त्रं च जपेच्छाकुनिकं च यत्। अथर्वणशिरा यस्य जप्तव्याः पापनुत्तये।।
गोभूस्वणान्नदानेन सर्वपापं विनश्यति। तस्मादतिप्रयत्नेन शान्तिकर्मसमाचरेत्।।
वशिष्ट सं०- ४५/११४-११५

२. कुष्ठं पूर्वोक्त विधिना कृत्वा होमं च कारयेत्। यत् इन्द्रं त्रिभिर्मन्त्रैः सम्यक्त्रैयम्बकेन वा।।
पालासमिदाज्यान्नैः पृथगष्टोत्तरं शतम्। एवं यः कुरुते सम्यवतस्माद्दोषात्प्रमुच्यते।।
तदेव- ४५/१३६-१४०

३. वह्निभीतिः शत्रुभीतिराधिव्याधिस्ततो भयम्। तद्दोषशमनार्थाय शान्तिं वक्ष्ये यथाविधि।।
प्रवर्णेन प्रमाणेन तदर्द्धार्द्धेन वा पुनः। प्रतिमां मृत्युरूपाणां कल्पयित्वा प्रयत्नतः।।
अपमृत्युमपक्षुधामिति मन्त्रद्वयेन च। कृत्वोपचारान्नि खिलान्स्नाप्ये पञ्चामृतैः सह।।
मृत्यु वारुण सूक्तैश्च ग्रह मन्त्रौस्त्रिपंचकैः। कुम्भोदकेन वा स्नानाचार्यः प्राथयेत्ततः।।
तदेव - ४५/१४२-१४६

४. द्रष्टव्य - न० सं० -४७/०७

५. द्रष्टव्य - [illegible]

पचामृत, अष्टमृतिका, शतबीज, स्वर्ण, रत्न आदि युक्त शतौषधि के सहित श्वेत वस्त्र से समन्वित अपलिग वारुण सूक्त से अभिमन्त्रित और अलंकृत करें। उसके ऊपर धान्य स्थापित करके षोडशोपचार अथवा यथोपचार से पूजन करें। उस कलश के जल से स्नान अभिषेक करके तिल का हवन करना चाहिए। ब्राह्मण को वस्त्र एवं दक्षिणा सहित कलश को देना चाहिए। ब्राह्मण भोजन करायें। इस प्रकार विधान करने से समस्त दोषों से छूट जाता है।[1] हर्ष चरित में महाकवि वाणभट्ट ने कुशा को उपद्रव शमन करने वाली बताया है इससे यह स्पष्ट होता है कि पूर्वकाल में उपद्रवों के शमन का आचार्यो को पूर्ण ज्ञान था।[2]

वणीसंहार में महाभारत युद्ध में सुयोधन के नाश के लिए प्रकट हुए उत्पातों का उदाहरण देते हुए अमंगल सूचक होने पर उनकी शान्ति गगा आदि पवित्र नदियों के जल, ब्राह्मणों के आशीर्वाद तथा हवन क्रिया द्वारा अमंगल नाश करने का भी विधान मिलता है।[3]

प्राकृतिक उत्पातों को जानने वाले विद्वान अपने ज्ञान नेत्रों से देखकर उत्पातों के लक्षण से घटित होने वाले शुभाशुभ फल को जनहित के लिए पहले ही बता देते हैं। उन परोपकारी विद्वानों के वचनों पर विश्वास करके जो लोग उत्पातों की शान्ति कर देते हैं वे लोग दुःख से बच जाते हैं, अर्थात् वहाँ पर उत्पातों का शमन होता है। किन्तु जो लोग नास्तिकता, क्रोध, अभिमान, लोभ आदि के कारण शान्ति नहीं करते वह लोग उन उपद्रवों से तत्काल नाश को प्राप्त हो जाते हैं।[4]

---

१. सपंचगव्यतैलेनाभ्यङ्गस्नानं समाचरेत्। पञ्चात्तुजलसम्पूर्णं नवकुम्भं प्रकल्पयेत्।।
पञ्चत्वक्पल्लवोपेतं पञ्चामृतसमन्वितम्। अष्टमृत्तिकसद्बीजस्वर्णरत्नसमन्वितम्।।
शतौषधिसमायुक्तं शुक्लवस्त्रसमन्वितम्। अब्लिंगैर्वारुणैः सूक्तैर्मंत्रितं समलंकृतम्।।
धान्योपरि सुंसस्थाप्य चोपचारैः समाचयेत्। स्नात्वा तद्कुम्भतोयेन तिलहोमं समाचरेत्।।
ब्राह्मणाय ततो दद्यात्कुम्भं वस्त्रं सदक्षिणम्। ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्तस्मादोषात्प्रमुच्यते।।
वशिष्ट सं०-४५/१८६-१६३

२. 'त्रिभुवनोपप्लवप्रशमकुशापीडधारिणवे दक्षिणणेन करेण। निर्वाय शापकलकलम्।।'
हर्ष चरित- प्रथम उच्छ्वास- पृ० - २६

३. 'कुरुकुलनिधोत्पातनिर्घातवातः' कुरुवंशविनाशाशुभसूचकप्रचण्डवायुः, तस्य प्रभवः।
वेणी संहार- प्रथमांक- पृ०-३४-३५

क. यदिहात्याहितं तद्भगीरथी प्रमुखानां नदीनां सलिलेनापहियताम्।
ब्राह्मणनामप्यशिषा हुताहुति सुगन्धिना ज्वजनेन अपह्रियताम्।।
ग्रहाण्यं चरितं स्वप्नोऽनिमितौत्पातिकं तथा।
फलन्ति काकतालीयं तेभ्यः प्राज्ञा न बिभ्यति।। तदेव०- ०१/१५, पृ०- ६४

४. ताञ्छास्त्रनिर्गमाद्विप्राः पश्यन्ति ज्ञान चक्षुषा। प्रवदन्ति तु मर्त्येषु हितार्थे श्रद्धयान्विताः।।
ते तु सम्बोधिता विप्रैः शान्तये मङ्गलानि च। श्रद्धधानाः प्रकुर्वन्ति न ते यान्ति परा भवम्।।
येतु न प्रति कुर्वन्ति कृपां संश्रद्धयान्विताः। नास्तिक्यादथवा कोपाद्विनश्यन्ति च तेऽचिरात्।।
भविष्यपुराण... उपद्रव प्रकरण- १-५

यहाँ पर प्राकृतिक उत्पातों के शान्ति विधान में प्रमुख महाशान्तियों का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त वेदों, ब्राह्मण ग्रन्थों, संहिता ग्रन्थों, पुराणों आदि में अनेक प्रकार के शान्ति विधानों का उल्लेख मिलता है जो विभिन्न प्रकार की बाधाओं एवं उपद्रवों को शमन करने वाली हैं।

संस्कृत साहित्य के ग्रन्थों में शोध करने के उपरान्त यह ज्ञात होता है कि त्रिविध उत्पातों के अशुभ प्रभाव को शमन करने के लिए अनेक प्रकार के विधानों का ज्ञान हमारे पूर्वज ऋषियों एवं आचार्यों को था। जो कि इन उत्पातों के कुप्रभावों को शमन करने में अपने समय में सक्षम थे। यदि आज भी पूर्वजों के वताये हुए इस ज्ञान का अनुसरण किया जाये तो हो सकता है कि हम लोग भी उत्पातों के अनिष्ट प्रभावों को शमन करने में सक्षम हो सकें।

उत्पातों का सिद्धान्तिक एवं वैज्ञानिक पक्षों में तुलनात्मक विवेचन

सिद्धान्तिक पक्ष में भू-मण्डल पर घटित होने वाली आकस्मिक घटनाओं, बाढ़-भूँचाल एवं तूफानों के आने, अनावृष्टि- अतिवृष्टि के होने, बादलों के फटने, वज्रपात, अति हिमपात, उल्कापात एवं अशनिपात के होने, भयंकर आन्धी-तूफान के होने, आग लगने, ज्वालामुखी या रसायनिक तत्त्वों के फटने, पृथ्वी में दल-दल या भूस्खलन होने, पहाड़ों का गिरने, समुद्र में भयंकर तूफान के आने, अति वेग से समुद्री लहरों के उठने, राष्ट्र की प्रजा में परस्पर विद्रोह होने, राष्ट्रों में युद्ध होने, विश्व, राष्ट्र या राज्य में महामारी, दुर्भिक्ष, अशान्ति जैसी आपदाओं को प्राकृतिक उत्पात, प्राकृतिक आपदायें, प्राकृतिक उपद्रव या सार्वजनिक संकट कहते हैं। इन प्राकृतिक घटनाओं को सूचित करने वाले भूतविकारों को भी प्राकृतिक उत्पात कहते हैं। इन उत्पातों को प्रमुख तीन भेदों में रख कर आगे इनके कई उपभेदों का वर्णन किया है। वैज्ञानिक पक्ष ने भी उपर्युक्त वर्णित घटनाओं को प्राकृतिक माना है परन्तु वह इनको कई भेदों में विभक्त करते हैं।

सिद्धान्तिक पक्ष प्राकृतिक घटनाओं के घटित होने से पूर्व घटना को सूचित करने वाले लक्षणों का वर्णन करता है परन्तु वैज्ञानिक पक्ष कुछ ही उत्पातों के विषय में घटित होने से पूर्व अपना मत प्रकट करते हैं।

सिद्धान्तिक पक्ष के अनुसार प्रकृति अपने पञ्चमहाभूतों (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश) के गुण-धर्म के वेष्टित भौतिक जागृत एवं जड़ पिण्ड अपने अणु संसक्तावयवों से सदा स्पन्द क्रियाशील रहा करती है। प्रकृति के अवयवों की क्रियाशीलता में अवरुद्धता आ जाने से विकार उत्पन्न होते हैं। फिर वही विकार त्रिविध उत्पातों के रूप में घटित होते हैं। इसी प्रकार अनेक प्रकार के प्रकृति में विकार उत्पन्न होते हैं। इन विकारों के उत्पन्न होने से प्रकृति नियम में अवरुद्धता उत्पन्न हो जाती है जिस के

कारण अनेक प्रकार की आकस्मिक घटनाओं भूमि पर घटित होती हैं।

स्थावर-जंगम आदि विश्व के प्रत्येक वस्तु का परस्पर में त्रिविध उत्पातों का प्रत्यक्ष-परोक्ष वशीकारक प्रभाव माना गया है। प्रकृति की सारी चेष्टायें इन तीनों उत्पातों के अधीन मानी गयी हैं। तात्पर्य यह है कि विज्ञान अनुमोदित प्राकृतिक अनुपात से अनुकूल क्रिया, प्रतिकूल अर्थात् शुभाशुभ ग्रह-नक्षत्रों के पिण्डस्थ तत्त्व आकर्षण शक्ति द्वारा रश्मियों से प्रतिफलित होकर ऋतु धर्मानुसार अपने परिणाम जन्य परिपाकों को प्राप्त हुआ करते हैं। वैज्ञानिक पक्ष में जैसे प्राकृतिक उत्पातों के कई भेद बताये हैं उसी प्रकार इनके घटित होने के कई मत बताता है।

सिद्धान्तिक पक्ष में त्रिविध उत्पातों- दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम के मूल में भी वह शुभाशुभ कर्मों तथा अधर्म को कारण रूप देखता है। इस मान्यता के अनुसार पुंजी भूत पापों के कारण ही प्राणियों पर उत्पात टूटते हैं। जब भूमण्डल पर मनुष्य अपने धर्म को त्याग कर अधर्म के कार्य करने लगते हैं। उस समय भूमि पर असत्य, लोभ, क्रोध, झूठ, कपट, हिंसा आदि के कारण पाप बढ़ जाता है जिससे देवता गण उन की रक्षा नहीं करते तब जगत का नाश होता है। वह नाश किस प्रकार का होगा, उस की सूचना देवतागण पहले से ही, भौम, अन्तरिक्ष और दिव्य निमित्तों के द्वारा कर देते हैं। वैज्ञानिक पक्ष में इस मान्याता को स्वीकार नहीं करता वह इन उत्पातों के विषय में विभिन्न प्रकार के कारणों को मानता है।

सिद्धान्तिक पक्ष में भौम उत्पात को शान्ति से आहत हो कर नष्ट होने वाला, आन्तरिक्ष उत्पात शान्ति से कम होने वाल और दिव्य उत्पात शान्ति से भी नष्ट नहीं होने वाला बताया है। वैज्ञानिक पक्ष भी उत्पातों के बल को मानता है परन्तु इस का सिद्धान्त भिन्न है।

सिद्धान्तिक पक्ष में दिव्य, अन्तरिक्ष तथा पृथ्वी में होने वाले उत्पातों को उन-उन स्थानों के प्रतिनिधि देवताओं के मन्त्रों से जाप एवं हवन करने से उत्पात शान्त किये जाने का विधान मिलता हैं। दिव्य उत्पात अधिक स्वर्ण, अन्न, गो और भूमि दान से शान्त होता है और रुद्रायतन, भूमि में गोदान और करोड़ होम करने से शमन होता है। नाभसादि उत्पात भी बहुत प्रतिकार करने से नष्ट होते हैं। उत्पात की शान्ति मण्डल के देवता अनुसार करवाने, जिस मण्डल में उत्पात उत्पन्न हो उस मण्डल के अधिपति देवता की पूजा एवं होमादि करने से ही शान्ति होती है। यदि दो मण्डलों में उत्पात हो तो दोनों मण्डल के दोनों अधिपतियों की पूजा वा होमादि करने से शान्ति होती है।

अग्नि पुराण के अनुसार महा उत्पातों की शान्ति के लिए अठारह प्रकार की शान्तियों का वर्णन किया है उन में से प्रमुख त्रिविध उत्पातों की शान्ति के लिए तीन अमृता, अभया और सौम्या शान्तियाँ बताई गई हैं। भौम सम्बन्धि उत्पातों के लिए (अमृता) नामक शान्ति करानी चाहिए। आन्तरिक्ष सम्बन्धि उत्पातों के लिए (अभया

नामक) शान्ति करानी चाहिए। दिव्य सम्बन्धी उत्पातों के लिए (सौम्य नामक) शान्ति करानी चाहिए। इन शान्तियों के देवताओं से सम्बन्धित मन्त्रों का जाप एवं हवन कर के 'अभया और अमृता' शान्ति के लिए दूर्वादल की मणि एवं सौम्य शान्ति केलिए (शंखमणि) धारण करने का विधान मिलता है परन्तु वैज्ञानिक पक्ष में ऐसा कोई विधान नहीं दिया हुआ है।

इस प्रकार सिद्धान्तिक पक्ष में उत्पातों के लक्षण, भेद, कारण, घटित होने का समय ज्ञान, स्थान, शुभाशुभ फल, निष्फल हाने एवं शमन होने के अनेक उपायों का वर्णन विस्तारपूर्वक मिलता है। इन प्राकृतिक उत्पातों के विषय में वैज्ञानिक पक्ष, सिद्धान्तिक पक्ष के साथ कई स्थानों पर समानता रखता है और कई स्थानों पर विषमता रखता है। यदि दोनों पक्षों का अध्ययन कर के प्राकृतिक उत्पातों के विषय में निष्कर्ष निकाला जाय तो अधिक तर्कसंगत होगा।

उपसंहार

प्राकृतिक आपदाएं कब और किस रूप में आ जाएं यह जानना आज भी वैज्ञानिकों के लिय सम्भव नहीं हो सका, उन प्राकृतिक उत्पातों का वर्णन वैदिक साहित्य, पुराणों, शास्त्रों, महाभारत एवं वाल्मीकी रामायण आदि में विस्तार से दिया हुआ है। इस विषय का न केवल ज्ञान दिआ हुआ है अपितु इन उत्पातों के घटित होने का समय, स्थान, लक्षण, भेद, कारण और शमन होने का विधान विस्तार से दिया हुआ है।

भू-मण्डल पर घटित होने वाली आकस्मिक घटनाओं, बाढ़-भूँचाल एवं तूफानों के आने, अनावृष्टि-अतिवृष्टि के होने, बादलों के फटने, वज्रपात, अति हिमपात, उल्कापात एवं अशनिपात के होने, भयंकर ऑन्धी-तूफान के होने, आग लगने, ज्वालामुखी या रसायनिक तत्त्वों के फटने, पृथ्वी में दल-दल या भूस्खलन होने, पहाड़ों का गिरने, समुद्र में भयंकर तूफान के आने, अति वेग से समुद्री लहरों के उठने, राष्ट्र की प्रजा में परस्पर विद्रोह होने, राष्ट्रों में युद्ध होने, विश्व, राष्ट्र या राज्य में महामारी, दुर्भिक्ष अशान्ति जैसी आपदाओं को प्राकृतिक-उत्पात, प्राकृतिक आपदायें, प्राकृतिक उपद्रव या सार्वजनिक संकट कहते हैं। इन प्राकृतिक घटनाओं को सूचित करने वाले भूतविकारों को भी प्राकृतिक उत्पात कहते हैं।

इस जगत् में जितनी भी शुभाशुभ आकस्मिक घटनायें घटित होने वाली होती हैं उन को सूचित करने वाले प्रकृति के लक्षण त्रिविध उत्पातों के रूप में घटित होते हैं जैसे प्राकृतिक उत्पात तीन प्रकार के होते हैं। उसी प्रकार इन को सूचित करने वाले लक्षण भी तीन प्रकार के होते हैं। इन लक्षणों को भी प्राकृतिक उत्पात कहते हैं।

प्राकृतिक उत्पातों का वर्णन ऋग्वेद, यजुर्वेद अथर्ववेद आश्वलायन गृह्यसूत्र, सांख्यान गृह्यसूत्र, शतपथब्राह्मण, याज्ञवल्कय स्मृति, मनुस्मृति, उपनिषद् ग्रन्थों, पुराणों, आयुर्वेदिक ग्रन्थों, रामायण, महाभारत, कौटिल्य अर्थशास्त्र, महाकाव्य एवं नाटक ग्रन्थों में मिलता है। इस के अतिरिक्त ज्योतिष शास्त्र के संहिता ग्रन्थों में उल्कापात, परिवेश, विद्युत्पात, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, वर्षणऽवर्षण, त्रिविध उत्पातों के लक्षण, भेद, आकस्मिक घटनाओं एवं उत्पात योग आदि का वर्णन विस्तार पूर्वक मिलता है।

संस्कृत साहित्य के विभिन्न ग्रन्थों में इन उत्पातों के लक्षण, भेद, कारण, घटित होने का समय ज्ञान, स्थान, शुभाशुभ फल, निष्फल हाने एवं शमन होने के अनेक

उपायों का वर्णन विस्तारपूर्वक मिलता है।

मैंने अपनी इस कृति में विभिन्न शास्त्र ग्रन्थों में वर्णित उत्पातों को एकत्रित करके विस्तारपूर्वक विवेचन करने का प्रयास किया है। इन ग्रन्थों में से उपलब्ध उत्पात के अर्थ, भेद, कारण, लक्षण, उत्पात घटित होने के स्थान, घटित होने का समय, घटित होने से शुभाशुभ फल, उत्पात शमन होने का विधान विस्तार से वर्णित किया गया है। जो कि शोध प्रवन्ध के पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है।

इस कार्य के समय मैंने यह अनुभव किया है कि हमारे शास्त्रों में किसी प्रकार के ज्ञान की कमी नहीं है यदि कमी है तो केवल शोध एवं परीक्षण कार्य करने की।

मेरा सभी विद्वानों एवं शोधकर्ताओं से निवेदन है कि वह भी इस विषय को लेकर शोध करें ताकि इन प्राकृतिक उत्पातों के घटित होने से पूर्व ही इन उत्पातों के घटित होने का पता लगा कर शास्त्रों द्वारा बताये गये उपायों के प्रयोग से उत्पातों का शमन करने में हम लोग सफल हो सकें।

इस अध्ययन एवं लेखन के समय मैंने यह अनुभव किया है जब भू-मण्डल पर कोई भी अनिष्ट घटना होने लगती है तो उस से पूर्व शुभाशुभ सूचक भूतविकार घटित होना आरम्भ हो जाते हैं परन्तु हमें उन विकारों को पहचानने का ज्ञान नहीं होता जिस के कारण हम होने वाले अनिष्ट से अपनी सुरक्षा नहीं कर पाते हैं। इस ज्ञान का प्रचार एवं प्रसार पूरे विश्व में होना अति अनिवार्य है ताकि सब लोग मंलगमय जीवन व्यतीत कर सकें यथा–

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः ...."

इस उक्ति का हम पालन कर सकें।

इस शास्त्रों के अध्ययन के उपरान्त यह निश्चय से हम कह सकते हैं कि शास्त्रों द्वारा जो विधान उत्पातों के लिये बताये गये हैं यदि हम उन का अध्ययन एवं प्रयोग करें तो घटित होने वाली भावी घटना से पूर्व सचेत हो कर अपने आप को एवं अन्य प्राणियों को भी होने वाली भावी घटना से बचाने में सक्ष्म हो सकते हैं।

।। इति शम्।।

सहायक ग्रन्थ

पुस्तक	लेखक/सम्पादक	प्रकाशक	सम्वत्
१. ऋग्वेद	श्री मत्सायण चार्य विरचित वैदिक भाषा सेमता,	संशोधन मण्डल तिलक स्मारम मन्दिर, पूणे-२	
२. ऋग्वेद भाषा 'भाष्य'	सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ३/५ महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान- नई दिल्ली-२	प्रिंस ऑफसेट प्रिंटर्स नई दिल्ली - ११०००२	१५१०
३. यजुर्वेद संहिता (भाषा टीका)	सम्पादक ब्रह्मवर्चस- वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्री राम शर्मा आचार्य	शान्ति कुञ्ज हरिद्वार (उ०प्र०)	प्र० संस्करण २०५६
४. अथर्ववेद संहिता (भाषा टीका)	सम्पादक ब्रह्मवर्चस श्री राम शर्मा आचार्य	शान्ति कुञ्ज हरिद्वार उत्तराञ्चल २०४९	षष्ठ संस्करण
५. अग्निपुराणम् (भाषा टीका)	अनुवादक- श्रीतारिणीशझा, डॉ० घनश्याम त्रिपाठी	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, संवत्-२०६३ प्रयाग, इलाहाबाद-३ सन्-२००७	
६. अर्थशास्त्रम्	वाचस्पति गैरोला	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी १९९६	
७. अद्भुतसागरः	सम्पादक- मुरलीधर शर्मा	Published by-The Prabhakari & Co.Benares Cantt. 1905	
८. अमरकोष भरत जी	Pub. by : M. M. Pandit	Chokhamba Sanskrit Pratishthan Delhi, Varanasi- 1984	
९. अर्वाचीनं ज्योतिर्विज्ञानम्	श्री रामानाथसहायविरचितम् कुलपतेः डॉ० मण्डनमिश्रस्य	सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालय वाराणसी द्वितीय संस्करण	
१०. अष्टाङ्गहृदय संहिता	वैद्य हरि शास्त्री पराड्कर	चतुर्थ संस्करण	
११. आपस्तम्बीय श्रौतसूत्रम्	Edited by T.T. Srivagopalacharya	Published by : Oriental Research Institute Publications University of Mysore.	
१२. आर्षवर्षावायु विज्ञानम्	डा० श्रीगदेन लाल शास्त्री विरचितम् (हिन्दी टीकायां)	पुनीतप्रेस भवानीनगर- मेरठ-२ (उ० प्र०)	
१३. आश्वलायन गृह्यसूत्र	गार्ग्यनारायणीय आनन्दचन्द्र	वेदान्तवागीरा कलकत्ता १८६९	
१४. ऐतरेय आरण्यक	डॉ० सत्यव्रत शास्त्री	आचार्य एवं अध्यक्ष	
१५. ऐतरेयोपनिषद्	पं० श्रीराम ,शर्मा आचार्य	संस्कृत संस्थान बरेली १९७१	
१६. उत्तरराम चरित	व्याख्याकार- आनन्द स्वरूप	मोती लाल बनारसी दास	
१७ उपनिषद् भाष्य-	सानुवाद गीता प्रेस गोरखपुर		२०२३
१८. कश्यप संहिता	गोरख नाथ चतुर्वेदी		
१९. कादम्बरी-श्रीमद्बाणभट्ट	सम्पादक प्रो० जयशंकरलाल त्रिपाठी	कृष्णदास अकादमी, वाराणसी चौखम्भा प्रेस वाराणसी प्र० संस्करण २०५४	

२०. कात्यायन श्रौत सूत्रम्	Edited by : Pt. Nitya Nand	Published by : Chowkhaba Sanskrit Series Banaras 1927
२१. कामसूत्र	श्री वात्सयायन मुनि, डॉ० रामाचन्द्र शर्मा	कृष्णदास अकादमीवाराणसी-२०५४
२२. किरातार्जुनीयम्	वासुदेवशर्मणा	Pemdurang Jawaji Propritor of the "Nirnaya-Sagar"Press Bombay-1922
२३. कुमार सम्भव	व्याख्याकारः- प्रद्युम्न पाण्डे	विद्याभवन संस्कृत गन्थमाला २००५
२४. गरुड़ पुराण	पं० श्रीराम शर्मा आचार्य	संस्कृत संस्थान, ख्वाजकुतुब बरेली सं०वि० दिल्ली विश्वविद्यालय १९९५
२५. गायत्री महाविज्ञान	लेखकः- वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं०-श्री राम शर्मा आचार्य	ब्रह्मवर्चस शान्तिकुन्र्ज हरिद्वार
२६. गोपथ ब्राह्मण आचार्य	डॉ० प्रज्ञा देवी डॉ० इन्द्र दयाल सेठ	लूकटगन्ज, इलाहाबाद १९९७
२७. ग्रहलाघवं करणम्	श्री गणेश दैवज्ञ	खेमराज श्री कृष्ण बम्बई
२८. चर्चाचन्द्रोदयः(भा०टी०)	श्री कृष्ण दासात्मज	
२९. चरक संहिता	सम्पादक पं० राजेश्वर दत्त शास्त्री	चौखम्भा भारती अकादमी वाराणसी २३वां संस्करण १९९६
३०. जातक पारिजातः	पं०गोपेश कुमार ओझा एम० ए०,लए० वी०	मोती लाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी, पटना
३१. जातक संहिता	भदन्त आनन्त कौसल्लायन	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग पारड़ी, सूरत २०१३
३२. ज्योतिषतत्त्वप्रकाश	पं० लक्ष्मी कान्त कन्याल	मोती लाल बनारसीदास दिल्ली, पटना, वाराणसी।
३३. ज्योतिष रुद्रप्रदीप	जगन्नाथ जोशी -	श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई।
३४. ज्योतिषरहस्य(द्वितीयखण्ड)	सम्पादक-श्री जगजीवनदासगुप्ता	मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
३५. ज्योतिर्विदाभरणम्	सं० डॉ०रामचन्द्र- पाण्डेय	मोती लालबनारसीदास वाराणसी, १९८८
३६. ज्योतिषश्यामसंग्रह जातकभागः	गंगाविष्णु श्रीकृष्णदासेन,	''लक्ष्मीवेंकटेश्वर'' छापेखाने कल्याण-मुंबई १९९२
३७. तैत्तिरीय उपनिषद्	पं० श्रीपाद दामोदर सालवलेकर श्रीपाद सातवडेकर बी ए	भारत मुद्रणालय आनन्दाश्रम,वसन्त किल्ला-पारडी ५वां संस्करण
३८. तैत्तिरीय ब्राह्मण	पं० श्रीराम शर्मा आचार्य	संस्कृत संस्थान कुतुब वेदनगर,बरेली
३९. तैत्तिरीय-संहिता	अनन्त शास्त्री	वसन्त-श्रीपाद-सातवड्केर भारत मुद्रणालयम् स्वाध्याय मण्डलम् पारड़ी-१९५७
४०. नरपतिजयचर्यास्वरोदयः	संबोधिनी-संस्कृत-हिन्दी	चौखम्भा संस्कृत सीरीज, आफिस वाराणसी- १
४१. नरपति जय चर्या(भा०टी०)	पं० खेमराज, श्री कृष्णदास	''श्री वेंकटेश्वर'' प्रेसखेतवाड़ी- बम्बई

४२. नारद परिव्राजकोपरिषद्	पं० श्री राम शर्मा आचार्य	संस्कृति संस्थान बरेली १६७६
४३. नारद पुराण	पं० श्री रामजी शर्मा आचार्य	संस्कृत संस्थानख्वाजा कुतुब,बरेली
४४. नारद संहिता	खेमराज श्री कृष्णदास अध्यक्ष	श्री वैंकटेश्वर प्रेस संस्क०२००४
४५. नागानन्द-नाटक	श्री हर्ष प्रणीत	मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी, द्वि० सं० १६७०
४६. नीतिशतक	सं० एच० डी० वैद्य	मथुरा- १६४१
४७. नैषधमहाकाव्यम्-	पं० श्री हरगोविन्द शास्त्री	चौखम्भा संस्कृत पुस्तकालय, बनारस-१
४८. महाकवि श्रीहर्षविरचितम	आचार्य श्रीत्रिभुवनप्रसाद उपा०	चौखम्भा संस्कृत पुस्तकालय, बनारस
४६. पराशर स्मृति	श्री काशी ज्योतिर्वित्समितिमन्त्र	चौखम्बा संस्कृत सीरीज़ ऑफिस वाराणसी-२०२५
५०. पारस्करगृह्यसूत्रम्	व्याख्याकार एवं सम्पादक	सत्यार्थ प्रकाशन न्यास प्र०सं०२००३
५१. पारिजात कोश	पं० ईश्वरचन्द्र	परिमल पब्लिकेशन्स प्र० सं०-२००४
५२. पुराण विमर्श	आचार्य बलदेव उपाध्याय	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी २००२
५३. फलदीपिका	श्रीमन्त्रेश्वरविरचिता, डॉ० हरिशङ्कर पाठक	चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
५४. बृहत्मुहूर्तसिन्धुः	श्रीयुत पण्डित देवकीनन्दन	लालामेहे चंदने मुंबइ सन्-१८८५
५५. बृहत्संहिता	वराहमिहिरविरचिता पं० श्री अच्युतानन्दझा शर्मणा	चौखम्बा विद्याभवनवाराणसी २०००
५६. ब्रह्मपुराण	आचार्य बलदेव उपाध्याय	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी-२००२
५७. ब्रह्मवैवर्त पुराणम्	बाबू राम उपाध्याय	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग २००२
५८. ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त	सम्पूर्णानन्द गंगाविष्णु	खेमराज मुम्बई यन्त्रालय सं०-१६४५
५६. वृहद्योगतरंगिणी	त्रिमल्लभट्ट	आनन्दश्रम मुद्रालय १६१३
६०. भद्रबाहुसंहिता	डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री	भारतीय ज्ञानपीठ७वां सं० २००१
६१. भविष्यफलभास्करः(भाषा टीका)	पं० खेमराज	श्री कृष्णदास मुम्वय्यां सं० २०१०
६२. भैषज्यरत्नावली	श्री राजेश्वरदत्तशास्त्री	चौखम्भा संस्कृत सीरीज़ ऑफिस वाराणसी
६३. भारतीय ज्योतिष	श्रीशिवनाथ झारखण्डी राजर्षि पुष्पोत्तमदास टण्डन	उत्तर प्रदेश शासन १६८१
६४. भावप्रकाश निघण्टु	श्री गंगा सहाय पाण्डेय	चौखम्वा विद्या भवन वाराणसी १६६०
६५. भू-गोलसार	ओकर भट्ट ज्योतिषी	आगरा शापेखाने में शपी १८४०
६६. मत्स्य पुराण	डॉ० श्रद्धा शुक्ला	नाग पब्लिशर्स दिल्ली-१०००७ प्र० सं०-२०४४
६७. मनुस्मृति	श्री गणेशदत्त पाठक	श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार सं०-२००२ई०
६८. महाभारत	पं० रामनारायण दास	गीता प्रेस गोरखपुर सं०-२०४४
६६. महाभारत	डॉ०पं० श्रीपाद दामोदर	वसन्त श्रीपाद सातवलेकर, १६७५



संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू

जम्मू-काश्मीर संस्कृत परिषद्, जम्मू

द्वारा संचालित

मुख्य कार्यालयः ४२/११ बरनाई रोड बनतलाव, जम्मू-१८११२३

सम्पर्क सूत्र : ०६४१६१४७०७३, ०६४१६२२१७३५

E-mail : ssshodh@gmail.com, jksanskritsociety@gmail.com